परिच्छेद	विषय	पृष्ठ
१	ईश्वर-दर्शन के उपाय	१
२	मणि के प्रति उपदेश	११
३	ईश्वर-दर्शन के लिए व्याकुलता	२०
४	ईश्वर ही एक मात्र सत्य है।	३५
५	गृहस्थ तथा संन्यासियों के नियम	४२
६	ईश्वरलाभ ही जीवन का उद्देश्य है।	६६
७	चमत्कारवाद	८४
८	आत्मदर्शन के उपाय	१०८
९	संसार में किस प्रकार रहना चाहिए	१२९
१०	सुरेन्द्र के घर में महोत्सव	१४२
११	निष्काम भक्ति	१६२
१२	कलि में भक्तियोग	१७३
१३	पण्डित शशधर को उपदेश	१९५
१४	साधना की आवश्यकता	२२५
१५	श्रीरामकृष्ण तथा समन्वय	२४३
१६	कीर्तनानन्द में श्रीरामकृष्ण	२६१
१७	प्रवृत्ति या निवृत्ति ?	२६८
१८	साधना तथा साधुसंग	२८९
१९	अभ्यासयोग	३०६
२०	चैतन्यलीला-दर्शन	३३५

परिच्छेद विषय पृष्ठ

परिच्छेद २५

श्रीरामकृष्ण तथा कर्मकाण्ड

(१)

जितेन्द्रिय होने का उपाय—प्रकृतिभाव-साधना

आज शनिवार है। ११ अक्टूबर, १८८४ ई०। श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर में छोटे तख्त पर लेटे हुए हैं। दिन के दो बजे होंगे। जमीन पर मास्टर और प्रिय मुखर्जी बैठे हैं।

मास्टर एक बजे स्कूल छोड़कर दो बजे के लगभग दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर आ पहुँचे हैं।

श्रीरामकृष्ण—मैं यदु मल्लिक के घर गया था। जाते ही उसने पूछा—'गाड़ी का किराया कितना है?' जब मेरे साथवालों ने कहा, तीन रुपये दो आने, तब उसने मुझसे पूछा। उधर उसके एक आदमी ने आड़ में गाड़ीवाले से पूछा। उसने बताया—तीन रुपये चार आने। (सब हँसते हैं।) तब फिर हम लोगों के पास दौड़ा हुआ आया, पूछा, क्या किराया पड़ा?

"उसके पास दलाल आया था। उसने यदु से कहा, 'बड़ा बाजार में चार बिस्वा जगह बिक रही है, क्या आप लेंगे?' यदु ने पूछा, 'दाम क्या है? दाम में कुछ घटायेगा या नहीं?' मैंने कहा, तुम लोगे नहीं, सिर्फ ढोंग कर रहे हो।' तब मेरी ओर देखकर हँसने लगे। विषयी आदमियों का ऐसा ही दस्तूर है। पाँच आदमी आयेंगे, जायेंगे, बाजार में खूब नाम होगा।

"वह अधर के घर गया था। मैंने उससे कहा, तुम अधर

के यहाँ गये थे, इससे अधर को बड़ा आनन्द हुआ था। तब वह 'हूँ-हूँ' करने लगा था, पूछा--क्या सचमुच उन्हें आनन्द हुआ है?

"यदु के यहाँ एक दूसरा मल्लिक आया था, वह बड़ा चतुर और शठ है। उसकी आँखें देखकर मैं समझ गया। आँख की ओर देखकर मैंने कहा, 'चतुर होना अच्छा नहीं, कौआ बड़ा चतुर होता है, परन्तु विष्ठा खाता है।' इसे मैंने देखा, बड़ा अभागा है। यदु की माँ ने आश्चर्यचकित होकर कहा, 'बाबा, तुम्हें कैसे मालूम हुआ कि उसके कुछ नहीं है?' मैं चेहरे से समझ गया था।"

नारायण आये हुए हैं। वे भी जमीन पर बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण--(प्रियनाथ से)--क्यों जी, तुम्हारा हरि तो बड़ा अच्छा है।

प्रियनाथ--ऐसा अच्छा क्या है--परन्तु हाँ, लड़का है।

नारायण--अपनी स्त्री को उसने माँ कहा है।

श्रीरामकृष्ण--यह क्या! मैं ही नहीं कह सकता और उसने माँ कहा! (प्रियनाथ से) बात यह है कि लड़का बड़ा शान्त है, ईश्वर की ओर मन है।

श्रीरामकृष्ण दूसरी बात करने लगे।

श्रीरामकृष्ण--सुना तुमने, हेम क्या कहता था? बाबूराम से उसने कहा, ईश्वर ही एक सत्य है और सब मिथ्या। (सब हँसते हैं।) नहीं जी, उसने आन्तरिक भाव से कहा था। और मुझे घर ले जाकर कीर्तन सुनाने के लिए कहा था, परन्तु फिर हो नहीं सका। सुना उसके बाद कहता था--'मैं अगर ढोल-करताल लूँगा तो आदमी क्या कहेंगे?' डर गया कि कहीं आदमी पागल न कहें।

"हरिपद घोषपाड़ा की एक स्त्री के फेर में पड़ गया है। छोड़ता नहीं ! कहता है, गोद में लेकर खिलाती है। सुनो, कहता है, उसका गोपाल-भाव है। मैंने तो बहुत सावधान कर दिया है। कहता तो वात्सल्य-भाव है, पर उसी वात्सल्य से फिर नीच भाव पैदा होते हैं।

'बात यह है कि स्त्री से बहुत दूर रहना पड़ता है, तब कहीं ईश्वर के दर्शन होते हैं। जिनका अभिप्राय बुरा है, उन सब स्त्रियों के पास का आना-जाना या उनके हाथ का कुछ खाना बहुत बुरा है। ये सत्त्व हरण करनेवाली हैं।

"बड़ी सावधानी से रहने पर तब कहीं भक्ति की रक्षा होती है। भवनाथ, राखाल इन लोगों ने एक दिन अपने हाथ से भोजन पकाया। सब के सब भोजन करने बैठे, उसी समय एक बाउल उन लोगों की पंगत में बैठ गया और बोला, मैं भी खाऊँगा। मैंने कहा, फिर पूरा न पड़ेगा। अगर बच जायेगा तो तुम्हें दिया जायेगा। परन्तु वह गुस्से में आकर उठकर चला गया। विजया के दिन चाहे कोई भी आदमी अपने हाथ से खिला देता है, यह अच्छा नहीं है। शुद्धसत्त्व भक्त हो, तो उसके हाथ का खाया जा सकता है।

"स्त्रियों के पास बड़ी होशियारी से रहना चाहिए। गोपाल-भाव है, इस तरह की बातों पर बिलकुल ध्यान न देना चाहिए। स्त्रियों ने तीनों लोक निगल रखे हैं। कितनी स्त्रियाँ ऐसी हैं जो थोड़ी उम्र का लड़का देखकर नया जाल फैलाती हैं। इसीलिए गोपाल-भाव है।

"जिन्हें कुमार-अवस्था में ही वैराग्य होता है, जो बचपन से ही ईश्वर के लिए व्याकुल होकर घूमते हैं, उनकी श्रेणी एक

अलग है। वे शुद्ध-कुलीन हैं। ठीक-ठीक वैराग्य के होने पर वे औरतों से पचास हाथ दूर रहते हैं, इसलिए कि कहीं उनका भाव भंग न हो। वे अगर स्त्रियों के फेर में पड़ जायँ, तो फिर शुद्ध-कुलीन नहीं रह जाते, भग्नभाव हो जाते हैं, फिर उनका स्थान नीचा हो जाता है। जिनका बिलकुल कौमार-वैराग्य है, उनका स्थान बहुत ऊँचा है, उनकी देह में एक भी दाग नहीं लगा।

"जितेन्द्रिय किस तरह हुआ जाय? अपने में स्त्री-भाव का आरोप करना पड़ता है। मैं बहुत दिनों तक सखीभाव में था। औरतों जैसे कपड़े और आभूषण पहनता था, उसी तरह सारी देह भी ढकता था। नहीं तो स्त्री (पत्नी) को आठ महीने तक पास रखा कैसे था?—हम दोनों ही माँ की सखियाँ थे।

"मैं अपने को पु (पुरुष) नहीं कह सकता। एक दिन मैं भाव में था, उसने (श्रीरामकृष्ण की धर्मपत्नी ने) पूछा—'मैं तुम्हारी कौन हूँ?' मैंने कहा—'आनन्दमयी।' एक मत में है, जिसके स्तन-स्थान में घुण्डी हो, वह स्त्री है। अर्जुन और कृष्ण के घुण्डियाँ न थीं।

"शिवपूजा का भाव जानते हो? शिवलिंग की पूजा मातृस्थान और पितृस्थान की पूजा है। भक्त यह कहकर पूजा करता है—'भगवान्, देखो, अब जैसे जन्म न लेना पड़े। शोणित, शुक्र के भीतर से मातृस्थान से होकर अब जैसे न आना हो।'"

(२)

साधक और स्त्री

श्रीरामकृष्ण प्रकृतिभाव की बातचीत कर रहे हैं। श्रीयुत प्रिय मुखर्जी, मास्टर तथा और भी कुछ भक्त बैठे हुए हैं। इसी

समय ठाकुरों के यहाँ के एक शिक्षक ठाकुरों के कई लड़कों को साथ लेकर आये।

श्रीरामकृष्ण-(भक्तों के प्रति)-श्रीकृष्ण के सिर पर मोर-पंख रहता था, उसमें योनि-चिह्न होता है, इसका यह अर्थ है कि श्रीकृष्ण ने प्रकृति को सिर पर रखा था।

"कृष्ण रास-मण्डल में गये। परन्तु वहाँ खुद प्रकृति बन गये। इसीलिए देखो, रास-मण्डल में उनका प्रकृति-वेश है। स्वयं प्रकृतिभाव के बिना धारण किये कोई प्रकृति के संग का अधिकारी नहीं होता। प्रकृतिभाव के होने पर ही रास और सम्भोग होता है; परन्तु साधक की अवस्था में बहुत सावधान रहना पड़ता है। उस समय स्त्रियों से बहुत दूर रहना पड़ता है। यहाँ तक कि भक्ति-मती स्त्री होने पर भी उसके पास अधिक न जाना चाहिए। छत पर चढ़ते समय बहुत झूमना न चाहिए, क्योंकि इससे गिरने की सम्भावना है। जो कमजोर हैं, उन्हें दीवार के सहारे से चढ़ना पड़ता है। सिद्ध अवस्था की और बात है। भगवान के दर्शन के बाद फिर अधिक भय नहीं रह जाता। तब बहुत कुछ निर्भयता हो जाती है। छत पर एक बार चढ़ना हुआ तो बस, काम सिद्ध है। छत पर चढ़कर फिर वहाँ चाहे कोई जितना नाचे। और देखो जो कुछ छोड़कर छत पर जाया जाता है, वहाँ फिर उसका त्याग नहीं करना पड़ता। छत भी ईंट, चूने और मसाले से बनी और सीढ़ियाँ भी उन्हीं चीजों से बनी हैं। जिस स्त्री के निकट इतनी सावधानी रखनी पड़ती है, ईश्वर-दर्शन के पश्चात् वही स्त्री साक्षात् भगवती जान पड़ती है। तब उसे माता समझकर उसकी पूजा करो, फिर विशेष भय की बात न रह जायेगी।

"बात यह है कि पाल छूकर फिर जो चाहे, करो।

बहिर्मुखी अवस्था में आदमी स्थूल देखता है। तब मन अन्नमय कोष में रहता है। इसके बाद है सूक्ष्म शरीर—लिंग शरीर। तब मनोमय और विज्ञानमय कोष में मन रहता है। इसके बाद है कारण शरीर। जब मन कारण-शरीर में आता है, तब आनन्द होता है, मन आनन्दमय, कोषमय रहता है। यह चैतन्यदेव की अर्धबाह्य दशा थी।

"इसके बाद मन लीन हो जाता है। मन का नाश हो जाता है। महाकारण में मन का नाश होता है। मन का नाश हो जाने पर फिर कोई खबर नहीं रहती। यह चैतन्यदेव की अन्तर्दशा थी।

"अन्तर्मुख अवस्था कैसी है, जानते हो? दयानन्द* ने कहा था, 'अन्दर आओ, दरवाजा बन्द कर लो।' अन्दर हरएक की पहुँच नहीं होती।

"मैं दीपशिखा पर यह भाव आरोपित करता था। उसकी ललाई को कहता था स्थूल, उसके भीतर सफेद भाग को कहता था सूक्ष्म, और सब के भीतर काले हिस्से को कहता था कारण-शरीर।

"ध्यान ठीक हो रहा है इसके कई लक्षण हैं। एक यह है कि जड़ समझकर सिर पर पक्षी बैठ जाया करेंगे।

"केशव सेन को मैंने पहले आदि-समाज में देखा था। वेदी पर कई आदमी बैठे हुए थे, बीच में केशव। मैंने देखा, काष्ठवत् बैठा हुआ था। तब मैंने सेजो बाबू से कहा—देखो, इसकी बंसी का चारा मछली खा रही है। वह उतना ध्यानी था इसी के बल से और ईश्वर की इच्छा से उसने जो कुछ सोचा वह हो गया।

"आँख खोलकर भी ध्यान होता है। बातचीत के बीच में भी ध्यान होता है। जैसे, सोचो, किसी को दाँत की बीमारी है,

---

* आर्य समाज के संस्थापक।

दर्द हो रहा है।"

ठाकुरों के शिक्षक-की यह बात खूब जमती हुई है। (हास्य)

श्रीरामकृष्ण-(सहास्य)-हाँ जी, दाँत की बीमारी अगर किसी को होती है, तो वह सब काम तो करता है, परन्तु मन उसका दर्द पर रखा रहता है। इस तरह ध्यान आँख खोलकर भी होता है और बातचीत करते हुए भी होता है।

शिक्षक-उनका नाम पतितपावन है-यही हम लोगों का भरोसा है। वे दयामय हैं।

श्रीरामकृष्ण-सिक्खों ने भी कहा था, वे दयामय हैं। मैंने पूछा वे कैसे दयामय हैं? उन्होंने कहा, 'क्यों महाराज, उन्होंने हमारी सृष्टि की है, हमारे लिए इतनी चीजें तैयार की हैं, पग-पग पर हमें विपत्ति से बचाते हैं।' तब मैंने कहा, 'वे हमें पैदा करके हमारी देखरेख कर रहे हैं, खिलाते-पिलाते हैं इसमें कौनसी बड़ी तारीफ की बात है? तुम्हारे अगर बच्चा हो तो क्या उसकी देखरेख कोई दूसरा आकर करेगा?'

शिक्षक-जी, किसी का काम जल्दी हो जाता है और किसी का नहीं होता, इसका क्या अर्थ है?

श्रीरामकृष्ण-बात यह है कि बहुत कुछ तो पूर्वजन्म के संस्कारों से होता है। लोग सोचते हैं कि एकाएक हो रहा है।

"किसी ने सुबह को प्याले भर शराब पी थी। उतने ही से मतवाला हो गया, झूमने लगा। लोग आश्चर्य करने लगे। वे सोचने लगे, यह प्याले भर में ही इतना मतवाला कैसे हो गया? एक ने कहा, अरे रात भर इसने शराब पी होगी।

"हनुमान ने सोने की लंका जला दी। लोग आश्चर्य में

पड़ गये कि एक बन्दर ने कैसे यह सब जला दिया; परन्तु फिर कहने लगे, वास्तव में बात यह है कि सीता की गरम साँस और राम के कोप से लंका जली है।

"और लालाबाबू को देखो। इतना धन है, पूर्वजन्म के संस्कार के बिना क्या एकाएक कभी वैराग्य हो सकता था? और रानी भवानी—स्त्री होने पर भी उसमें कितनी ज्ञान भक्ति थी!

"अन्तिम जन्म में सतोगुण होता है। तभी ईश्वर पर मन जाता है, उनके लिए विकलता होती है, और तरह तरह के विषय-कर्मों से मन हटता जाता है।

"कृष्णदास पाल आया था। मैंने देखा उसमें रजोगुण था। परन्तु हिन्दू है, इसलिए जूते बाहर खोलकर रखे, कुछ बातचीत करके देखा, भीतर कुछ नहीं था। मैंने पूछा, 'मनुष्य का कर्तव्य क्या है?' उसने कहा—'संसार का उपकार करना।' मैंने कहा, 'क्यों जी, तुम हो कौन? और उपकार भी क्या करोगे और संसार क्या इतना छोटा है कि तुम उसका उपकार कर सकोगे?'"

नारायण आये हैं। श्रीरामकृष्ण को बड़ा आनन्द है। नारायण को छोटी खाट पर अपनी बगल में बैठाया। देह पर हाथ फेरते हुए स्नेह करने लगे। खाने के लिए मिठाई दी और स्नेहपूर्वक पानी के लिए पूछा। नारायण मास्टर के स्कूल में पढ़ते हैं। श्रीरामकृष्ण के पास आते हैं, इसलिए घर में मारे जाते हैं। श्रीरामकृष्ण हँसते हुए स्नेहपूर्वक नारायण से कह रहे हैं,—"तू एक चमड़े का कुर्ता पहना कर, तो कम लगेगा।"

फिर नारायण से कहने लगे—"हरिपद की वह बनी हुई माँ आयी थी। मैंने हरिपद को खूब सावधान कर दिया है। वे लोग घोषपाड़ा के मत वाले हैं। मैंने उससे पूछा था, क्या तुम्हारे

कोई 'आश्रय' है ? उसने एक चक्रवर्ती को बतलाया ।"

श्रीरामकृष्ण-(मास्टर से)-अहा ! उस दिन नीलकण्ठ आया था । कैसा भाव है !—और एक दिन आने के लिए कह गया है । गाना सुनायेगा । आज उधर नाच हो रहा है, जाओ —देखो न । (रामलाल से) तेल नहीं है; (हण्डी देखकर) हण्डी में तो नहीं है ।

(३)

पुरुषप्रकृति-विवेक-योग । राधा-कृष्ण कौन हैं ?

श्रीरामकृष्ण टहल रहे हैं, कभी घर के भीतर, कभी घर के दक्षिण ओर के बारामदे में । कभी घर के पश्चिम ओर के गोल बरामदे में खड़े होकर गंगा-दर्शन कर रहे हैं ।

कुछ देर बाद फिर छोटी खाट पर बैठे । दिन के तीन बज चुके हैं । भक्तगण फिर जमीन पर आकर बैठे । श्रीरामकृष्ण छोटी खाट पर चुपचाप बैठे हैं । रह-रहकर घर की दीवार की ओर देख रहे हैं । दीवार पर बहुत से चित्र हैं । श्रीरामकृष्ण की बाईं ओर श्रीवीणापाणि का चित्र है । उससे कुछ दूर पर नित्यानन्द और गौरांग भक्त-समाज में कीर्तन कर रहे हैं । श्रीरामकृष्ण के सामने ध्रुव, प्रह्लाद और जगन्माता काली की मूर्ति है, दाहिनी ओर दीवार पर राजराजेश्वरी की मूर्ति है । पीछे ईसा की तस्वीर है—पिटर डूबे जा रहे हैं और ईसा पानी से निकाल रहे हैं । एकाएक श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से कहा—"देखो, घर में साधुओं और सन्यासियों का चित्र रखना अच्छा है । सुबह उठकर दूसरे का मुँह देखने से पहले साधुओं और संन्यासियों का मुख देखकर उठना अच्छा है । दीवार पर अंग्रेजी तस्वीर—धनी,

राजा और रानी की तस्वीरें—रानी के लड़कों की तस्वीरें—साहब और मेम टहल रहे हैं, उनकी तस्वीरें—इस तरह की तस्वीरें आदि रखना रजोगुणी के लक्षण हैं !

"जिस तरह के संग में रहा जाता है, वैसा ही स्वभाव भी हो जाता है। इसीलिए तस्वीरों में भी दोष है। फिर मनुष्य जैसा है, वैसे ही संगी भी खोजता है। जो परमहंस होते हैं, वे पाँच-छः साल के दो-चार लड़के अपने पास रख लेते हैं—उन्हें पास बुलाया करते हैं। उस अवस्था में बच्चों के बीच रहना खूब सुहाता है। बच्चे सत्त्व, रज और तम किसी गुण के वश नहीं हैं।

"पेड़ देखने पर तपोवन की याद आती है, ऋषियों के तपस्या करने का भाव आ जाता है।"

सींती के ब्राह्मण कमरे में आये, श्रीरामकृष्ण को उन्होंने प्रणाम किया। उन्होंने काशी में वेदान्त पढ़ा था।

श्रीरामकृष्ण—क्यों जी, तुम कैसे हो ? बहुत दिन बाद आये।

पण्डित—(सहास्य)—जी, गृहस्थी के काम से छुट्टी नहीं मिली, आप तो जानते ही हैं।

पण्डितजी ने आसन ग्रहण किया। उनसे बातचीत हो रही है।

श्रीरामकृष्ण—बनारस तो बहुत दिन रहे, क्या क्या देखा कुछ कहो तो, कुछ दयानन्द की बातें बताओ।

पण्डित—दयानन्द से मुलाकात हुई थी। आपने तो देखा ही था ?

श्रीरामकृष्ण—मैं देखने के लिए गया था। तब उस तरफ के एक बगीचे में वह टिका हुआ था। उस दिन केशव सेन के आने की बात थी। वह चातक की तरह उनके लिए तरस रहा था। बड़ा पण्डित है। बंगभाषा को 'गौराण्ड' भाषा कहता था। देवता को मानता था। केशव नहीं मानता था। दयानन्द कहता

था, ईश्वर ने इतनी चीजें बनायीं और देवता क्या नहीं बना सकते थे? निराकारवादी है। कप्तान 'राम राम' कर रहा था, उसने कहा इससे 'बर्फी बर्फी' क्यों नहीं रटते?

पण्डित–काशी म पण्डितों के साथ दयानन्द का खूब शास्त्रार्थ हुआ। सब एक तरफ थे और वह एक तरफ। फिर लोगों ने उसे ऐसा बनाया कि भागते बन पड़ी। सब एक साथ ऊँची आवाज से कहने लगे—'दयानन्देन यदुक्तं तद्धेयम्।'

"और कर्नेल अलकट को भी मैंने देखा था। वे लोग कहते हैं, महात्मा भी हैं। और चन्द्रलोक, सूर्यलोक, नक्षत्रलोक ये भी सब हैं। सूक्ष्म शरीर उन सब स्थानों में जा सकता है—इस तरह की बहुतसी बातें कहीं। अच्छा महाराज, यह विचार आपको कैसा जान पड़ता है?"

श्रीरामकृष्ण–"भक्ति ही एकमात्र सार वस्तु है—ईश्वर की भक्ति। वे क्या भक्ति की खोज करते हैं?—अगर ऐसा हो, तो अच्छा है। अगर ईश्वरलाभ उनका उद्देश्य हो तो अच्छा है। चन्द्रलोक, सूर्यलोक, नक्षत्रलोक और महात्मा को लेकर ही अगर कोई रहे, तो ईश्वर की खोज इससे नहीं होती। उनके पाद-पद्मों में भक्ति होने के लिए साधना करनी चाहिए, व्याकुल होकर उन्हें पुकारना चाहिए। अनेक वस्तुओं से मन को खींचकर उनमें लगाना चाहिए।" यह कहकर श्रीरामकृष्ण रामप्रसाद के गीत गाने लगे—

"मन! अंधेरे में पागल की तरह उनके तत्त्व का विचार तुम क्या करते हो? वह तो भाव का विषय है, भाव के बिना अभाव के द्वारा क्या वह कभी मिल सकता है? उस भाव के लिए, योगीजन युग-युगान्तर तक तपस्या किया करते हैं। भाव का उदय होने पर वह मनुष्य को उसी तरह पकड़ता है जैसे लोहे

को चुम्बक पत्थर।

"और चाहे शास्त्र कहो, चाहे दर्शन कहो, चाहे वेदान्त; किसी में वे नहीं हैं। उनके लिए प्राणों के विकल हुए बिना कहीं कुछ न होगा।

"षड्दर्शन, निगमागम और तन्त्रसार से उनके दर्शन नहीं होते। वे तो भक्ति-रस के रसिक हैं, आनन्दपूर्वक हृदय-पुर में विराजमान हैं।

"खूब व्याकुल होना चाहिए। एक गाने में है--राधिका के दर्शन सब को नहीं होते।

अवतार भी साधना करते हैं—लोकशिक्षार्थ

"साधना की बड़ी जरूरत है। एकाएक क्या कभी ईश्वर के दर्शन होते हैं।

"एक ने पूछा, हमें ईश्वर के दर्शन क्यों नहीं होते? मेरे मन में उस समय यह बात उठी;—मैंने कहा, 'बड़ी मछली पकड़ना चाहते हो, तो उसके लिए आयोजन करो। जहाँ मछली पकड़ना चाहते हो, वहाँ मसाला डालो। डोरी-बंसी लाओ। मसाले की गन्ध पाकर गहरे जल से मछली उसके पास आयेगी। जब पानी हिलने लगे, तब तुम समझ जाओ कि बड़ी मछली आयी है।'

"अगर मक्खन खाने की इच्छा है तो 'दूध में मक्खन है, दूध में मक्खन है,' ऐसा कहने से क्या होगा? मेहनत करनी पड़ती है, तब मक्खन निकलता है। 'ईश्वर हैं', 'ईश्वर हैं' इस तरह बकते रहने से क्या कभी ईश्वर के दर्शन हो सकते हैं? साधना चाहिए।

"भगवती ने स्वयं पञ्चमुण्डी आसन पर बैठकर तपस्या

की थी—लोकशिक्षा के लिए। श्रीकृष्ण साक्षात् पूर्ण ब्रह्म हैं, परन्तु उन्होंने भी तपस्या की थी, तब राधायन्त्र उन्हें पड़ा हुआ मिल गया था।

"कृष्ण पुरुष हैं और राधा प्रकृति, चित्शक्ति आद्याशक्ति है। राधा प्रकृति है—त्रिगुणमयी; इनके भीतर सत्त्व, रज और तम तीन गुण हैं। जैसे प्याज का छिलका निकालते जाओ, पहले लाल और काला दोनों रंग का मिला हुआ हिस्सा निकलता है, फिर लाल निकलता रहता है, फिर सफेद। वैष्णव शास्त्रों में लिखा है—कामराधा, प्रेमराधा, नित्यराधा। कामराधा चन्द्रावली हैं, प्रेमराधा श्रीमती। गोपाल को गोद में लिए हुए नित्यराधा को नन्द ने देखा था।

"यह चित्-शक्ति और वेदान्त का ब्रह्म दोनों अभेद हैं। जैसे जल और उसकी हिमशक्ति। पानी की हिमशक्ति को सोचने से पानी को भी सोचना पड़ता है और पानी को सोचने से उसकी हिमशक्ति भी आ जाती है। साँप की तिर्यक् गति को सोचने से साँप को भी सोचना पड़ता है। ब्रह्म कब कहते हैं?—जब वे निष्क्रिय हैं या कार्य से निर्लिप्त हैं। पुरुष जब कपड़ा पहनता है, तब भी वह पुरुष ही रहता है। पहले दिगम्बर था, अब साम्बर हो गया है—फिर दिगम्बर हो सकता है। साँप के भीतर जहर है, परन्तु साँप को इससे कुछ नहीं होता। जिसे वह काटता है, उसी के लिए जहर है। ब्रह्म स्वयं निर्लिप्त है।

"नाम और रूप जहाँ है, वहीं प्रकृति का ऐश्वर्य है। सीता ने हनुमान से कहा था—'वत्स, एक रूप में मैं ही राम हूँ और एक रूप से सीता बनी हुई हूँ—एक रूप से मैं इन्द्र हूँ और एक रूप से इन्द्राणी हूँ—एक रूप से ब्रह्मा हूँ और एक रूप से ब्रह्माणी—एक

रूप से रुद्र हूँ और एक रूप से रुद्राणी। नाम-रूप जो कुछ है, सब चित्-शक्ति का ऐश्वर्य है। ध्यान और ध्याता भी चित्-शक्ति के ही ऐश्वर्य में से हैं। जब तक यह बोध है कि मैं ध्यान कर रहा हूँ, तब तक उन्हीं का इलाका है। (मास्टर से) इन सब की धारणा करो। वेदों और पुराणों को सुनना चाहिए और वे जो कुछ कहते हैं, उसकी धारणा करनी चाहिए।

(पण्डित से) "कभी कभी साधु-संग करना अच्छा है। रोग तो आदमी को लगा ही हुआ है। साधु-संग से उसका बहुत कुछ उपशम होता है।

"'मैं और मेरा-पन यही अज्ञान है। 'हे ईश्वर! सब कुछ तुम्हीं कर रहे हो और मेरे अपने आदमी तुम्हीं हो। यह सब घर, द्वार, परिवार, आत्मीय, बन्धु, सम्पूर्ण संसार तुम्हारा है।' इसी का नाम है यथार्थ ज्ञान। इसके विपरीत 'मैं ही सब कुछ कर रहा हूँ, कर्ता मैं, घर, द्वार, कुटुम्ब परिवार, लड़के-बच्चे सब मेरे हैं'—इसका नाम है अज्ञान।

"गुरु शिष्य को ये सब बातें समझा रहे थे। कह रहे थे—एकमात्र ईश्वर ही तुम्हारे अपने हैं, और कोई अपने नहीं। शिष्य ने कहा, 'महाराज, माता और स्त्री ये लोग तो मेरी बड़ी खातिर करते हैं, अगर मुझे नहीं देखते तो तमाम संसार में उनके लिए दुःख का अँधेरा छा जाता है, तो देखिये, वे मुझे कितना प्यार करती हैं।' गुरु ने कहा, 'यह तुम्हारे मन की भूल है। मैं तुम्हें दिखलाये देता हूँ कि तुम्हारा कोई नहीं है। दवा की ये गोलियाँ अपने पास रखो, घर जाकर गोलियों को खाना और बिस्तरे पर लेटे रहना। लोग समझेंगे, तुम्हारी देह छूट गयी है। मैं उसी समय पहुँच जाऊँगा।'

"शिष्य ने वैसा ही किया। घर जाकर उसने गोलियों को खा लिया। थोड़ी देर में वह बेहोश हो गया। उसकी माँ, उसकी स्त्री, सब रोने लगीं। उसी समय गुरु वैद्य के रूप में वहाँ पहुँच गये। सब सुनकर उन्होंने कहा, 'अच्छा, इसकी एक दवा है—यह फिर से जी सकता है। परन्तु एक बात है। यह दवा पहले आप में से किसी को खानी चाहिए, फिर यह उसे दी जायेगी। परन्तु इसका जो आत्मीय यह गोली खायेगा, उसकी मृत्यु हो जायेगी। और यहाँ तो इसकी माँ भी हैं? और शायद स्त्री भी है, इनमें से कोई न कोई अवश्य ही दवा खा लेगी। इस तरह यह जी जायेगा।'

"शिष्य सब कुछ सुन रहा था। वैद्य ने पहले उसकी माता को बुलाया। माँ रोती हुई धूल में लोट रही थी। उसके आने पर कविराज ने कहा, 'माँ, अब तुम्हें रोना न होगा। तुम यह दवा खाओ तो लड़का अवश्य जी जायेगा, परन्तु तुम्हारी इससे मृत्यु हो जायेगी।' माँ दवा हाथ में लिये सोचने लगी। बहुत कुछ सोच-विचार के पश्चात् रोते हुए कहने लगी—'बाबा, मेरे एक दूसरा लड़का और एक लड़की है, मैं अगर मर जाऊँगी, तो फिर उनका क्या होगा? यही सोच रही हूँ। कौन उनकी देख-रेख करेगा, कौन उन्हें खाने को देगा, यही सोच रही हूँ।' तब उसकी स्त्री को बुलाकर दवा दी गयी। उसकी स्त्री भी खूब रो रही थी। दवा हाथ में लेकर वह भी सोचने लगी। उसने सुना था, दवा खाने पर मृत्यु अनिवार्य है। तब उसने रोते हुए कहा, 'उन्हें जो होना था सो तो हो ही गया, अब मेरे बच्चों के लिए क्या होगा? उनकी सेवा करनेवाला कौन है? फिर...मैं कैसे दवा खाऊँ?' तब तक शिष्य पर जो नशा था, वह उतर गया।

यह समझ गया कि कोई किसी का नहीं है। तुरन्त उठकर वह गुरु के साथ चला गया। गुरु ने कहा, तुम्हारे अपने बस एक ही आदमी हैं—ईश्वर।

"अतएव उनके पादपद्मों में जिससे भक्ति हो—जिससे वे मेरे हैं, इस तरह के सम्बन्ध से प्यार हो, वही करना चाहिए और वही अच्छा भी है। देखते हो, संसार दो दिन के लिए है। इसमें और कहीं कुछ नहीं है।"

पण्डित—(सहास्य)—जी, जब यहाँ आता हूँ, तब उस दिन पूर्ण वैराग्य हो जाता है। इच्छा होती है कि संसार का त्याग करके कहीं चला जाऊँ।

श्रीरामकृष्ण—नहीं, त्याग क्यों करना होगा? आप लोग मन में त्याग का भाव लाइये। संसार में अनासक्त होकर रहिये।

"सुरेन्द्र ने कभी कभी आकर रहने की इच्छा से एक बिस्तरा यहाँ ला रखा था। दो-एक दिन आया भी था। फिर उसकी बीवी ने कहा, 'दिन के समय चाहे जहाँ जाकर रहो, रात को घर से न निकलने पाओगे।' तब सुरेन्द्र क्या करता? अब रात के समय कहीं रहने का उपाय भी नहीं रह गया।

"और देखो, सिर्फ विचार करने से क्या होता है? उनके लिए व्याकुल होओ, उन्हें प्यार करना सीखो। ज्ञान और विचार ये पुरुष हैं, इनकी पहुँच बस दरवाजे तक है। भक्ति स्त्री है, वह भीतर भी चली जाती है।

"इसी तरह के एक भाव का आश्रय लेना पड़ता है—तब मनुष्य ईश्वर को पाता है। सनकादि ऋषि शान्तभाव लेकर रहते थे। हनुमान दासभाव में थे। श्रीदाम, सुदाम आदि व्रज के चरवाहों का सख्यभाव था। यशोदा का वात्सल्यभाव था—ईश्वर

पर उनकी सन्तानबुद्धि थी । श्रीमती का मधुरभाव था ।

"हे ईश्वर, तुम प्रभु हो, मैं दास हूँ, इस भाव का नाम है— दासभाव । साधक के लिए यह भाव बहुत अच्छा है ।"

पण्डित—जी हाँ ।

(४)

भक्तियोग और कर्मयोग । ज्ञान का लक्षण

सीती के पण्डितजी चले गये हैं । सन्ध्या हो गयी । काली मन्दिर में देवताओं की आरती होने लगी । श्रीरामकृष्ण देवताओं को प्रणाम कर रहे हैं । छोटी खाट पर बैठे हुए हैं, मन ईश्वर-चिन्तन में है । कुछ भक्त आकर जमीन पर बैठ गये । घर में शान्ति है ।

एक घण्टा रात बीत चुकी है । ईशान मुखोपाध्याय और किशोरी आये । वे लोग श्रीरामकृष्णदेव को प्रणाम कर बैठ गये । पुरश्चरण आदि शास्त्रोक्त कर्मों पर ईशान का बड़ा ही अनुराग है । वे कर्मयोगी हैं । अब श्रीरामकृष्ण बातचीत कर रहे हैं ।

श्रीरामकृष्ण—ज्ञान ज्ञान कहने ही से कुछ थोड़े ही होता है ? ज्ञान के दो लक्षण हैं । पहला है अनुराग, अर्थात् ईश्वर को प्यार करना । केवल ज्ञान का विचार कर रहे हैं, परन्तु ईश्वर पर अनुराग नहीं है, प्यार नहीं है तो वह मिथ्या है । एक और लक्षण है—कुण्डलिनी शक्ति का जागना । कुण्डलिनी जब तक सोती रहती है, तब तक ज्ञान नहीं होता । बैठे हुए पुस्तकें पढ़ते जा रहे हैं, विचार कर रहे हैं । परन्तु भीतर व्याकुलता नहीं है, वह ज्ञान का लक्षण नहीं है । कुण्डलिनी शक्ति के जागने पर भाव, भक्ति और प्रेम यह सब होता है । इसे ही भक्तियोग कहते हैं ।

"कर्मयोग* बड़ा कठिन है, उससे कुछ शक्ति होती है, विभूतियें मिलती हैं।"

ईशान—मैं हाजरा महाशय के पास जाता हूँ।

श्रीरामकृष्ण चुप हैं। कुछ देर बाद ईशान फिर कमरे में आये साथ साथ हाजरा भी थे। श्रीरामकृष्ण चुपचाप बैठे हुए हैं। कुछ देर बाद हाजरा ने ईशान से कहा—"चलिये, अभी ये ध्यान करेंगे।" ईशान और हाजरा चले गये।

श्रीरामकृष्ण चुपचाप बैठे हुए हैं। कुछ समय में सचमुच ध्यान करने लगे। उँगलियों पर जप कर रहे हैं। वही हाथ एक बार सिर पर रखा, फिर ललाट पर, फिर क्रमशः कण्ठ, हृदय और नाभि पर।

भक्तों को जान पड़ा, श्रीरामकृष्ण षट्चक्रों में आदि-शक्ति का ध्यान कर रहे हैं। शिवसंहिता आदि शास्त्रों में जो योग की बातें हैं, क्या ये यही हैं ?

(५)

निवृत्तिमार्ग। वासना का मूल—महामाया

ईशान हाजरा के साथ काली-मन्दिर गये हुए थे। श्रीरामकृष्ण ध्यान कर रहे थे। रात के साढ़े सात बजे का समय होगा। उसी समय अधर आ गये।

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण काली का दर्शन करने गये। दर्शन कर और पादपद्मों का निर्माल्य लेकर उन्होंने सिर पर धारण किया। माता को प्रणाम कर उन्होंने प्रदक्षिणा की और चमर लेकर व्यजन करने लगे। श्रीरामकृष्ण प्रेम में मतवाले हो रहे हैं। बाहर आते समय उन्होंने देखा, ईशान सन्ध्या कर रहे हैं।

---

* यहाँ धार्मिक अनुष्ठानों से मतलब है।

श्रीरामकृष्ण–(ईशान से)–क्या तुम अब के आये हुए सन्ध्योपासना ही कर रहे हो? एक गाना सुनो।

ईशान के पास बैठकर श्रीरामकृष्ण मधुर स्वर से गाने लगे–"गया, गंगा, प्रभास, काशी, कांची कौन चाहता है, अगर काली काली कहते हुए, वह अपनी देह त्याग सके? त्रिसन्ध्या की बात लोग कहते हैं, परन्तु वह यह कुछ नहीं चाहता। सन्ध्या खुद उसकी खोज में फिरती है परन्तु कभी सन्धि नहीं पाती। दया, व्रत, दान आदि 'मदन' को कुछ नहीं सुहाते, ब्रह्ममयी के चरण-कमल ही उसका याग-यज्ञ है।

"सन्ध्या उतने ही दिनों के लिए है, जब तक उनके पादपद्मों में भक्ति न हो–उनका नाम लेते हुए आँखों में जब तक आँसू न आ जायँ और शरीर में रोमांच न हो जाय।

"रामप्रसाद के एक गाने में है–मैंने मुक्ति और मुक्ति सब कुछ प्राप्त कर लिया है, क्योंकि काली को ब्रह्म जान मैंने धर्माधर्म का त्याग कर दिया है।

"जब फल होता है तब फूल झड़ जाता है। जब भक्ति होती है, तब ईश्वर मिलते हैं–तब सन्ध्यादि कर्म दूर हो जाते हैं।

"गृहस्थ की बहू के जब लड़का होनेवाला होता है, तब उसकी सास काम घटा देती है। नौ महीने का गर्भ होने पर फिर घर का काम छूने नहीं देती। फिर सन्तान पैदा होने पर, वह बच्चे को ही गोद में लिये रहती है और उसी की सेवा करती है। फिर उसके लिए कोई काम नहीं रह जाता। ईश्वर-प्राप्ति होने पर सन्ध्यादि कर्म छूट जाते हैं।

"तुम इस तरह धीमा तिताला बजाते रहोगे, तो कैसे काम चलेगा? तीव्र वैराग्य चाहिए। १५ महीने का एक साल बनाओगे

तो क्या होगा ? तुम्हारे भीतर मानो बल है ही नहीं—मानो भीगे हुए चिउड़े के समान हो। उठकर कमर कसो।

"इसीलिए मुझे यह गाना नहीं अच्छा लगता—'हरि सो लागि रहो रे भाई। तेरी बनत बनत बनि जाई।।' 'बनत बनत बनि जाई' मुझे नहीं सुहाता। तीव्र वैराग्य चाहिए। हाजरा से भी मैं यही कहता हूँ।

"पूछते हो, क्यों तीव्र वैराग्य नहीं होता ? इसमें रहस्य है। भीतर वासनाएँ और सब प्रवृत्तियाँ हैं। यही मैं हाजरा से कहता हूँ। कामारपुकुर में खेतों में पानी लाया जाता है। खेतों के चारों ओर मेड़ बँधी रहती है, इसलिए कि कहीं पानी निकल न जाय। कीच की मेड़ बनायी जाती है और मेड़ के बीच बीच में नालियाँ कटी रहती हैं। लोग जपतप करते तो हैं, परन्तु उनके पीछे वासना रहती है। उसी वासना की नालियों से सब निकल जाया करता है।

"बंसी से मछली पकड़ी जाती है। बाँस तो सीधा ही होता है, परन्तु सिरे पर झुका हुआ इसलिए रहता है कि उससे मछली पकड़ी जाय। वासना मछली है। इसीलिए मन संसार में झुका हुआ है। वासना के न रहने पर मन की सहज ही ऊर्ध्वगति होती है—ईश्वर की ओर।

"ठीक जैसे तराजू के काँटे। कामिनी-कांचन का दबाव है, इसलिए ऊपर का काँटा नीचे के काँटे की बराबरी पर नहीं रहता, इसलिए लोग योगभ्रष्ट हो जाते हैं। तुमने दीपशिखा देखी है न ? जरा सी हवा के लगने पर चंचल होती है। योगावस्था दीपशिखा की तरह है—जहाँ हवा नहीं लगती।

"मन तितर-बितर हो रहा है। कुछ चला गया है ढाका, कुछ दिल्ली और कुछ कूचविहार में है। उस मन को इकट्ठा

करना होगा। इकट्ठा करके एक जगह रखना होगा। तुम अगर सोलह आने का कपड़ा खरीदो, तो कपड़ेवाले को सोलह आने तुम्हें देने पड़ेंगे या नहीं? कुछ विघ्न के रहने पर फिर योग नहीं हो सकता। टेलीग्राफ के तार में अगर कहीं जरा सा छेद हो जाय तो फिर तार नहीं जा सकता।

"परन्तु संसार में हो तो क्या हुआ? सब कर्मों का फल ईश्वर को समर्पण करना चाहिए। स्वयं किसी फल की कामना न करनी चाहिए।

"परन्तु एक बात है। भक्ति की कामना कामनाओं में नहीं है। भक्ति की कामना—भक्ति के लिए प्रार्थना कर सकते हो।

"भक्ति का तमोगुण लाओ, माँ से जोर से कहो। रामप्रसाद के एक गाने में है—'यह माता और पुत्र का मुकदमा है, बड़ी धूम मची है, जब मैं अपने को तेरी गोद में बैठा लूँगा, तब तेरा पिण्ड छोड़ूँगा!'

"त्रैलोक्य ने कहा था, 'जब मैं कुटुम्ब में पैदा हुआ हूँ, तो मेरा हिस्सा जरूर है।'

"अरे वह तो तुम्हारी अपनी माँ है, कुछ बनी-बनायी माँ थोड़े ही है?—न धर्म की माता है। अपना जोर उस पर न चलेगा, तो और किस पर चलेगा? कहो—'माँ, मैं अठमासा बच्चा थोड़े ही हूँ कि आँख दिखाओगी तो डर जाऊँगा? अबकी बार श्रीनाथ के इजलास में नालिश करूँगा और एक ही सवाल पर डिगरी लूँगा।'

"अपनी माँ है, जोर करो। जिसकी जिसमें सत्ता होती है, उसका उस पर आकर्षण भी होता है। माँ की सत्ता हमारे भीतर है इसीलिए तो माँ की ओर इतना आकर्षण होता है। जो यथार्थ

शैव हैं, वह शिव की सत्ता भी पाता है। कुछ कण उसके भीतर आ जाते हैं। जो यथार्थ वैष्णव है, नारायण की सत्ता उसके भीतर आती है। और अब तो तुम्हें विषयकर्म भी नहीं करना पड़ता, अब कुछ दिन उन्हीं की चिन्ता करो। देख तो लिया कि संसार में कुछ नहीं है।

"और तुम बिचवाई और मुखियाई यह सब क्या किया करते हो? मैंने सुना है, तुम लोगों के झगड़ों का फैसला किया करते हो—तुम्हें लोग सर-पंच मानते हैं। यह तो बहुत दिन कर चुके। जिन्हें यह सब करना है, वे करें। तुम इस समय उनके पादपद्मों में अधिक मन लगाओ। क्यों किसीकी बला अपने सिर लेते हो?

"शम्भु ने कहा था, अस्पताल और दवाखाने बनवाऊँगा। वह भक्त था। इसीलिए मैंने कहा, ईश्वर के दर्शन होने पर क्या उनसे अस्पताल और दवाखाने चाहोगे?

"केशव सेन ने पूछा, ईश्वर के दर्शन क्यों नहीं होते? मैंने कहा, लोक-मर्यादा, विद्या यह सब लेकर तुम हो न, इसीलिए नहीं होता। बच्चा जब तक खिलौना लिये रहता है तब तक माँ नहीं आती। कुछ देर बाद खिलौना फेंककर जब वह चिल्लाने लगता है, तब माँ तवा उतारकर दौड़ती है।

"तुम भी मुखियाई कर रहे हो। माँ सोच रही है मेरा बच्चा मुखिया बनकर अच्छी तरह से है, अच्छा रहे।"

ईशान ने श्रीरामकृष्ण के पैरों का स्पर्श करके विनयपूर्वक कहा—"मैं अपनी इच्छा से यह सब नहीं करता।"

श्रीरामकृष्ण—यह मैं जानता हूँ। वह माता का ही खेल है, उन्हीं की लीला है। संसार में फँसा रखना, यह महामाया की

ही इच्छा है। बात यह है कि संसार में कितनी ही नावें तैरती और डूबती रहती हैं। और कितनी ही पतंगें उड़ती हैं, उनमें दो ही एक कटती हैं, और तब माँ हँसकर तालियाँ पीटती हैं। लाखों में कहीं दो-एक मुक्त होते हैं। रहे-सहे सब माँ की इच्छा से बँधे हुए हैं।

"चोर-चोर खेल तुमने देखा है या नहीं? टाई की इच्छा है कि खेल होता रहे। अगर सब लड़के दौड़कर टाई को छू लें, तो खेल ही बन्द हो जाय। इसीलिए बुढ़िया टाई की इच्छा नहीं है कि सब लड़के उसे छू लें।

"और देखो, बड़ी बड़ी दूकानों में ऊँची छत तक चावल के बोरे भरे रहते हैं। चावल भी रहता है और दाल भी, परन्तु कहीं चूहे न खा जायें, इसलिए दूकानदार कोठे के दरवाजे पर सूप में उनके लिए धान के लावे अलग रख देता है। उनमें कुछ गुड़ मिला रहता है। ये खाने में मीठे लगते हैं और गन्ध सोंधी होती है, इसलिए सब चूहे सूप पर ही टूट पड़ते हैं, अन्दर के बड़े बड़े कोठों की खोज नहीं करते। जीव कामिनी-कांचन में मुग्ध रहते हैं, ईश्वर की खबर नहीं पाते।"

(६)

श्रीरामकृष्ण का सर्ववासना-त्याग। केवल भक्ति-कामना

श्रीरामकृष्ण-नारद से राम ने कहा, तुम हमारे पास किसी वर की याचना करो। नारद ने कहा,-'राम! मेरे लिए अब बाकी क्या रह गया? मैं क्या वर माँगूँ? परन्तु अगर तुम्हें वर देना ही है, तो यही वर दो, जिससे तुम्हारे चरणकमलों में शुद्धा भक्ति हो, फिर संसार को मोह लेनेवाली तुम्हारी इस माया में

मुग्ध न होऊँ।' राम ने कहा—'नारद, कोई दूसरा वर लो।' नारद ने कहा—'राम! मैं और कुछ नहीं चाहता। यही करो, जिससे तुम्हारे पादपद्मों में मेरी शुद्धा भक्ति हो।'

"मैंने माँ से प्रार्थना की थी और कहा था—'माँ, मैं लोक-सम्मान नहीं चाहता, माँ, अष्टसिद्धियाँ तो क्या, मैं शत सिद्धियाँ भी नहीं चाहता, मैं देह-सुख भी नहीं चाहता हूँ; बस यही करो कि तुम्हारे पादपद्मों में शुद्धा भक्ति हो।'

"अध्यात्म रामायण में है कि लक्ष्मण ने राम से पूछा—'राम, तुम तो कितने ही रूपों और कितने ही भावों में रहा करते हो, फिर किस तरह मैं तुम्हें पहचान पाऊँगा?' राम ने कहा—'भाई, एक बात समझ रखो,—जहाँ ऊर्जिता भक्ति है, वहाँ मैं *अवश्य ही हूँ।' ऊर्जिता भक्ति के होने पर भक्त हँसता है, रोता* है, नाचता है, गाता है। अगर किसी में ऐसी भक्ति हो, तो निश्चय समझना, ईश्वर वहाँ मौजूद हैं। चैतन्यदेव को ऐसा ही हुआ था।"

भक्तगण निर्वाक् हो सुन रहे हैं—देववाणी की तरह इन सब बातों को सुन रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण की अमृतमयी वार्ता फिर होने लगी। अब निवृत्ति मार्ग की बात हो रही है।

श्रीरामकृष्ण—(ईशान से)—तुम खुशामदवाली बातों में न आ जाना। विषयी आदमियों को देखकर खुशामद करनेवाले आप उपस्थित हो जाते हैं।

"मरा हुआ बैल देखकर दुनिया भर के गिद्ध इकट्ठे हो जाते हैं।

"विषयी आदमियों में कुछ सार नहीं है। जैसे गोबर की

टोकरी। खुशामद करनेवाले आकर कहेंगे, आप दानी हैं, बड़े ज्ञानी हैं। इसे दाल की बात ही मत समझो—साथ में डण्डे भी हैं। यह क्या है? कुछ संसारी ब्राह्मणों और पण्डितों को लेकर दिन-रात बैठे रहना और उनकी खुशामद सुनना।

"संसारी आदमी तीन के गुलाम हैं, फिर उनमें सार कैसे रह सकता है? वे बीवी के गुलाम हैं, रुपये के गुलाम हैं और मालिक के गुलाम हैं। एक आदमी का नाम न लूँगा, उसकी आठ सौ रुपये महीने की तनख्वाह है। परन्तु बीवी का ऐसा गुलाम है कि उसी के इशारे पर उठता बैठता है।

"और मुखियाई और सरपंची आदि की क्या जरूरत है? दया, परोपकार?—यह सब तो बहुत किया। यह सब लोग करते हैं, उनकी दूसरी ही श्रेणी है। तुम्हारे लिए अब तो यह है कि ईश्वर के पादपद्मों में मन लगाओ। उन्हें पा लेने पर सब कुछ प्राप्त हो जाता है। पहले वे हैं और दया, परोपकार, संसार का उपकार जीवों का उद्धार, उन्हें पा लेने के बाद है। इन सब बातों की चिन्ता से तुम्हें क्या काम? दूसरे की बला अपने सिर क्यों लादते हो?

"तुम्हें यही हुआ है। कोई सर्वत्यागी तुम्हें यदि यह बतलाये कि ऐसा करो, वैसा करो, तो अच्छा हो। संसारियों की सलाह से पूरा नहीं पड़ने का, चाहे वह ब्राह्मण पण्डित हो या और कोई।

"पागल हो जाओ—ईश्वर के प्रेम में पागल हो जाओ। लोग अगर यह समझें कि ईशान इस समय पागल हो गया है, अब यह सब काम नहीं कर सकता तो फिर वे तुम्हारे पास सरपंच बनाने के लिए न जायेंगे। मण्डी-वण्डी उठाकर फेंक दो, अपना

ईशान'*नाम सार्थक करो।"

'माँ, मुझे पागल कर दे, ज्ञान-विचार की अब कोई जरूरत नहीं है।' इस भाव के गाने का एक पद ईशान ने कहा।

श्रीरामकृष्ण--पागल है या अच्छे दिमागवाला ? शिवनाथ ने कहा था, ईश्वर की अधिक चिन्ता करने पर आदमी पागल हो जाता है। मैंने कहा, 'क्या! चेतन की चिन्ता करके क्या कभी कोई अचेतन हो जाता है ? वे नित्य हैं, शुद्ध और बोधरूप हैं। उन्हीं के ज्ञान से लोगों में ज्ञान है, उन्हीं की चेतना से सब चेतन हो रहा है।' उसने कहा, 'साहबों को ऐसा हुआ था, अधिक ईश्वर-चिन्ता करते वे पागल हो गये थे।' हो सकता है वे ऐहिक पदार्थ की चिन्ता करते रहे होंगे। भावे तें भरल तनु, हरल ज्ञान। इसमें जिस ज्ञान के हरने की बात है, वह बाह्य ज्ञान है।

ईशान श्रीरामकृष्ण के पैर पकड़े हुए बैठे हैं और सब बातें सुन रहे हैं। वे रह-रहकर मन्दिर के भीतर कालीमूर्ति की ओर देख रहे हैं। प्रदीप के आलोक में माता हँस रही हैं।

ईशान--(श्रीरामकृष्ण से)--आप जो बातें कह रहे हैं, वे सब वहाँ से (देवी की ओर हाथ उठाकर) आती हैं।

श्रीरामकृष्ण--मैं यन्त्र हूँ वे यन्त्री हैं, मैं गृह हूँ वे गृहिणी, मैं रथ हूँ वे रथी; वे जैसा चलाती हैं, मैं वैसा ही चलता हूँ; जैसा कहलाती हैं, वैसा ही कहता हूँ।

"कलिकाल में दूसरी तरह की देववाणी नहीं होती, परन्तु बालक या पागल के मुंह से देववाणी होती है--देवता बोलते हैं।

"आदमी कभी गुरु नहीं हो सकते। ईश्वर की इच्छा से ही सब हो रहा है। महापातक, बहुत दिनों के पातक, बहुत दिनों

* शिवजी का एक नाम।

का अज्ञान, सब उनकी कृपा होने पर क्षण भर में मिट जाता है।

"हजार साल के अँधेरे कमरे में अगर एकाएक उजाला हो तो वह हजार साल का अँधेरा जरा जरा सा हटता है या एक साथ ही चला जाता है ?

"आदमी यही कर सकता है कि वह बहुतसी बातें बतला सकता है, अन्त में सब ईश्वर के ही हाथ है। वकील कहता है, मुझे जो कुछ करना था, मैंने कर दिया। अब न्यायाधीश के हाथ की बात है।

"ब्रह्म निष्क्रिय हैं। वे सृष्टि, स्थिति, प्रलय आदि सब कार्य करते हैं, तब उन्हें आदिशक्ति कहते हैं। उसी आद्याशक्ति को प्रसन्न करना पड़ता है। चण्डी में है, जानते हो न पहले देवताओं ने आद्याशक्ति की स्तुति की। उनके प्रसन्न होने पर विष्णु की योग-निद्रा छूटती है।"

ईशान—जी महाराज, मधुकैटभ के वध के समय देवताओं ने स्तुति की है—'त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कारस्वरात्मिका। सुधा त्वमक्षरे नित्ये त्रिधामात्रात्मिका स्थिता॥ अर्धमात्रा स्थिता नित्या यानुच्चार्या विशेषतः। त्वमेव सन्ध्या सावित्री त्वं देवि जननी परा॥ त्वयैतद् धार्यते विश्वं त्वयैतत् सृज्यते जगत्। त्वयैतत् पाल्यते देवि त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा॥ विसृष्टौ सृष्टिरूपा त्वं स्थितिरूपा च पालने। तथा संहृतिरूपान्ते जगतोऽस्य जगन्मये॥'*

श्रीरामकृष्ण—हाँ इसकी धारणा चाहिए।

(७)

कर्मकाण्ड कठिन है—इसीलिए भक्तियोग

कालीमन्दिर के सामने श्रीरामकृष्ण को चारों ओर से घेर-

* मार्कण्डेय चण्डी।

कर भक्तगण बैठे हुए हैं। अब तक निर्वाक् रहकर श्रीरामकृष्ण की अमृतोपम वाणी सुन रहे थे।

श्रीरामकृष्ण उठे। मन्दिर के सामने मण्डप के नीचे भूमिष्ठ होकर माता को प्रणाम किया। उसी समय भक्तों ने भी प्रणाम किया। प्रणाम कर श्रीरामकृष्ण अपने कमरे की ओर चले गये।

श्रीरामकृष्ण ने मास्टर की ओर देखकर रामप्रसाद के एक गाने के दो चरण गाये। उनका भाव यह है—युक्ति और मुक्ति मुझे मिल चुकी हैं, क्योंकि काली ही एकमात्र मर्म है, यह जानकर मैंने धर्माधर्म छोड़ दिये हैं।

श्रीरामकृष्ण–धर्माधर्म का अर्थ क्या है, जानते हो? यहाँ धर्म का तात्पर्य वैधी कर्म से है—जैसे दान, श्राद्ध, कंगालों को खिलाना यह सब।

"इसी धर्म को कर्मकाण्ड कहते हैं। यह मार्ग बड़ा कठिन है। निष्काम कर्म करना बहुत मुश्किल है। इसीलिए भक्ति-पथ का आश्रय लेने के लिए कहा गया है।

"किसी ने अपने घर पर श्राद्ध किया था। बहुत से आदमियों को खिलाया था। एक कसाई काटने के लिए गौ ले जा रहा था। गौ काबू में नहीं आ रही थी, कसाई हाँक रहा था। तब उसने सोचा, इसके यहाँ श्राद्ध हो रहा है, वहाँ चलकर कुछ खा लूँ। इस तरह कुछ बल बढ़ जायेगा, तब गौ को ले जा सकूँगा। अन्त में उसने वैसा ही किया। परन्तु जब उसने गौ को काटा तब जिसने श्राद्ध किया था, उसे भी गोहत्या का पाप लगा।

"इसीलिए कहता हूँ, कर्मकाण्ड से भक्तिमार्ग अच्छा है।"

श्रीरामकृष्ण कमरे में प्रवेश कर रहे हैं, मास्टर साथ हैं। श्रीरामकृष्ण गुनगुनाते हुए गा रहे हैं।

कमरे में पहुँचकर वे अपनी छोटी खाट पर बैठ गये। अधर, किशोरी तथा अन्य भक्त भी आकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण–(भक्तों से)–ईशान को देखा, कहीं कुछ नहीं हुआ। कहते क्या हो कि उसने पाँच महीने तक पुरश्चरण किया है? कोई दूसरा होता तो उसमें एक और ही बात पैदा हो गयी होती।

अधर–हम लोगों के सामने उन्हें इतनी बातें कहना अच्छा नहीं हुआ।

श्रीरामकृष्ण–क्यों क्या हुआ? वह तो जापक है, उसके ऊपर शब्दों का क्या असर?

कुछ देर तक बातें होने पर श्रीरामकृष्ण ने अधर से कहा "ईशान बड़ा दानी है और देखो, जप-तप बहुत करता है।" भक्त-गण जमीन पर बैठे टकटकी लगाये हुए श्रीरामकृष्ण को देख रहे हैं।

एकाएक श्रीरामकृष्ण ने अधर से कहा—'तुम लोगों के योग और भोग दोनों हैं।'

परिच्छेद २६

आत्मानन्द में

(१)

दक्षिणेश्वर मन्दिर में भक्तों के संग

आज काली-पूजा है, शनिवार, १८ अक्टूबर, १८८४ ई०। रात के दस ग्यारह बजे से काली-पूजा शुरू होगी। कुछ लोग इस गम्भीर अमावस की रात में श्रीरामकृष्ण के दर्शन करेंगे। इसलिए वे कदम बढ़ाये चले आ रहे हैं।

रात आठ बजे के लगभग मास्टर अकेले आ पहुँचे। बगीचे में आकर उन्होंने देखा, काली-मन्दिर की पूजा आरम्भ हो चुकी है। बगीचे में कहीं कहीं दीपक जलाये गये थे और काली-मन्दिर में तो रोशनी ही रोशनी दीख पड़ती है। बीच बीच में शहनाई भी बज रही है। कर्मचारीगण दौड़-दौड़कर इधर-उधर देखरेख कर रहे हैं। आज रानी रासमणि के काली-मन्दिर में बड़े समारोह के साथ पूजा होगी। दक्षिणेश्वर के आदमियों को यह सूचना पहले ही मिल चुकी थी। अन्त में नाटक होगा यह भी वे लोग सुन चुके हैं। गाँव से लड़के, जवान, बूढ़े और स्त्रियाँ सब देवी-दर्शन के लिए चले आ रहे हैं।

दिन के पिछले पहर चण्डी-गीत हो रहा था, गवैये थे राजनारायण। श्रीरामकृष्ण ने भक्तों के साथ बड़े प्रेम से गाना सुना। देवी की पूजा की याद कर श्रीरामकृष्ण को अपार आनन्द हो रहा है।

रात के आठ बजे वहाँ पहुँचकर मास्टर ने देखा, श्रीरामकृष्ण छोटी खाट पर बैठे हुए हैं, उन्हें सामने करके कई भक्त जमीन पर बैठे हैं—बाबूराम, छोटे गोपाल, हरिपद, किशोरी, निरंजन के एक आत्मीय नवयुवक और ऐंड़ेदा के एक और किशोर बालक। रामलाल और हाजरा कभी कभी आते हैं, फिर चले जाते हैं।

निरंजन के आत्मीय नवयुवक श्रीरामकृष्ण के सामने बैठे हुए ध्यान कर रहे हैं—श्रीरामकृष्ण ने उन्हें ध्यान करने के लिए कहा है।

मास्टर प्रणाम करके बैठे। कुछ देर बाद निरंजन के आत्मीय प्रणाम करके बिदा हुए। ऐंड़ेदा के दूसरे युवक भी प्रणाम कर खड़े हो गये। उनके साथ जायेंगे।

श्रीरामकृष्ण—(निरंजन के आत्मीय से)—तुम फिर कब आओगे?

भक्त—जी, सोमवार तक—शायद।

श्रीरामकृष्ण—(आग्रहपूर्वक)—लालटेन चाहिए?—साथ ले जाओ।

भक्त—जी नहीं, इस बगीचे के आस-पास तो रोशनी है—कोई जरूरत नहीं।

श्रीरामकृष्ण—(ऐंड़ेदा के लड़के से)—क्या तू भी जा रहा है?

लड़का—जी हाँ, बड़ी सर्दी है।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, सिर पर कपड़ा लपेट लेना।

दोनों लड़कों ने सिर से प्रणाम किया और चल दिये।

(२)

कीर्तनानन्द

अमावस की घोर रात्रि है। तिस पर जगन्माता की पूजा है। श्रीरामकृष्ण छोटी खाट पर तकिए के सहारे बैठे हुए हैं। अन्तर्मुख हैं। रह-रहकर भक्तों से दो-एक बातें करते हैं।

एकाएक मास्टर तथा अन्य भक्तों की ओर देखकर कह रहे हैं-अहा, उस लड़के का कितना गम्भीर ध्यान था! (हरिपद से) कैसा ध्यान था?

हरिपद-जी हाँ, वह ठीक काठ की तरह स्थिर था।

श्रीरामकृष्ण-(किशोरी से)-उस लड़के को जानते हो? किसी सम्बन्ध से निरंजन का भाई लगता है।

फिर सब चुपचाप बैठे हुए हैं। हरिपद श्रीरामकृष्ण के पैर दबा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण धीरे धीरे गा रहे हैं, एकाएक उठकर बैठ गये और बड़े उत्साह से गाने लगे--

"यह सब उस पागल स्त्री का खेल है। वह खुद भी पागल है, उसके पति महेश भी पागल है, और दो चेले हैं वे भी पागल हैं। उसका रूप क्या है, गुण क्या है, चाल-ढाल कैसी है, कुछ कहा नहीं जाता। जिनके गले में विष की ज्वाला है, वे शिव उसका नाम बार बार लेते हैं। सगुण और निर्गुण का विवाद लगाकर वह रोड़े से रोड़ा फोड़ती है। वह सब विषयों में राजी है, बस कर्तव्यों के समय ही उसकी नाराजगी होती है। रामप्रसाद कहते हैं, संसार-सागर में अपना डोंगा डालकर बैठे रहो। जब ज्वार आये तब वह जहाँ तक ले जाय, चढ़ते जाओ और जब भाटा हो, तब जहाँ तक उतरना हो, उतरते जाओ।"

गाते ही गाते श्रीरामकृष्ण मतवाले हो गये। उसी आवेश में उन्होंने और कई गाने गाये। एक और गाने का भाव नीचे दिया जाता है—

"काली! तुम सदानन्दमयी हो, महाकाल के मन को भी मुग्ध कर लेती हो। तुम आप नाचती हो, आप गाती हो और आप ही तालियाँ बजाती हो। तुम आदिभूता हो, सनातनी हो, शून्यरूपा हो, तुम्हारे मस्तक पर चन्द्र शोभा दे रहा है। अच्छा माँ, तुम यह तो बतलाओ, जब ब्रह्माण्ड ही नहीं था, तब तुम्हें मुण्ड-माला कैसे मिली? तुम्हीं यन्त्री हो, हम लोग तुम्हारे ही इशारे पर चलते हैं। तुम जिस तरह रखती हो, उसी तरह रहते हैं और जो कुछ कहलाती हो, वही कहते हैं। अशान्त होकर कमलाकान्त तुम्हें गालियाँ देता हुआ कहता है, अबकी बार तो, ऐ सर्वहरे! खड्ग धारण करके मेरे धर्म और अधर्म दोनों को तुम खा गयी।"

श्रीरामकृष्ण ने फिर गाया—

"जय काली जय काली कहते हुए अगर मेरा प्राणान्त हो, तो मैं शिवत्व को प्राप्त करूँगा। वाराणसी की मुझे क्या जरूरत है? काली अनन्तरूपिणी हैं, उनका अन्त पा सके, ऐसा कौन है? उनका थोडासा ही माहात्म्य समझकर शिव उनके पैरों पर लोटते हैं।"

गाना समाप्त हो गया। इसी समय राजनारायण के दो लड़कों ने आकर श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। सभामण्डप में दिन के पिछले पहर राजनारायण ने चण्डी-गीत गाया था। उनके साथ उन दोनों लड़कों ने भी गाया था। श्रीरामकृष्ण दोनों लड़कों के साथ फिर गाने लगे।

श्रीरामकृष्ण के कई गाने गा चुकने पर कमरे में रामलाल

आये। श्रीरामकृष्ण कहते हैं, तू भी कुछ गा, आज पूजा है। रामलाल गा रहे हैं—

"यह किसकी कामिनी है—समर को आलोकित कर रही है ? सजल जलद-सी इसकी देह की कान्ति है, दशनों में दामिनी की द्युति दीख पड़ती है ! इसकी केशराशि खुली हुई है, सुरों और असुरों के बीच में भी इसे भय नहीं होता। इसके अट्टहास से ही दानवों का नाश हो जाता है। कमलाकान्त कहते हैं, जरा समझा तो, यह गजगामिनी कौन है !"

श्रीरामकृष्ण नृत्य करते हैं, प्रेमानन्द में पागल हो रहे हैं। नाचते ही नाचते वे गाने लगे—"मेरा मनमिलिन्द काली के नीलकमलचरणों पर लुब्ध हो गया।"

गाना और नृत्य समाप्त हो गया। श्रीरामकृष्ण अपनी छोटी खाट पर बैठे। भक्तगण भी जमीन पर बैठे।

मास्टर से श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं—तुम न आये, चण्डीगीत कितना सुन्दर हुआ !

(३)

समाधि में श्रीरामकृष्ण

भक्तों में से कोई कोई काली-मन्दिर में देवीदर्शन करने के लिए चले गये। कोई कोई दर्शन करके अकेले गंगा के पक्के घाट पर बैठे हुए निर्जन में चुपचाप नाम-जप कर रहे हैं। रात के ग्यारह बजे होंगे। घोर अँधेरा छाया हुआ है। अभी ज्वार आने ही लगा है—भागीरथी उत्तरवाहिनी हो रही है।

रामलाल 'पूजापद्धति' नाम की पुस्तक बगल में दबाये हुए माता के मन्दिर में एक बार आये। पुस्तक मन्दिर के भीतर

रखना चाहते थे। मणि माता को तृषित लोचनों से देख रहे थे। उन्हें देखकर रामलाल ने पूछा, क्या आप भीतर आइयेगा? अनुग्रह प्राप्त कर मणि मन्दिर के भीतर गये। देखा, माता की पूर्ण छटा थी। घर जगमगा रहा था। माता के सामने अंदो दीपदान थे, ऊपर झाड़, नीचे नैवेद्य सजाकर रखा गया था, जिसमें घर भरा हुआ था। माता के पादपद्मों में जवा-पुष्प और बिल्व-दल थे, शृंगार करनेवाले ने अनेक प्रकार के फूलों और मालाओं से माता को सजा रखा था। मणि ने देखा, सामने चमर लटक रहा है। एकाएक उन्हें याद आ गयी कि इसे लेकर श्रीरामकृष्ण व्यजन करते हैं। तब उन्हें संकोच हुआ। उसी संकुचित स्वर में उन्होंने रामलाल से कहा, क्या मैं यह चमर ले सकता हूँ? रामलाल ने आज्ञा दी। मणि चमर लेकर व्यजन करने लगे। उस समय भी पूजा का आरम्भ नहीं हुआ था।

जो सब भक्त बाहर गये हुए थे, वे फिर श्रीरामकृष्ण के कमरे में आकर सम्मिलित हुए।

श्रीयुत वेणीपाल ने न्योता दिया है। कल मोती के ब्राह्म-समाज में जाने के लिए श्रीरामकृष्ण को निमन्त्रण आया है। निमन्त्रणपत्र में तारीख की गलती है।

श्रीरामकृष्ण—(मास्टर से)—वेणीपाल ने न्योता भेजा है। परन्तु ऐसा इस तरह क्यों लिखा?

मास्टर—जी, लिखना ठीक नहीं हुआ। जान पड़ता है सोच-विचार कर नहीं लिखा।

श्रीरामकृष्ण कमरे में खड़े हैं। पास में बाबूराम हैं। श्रीरामकृष्ण पत्र की चिट्ठी की बातचीत कर रहे हैं। बाबूराम के सहारे खड़े हुए एकाएक समाधिमग्न हो गये।

भक्तगण उन्हें घेरकर खड़े हो गये । सभी इस समाधिमग्न महापुरुष को टकटकी लगाये देख रहे हैं। श्रीरामकृष्ण समाधि-अवस्था में बायाँ पैर बढ़ाये हुए खड़े हैं, कन्धा कुछ झुका हुआ है। बाबूराम की गरदन के पीछे श्रीरामकृष्ण का हाथ है।

कुछ देर बाद समाधि छूटी। तब भी आप खड़े ही रहे। इस समय गाल पर हाथ रखे हुए जैसे बहुत चिन्तित भाव से खड़े हों।

कुछ हँसकर भक्तों से बोले—"मैंने सब देखा—कौन कितना बढ़ा, राखाल, ये (मणि), सुरेन्द्र, बाबूराम, बहुतों को देखा।"

हाजरा—मुझको भी ?

श्रीरामकृष्ण—हाँ।

हाजरा—अब भी अनेक बन्धन हैं ?

श्रीरामकृष्ण—नहीं।

हाजरा—नरेन्द्र का भी देखा ?

श्रीरामकृष्ण—नहीं—परन्तु अब भी कह सकता हूँ, कुछ फँस गया है; परन्तु देखा कि सब की बन जायेगी।

(मणि की ओर देखकर) "सब को देखा, सब के सब तैयार हैं (पार जाने के लिए)।"

भक्तगण निर्वाक् होकर यह देववाणी सुन रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—परन्तु इसको (बाबूराम को) छूने पर ऐसा हुआ।

हाजरा—पहला दर्जा किसका है ?

श्रीरामकृष्ण चुप हैं। कुछ देर बाद कहा—"नित्यगोपाल जैसे कुछ और भी मिल जाते तो बड़ा अच्छा होता!"

फिर चिन्ता कर रहे हैं। अब भी उसी भाव में खड़े हैं।

फिर कहते हैं—"अगर तेल—अगर पाम पट जाता,—परन्तु भय होता है कि साहब डाँटने लगेगा। यह न कह बैठे—यह क्या है?" (सब मुस्कराते हैं।)

श्रीरामकृष्ण फिर अपने आसन पर जा बैठे। जमीन पर भक्तगण बैठे। बाबूराम और किशोरी श्रीरामकृष्ण की चारपाई पर जाकर उनके पैर दबाने लगे।

श्रीरामकृष्ण-(किशोरी की ओर ताककर)-आज तो खूब सेवा कर रहे हो!

रामलाल ने आकर सिर टेककर प्रणाम किया और बड़े ही भक्ति-भाव से पैरों की धूलि ली। माता की पूजा करने जा रहे हैं।

रामलाल-तो मैं चलूँ?

श्रीरामकृष्ण-ॐ काली, ॐ काली। सावधानी से पूजा करना।

महानिशा है। पूजा का आरम्भ हो गया। श्रीरामकृष्ण पूजा देखने के लिए गये। माता के दर्शन कर रहे हैं।

रात को दो बजे तक कोई कोई भक्त काली-मन्दिर में बैठे रहे। हरिपद ने काली-मन्दिर में आकर सब से कहा, चलो, बुलाते हैं—भोजन तैयार है। भक्तों ने देवी का प्रसाद पाया और जिसको जहाँ जगह मिली, वहीं लेटा रहा।

सवेरा हुआ। माता की मंगल-आरती हो चुकी है। माता के सामने सभामण्डप में नाटक हो रहा है। श्रीरामकृष्ण भी नाटक देखने के लिए जा रहे हैं। मणि साथ साथ जा रहे हैं—श्रीरामकृष्ण से विदा होने के लिए।

श्रीरामकृष्ण-क्या तुम इसी समय जाना चाहते हो?

मणि-आज आप दिन के पिछले पहर सींती जायेंगे, मेरी

भी जाने की इच्छा है। इसलिए घर होकर जाना चाहता हूँ।

बातचीत करते हुए मणि काली-मन्दिर के पास आ गये। पास ही सभामण्डप है, नाटक हो रहा है। मणि ने सीढ़ियों के नीचे भूमिष्ठ हो श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'अच्छा चलो, और आठ हाथ वाली दो धोतियाँ मेरे लिए लेते आना।'

परिच्छेद २७

सींती ब्राह्मसमाज में

(१)

श्रीरामकृष्ण समाधि में

ब्राह्मभक्त सींती के ब्राह्मसमाज में सम्मिलित हुए। आज काली-पूजा का दूसरा दिन है। कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा, १९ अक्टूबर, १८८४। अब शरद् का महोत्सव हो रहा है। श्रीयुत वेणीमाधव पाल की मनोहर उद्यान-वाटिका में ब्राह्मसमाज का अधिवेशन हुआ।

प्रातःकाल की उपासना आदि हो गयी है। श्रीरामकृष्ण दिन के चार बजे आये। उनकी गाड़ी बगीचे के भीतर खड़ी हुई। साथ ही दल के दल भक्तगण चारों ओर से उन्हें घेरने लगे। उधर कमरे के अन्दर समाज की वेदी बनायी गयी। सामने दालान है। उसी दालान में श्रीरामकृष्ण बैठे। चारों ओर से भक्तों ने उन्हें घेर लिया। विजय, त्रैलोक्य तथा और भी बहुत से ब्राह्मभक्त उपस्थित हैं। उनमें ब्राह्मसमाजी एक सब-जज (Sub Judge) भी हैं।

महोत्सव के कारण समाज-गृह की शोभा अपूर्व हो रही है। अनेक रंगों की ध्वजा-पताकाएँ उड़ रही हैं। कहीं कहीं ऊँची इमारतों या छतों पर फूल-पत्तियों की झालरें लगी हुई हैं। सामने के स्वच्छ-सलिल सरोवर में शरद् के नील नभमण्डल का प्रतिबिम्ब सुहावना रूप धारण कर रहा है। बगीचे की लाल

लाल सडकों की दोनों ओर भाँति भाँति के फूलों से लदे हुए पेड़ सौन्दर्य को बढ़ा रहे है। आज श्रीरामकृष्ण के श्रीमुख से निकली हुई वही वेदवाणी, वही वेदध्वनि भक्तों को फिर सुनने को मिलेगी —वही ध्वनि जो एक समय आर्य महर्षियों के श्रीमुख से निकली थी; वही ध्वनि जो नररूपधारी, परमसन्यासी, ब्रह्मगतप्राण, जीवों के दुःख से कातर, भक्तवत्सल, भक्तावतार, भगवत्-प्रेमविह्वल ईसा के श्रीमुख से उनके द्वादश निरक्षर शिष्यों—उन मत्स्य-जीवियों—ने सुनी थी; वही ध्वनि जो पुण्यक्षेत्र कुरुक्षेत्र में सारथि-वेषधारी मानवाकार सच्चिदानन्द-गुरु भगवान श्रीकृष्ण के श्रीमुख से श्रीमद्भगवद्गीता के रूप में एक समय निकली थी एवं मेघगम्भीर ध्वनि में विनयनम्र व्याकुल 'गुडाकेश' कौन्तेय ने श्रवण के द्वारा इस कथामृत का पान किया था—

"कविं पुराणमनुशासितारम्
अणोरणीयांसमनुस्मरेत् यः।
सर्वस्य धातारमचिन्त्यरूप-
मादित्यवर्णं तमसः परस्तात् ॥
प्रयाणकाले मनसाऽचलेन
भक्त्या युक्तो योगबलेन चैव।
भ्रुवोर्मध्ये प्राणमावेश्य सम्यक्
स तं परं पुरुषमुपैति दिव्यम् ॥
यदक्षरं वेदविदो वदन्ति
विशन्ति यद् यतयो वीतरागाः।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति
तत्ते पदं संग्रहेण प्रवक्ष्ये ॥"

श्रीरामकृष्ण ने आसन ग्रहण कर समाज की सुरचित वेदी

की ओर दृष्टिपात करते ही सिर झुकाकर प्रणाम किया। वेदी पर से ईश्वरी चर्चा होती है, इसलिए श्रीरामकृष्ण उसे साक्षात् पुण्यक्षेत्र देख रहे हैं। जहाँ अच्युत का प्रसंग होता है, वहाँ सर्व तीर्थों का समागम हुआ ऐसा समझते हैं। अदालत की इमारत को देखते ही मुकदमे की याद आती है, जज पर ध्यान जाता है, उसी तरह इस ईश्वरी चर्चा के स्थान को देखकर श्रीरामकृष्ण को ईश्वर का उद्दीपन हो गया है।

श्रीयुत त्रैलोक्य गा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण ने कहा, "क्यों जी, तुम्हारा वह गाना बड़ा सुन्दर है—'माँ, मुझे पागल कर दे।' वही गाना जरा गाओ।" त्रैलोक्य गा रहे हैं—

(भावार्थ) "माँ, मुझे पागल कर दे। अब ज्ञान और विचार की कोई जरूरत नहीं है। तेरे प्रेम की सुरा के पीते ही ऐसा कर दे कि मैं बिलकुल मतवाला हो जाऊँ। भक्त के चित्त को हरण करनेवाली माँ, मुझे प्रेम के सागर में डुबा दे। तेरे इस पागलों की जमघट में कोई तो हँसता है, कोई रोता है और कोई आनन्द से नाचता है। प्रेम के आवेश में कितने ही ईसा, मूसा और चैतन्य अचेतन पड़े हुए हैं; इन्हीं में मिलकर माँ, मैं कब धन्य होऊँगा? स्वर्ग में भी पागलों का जमघट है, जैसे वहाँ गुरु हैं वैसे ही चेले भी, और इस प्रेम की क्रीड़ा को समझ ही कौन सकता है? तू भी तो प्रेम से पागल हो रही है, पागल ही नहीं, पागलों से बढ़कर। माँ, कंगाल प्रेमदास को भी तू प्रेम का धनी कर दे।"

गाना सुनते ही श्रीरामकृष्ण का भाव परिवर्तित हो गया —बिलकुल समाधि-लीन हो गये। कर्मेन्द्रिय, ज्ञानेन्द्रिय, मन, बुद्धि, अहंकार सब मानो मिट गये हैं। चित्रस्थ मूर्ति की तरह

देह दृष्टि स्थिर हो रही है। एक दिन भगवान् श्रीकृष्ण की यह अवस्था देखकर युधिष्ठिर आदि पाण्डव रोये थे। आर्यकुलगौरव भीष्मदेव शर-शय्या पर पड़े हुए अपना अन्तिम समय जान ईश्वर के ध्यान में मग्न थे। उस समय कुरुक्षेत्र की लड़ाई समाप्त ही हुई थी। अतएव वे रोने के ही दिन थे। श्रीकृष्ण की इस समाधि-अवस्था को न समझकर पाण्डव रोये थे, सोचा था, उन्होंने देह छोड़ दी।

(२)

हरिकथा-प्रसंग। ब्राह्मसमाज में निराकारवाद

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण की कुछ प्राकृत अवस्था हो गयी। उसी अवस्था में आप भक्तों को उपदेश देने लगे। उस समय भी ईश्वरी भाव का आप पर ऐसा आवेश था कि उनकी बातचीत से जान पड़ता था, कोई मतवाला बोल रहा है। धीरे धीरे भाव घटता जा रहा है।

श्रीरामकृष्ण-(भावस्थ)-माँ, मुझे कारणानन्द नहीं चाहिए, मैं सिद्धि पीऊँगा।

"सिद्धि अर्थात् वस्तु (ईश्वर) की प्राप्ति। वह अष्ट-सिद्धियों की सिद्धि नहीं, उसके लिए तो श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा है-'भाई, अगर कहीं किसी के पास अष्ट-सिद्धियों में से एक भी सिद्धि है, तो समझना कि वह मनुष्य मुझे नहीं पा सकता;' क्योंकि सिद्धि के रहने पर अहंकार भी रहेगा और अहंकार के लेशमात्र रहते कोई ईश्वर को पा नहीं सकता।

"एक प्रकार के मत के अनुसार चार प्रकार के भक्त होते हैं—प्रवर्तक, साधक, सिद्ध, सिद्ध का सिद्ध। जिसने ईश्वर की

आराधना में अभी अभी मन लगाया है, वह प्रवर्तकों में है; प्रवर्तक तिलक लगाते हैं, माला पहनते हैं, बाहर बड़ा आचार रखते हैं। साधक और आगे बढ़ा हुआ है, उसका दिखलावा बहुत कुछ घट गया है। उसे ईश्वर की प्राप्ति के लिए व्याकुलता होती है। वह आन्तरिक भाव से ईश्वर को पुकारता है, उनका नाम लेता है और भीतर से सरल भाव से प्रार्थना करता है। सिद्ध वह है जिसे निश्चयात्मिका बुद्धि हो गयी है—जिसने ईश्वर हैं और वे ही सब कुछ कर रहे हैं, यह सब देखा है। 'सिद्धों का सिद्ध' वह है जिसने उनसे बातचीत की है, केवल दर्शन ही नहीं। उनमें से किसी ने पिता के भाव से, किसी ने वात्सल्यभाव से, किसी ने मधुरभाव से उनके साथ आलाप भी किया है।

"लकड़ी में आग अवश्य है, यह विश्वास रखना एक बात है, पर लकड़ी से आग निकालकर रोटी पकाना, खाना, शान्ति और तृप्ति पाना, एक दूसरी बात है।

"ईश्वरी अवस्थाओं की इति नहीं की जा सकती। एक से एक बढ़कर अवस्थाएँ हैं।

(भावस्थ) "ये ब्रह्मज्ञानी हैं, निराकारवादी हैं, यह अच्छा है।

(ब्राह्मभक्तों से) "एक में दृढ़ रहो, या तो साकार में या निराकार में। तभी ईश्वर प्राप्त होता है, अन्यथा नहीं। दृढ़ होने पर साकारवादी भी ईश्वर को पायेंगे और निराकारवादी भी। मिश्री की डली सीधी तरह से खाओ या टेढ़ी करके, मीठी जरूर लगेगी। (सब हँसते हैं।)

"परन्तु दृढ़ होना होगा, व्याकुल होकर उन्हें पुकारना होगा। विषयी मनुष्यों के ईश्वर बस उसी तरह हैं, जैसे घर में चाची और दीदी को लड़ते हुए देखकर उनसे 'भगवान कसम',

सुनकर खेलते समय बच्चे भी कहते हैं 'भगवान कसम', और जैसे कोई शौकीन बाबू पान चबाते हुए, हात में छड़ी लेकर बगीचे में टहलते हुए एक फूल तोड़कर मित्र से कहते हैं—'ईश्वर ने कैसा ब्यूटिफुल (सुन्दर) फूल बनाया है !' विषयी मनुष्यों का यह भाव क्षणिक है, जैसे तपे हुए लोहे पर पानी के छींटे।

"एक पर दृढ़ता होनी चाहिए। डूबो—बिना डुबकी लगाये समुद्र के भीतर के रत्न नहीं मिलते। पानी के ऊपर केवल उतराते रहने से रत्न नहीं मिलता।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण जिस गाने से केशव आदि भक्तों का मन मोह लेते थे, वही गाना—उसी मधुर कण्ठ से—गाने लगे, सब के हृदय में एक अत्यन्त पवित्र स्वर्गीय आनन्द की धारा बहने लगी।

गाने का भाव यह है—

"ऐ मेरे मन ! रूप के समुद्र में तू डूब जा, तलातल और पाताल तक तू अगर उसकी खोज करता रहेगा, तो वह प्रेमरत्न तुझे अवश्य ही प्राप्त होगा।"

(३)

ब्रह्म समाज तथा ईश्वर के ऐश्वर्य का वर्णन

श्रीरामकृष्ण—डुबकी लगाओ। ईश्वर को प्यार करना सीखो। उनके प्रेम में मग्न हो जाओ। देखो, तुम्हारी उपासना सुन रहा हूँ। परन्तु तुम ब्राह्मसमाजवाले ईश्वर के ऐश्वर्य का इतना वर्णन क्यों करते हो ? 'हे ईश्वर ! तुमने आकाश की सृष्टि की है, बड़े बड़े समुद्र बनाये हैं, चन्द्रलोक, सूर्यलोक, नक्षत्र-लोक, यह सब तुम्हारी ही रचना है,' इन सब बातों से हमें क्या

काम ?

"सब आदमी बाबू के बगीचे को देखकर आश्चर्य कर रहे हैं—कैसे सुन्दर पेड़ उसमें लगे हैं, फूल, झील, बैठकखाना, उसके अन्दर तस्वीरों की सजावट, ये सब ऐसे सुन्दर हैं कि इन्हें देखकर लोग दंग रह जाते हैं, परन्तु बगीचे के मालिक की खोज करनेवाले कितने होते हैं? मालिक की खोज तो दो ही एक करते हैं। ईश्वर को व्याकुल होकर खोजने पर उनके दर्शन होते हैं, उनसे आलाप भी होता है, बातचीत होती है, जैसे मैं तुमसे बातचीत कर रहा हूँ। सत्य कहता हूँ, उनके दर्शन होते हैं।

"यह बात मैं कहता भी किससे हूँ और विश्वास भी कौन करता है!

"क्या कभी शास्त्रों के भीतर कोई ईश्वर को पा सकता है? शास्त्र पढ़कर अधिक से अधिक 'अस्ति' का बोध होता है। परन्तु स्वयं जब तक नहीं डूबते हो, तब तक ईश्वर के दर्शन नहीं हो सकते। डुबकी लगाने पर जब वे खुद समझा देते हैं, तब सन्देह दूर हो जाता है। चाहे हजार पुस्तकें पढ़ो, हजार श्लोकों की आवृत्ति करो, व्याकुल होकर उनमें डुबकी लगाये बिना, उन्हें पकड़ न सकोगे। कोरे पाण्डित्य से आदमियों को ही मुग्ध कर सकोगे, उन्हें नहीं।

"शास्त्रों और पुस्तकों से क्या होगा? उनकी कृपा के हुए बिना कहीं कुछ न होगा। जिससे उनकी कृपा हो, इसलिए व्याकुल होकर उद्योग करो। उनकी कृपा होने पर उनके दर्शन भी होंगे। तब वे तुम्हारे साथ बातचीत भी करेंगे।"

सब-जज—महाराज, उनकी कृपा क्या किसी पर अधिक और किसी पर कम भी है? इस तरह तो ईश्वर पर वैषम्यदोष

आ जाता है।

श्रीरामकृष्ण–यह क्या ! घोड़े में भी 'घ' है और घोंसले में भी 'घ' है, इसलिए क्या दोनों बराबर हैं? तुम जैसा कह रहे हो, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने भी वैसा ही कहा था। कहा था, 'महाराज, क्या उन्होंने किसी को अधिक शक्ति दी है और किसी को कम?' मैंने कहा, 'विभु के रूप से तो वे सब के भीतर हैं—मेरे भीतर जिस तरह है एक चींटी के भीतर भी उसी तरह हैं; परन्तु शक्ति की विशेषता है। अगर सब आदमी बराबर होते तो ईश्वरचन्द्र विद्यासागर यह नाम सुनकर हम लोग तुम्हें देखने क्यों आते? क्या तुम्हारे दो सींग निकले हैं? सो बात नहीं। तुम दयालु हो, पण्डित हो, ये सब गुण तुममें से दूसरों से अधिक हैं। इसीलिए तुम्हारा इतना नाम है।' देखो न, ऐसे आदमी भी हैं जो अकेले सौ आदमियों को हरा दें और ऐसे भी हैं कि एक ही के भय से भाग खड़े हों।

"अगर शक्ति की विशेषता न होती तो लोग केशव को इतना मानते कैसे?

"गीता में है, जिसे बहुत से आदमी जानते और मानते हैं, चाहे विद्या के लिए हो या गाने-बजाने के लिए, लेक्चर देने के लिए या अन्य गुणों के लिए, निश्चयपूर्वक समझो, उसमें ईश्वर की विशेष शक्ति है।"

ब्राह्म भक्त–(सब-जज से)–ये जो कुछ कहते हैं, आप मान लीजिये।

श्रीरामकृष्ण–(ब्राह्म भक्त से)–तुम कैसे आदमी हो? बात पर विश्वास न करके सिर्फ मान लेना! कपट-आचरण! देखता हूँ, तुम ढोंग करनेवाले हो।

ब्राह्म भक्त लज्जित हो गये।

(४)

ब्राह्मसमाज, ईसाई धर्म तथा पापवाद

सब-जज-महाराज, क्या संसार का त्याग करना होगा?

श्रीरामकृष्ण-नहीं, तुम्हें त्याग क्यों करना होगा? संसार में रहकर ही हो सकता है। परन्तु पहले कुछ दिन निर्जन में रहना पड़ता है। निर्जन में रहकर ईश्वर की साधना करनी पड़ती है। घर के पास एक अड्डा बनाना पड़ता है, जहाँ से बस रोटी खाने के समय घर आकर रोटी खा जा सको।

"केशव सेन, प्रतापचन्द्र इन सब लोगों ने कहा था, 'महाराज, हमारा मत राजा जनक के मत की तरह है।' मैंने कहा, 'कहने ही से कोई जनक राजा नहीं हो जाता। पहले जनक राजा ने सिर नीचे और पैर ऊपर करके एकान्त में कितनी तपस्या की थी। तुम लोग भी कुछ करो, तब राजा जनक होगे।' अमुक मनुष्य बहुत जल्दी अंग्रेजी लिख सकता है तो क्या एक ही दिन में उसने अंग्रेजी लिखना सीखा था? वह गरीब का लड़का है, पहले किसी के यहाँ रहकर भोजन पकाता था और खुद भी खाता था, बड़ी मेहनत से उसने अंग्रेजी सीखी थी, इसीलिए अब बहुत जल्दी अंग्रेजी लिख सकता है।

"मैंने केशव सेन से और भी कहा था, 'निर्जन में बिना गये कठिन रोग अच्छा कैसे होगा?' रोग है विकार। और जिस घर में विकारी रोगी है, उसी घर में अचार, इमली और पानी का घड़ा है। तो अब रोग कैसे अच्छा हो सकता है? अचार, इमली का नाम लेते ही देखो मेरी जीभ में पानी भर आया।

(सब हँसते है।) इनके सामने रहते हुए कभी रोग अच्छा हो सकता है? सब लोग जानते तो हो (पुरुष के लिए स्त्री अचार और इमली है और भोग-वासना पानी का घड़ा। विषय-तृष्णा का अन्त नही है। और ये विषय रोगी के घर मे है!)

"इससे क्या विकार-रोग अच्छा हो सकता है? कुछ दिन के लिए जगह छोड़कर दूसरी जगह रहना चाहिए, जहाँ न अचार हो, न इमली और न पानी का घड़ा। नीरोग होकर फिर उस घर में आने से कोई भय न रह जायेगा। उन्हें प्राप्त करके संसार मे आकर रहने से फिर कामिनी-कांचन की दाल नही गलती। तब जनक की तरह निर्लिप्त होकर रह सकोगे; परन्तु पहली अवस्था मे सावधान होना चाहिए, निरे निर्जन मे रहकर साधना करनी चाहिए। पीपल का पेड़ जब छोटा रहता है, तब उसे चारों ओर से घेर रखते है कि कही बकरी चर न जाय; परन्तु जब वह बढ़कर मोटा हो जाता है, तब उसे घेर रखने की आवश्यकता नही रहती। फिर हाथी बाँध देने पर भी पेड़ का कुछ नहीं बिगड़ता। अगर निर्जन मे साधना करके ईश्वर के पादपद्मों में भक्ति करके बल बढ़ाकर घर जाकर संसार करो, तो कामिनी-कांचन फिर तुम्हारा कुछ न कर सकेंगे।

"निर्जन मे दही जमाकर मक्खन निकाला जाता है। ज्ञान और भक्तिरूपी मक्खन अगर एक बार मनरूपी दूध से निकाल सको, तो संसाररूपी पानी में डाल देने से वह निर्लिप्त होकर पानी पर तैरता रहेगा, परन्तु मन को कच्ची अवस्था मे---दूध-वाली अवस्था मे ही---अगर संसाररूपी पानी मे छोड़ दोगे, तो दूध और पानी एक हो जायेंगे, तब फिर मन निर्लिप्त होकर उससे अलग न रह सकेगा।

"ईश्वर-प्राप्ति के लिए संसार में रहकर एक हाथ से ईश्वर के पादपद्म पकड़े रहना चाहिए और दूसरे हाथ से संसार का काम करना चाहिए। जब काम से छुट्टी मिले, तब दोनों हाथों से ईश्वर के पादपद्म पकड़ लो, तब निर्जन में वास करके एकमात्र उन्हीं की चिन्ता और सेवा करते रहो।"

सब-जज-(आनन्दित होकर)-महाराज, यह तो बड़ी सुन्दर बात है। एकान्त में साधना तो अवश्य ही करनी चाहिए। यही हम लोग भूल जाते हैं। सोचते हैं, एकदम राजा जनक हो गये! (श्रीरामकृष्ण और दूसरे हँसते हैं।) संसार का त्याग करने की जरूरत नहीं, घर पर रहकर भी लोग ईश्वर को पा सकते हैं—यह सुनकर मुझे शान्ति और आनन्द हुआ।

श्रीरामकृष्ण-तुम्हें त्याग क्यों करना होगा? जब लड़ाई करनी है, तो किले में रहकर ही लड़ाई करो। लड़ाई इन्द्रियों से है, भूख-प्यास इन सब के साथ लड़ाई करनी होगी। यह लड़ाई संसार में रहकर ही करना अच्छा है। फिर पर कलिकाल में प्राण अन्नगत है, बाहर कभी खाना न मिला, तो उस समय ईश्वर-फीश्वर सब भूल जायेंगे। (किसी ने अपनी बीवी से कहा—'मैं संसार छोड़कर जाता हूँ।' उसकी बीवी कुछ समझदार थी। उसने कहा—'क्यों तुम चक्कर लगाते फिरोगे? अगर पेट भरने के लिए दस घरों में चक्कर न लगाना पड़े तब तो कोई बात नहीं, जाओ, लेकिन अगर चक्कर लगाना पड़े तो अच्छा यही है कि इसी घर में रहो।')

"तुम लोग त्याग क्यों करोगे? घर में रहने से तो बल्कि सुविधाएँ हैं। भोजन की चिन्ता नहीं करनी होती। सहवास भी पत्नी के साथ, इसमें दोष नहीं है। शरीर के लिए जब जिस

वस्तु की जरूरत होगी वह पास ही तुम्हें मिल जायेगी। रोग होने पर सेवा करनेवाले आदमी भी पास ही मिलेंगे।

"जनक, व्यास, वशिष्ठ ने ज्ञानलाभ कर संसार-धर्म का पालन किया था। ये दो तलवारें चलाते थे। एक ज्ञान की और दूसरी कर्म की।"

सब-जज–महाराज, ज्ञान हुआ यह हम कैसे समझें?

श्रीरामकृष्ण–ज्ञान के होने पर फिर वे दूर नहीं रहते, न दूर दीख पड़ते हैं, और फिर उन्हें 'वे' नहीं कह सकते, फिर 'ये' कहा जाता है। हृदय में उनके दर्शन होते हैं। वे सब के भीतर है, जो खोजता है, वही पाता है।

सब-जज–महाराज, मैं पापी हूँ। कैसे कहूँ—वे मेरे भीतर हैं?

श्रीरामकृष्ण–जान पड़ता है तुम लोगों में यही पाप पाप लगा रहता है—यह क्रिस्तानी मत है, नहीं? मुझे किसी ने एक पुस्तक—बाइबिल (Bible)—दी। उसका मैंने कुछ भाग सुना। उसमें बस वही एक बात थी—पाप-पाप! मैंने जब उनका नाम लिया—राम या कृष्ण कहा, तो मुझे फिर पाप कैसे लग सकता है—ऐसा विश्वास चाहिए। नाम माहात्म्य पर विश्वास होना चाहिए।

सब-जज–महाराज, यह विश्वास कैसे हो?

श्रीरामकृष्ण–उन पर अनुराग लाओ। तुम्हीं लोगों के गाने में है—'हे प्रभु, बिना अनुराग के क्या तुम्हें कोई जान सकता है, चाहे कितने ही याग और यज्ञ क्यों न करे?' जिससे इस प्रकार का अनुराग हो, इस तरह ईश्वर पर प्यार हो, उसके लिए उनके पास निर्जन में व्याकुल होकर प्रार्थना करो और रोओ। स्त्री के

बीमार होने पर, व्यापार में घाटा होने पर या नौकरी के लिए लोग आँसुओं की धारा बहा देते हैं, परन्तु बताओ तो, ईश्वर के लिए कौन रोता है ?

(५)

आम-मुख्तारी दे दो

त्रैलोक्य–महाराज, इनको समय कहाँ है ? अंग्रेज का काम करना पड़ता है।

श्रीरामकृष्ण–अच्छा, उन्हें आम-मुख्तारी दे दो। अच्छे आदमी पर अगर कोई भार देता है, तो क्या वह आदमी कभी उसका अहित करता है ? उन्हें हृदय से सब भार देकर तुम निश्चिन्त होकर बैठे रहो। उन्होंने जो काम करने के लिए दिया है, तुम वही करते जाओ।

"बिल्ली के बच्चे में कपटयुक्त बुद्धि नहीं है। वह मीऊँ मीऊँ करके माँ को पुकारना भर जानता है। माँ अगर कैंड़-हर में रखती है, तो देखो वहीं पड़ा रहता है। बस 'मीऊँ' करके पुकारता भर है। माँ जब उसे गृहस्थ के बिस्तरे पर रखती है, तब भी उसका वही भाव है। 'मीऊँ' कहकर माँ को पुकारता है।"

सब-जज–हम लोग गृहस्थ हैं, कब तक यह सब काम करना होगा ?

श्रीरामकृष्ण–तुम्हारा कर्तव्य अवश्य है। वह है बच्चों को आदमी बनाना, स्त्री का भरणपोषण करना, अपने न रहने पर स्त्री के रोटीकपड़े के लिए कुछ रख जाना। यह अगर न करोगे तो तुम निर्दय कहलाओगे। शुकदेव आदि ने भी दया रखी थी। जिसको दया नहीं, वह मनुष्य ही नहीं है।

सब-जज-सन्तान का पालन-पोषण कब तक के लिए है ?

श्रीरामकृष्ण-उनके बालिग होने तक के लिए। पक्षी के बड़े होने पर जब वह खुद अपना भार ले सकता है, तब उसकी माँ उस पर चोंच चलाती है, उसे पास नहीं आने देती। (सब हँसते हैं।)

सब-जज-स्त्री के प्रति क्या कर्तव्य है ?

श्रीरामकृष्ण-जब तक तुम बचे हुए हो, तब तक धर्मोपदेश देते रहो, रोटी-कपड़ा देते जाओ। यदि वह सती होगी, तो तुम्हारी मृत्यु के बाद जिससे उसके खाने-पहनने की कोई न कोई व्यवस्था हो जाय, ऐसा बन्दोबस्त तुम्हें कर देना होगा।

"परन्तु ज्ञानोन्माद के होने पर फिर कोई कर्तव्य नहीं रह जाता। तब कल के लिए तुम अगर न सोचोगे तो ईश्वर सोचेंगे। ज्ञानोन्माद होने पर तुम्हारे परिवार के लिए भी वे ही सोचेंगे। जब कोई जमींदार नाबालिग लड़कों को छोड़कर मर जाता है तब सरकार रियासत का काम सँभालती है। ये सब कानूनी बातें हैं, तुम तो जानते ही हो।"

सब-जज-जी हाँ।

विजय गोस्वामी-अहा ! अहा ! कैसी बात है। जिनका मन एकमात्र उन्हीं पर लगा रहता है, जो उनके प्रेम में पागल हो जाते हैं, उनका भार ईश्वर स्वयं ढोते हैं। नाबालिगों को बिना खोजे आप ही पालक मिल जाते है। अहा, यह अवस्था कब होगी? जिनकी होती हैं, वे कितने भाग्यवान है !

त्रैलोक्य-महाराज, संसार में क्या यथार्थ ज्ञान होता है ? --ईश्वर मिलते है ?

श्रीरामकृष्ण-(हँसते हुए)-क्यों--तुम तो मौज में

हो। (सब हँसते हैं।) ईश्वर पर मन रखकर संसार में हो न? अवश्य ही काम हो जायेगा।

त्रैलोक्य-संसार में ज्ञानलाभ होता है, इसके लक्षण क्या हैं?

श्रीरामकृष्ण-ईश्वर का नाम लेते हुए, उसकी आँखों से धारा बह चलेगी, शरीर में पुलक होगा। उनका मधुर नाम सुनकर शरीर रोमांचित होने लगेगा और आँखों से धारा बह चलेगी।

"जब तक विषय की आसक्ति रहती है, कामिनी-कांचन पर प्यार रहता है, तब तक देहबुद्धि दूर नहीं होती। विषय की आसक्ति जितनी घटती जाती है, उतना ही मन आत्मज्ञान की ओर बढ़ता जाता है और देहबुद्धि भी घटती जाती है। विषय की आसक्ति के समूल नष्ट हो जाने पर ही आत्मज्ञान होता है, तब आत्मा अलग जान पड़ता है और देह अलग। नारियल का पानी सूखे बिना गोले को नारियल से काटकर अलग करना बड़ा मुश्किल है। पानी सूख जाता है तो नारियल का गोला खड़-खड़ाता रहता है। वह खोल से छूट जाता है। इसे पका हुआ नारियल कहते हैं।

"ईश्वर की प्राप्ति होने का यही लक्षण है कि वह आदमी पके हुए नारियल की तरह हो जाता है—तब उसकी देहात्मिका-बुद्धि चली जाती है। देह के सुख और दुःख से उसे सुख या दुःख का अनुभव नहीं होता। वह आदमी देह-सुख नहीं चाहता, वह जीवन्मुक्त होकर विचरण करता है।

"जब देखना कि ईश्वर का नाम लेते ही आँसू बहते हैं और पुलक होता है, तब समझना, कामिनी-कांचन की आसक्ति चल गयी है, ईश्वर मिल गये हैं। दियासलाई अगर सूखी हो, तो घिसने से ही जल उठती है। और अगर भीगी हो, तो चाहे

पचासों सलाई घिस डालो कहीं कुछ न होगा, सलाइयों की बरबादी करना ही है। विषय-रस में रहने पर, कामिनी और कांचन में मन भीगा हुआ होने पर, ईश्वर की उद्दीपना नहीं होती। चाहे हजार उद्योग करो, परन्तु सब व्यर्थ होगा। विषय-रस के सूखने पर उसी क्षण उद्दीपन होगा।"

त्रैलोक्य-विषय-रस को सुखाने का अब कौनसा उपाय है?

श्रीरामकृष्ण-माता से व्याकुल होकर कहो। उनके दर्शन होने पर विषय-रस आप ही सूख जायेगा। कामिनी-कांचन की आसक्ति सब दूर हो जायेगी। 'अपनी माँ हैं' ऐसा बोध हो जाने पर इसी समय मुक्ति हो जाये ी। वे कुछ धर्म की माँ थोड़े ही हैं, अपनी माँ हैं। व्याकुल होकर माता से कहो—हठ करो। बच्चा पतंग खरीदने के लिए माता का आँचल पकड़कर पैसे माँगता है। माँ कभी उस समय दूसरी स्त्रियों से बातचीत करती रहती है। पहले किसी तरह पैसे देना ही नहीं चाहती। कहती है—'नहीं, वे मना कर गये हैं। आयेंगे तो कह दूंगी, पतंग लेकर एक उत्पात खड़ा करना चाहता है क्या?' पर जब लड़का रोने लगता है, किसी तरह नहीं छोड़ता, तब माँ दूसरी स्त्रियों से कहती है, तुम जरा बैठो, इस लड़के को बहलाकर मैं अभी आयी। यह कहकर चाभी ले, झटपट सन्दूक खोलती है और एक पैसा बच्चे के आगे फेंक देती है। इसी तरह तुम भी माता से हठ करो। वे अवश्य ही दर्शन देंगी। मैंने सिक्खों से यही बात कही थी। वे लोग दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर में गये थे। कालीमन्दिर के सामने बैठकर बातचीत हुई थी। उन लोगों ने कहा था, ईश्वर दयामय हैं। मैंने पूछा, क्यों दयामय हैं? उन लोगों ने कहा, क्यों महाराज, वे सदा ही हमारी देख-रेख करते हैं, हमें धर्म और

अर्थ भर दे रहे हैं, खाने को देते हैं। मैंने कहा, अगर किसी के लड़के-बच्चे हों, तो उनकी खबर, उनके खाने-पीने का भार उनका बाप न लेगा, तो क्या गाँववाले आकर लेंगे ?

सब-जज-महाराज, तो क्या वे दयामय नहीं हैं ?

श्रीरामकृष्ण-हैं क्यों नहीं ? वह एक बात उस तरह की कहली ही थी। वे तो अपने परम आत्मीय हैं। उन पर हमारा जोर है। अपने आदमी से तो ऐसी बात भी कही जा सकती है-'देगा कि नहीं?—साला कहीं का !'

(६)

अहंकार और सब-जज

श्रीरामकृष्ण-(सब-जज से)-अच्छा, अभिमान और अहंकार ज्ञान से होते हैं या अज्ञान से ?—अहंकार तमोगुण है, अज्ञान से पैदा होता है। इस अहंकार की आड़ है इसीलिए लोग ईश्वर को नहीं देख पाते। 'मैं' मरा कि बला टली। अहंकार करना वृथा है। यह शरीर, यह ऐश्वर्य, कुछ भी न रह जायगा। कोई मतवाला दुर्गा की मूर्ति देख रहा था। प्रतिमा की सजावट देखकर उसने कहा, 'चाहे जितना बनोठनो' एक दिन लोग तुम्हें घसीटकर गंगा में डाल देंगे।' (सब हँसते हैं।) इसी-लिए सब से कह रहा हूँ, जज हो जाओ, चाहे जो हो जाओ, सब दो दिन के लिए है। इसीलिए अभिमान और अहंकार का त्याग करना चाहिए।

"सत्त्व, रज और तम, इन तीनों गुणों का स्वभाव अलग अलग है। तमोगुणवालों के लक्षण हैं, अहंकार, निद्रा, अधिक भोजन, काम, क्रोध, आदि आदि। रजोगुणी अधिक काम छाँटते

भगवान् श्रीरामकृष्ण

हैं; कपड़े साफ सुथरे, घर झकाझक, बैठकखाने में Queen (रानी) की तस्वीर; जब ईश्वर की चिन्ता करता है, तब रेशमी धोती पहनता है, गले में रुद्राक्ष की माला है, उसमें कहीं कहीं सोने के दाने पड़े रहते हैं, अगर कोई उसका ठाकुरमन्दिर देखने के लिए जाता है, तो साथ जाकर दिखाता और कहता है, 'इधर आइये, अभी और देखने को है। सफेद पत्थर—संगमर्मर—की जमीन है, सोलह द्वारों का सभामण्डप है।' और आदमियों को दिखला-कर दान देता है। सतोगुणी मनुष्य बहुत ही शिष्ट और शान्त होता है; उसके कपड़े वही जो मिल गये; रोजगार बस पेट भरने के लिए; कभी किसी की खुशामद करके धन नहीं लेता; घर की मरम्मत नहीं हुई है, मान और प्रतिष्ठा के लिए एड़ी और चोटी का पसीना एक नहीं करता; ईश्वर-चिन्तन, दान-ध्यान सब गुप्त भाव से करता है—लोगों को खबर नहीं होती, मसहरी के भीतर ध्यान करता है, लोग सोचते हैं—रात को बाबू की आँख नहीं लगी, इसीलिए देर तक सो रहे हैं। सतोगुण अन्त की सीढ़ी है, उसके आगे ही छत है। सतोगुण के आने पर ईश्वर-प्राप्ति में फिर देर नहीं होती—जरासा और बढ़ने से ही ईश्वर मिलते हैं। (सब-जज से) तुमने कहा था, सब आदमी बराबर हैं, देखो, अलग अलग प्रकृति के कितने मनुष्य हैं।

"और भी कितने ही दर्जे हैं—नित्यजीव, मुक्तजीव, मुमुक्षु-जीव, बद्धजीव—अनेक तरह के आदमी हैं। नारद, शुकदेव नित्य जीव हैं; जैसे Steam boat (कलवाला जहाज)। खुद भी पार जाता है और बड़े बड़े जीवों को—हाथियों को भी ले जाता है। नित्य जीव नायबों की तरह हैं, एक स्थान का शासन कर दूसरे का शासन करने के लिए जाते हैं। मुमुक्षु जीव संसार

के जाल से मुक्त होने के लिए व्याकुल होकर जान तक की बाजी लगाकर परिश्रम करते हैं। इनमें से एक ही दो जाल से निकल सकते हैं, वे मुक्त जीव हैं। नित्यजीव एक चालाक मछली की तरह हैं, वे कभी जाल में नहीं पड़ते।

"परन्तु जो बद्ध जीव हैं, संसारी जीव हैं, उन्हें होश नहीं रहता। वे जाल में तो पड़े हुए हैं, परन्तु यह ज्ञान नहीं है कि हम जाल में फँसे हैं। सामने भगवत्प्रसंग देखकर वे लोग वहाँ से उठकर चले जाते हैं, कहते हैं—'मरने के समय रामनाम लिया जायेगा, अभी इतनी जल्दी क्या है?' फिर मृत्युशय्या पर पड़े हुए अपनी स्त्री या लड़के से कहते हैं, 'दीपक में कई बत्तियाँ क्यों लगायी गयी हैं?—एक बत्ती लगाओ, मुफ्त में तेल जला जा रहा है।' और अपनी बीबी और बच्चों की याद कर-करके रोते हैं, कहते हैं, 'हाय! मैं मरूँगा तो इनके लिए क्या होगा?' बद्ध जीव जिससे इतनी तकलीफ पाता है, वही काम फिर करता है; जैसे कँटीली डालियाँ चबाते हुए ऊँट के मुँह से धर-धर खून बहने लगता है, परन्तु वह कँटीली डालियों को खाना फिर भी नहीं छोड़ता। इधर लड़का मर गया है, शोक से विह्वल हो रहा है, फिर भी हर साल बच्चों की पैदाइश में घाटा नहीं होता; लड़की के विवाह में सिर के बाल भी बिक गये; परन्तु हर साल लड़के और लड़कियों की हाजिरी में कमी नहीं होती; कहता है, 'क्या करूँ, भाग्य में ऐसा ही था।' अगर तीर्थ करने के लिए जाता है, तो स्वयं कभी ईश्वर की चिन्ता नहीं करता, न समय मिलता है—समय तो बीबी की पोटली ढोते ढोते पार हो जाता है, ठाकुरमन्दिर में जाकर बच्चे को चरणामृत पिलाने और देवता के सामने लोटपोट कराने में ही व्यस्त रहता है। बद्ध जीव

अपने और अपने परिवार के पेट पालने के लिए ही दासत्व करता है, और झूठ, वंचना एवं खुशामद करके धनोपार्जन करता है। जो लोग ईश्वर की चिन्ता करते हैं, ईश्वर के ध्यान में मग्न रहते हैं, उन्हें बद्ध जीव पागल कहते हैं और इस तरह उन्हें चुटकियों मे उड़ाया करते हैं। देखो, आदमी कितनी तरह के हैं। तुमने सब को बराबर बतलाया था। देखो, कितनी भिन्न-भिन्न प्रकृतियाँ हैं। किसी में शक्ति अधिक है, किसी में कम।

"संसार में फँसा हुआ जीव मृत्यु के समय संसार की ही बातें कहता है। बाहर माला जपने, गंगा नहाने और तीर्थ जाने से क्या होता है? संसार की आसक्ति के रहने पर, मृत्यु के समय वह दीख पड़ती है। न जाने कितनी वाहियात बातें बकता रहता है। कभी-कभी सन्निपात में 'हलदी, मसाला, धनियाँ' कहकर चिल्ला उठता है। तोता जब भलाचंगा रहता है तब राम राम कहता है, जब बिल्ली पकड़ती है तो अपनी बोली में 'टें-टें' करता है। गीता में लिखा है, मृत्यु के समय जो कुछ सोचोगे, दूसरे जन्म में वही होगे। राजा भरत ने 'हरिण-हरिण' कहकर देह छोड़ी थी, दूसरे जन्म में वे हरिण ही हुए थे। ईश्वर की चिन्ता करके देह का त्याग करने पर ईश्वर की प्राप्ति होती है। फिर इस संसार में नहीं आना पड़ता।"

ब्राह्मभक्त—महाराज! किसी ने दूसरे समय में ईश्वर की चिन्ता की है, परन्तु मृत्यु के समय नहीं कर सका, तो क्या फिर उसे इस दुःखमय संसार में आना होगा? पहले तो उसने ईश्वर की चिन्ता की थी।

श्रीरामकृष्ण—जीव ईश्वर की चिन्ता तो करता है, परन्तु ईश्वर पर उसका विश्वास नहीं है, इसलिए फिर भलकर संसार

में फँस जाता है। जैसे हाथी को बार बार नहलाने पर भी, वह फिर देह पर धूल फेंक लेता है, उसी तरह मन भी मतवाला है; परन्तु हाथी को नहलाकर ही अगर उसके स्थान में बाँध रखो तो फिर वह अपने ऊपर धूल नहीं डाल सकेगा। अगर मृत्यु के समय जीव ईश्वर की चिन्ता करता है तो उसका मन शुद्ध हो जाता है, वह मन फिर कामिनी-कांचन में फँसने का अवसर नहीं पाता।

"ईश्वर पर विश्वास नहीं है, इसीलिए इतने कर्मों का भोग करना पड़ता है। लोग कहते हैं, जब तुम गंगा नहाने जाते हो तब तुम्हारे शरीर के पाप किनारे के पेड़ पर बैठ जाते हैं, तुम गंगा नहाकर निकले नहीं कि वे पाप फिर तुम्हारे सिर पर सवार हो जाते हैं। (सब हँसते हैं।) देहत्याग के समय जिससे ईश्वर की चिन्ता हो, उसी के लिए पहले से उपाय किया जाता है। उपाय है—अभ्यासयोग। ईश्वर-चिन्तन का अभ्यास करने पर अन्तिम दिन भी उनकी याद आयेगी।"

ब्राह्मभक्त–बड़ी अच्छी बातें हुईं, बड़ी सुन्दर बातें हैं।

श्रीरामकृष्ण–कैसी बेसिर-पैर की बातें मैं बक गया। परन्तु मेरा भाव क्या है, जानते हो? मैं यन्त्र हूँ, वे यन्त्री हैं; मैं गृह हूँ, वे गृही हैं, मैं गाड़ी हूँ, वे इंजीनियर हैं, मैं रथ हूँ, वे रथी हैं, जैसा चलाते हैं, वैसा ही चलता हूँ, जैसा कराते हैं, वैसा ही करता हूँ।

(७)

श्रीरामकृष्ण कीर्तनानन्द में

त्रैलोक्य फिर गा रहे हैं। साथ में खोल-करताल बज रहे हैं। श्रीरामकृष्ण प्रेमोन्मत्त होकर नृत्य करते करते कितनी ही

बार समाधिमग्न हो रहे हैं। समाधिमग्न अवस्था में खड़े हैं। देह निःस्पन्द है। नेत्र स्थिर, मुख हँसता हुआ, किसी प्रिय भक्त के कन्धे पर हाथ रखे हुए हैं; भाव के अन्त में फिर वही प्रेमोन्मत्त नृत्य। बाह्य दशा को प्राप्त होकर गाने के पद स्वयं भी गाते हैं।

यह अपूर्व दृश्य है! मातृगतप्राण, प्रेमोन्मत्त बालक का स्वर्गीय नृत्य! ब्राह्मभक्त उन्हें घेरकर नृत्य कर रहे हैं। जैसे लोह को चुम्बक ने खींच लिया हो। सब के सब उन्मत्तवत् होकर ब्रह्म के गुणानुवाद गा रहे हैं। कभी कभी ब्रह्म के उस मधुर नाम का—माँ नाम का—उच्चारण कर रहे हैं—कोई कोई बालक की तरह 'माँ-माँ' करते हुए रो रहे हैं।

कीर्तन समाप्त हो जाने पर सब ने आसन ग्रहण किया। अभी तक समाज की सन्ध्यावाली उपासना नहीं हुई है। इस कीर्तनानन्द में सब नियम न जाने कहाँ वह गये। श्रीयुत विजयकृष्ण गोस्वामी रात को वेदी पर बैठेंगे, ऐसा बन्दोबस्त किया गया है। इस समय रात के आठ बजे होंगे।

सब ने आसन ग्रहण किया। श्रीरामकृष्ण भी बैठे हुए हैं। सामने विजय हैं। विजय की सास और दूसरी स्त्रियाँ श्रीरामकृष्ण के दर्शन करना चाहती हैं और उनसे बातचीत भी करेंगी। यह संवाद पाकर श्रीरामकृष्ण कमरे के भीतर जाकर उनसे मिले।

कुछ देर बाद वहाँ से आकर वे विजय से कह रहे हैं, "देखो, तुम्हारी सास बड़ी भक्तिमती है। उसने कहा, 'संसार की बात अब न कहिये, एक तरंग जाती है और दूसरी आती है।' मैंने कहा 'इससे तुम्हारा क्या बिगड़ सकता है? तुम्हें ज्ञान तो है।' तुम्हारी सास ने इस पर कहा, 'मुझे कहाँ का ज्ञान है! अब भी

में विद्या माया और अविद्या माया के पार नहीं जा सकी। सिर्फ अविद्या माया के पार जाने से तो कुछ होता नहीं, विद्या माया को भी पार करना है, ज्ञान तो तभी होगा। आप ही तो यह बात कहते हैं।'"

यह बात हो रही थी कि श्रीयुत वेणीपाल आ गये।

वेणीपाल–महाराज, तो अब उठिये, बड़ी देर हो गयी, चलकर उपासना का श्रीगणेश कीजिये।

विजय–महाराज ! अब और उपासना की क्या जरूरत है ? आप लोगों के यहाँ पहले खीर-मलाई खिलाने की व्यवस्था है और पीछे से मटर की दाल तथा और और चीजें।

श्रीरामकृष्ण–(हँसकर) जो जैसा भक्त है, वह वैसी ही भेंट चढ़ाता है। सतोगुणी भक्त खीर चढ़ाता है, रजोगुणी पचास तरह की चीजें पकाकर भोग लगाता है। तमोगुणी भक्त भेड़ और बकरे की बलि देता है।

विजय उपासना करने के लिए वेदी पर बैठें या नहीं, यह सोच रहे हैं।

(८)

ब्राह्मसमाज में व्याख्यान। ईश्वर ही गुरु हैं।

विजय–आप कृपा कीजिये, तभी मैं वेदी पर से कुछ कह सकूँगा।

श्रीरामकृष्ण–अभिमान के जाने से ही हुआ। मैं लेक्चर दे रहा हूँ, तुम सुनो, इस अभिमान के न रहने से ही हुआ। अहंकार ज्ञान से होता है या अज्ञान से ? जो निरहंकार है, ज्ञान उसे ही होता है। नीची जमीन में ही वर्षा का पानी ठहरता है,

ऊँची जमीन से वह जाता है।

"जब तक अहंकार रहता है, तब तक ज्ञान नहीं होता और न मुक्ति ही होती है। इस संसार में बार बार आना पड़ता है। बछड़ा 'हम्बा-हम्बा' (हम-हम) करता है इसलिए उसे इतना कष्ट भोगना पड़ता है। कसाई काटते हैं। चमड़े से जूते बनाते हे, और जंगी ढोल मढ़े जाते हैं, वह ढोल भी न जाने कितना पीटा जाता है, तकलीफ की हद हो जाती है। अन्त में आँतों से ताँत बनायी जाती है। उस ताँत से जब धुनिये का धनुहा बनता है और उसके हाथ मे धुनकते समय जब ताँत 'तूँ-तूँ' करती है तब कहीं निस्तार होता है, तब वह 'हम्बा-हम्बा' (हम-हम) नहीं बोलती, 'तूँ-तूँ' करती है; अर्थात 'हे ईश्वर, तुम कर्ता हो, मे अकर्ता; तुम यन्त्री हो, मे यन्त्र; तुम्ही सब कुछ हो।'

"गुरु, बाबा और मालिक, इन तीन बातों से मेरी देह में काँटे चुभते हैं। मे उनका बच्चा हूँ, सदा ही बालक हूँ, मै क्यों 'बाबा' होने लगा? ईश्वर ही मालिक हैं; वे यन्त्री हैं; मैं यन्त्र हूँ।

"और कोई मुझे गुरु कहता है, तो मे कहता हूँ 'चल साला, गुरु क्या है रे?' एक सच्चिदानन्द को छोड़ और गुरु कोई नहीं है, उनके बिना कोई उपाय नहीं है। एकमात्र वे ही भवपार ले जानेवाले है। (विजय से) आचार्यगिरी बहुत मुश्किल बात है। उससे अपनी हानि होती है। दस आदमियों को आप ही आप मानते हुए देखकर वह पैर के ऊपर पैर रखकर कहता है, 'मैं बोलता हूँ, तुम सुनो।' ऐसा भाव बड़ा बुरा है। उसके लिए बस वही हद है। वही जरासा मान; अधिक से अधिक लोग कहेंगे— 'अहा, विजय बाबू बहुत अच्छा बोले, वे बड़े ज्ञानी आदमी है।' 'मे कह रहा हूँ,' ऐसा विचार न लाना। मे माँ से कहता हूँ—

'माँ, तुम यन्त्री हो, मैं यन्त्र हूँ; जैसा कराती हो, वैसा ही करता हूँ, जैसा कहलाती हो, वैसा ही कहता हूँ।'"

विजय- (विनयपूर्वक)-आप कहें तो मैं वेदी पर बैठ सकता हूँ।

श्रीरामकृष्ण-(हँसते हुए)-मैं क्या कहूँ? तुम्हीं ईश्वर से प्रार्थना करो। जैसे चन्दामामा सभी के मामा हैं वैसे वे भी सभी के हैं। अगर आन्तरिकता होगी तो भय की बात नहीं है।

विजय के फिर विनय करने पर श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'जाओ, जैसी पद्धति है, वैसा ही करो। उन पर आन्तरिक भक्ति के रहने ही से काम हो जायेगा।' वेदी पर बैठकर विजय ब्राह्मसमाज की पद्धति के अनुसार उपासना करने लगे। प्रार्थना के समय विजय 'माँ-माँ' कहकर पुकार रहे हैं। सुनकर सब लोग द्रवीभूत हो गये।

उपासना के पश्चात् भक्तों की सेवा के लिए भोजन का आयोजन हो रहा है। दरियाँ, गलीचे, सब उठा लिये गये। वहीं पत्तलें पड़ने लगीं। प्रबन्ध हो जाने पर भक्तों ने भोजन करने के लिए आसन ग्रहण किया। श्रीरामकृष्ण का भी आसन लगाया गया। वे भी बैठे और वेणीपाल की परोसी हुई पूड़ियाँ, कचौड़ियाँ, पापड़ और अनेक प्रकार की मिठाइयाँ, दही-खीर आदि ईश्वर को भोग लगाकर आनन्दपूर्वक भोजन करने लगे।

(९)

पूर्ण ज्ञान के बाद अभेद। ईश्वर का मातृभाव। मायासक्ति

भोजन के बाद पान खाते हुए सब लोग घर लौट रहे हैं। श्रीरामकृष्ण लौटने के पहले विजय से एकान्त में बैठकर बातचीत कर रहे हैं। वहाँ मास्टर भी हैं।

श्रीरामकृष्ण–तुमने उनसे 'माँ-माँ' कहकर प्रार्थना की थी। यह बहुत अच्छा है। कहावत है, माँ की चाह बाप से अधिक होती है। माँ पर अपना वस है, बाप पर नहीं। त्रैलोक्य की माँ की जमींदारी से गाड़ियों में रुपया लदकर आता था। हाथ में लाठियाँ लिये कितने ही लाल पगड़ीवाले सिपाही साथ रहते थे। त्रैलोक्य रास्ते में आदमियों को लिये हुए खड़ा रहता था, जबरन सब रुपया ले लेता था। माँ के धन पर अपना पूरा जोर है। कहते हैं, लड़के के नाम पर माँ का दावा भी नहीं होता।

विजय–ब्रह्म अगर माँ हैं, तो वे साकार हैं या निराकार ?

श्रीरामकृष्ण–जो ब्रह्म हैं, वही काली भी हैं। जब निष्क्रिय हैं, तब उन्हें ब्रह्म कहते हैं। जब सृष्टि, स्थिति, प्रलय, यह सब काम करते हैं, तब उन्हें शक्ति कहते हैं। स्थिर जल से ब्रह्म की उपमा हो सकती है। पानी जब हिलता-डुलता है, तब वह शक्ति की—काली की उपमा है। काली वे हैं, जो महाकाल के साथ रमण करती हैं। काली साकार भी हैं और निराकार भी। तुम लोग अगर निराकार पर विश्वास करते हो, तो काली का उसी रूप में ध्यान करो। एक को मजबूती से पकड़कर उनकी चिन्ता करने से वे ही समझा देती हैं कि वे कैसी हैं। श्यामपुकुर पहुँचने पर तेलीपाड़ा भी जान लोगे। तब तुम समझ जाओगे कि ईश्वर है (अस्तिमात्रम्)। यही नहीं, बल्कि वे तुम्हारे पास आकर तुमसे बोलेंगे, बातचीत करेंगे—जैसे .. तुमसे बोल रहा हूँ। विश्वास करो, सब हो जायेगा। एक बात और है, तुम्हें अगर निराकार पर विश्वास हो, तो उसी विश्वास को दृढ़ करो। परन्तु कट्टर मत बनो। उनके सम्बन्ध में जोर देकर ऐसा न कहना कि वे यह हो सकते हैं और यह नहीं।

कहो—'मेरा विश्वास है, वे निराकार हैं, वे और क्या क्या हो सकते हैं, यह तो वे ही जानें। मैं नहीं जानता, न मेरी समझ में यह बात आती है।' आदमी की छटाक भर बुद्धि से क्या ईश्वर की बात समझी जा सकती है? सेर भर के लोटे में क्या चार सेर दूध समाता है? वे अगर कृपा करके कभी दर्शन दें और समझायें तो समझ में आता है, नहीं तो नहीं।

"जो ब्रह्म हैं, वही शक्ति हैं, वही माँ हैं। रामप्रसाद कहते हैं, मैं जिस सत्य की तलाश कर रहा हूँ वे ब्रह्म हैं, उन्हें ही मैं माँ कहकर पुकारता हूँ। इसी बात को रामप्रसाद ने एक जगह और दुहराया है, काली को ब्रह्म जानकर मैंने धर्म और अधर्म दोनों का त्याग कर दिया है।

"अधर्म है असत् कर्म। धर्म है वैधी कर्म—इतना दान करना होगा—इतने ब्राह्मणों को खिलाना है, यह सब धर्म है।"

विजय–धर्म और अधर्म का त्याग करने पर बाकी क्या रहता है?

श्रीरामकृष्ण–शुद्धा भक्ति। मैंने माँ से कहा था, 'माँ! यह लो अपना धर्म, यह लो अपना अधर्म, मुझे शुद्धा भक्ति दो। यह लो अपना पुण्य और यह लो अपना पाप, मुझे शुद्धा भक्ति दो। यह लो अपना ज्ञान और यह लो अपना अज्ञान, मुझे शुद्धा भक्ति दो।' देखो, ज्ञान भी मैंने नहीं चाहा। मैंने लोकसम्मान भी नहीं चाहा। धर्माधर्म का त्याग करने पर शुद्धा भक्ति—अमला, निष्काम, अहेतुकी भक्ति—बाकी रहती है।

ब्राह्म भक्त–उनमें और उनकी शक्ति में क्या भेद है?

श्रीरामकृष्ण–पूर्ण ज्ञान के बाद दोनों अभेद हैं। जैसे मणि की ज्योति और मणि अभेद है, मणि की ज्योति की चिन्ता करने

से ही मणि की चिन्ता की जाती है। दूध और दूध की धवलता जैसे अभेद है, एक को सोचिये तो दूसरे को भी सोचना पड़ता है; परन्तु यह अभेद-ज्ञान पूर्ण ज्ञान के बिना हुए नहीं होता। पूर्ण ज्ञान से समाधि होती है। तब मनुष्य चौबीस तत्त्वों को पार कर जाता है—इसलिए अहंतत्त्व नहीं रह जाता। समाधि में कैसा अनुभव होता है, यह कहा नहीं जा सकता। उतरकर कुछ आभास मिलता है, वही कहा जा सकता है। समाधि छूटने के बाद जब मैं 'ॐ ॐ' कहता हूँ, तब समझो कि मैं कम से कम सौ हाथ नीचे उतर आया हूँ। ब्रह्म वेद और विधियों से परे हैं; वे वाणी में नहीं आते। वहाँ 'मैं-तुम' नहीं है।

"जब तक 'मैं' और 'तुम' ये भाव हैं, तब 'मैं प्रार्थना कर रहा हूँ या ध्यान कर रहा हूँ' यह भी ज्ञान है और 'तुम (ईश्वर) प्रार्थना सुनते हो' यह भी ज्ञान है; और उस समय ईश्वर के व्यक्तित्व का भी बोध है। तुम प्रभु हो, मैं दास, तुम पूर्ण हो, मैं अंश; तुम माँ हो, मैं पुत्र, यह बोध भी रहेगा। यह भेद-बोध है—मैं एक अलग हूँ और तुम अलग। यह बोध वे ही कराते हैं; इसीलिए 'स्त्री' और 'पुरुष', 'उजाले' और 'अँधेरे' का ज्ञान है। जब तक यह भेद-बोध है, तब तक शक्ति को मानना पड़ेगा। उन्होंने हमारे भीतर 'मैं' रख दिया है। चाहे हजार विचार करो, परन्तु 'मैं' नहीं दूर होता। जब तक 'मैं' है तब तक ईश्वर साकार रूप में ही मिलते हैं।

"इसलिए जब तक 'मैं' है, भेद-बुद्धि है, तब तक ब्रह्म निर्गुण है, यह कहने का अधिकार नहीं, तब तक सगुण ब्रह्म ही मानना होगा। इसी सगुण ब्रह्म को वेदों, पुराणों और तन्त्रों में काली या आद्याशक्ति कहा गया है।"

विजय–आद्याशक्ति के दर्शन और ब्रह्मज्ञान ये कैसे हों ?

श्रीरामकृष्ण–हृदय से विकल होकर उनसे प्रार्थना करो और रोओ। चित्त शुद्ध हो जायेगा। निर्मल पानी में सूर्य का बिम्ब दिखायी देगा। भक्त के 'मैं' रूपी आईने में उस सगुण ब्रह्म —आद्याशक्ति के दर्शन होंगे; परन्तु आईने को खूब साफ रखना चाहिए।

"मैला रहने पर सच्चा बिम्ब न पड़ेगा।

"'मैं' रूपी पानी में सूर्य को तब तक इसलिए देखते हैं कि सूर्य के देखने का और कोई उपाय नहीं है, और प्रतिबिम्ब-सूर्य को छोड़ यथार्थ-सूर्य के देखने का जब तक कोई दूसरा उपाय नहीं मिलता, तब तक वह प्रतिबिम्ब-सूर्य ही सोलहों आने सत्य है। जब तक 'मैं' सत्य है, तब तक प्रतिबिम्ब-सूर्य भी सोलहों आने सत्य है। वही प्रतिबिम्ब-सूर्य आद्याशक्ति है।

"यदि ब्रह्मज्ञान चाहते हो, तो उसी प्रतिबिम्ब-सूर्य को पकड़कर सत्य-सूर्य की ओर जाओ। उस सगुण ब्रह्म से, जो प्रार्थनाएँ सुनते हैं, कहो, वे ही ब्रह्मज्ञान देंगे, क्योंकि जो सगुण ब्रह्म हैं, वे ही निर्गुण ब्रह्म भी हैं, जो शक्ति हैं, वे ही ब्रह्म भी हैं, पूर्ण ज्ञान के बाद दोनों अभेद हो जाते हैं।

"माँ ब्रह्मज्ञान भी देती हैं, परन्तु शुद्ध भक्त कभी ब्रह्मज्ञान नहीं चाहता।

"एक और मार्ग है, ज्ञानयोग; परन्तु यह बड़ा कठिन है। ब्राह्मसमाजवाले तुम लोग ज्ञानी नहीं हो, भक्त हो। जो लोग ज्ञानी हैं उन्हें विश्वास है कि ब्रह्म सत्य है और संसार मिथ्या–स्वप्नवत्।

"वे अन्तर्यामी हैं। उनसे सरल और शुद्ध मन से प्रार्थना करो। वे सब समझा देंगे। अहंकार छोड़कर उनकी शरण में

जाओ। सब पा जाओगे।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण गाने लगे—"'मन ! अपने ही आप में रहो। किसी दूसरे के घर न जाओ। जो कुछ चाहोगे वह बैठे हुए ही पाओगे, अपने अन्तःपुर में जरा खोजो तो सही। वह पारस पत्थर परम धन है, जो कुछ चाहोगे, वह तुम्हें दे सकता है। चिन्तामणि की नाट्यशाला के द्वार पर कितने ही मणि पड़े हुए हैं।'

"जब बाहर के लोगों से मिलना तब सभी को प्यार करना; मिलकर एक हो जाना—फिर द्वेषभाव जरा भी न रखना। 'वह आदमी साकार मानता है, निराकार नहीं मानता; वह निराकार मानता है, साकार नहीं मानता, वह हिन्दू है, वह मुसलमान है, वह क्रिस्तान है,' यह कह-कहकर घृणा से नाक न सिकोड़ना; क्योंकि उन्होंने जिसे जिस तरह समझाया है, उसमें वैसी ही बुद्धि है। समझना कि सब की प्रकृति भिन्न भिन्न है। यह जानकर तुमसे जहाँ तक हो सके, दूसरों से मिलने की ही चेष्टा करना और उन्हें प्यार करना। फिर अपने घर में शान्ति और आनन्द का भोग करो। 'हृदयरूपी घर में ज्ञान का दीपक जलाकर ब्रह्ममयी का मुख देखो।' अपने ही घर में अपना स्वरूप देख सकोगे। चरवाहे जब गौओं को चराने के लिए ले जाते हैं, तब चरागाह में सब गौएं एक में मिल जाती हैं। जब शाम के समय अपने घर में जाती हैं तब फिर सब अलग अलग हो जाती हैं। इसीलिए मैं कहता हूं, अपने घर में—'अपने आप' में ही रहो।"

रात के दस बज जाने पर श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर चलने के लिए गाड़ी पर चढ़े। साथ में दो-एक सेवक भक्त भी हैं। घोर अंधेरा है, गाड़ी पेड़ के नीचे खड़ी हुई है। वेणीपाल रामलाल के लिए पूड़ियाँ और मिठाई गाड़ी पर रख देने के लिए ले आये।

वेणीपाल–महाराज, रामलाल आ नहीं सके, उनके लिए इन लोगों के हाथ कुछ पूड़ी-मिठाई भेजना चाहता हूँ, अगर आप आज्ञा दें।

श्रीरामकृष्ण–(घबराकर)–ओ बाबू वेणीपाल! तुम मेरे साथ यह सब न भेजो। इससे मुझे दोष लगता है। मुझे अपने साथ किसी चीज का संचय करके रखना न चाहिए। तुम कुछ और न सोचना।

वेणीपाल–जो आज्ञा, आप आशीर्वाद दीजिये।

श्रीरामकृष्ण–आज खूब आनन्द हुआ। देखो, जिसका दास अर्थ हो, आदमी वही है—जो लोग अर्थ का व्यवहार नहीं जानते, वे मनुष्य होकर भी मनुष्य नहीं हैं। आकृति तो उनकी मनुष्य जैसी है परन्तु व्यवहार पशु जैसा। तुम धन्य हो। इतने भक्तों को तुमने आनन्दित कर दिया।

परिच्छेद २८

बड़ा बाजार में श्रीरामकृष्ण

(१)

समाधितत्त्व

आज श्रीरामकृष्ण १२ नम्बर मल्लिक स्ट्रीट बड़ा बाजार जानेवाले हैं। मारवाड़ी भक्तों ने श्रीरामकृष्ण को न्योता दिया है। कालीपूजा को बीते दो दिन हो गये। आज सोमवार है, २० अक्टूबर, १८८४, कार्तिक शुक्ला द्वितीया। बड़ा बाजार में अब भी दीवाली का आनन्द चल रहा है।

दिन को लगभग तीन बजे मास्टर छोटे गोपाल के साथ बड़ा बाजार आये। श्रीरामकृष्ण ने छोटी धोती खरीदने की आज्ञा दी थी—मास्टर उसे खरीदकर एक कागज में लपेटकर हाथ में लिये हुए हैं। मल्लिक स्ट्रीट मे दोनों ने पहुँचकर देखा, आदमियों की बड़ी भीड़ है। १२ नम्बर के पास पहुँचकर देखा, श्रीरामकृष्ण बग्घी पर बैठे हुए हैं, बग्घी बढ़ नहीं सकती—गाड़ियों की इतनी भीड़ है। भीतर बाबूराम थे और राम चट्टोपाध्याय। गोपाल और मास्टर को देखकर श्रीरामकृष्ण हँस रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण गाड़ी से उतरे। साथ में बाबूराम हैं, मास्टर आगे रास्ता दिखाते हुए चल रहे हैं। मारवाड़ी भक्त के यहाँ पहुँचकर उन्होंने देखा, नीचे आँगन में कपड़े की कितनी ही गाँठें पड़ी हुई हैं। एक ओर बैलगाड़ियों पर माल लद रहा है। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ ऊपर के मंजले पर चढ़ने लगे। मारवाड़ियों ने आकर उन्हें तिमंजले के एक कमरे में बैठाया।

उस कमरे में काली का चित्र था। श्रीरामकृष्ण आसन ग्रहण करके हँसते हुए भक्तों से बातचीत करने लगे।

एक मारवाड़ी आकर श्रीरामकृष्ण के पैर दबाने लगा। श्रीरामकृष्ण ने पहले तो मना किया, परन्तु फिर कुछ सोचकर कहा, 'अच्छा'; फिर मास्टर से पूछा, स्कूल का क्या हाल है।

मास्टर—जी आज छुट्टी है।

श्रीरामकृष्ण—(हँसकर)—कल अधर के यहाँ चण्डी का गाना होगा।

मारवाड़ी भक्त ने पण्डितजी को श्रीरामकृष्ण के पास भेजा। पण्डितजी ने आकर श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर आसन ग्रहण किया। पण्डितजी के साथ अनेक प्रकार की ईश्वर सम्बन्धी वार्ता हो रही है।

अवतार-सम्बन्धी बातें होने लगीं।

श्रीरामकृष्ण-अवतार भक्तों के लिए है, ज्ञानियों के लिए नहीं।

पण्डितजी—परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥

"अवतार पहले तो भक्तों के आनन्द के लिए होता है, और दूसरे दुष्टों के दमन के लिए। परन्तु ज्ञानी कामनाशून्य होते हैं।"

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—परन्तु मेरी सब कामनाएँ नहीं मिटीं। भक्ति की कामना बनी हुई है।

इसी समय पण्डितजी के पुत्र ने आकर श्रीरामकृष्ण की चरण-वन्दना की और आसन ग्रहण किया।

श्रीरामकृष्ण—(पण्डितजी के प्रति)—अच्छा जी, भाव किसे कहते हैं?

पण्डितजी–ईश्वर की चिन्ता करते हुए जब मनोवृत्तियाँ कोमल हो जाती हैं, तब उस अवस्था को भाव कहते हैं, जैसे सूर्य के निकलने पर बर्फ गल जाती है।

श्रीरामकृष्ण–अच्छा जी, प्रेम किसे कहते हैं ?

पण्डितजी हिन्दी में ही बातचीत कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण उनके साथ बड़ी मधुर हिन्दी में बातचीत कर रहे हैं। पण्डितजी ने प्रेम का उत्तर एक दूसरे ही ढंग से समझाया।

श्रीरामकृष्ण–(पण्डितजी से)–नहीं, प्रेम का अर्थ यह नहीं है। प्रेम यह है, ईश्वर पर ऐसा प्यार होगा कि संसार के अस्तित्व का होश तो रह ही नहीं जायेगा, साथ ही अपनी देह भी जो इतनी प्यारी वस्तु है, भूली जायेगी। प्रेम चैतन्यदेव को हुआ था।

पण्डितजी-जी हाँ, जैसा मतवाला होने पर होता है।

श्रीरामकृष्ण–अच्छा जी, किसी को भक्ति होती है, किसी को नहीं, इसका क्या अर्थ है ?

पण्डितजी–ईश्वर में वैषम्य नहीं है। वे कल्पतरु हैं। जो जो कुछ चाहता है, वह वही पाता है, परन्तु कल्पतरु के पास जाकर माँगना चाहिए।

पण्डितजी यह सब न्हिदी में कह रहे हैं। श्रीरामकृष्ण मास्टर की ओर देखकर अर्थ बतला रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण–अच्छा जी, समाधियाँ किस किस तरह की हैं, अब कहिये तो जरा।

पण्डितजी–समाधि दो तरह की है, सविकल्प और निर्विकल्प। निर्विकल्प समाधि में विकल्प नहीं है।

श्रीरामकृष्ण–हाँ, 'तदाकाराकारित,' ध्याता और ध्येय का

भेद नहीं रहता। और चेतन समाधि और जड़ समाधि, ये भी हैं। नारद, शुकदेव, इनकी चेतन समाधि है, क्यों जी ?

पण्डितजी–जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण–और उन्मना समाधि और स्थित समाधि, ये भी हैं, क्यों जी ?

पण्डितजी चुप ही रहे, कुछ बोले नहीं।

श्रीरामकृष्ण–अच्छा जी, जप-तप करने से तो विभूतियाँ प्राप्त हो सकती हैं—जैसे गंगा के ऊपर से पैदल चले जाना।

पण्डितजी–जी हाँ, यह सब होता है, परन्तु भक्त यह कुछ नहीं चाहता।

और थोड़ीसी बातचीत होने पर पण्डितजी ने कहा, एकादशी के दिन दक्षिणेश्वर में आपके दर्शन करने आऊँगा।

श्रीरामकृष्ण–अहा, तुम्हारा लड़का तो बड़ा अच्छा है।

पण्डितजी–महाराज, नदी की एक तरंग जाती है, तो दूसरी आती है। सब कुछ अनित्य है।

श्रीरामकृष्ण–तुम्हारे भीतर सार वस्तु है।

कुछ देर के बाद पण्डितजी ने प्रणाम किया। कहा, 'तो पूजा करने जाऊँ ?'

श्रीरामकृष्ण–अजी, बैठो।

पण्डितजी फिर बैठे।

श्रीरामकृष्ण ने हठयोग की बात चलायी। पण्डितजी भी हिन्दी में इसी के सम्बन्ध में बातचीत करने लगे। श्रीरामकृष्ण ने कहा, हाँ, यह भी एक तरह की तपस्या है, परन्तु हठयोगी देहाभिमानी साधु है, उसका मन सदा देह पर ही लगा रहता है।

पण्डितजी ने फिर बिदा होना चाहा। पूजा करने के लिए

जायेंगे ।

श्रीरामकृष्ण पण्डितजी के लड़के से बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण–कुछ न्याय, वेदान्त तथा और और दर्शनों के पढ़ने से श्रीमद्भागवत खूब समझ में आती है,—क्यों ?

पुत्र–जी महाराज, सांख्य-दर्शन पढ़ने की बड़ी आवश्यकता है।

इस तरह की बातें होने लगीं।

श्रीरामकृष्ण तकिये के सहारे जरा लेट गये । पण्डितजी के पुत्र तथा भक्तगण जमीन पर बैठे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण लेटे ही लेटे धीरे धीरे गा रहे हैं—

'हरि सों लागी रहो रे भाई।
तेरा बनत-बनत बनि जाई ।।
अंका तारे बंका तारे, तारे मीराबाई।
सुआ पढ़ावत गणिका तारे, तारे सजन कसाई ।।'

(२)

साधना की आवश्यकता

घर के मालिक ने आकर प्रणाम किया। ये मारवाड़ी-भक्त श्रीरामकृष्ण पर बड़ी भक्ति रखते हैं। पण्डितजी के लड़के बैठे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण ने पूछा, क्या इस देश में पाणिनि व्याकरण पढ़ाया जाता है ?

मास्टर–जी, पाणिनि ?

श्रीरामकृष्ण–हाँ, न्याय और वेदान्त, क्या यह सब पढ़ाया जाता है ?

इन बातों का घर के मालिक मारवाड़ी ने कोई उत्तर नहीं दिया।

गृहस्वामी–महाराज, उपाय क्या है ?

श्रीरामकृष्ण–उनका नाम-गुण-कीर्तन और साधुसंग। उनसे व्याकुल होकर प्रार्थना करना।

गृहस्वामी–महाराज, ऐसा आशीर्वाद दीजिये कि जिससे संसार से मन हटता जाय।

श्रीरामकृष्ण–(सहास्य)–कितना है ? आठ आने ? (हास्य।)

गृहस्वामी–यह सब तो आप जानते ही हैं। महात्मा की दया के हुए बिना कुछ भी न होगा।

श्रीरामकृष्ण–ईश्वर को सन्तुष्ट करोगे तो सभी सन्तुष्ट हो जायेंगे। महात्मा के हृदय में वे ही तो हैं।

गृहस्वामी–उन्हें पाने पर तो बात ही कुछ और है। उन्हें अगर कोई पा जाता है, तो सब कुछ छोड़ देता है। उनका पाने पर आदमी पैसे का आनन्द छोड़ देता है।

श्रीरामकृष्ण–कुछ साधना की आवश्यकता होती है। साधना करते ही करते आनन्द मिलने लगता है। मिट्टी के बहुत नीचे अगर घड़े में धन रखा हुआ हो, और अगर कोई वह धन चाहे तो मेहनत के साथ उसे खोदते रहना चाहिए। सिर से पसीना टपकता है, परन्तु बहुत कुछ खोदने पर घड़े में जब कुदार लगकर ठनकार होती है, तब आनन्द भी खूब मिलता है। जितनी ही ठनकार होती है, उतना ही आनन्द बढ़ता है। राम को पुकारते जाओ, उनकी चिन्ता करो, वे ही सब कुछ ठीक कर देंगे।

गृहस्वामी–महाराज, आप राम हैं।

श्रीरामकृष्ण–यह क्या, नदी की ही तरंगें हैं, तरंगों की नदी थोड़े ही है ?

गृहस्वामी–महात्माओं के ही भीतर राम हैं। राम को कोई देख तो पाता नहीं, और अब अवतार भी नहीं है।

श्रीरामकृष्ण–(सहास्य)–कैसे तुम्हें मालूम हुआ कि अवतार नहीं है ?

गृहस्वामी चुपचाप बैठे हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण—अवतारी पुरुष को सब लोग नहीं पहचान पाते। नारद जब श्रीरामचन्द्रजी के दर्शन करने के लिए गये, तब राम ने खड़े होकर नारद को साष्टांग प्रणाम किया और कहा, 'हम लोग संसारी जीव हैं, आप जैसे साधुओं के आये बिना हम लोग कैसे पवित्र होंगे !' फिर जब सत्यपालन के लिए वन गये, तब देखा, राम के बनवास का संवाद पाकर ऋषिगण आहार तक छोड़कर पड़े हुए थे। फिर भी उनमें से बहुतों को मालूम नहीं था कि राम अवतार हैं।

गृहस्वामी–आप भी वही राम हैं।

श्रीरामकृष्ण–राम ! राम ! ऐसी बात नहीं कहनी चाहिए।

यह कहकर श्रीरामकृष्ण ने हाथ जोड़कर प्रणाम किया और कहा–"जो राम घट-घट में विराजमान हैं, उन्हीं का बनाया यह संसार है। मैं तुम लोगों का दास हूँ। वही राम ये सब मनुष्य और जीव-जन्तु हुए हैं।"

गृहस्वामी–हम लोग यह क्या जानें ?

श्रीरामकृष्ण–तुम जानो या न जानो, तुम राम हो।

गृहस्वामी–आप में राग-द्वेष नहीं है।

श्रीरामकृष्ण–क्यों ? जिस गाड़ीवाले से कलकत्ते आने की बात हुई थी, वह तीन आने पैसे ले गया, फिर नहीं आया।

उससे तो में खूब चिढ़ गया था। और था भी वह बड़ा बुरा आदमी। देखो न, कितनी तकलीफ दी।

(३)

बड़ा बाजार का अन्नकूट-महोत्सव

श्रीरामकृष्ण ने कुछ देर विश्राम किया। इधर मारवाड़ी भक्त छत पर गाने-बजाने लगे। आज श्रीमयूर-मुकुटधारी का महोत्सव है। भोग का सब आयोजन हो गया। देवदर्शन करने के लिए लोग श्रीरामकृष्ण को बुला ले गये। श्रीमयूर-मुकुटधारी का दर्शन कर श्रीरामकृष्ण ने निर्माल्य धारण किया।

विग्रह के दर्शन कर श्रीरामकृष्ण भाव-मुग्ध हो रहे हैं। हाथ जोड़कर कह रहे हैं—"प्राण हो, हे कृष्ण, मेरे जीवन हो। जय गोविन्द गोविन्द वासुदेव सच्चिदानन्द ! हे कृष्ण, हे कृष्ण, ज्ञान कृष्ण, मन कृष्ण, प्राण कृष्ण, आत्मा कृष्ण, देह कृष्ण, जाति कृष्ण, कुल कृष्ण, प्राण हो, हे कृष्ण, मेरे जीवन हो।"

ये बातें कहते हुए श्रीरामकृष्ण खड़े होकर समाधिमग्न हो गये। श्रीयुत राम चैटर्जी श्रीरामकृष्ण को पकड़े रहे। बड़ी देर बाद समाधि छूटी।

इधर मारवाड़ी भक्त श्रीमयूर-मुकुटधारी विग्रह को बाहर ले जाने के लिए आये। भोग का बन्दोबस्त बाहर ही हुआ था।

अब श्रीरामकृष्ण की समाधि-अवस्था नहीं है। मारवाड़ी भक्त बड़े आनन्द से सिंहासन के विग्रह को बाहर लिये जा रहे हैं, श्रीरामकृष्ण भी साथ-साथ जा रहे हैं। भोग लगाया जा चुका। भोग के समय मारवाड़ी भक्तों ने कपड़े की आड़ की थी। भोग के पश्चात् आरती और गाने होने लगे। श्रीरामकृष्ण विग्रह को चमर व्यजन कर रहे हैं। मारवाड़ियों ने श्रीरामकृष्ण से भोजन

करने का अनुरोध किया। श्रीरामकृष्ण बैठे, भक्तों ने भी प्रसाद पाया।

श्रीरामकृष्ण चलने के लिए बिदा होने लगे। शाम हो गयी है और रास्ते में भीड़ भी बहुत है। श्रीरामकृष्ण ने कहा, "हम लोग गाड़ी से तब तक के लिए उतर पड़ें। गाड़ी पीछे से घूमकर आये तब चढ़ें।" रास्ते से जाते समय श्रीरामकृष्ण ने देखा, पान-वाला एक बहुत छोटी सी दूकान में बैठा हुआ है जिसे देखकर मालूम हुआ कि दूकान क्या है, बिल है। उस दूकान में बिना खूब सिर झुकाये कोई घुस नही सकता था। श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, "कितना कष्ट है, इतने ही के भीतर बद्ध होकर रहना! संसारियों का स्वभाव भी कैसा है! इसी में उन्हें आनन्द मिलता है!"

गाड़ी लौटकर पास आयी। श्रीरामकृष्ण फिर गाड़ी पर बैठे। भीतर श्रीरामकृष्ण के साथ बाबूराम, मास्टर, राम चॅटर्जी और छत पर छोटे गोपाल बैठे हुए हैं।

एक भिखारिन ने गोद में बच्चा लिये हुए गाड़ी के सामने आकर भीख मांगी। श्रीरामकृष्ण ने देखकर मास्टर से कहा—"क्यों जी, पैसा है?" गोपाल ने पैसा दे दिया।

बड़ा बाजार से गाड़ी जा रही है। दीवाली की बड़ी धूम है। अंधेरी रात दीपों से जगमगा रही है। बड़ा बाजार की गली से होकर गाड़ी चितपुर रोड पर आयी। वहां भी दिये जगमगा रहे हैं और चींटियों की तरह आदमियों की पांत चल रही है। आदमी दूकानों की सजावट पर मुग्ध हो रहे हैं। दूकानदार अच्छे अच्छे वस्त्र पहने हुए गुलाबपाश हाथ में लिये लोगों पर गुलाब छिड़क रहे हैं। गाड़ी एक इत्रवाले की दूकान के सामने आयी। श्रीरामकृष्ण पांच वर्ष के बालक की तरह तस्वीर और रोशनी

देख-देखकर प्रसन्न हो रहे हैं। चारों ओर कोलाहल हो रहा है। श्रीरामकृष्ण उच्च स्वर से कह रहे हैं—"और भी बढ़कर देखो—और भी बढ़कर।" यह कहकर हँस रहे हैं। बड़े जोरों से हँसकर बाबूराम से कह रहे हैं, 'अरे बढ़ता क्यों नहीं ? तू कर क्या रहा है ?'

भक्तगण हँसने लगे। उन्होंने समझा, श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं: ईश्वर की ओर बढ़ जा, अपनी वर्तमान अवस्था से सन्तुष्ट होकर न रहना। ब्रह्मचारी ने लकड़हारे से कहा था, बढ़ जाओ। बढ़ते हुए उसने क्रमशः चन्दन का वन, चाँदी की खान, सोने की खान, हीरा, मणि आदि देखा था। इसीलिए श्रीरामकृष्ण बार बार कहते हैं, बढ़ जाओ, बढ़ जाओ। गाड़ी चलने लगी। श्रीरामकृष्ण ने मास्टर की खरीदी हुई धोतियाँ देखी। दो धोतियाँ कोरी थी और दो धुली हुई थी। श्रीरामकृष्ण ने सिर्फ आठ हाथ की कोरी धोतियाँ लाने के लिए कहा था, जो नहाने के समय पहनी जाती हैं। श्रीरामकृष्ण ने ऐसी ही धोतियाँ खरीदने के लिए कहा था। उन्होंने कहा—"ये कोरी धोतियाँ दोनों दे जाओ और दूसरी धोतियाँ इस समय लेते जाओ, अपने पास रख लेना। चाहे एक दे देना।"

मास्टर—जी, एक धोती लौटा ले जाऊँगा ?

श्रीरामकृष्ण—नहीं, तो अभी रहने दो; दोनों ही साथ ले जाना।

मास्टर—जो आज्ञा।

श्रीरामकृष्ण—फिर जब आवश्यकता होगी तब ले आना। देखो न, कल वेणीपाल रामलाल के लिए गाड़ी में खाना देने के लिए आया था। मैंने कहा, मेरे साथ कोई चीज न देना। मुझमें

संचय करने की शक्ति नहीं है।

मास्टर—जी हां। इसमें और क्या है, ये दोनों सादी धोतियां लौटा ले आऊंगा।

श्रीरामकृष्ण—(सस्नेह)—मेरे मन में किसी तरह से कुछ पैदा हो यह तुम्हारे लिए अच्छा नहीं।—यह तो अपनी बात है, जब आवश्यकता होगी, कहूँगा।

मास्टर—(विनयपूर्वक)—जो आज्ञा।

गाड़ी एक दूकान के सामने आ गयी। वहां चिलमें बिक रही थी। श्रीरामकृष्ण ने राम चैटर्जी से कहा, 'राम, एक पैसे की चिलम मोल न ले लोगे ?'

श्रीरामकृष्ण एक भक्त की बात कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण- मैंने उससे कहा, कल बड़ा बाजार जाऊंगा, तू भी चलना। परन्तु सुना तुमने—उसने क्या कहा ? कहा—'ट्राम के चार पैसे लगेंगे, कौन जाय ?' कल बेणीपाल के बगीचे में गया था। वहां फिर आचार्यगिरी भी की। किसी ने न कहा, न सुना, आप ही आप गाने लगा जिससे आदमी समझें मैं ब्राह्म-समाजवालों का ही एक आदमी हूं। (मास्टर से) क्यों जी, यह भला क्या है ? कहता है—एक आना खर्च हो जायेगा।

फिर मारवाड़ी भक्तों के अन्नकूट की बात होने लगी।

श्रीरामकृष्ण—(भक्तों से)—यहां जो कुछ तुमने देखा, वही बात वृन्दावन में भी है। राखाल आदि वृन्दावन में यही सब देख रहे होंगे। परन्तु वहां अन्नकूट और बढ़कर होता है। आदमी भी बहुत हैं। गोवर्धन पर्वत है, यही विचित्रता है।

"परन्तु मारवाड़ियों में कैसी भक्ति है, देखो ? यथार्थ ही इनमें हिन्दू भाव है। यही सनातन धर्म है।—श्रीठाकुरजी को

ले जाते समय, देखा तुमने, उन्हें कैसा आनन्द हो रहा था ? आनन्द यह सोचकर कि हम भगवान का सिंहासन उठाये लिये जा रहे हैं।

"हिन्दूधर्म ही सनातन धर्म है। आजकल जो सब सम्प्रदाय देख रहे हो, यह सब उनकी इच्छा से होकर फिर मिट जायेंगे। इसीलिए मैं कहता हूँ, आधुनिक जो सब भक्त हैं, उनके भी चरणों में प्रणाम है। हिन्दूधर्म पहले से है और सदा रहेगा भी।"

मास्टर घर जायेंगे। वे श्रीरामकृष्ण की चरण-वन्दना करके शोभा बाजार के पास उतर गये। श्रीरामकृष्ण आनन्द मनाते हुए गाड़ी पर जा रहे हैं।

परिच्छेद २९

श्रीरामकृष्ण तथा मायावाद

(१)

दक्षिणेश्वर मन्दिर में मनमोहन, महिमा आदि भक्तों के साथ

चलो भाई, फिर उनके दर्शन करने चलें। उन्हीं महापुरुष बालकस्वरूप को देखें, जो माँ के सिवा और कुछ भी नहीं जानते—जो हमारे लिए ही शरीर धारण करके आये हैं। वही बतलायेंगे, इस कठिन जीवन-समस्या की पूर्ति कैसे होगी। वे संन्यासी को बतलायेंगे और गृहस्थ को भी बतलायेंगे, उनका द्वार सभी के लिए खुला हुआ है। वे दक्षिणेश्वर के काली-मन्दिर में हमारे लिए प्रतीक्षा कर रहे हैं। चलो, चलकर उनके दर्शन करें।

वे अनन्त गुणों के आधार हैं, वे प्रसन्नमूर्ति हैं, उनकी बातों को सुनकर आँखों से आँसू बह चलते हैं।

चलो भाई, वे अहेतुक-कृपा-सिन्धु हैं, प्रियदर्शन हैं, ईश्वर के प्रेम में दिन रात मस्त रहनेवाले उन सहास्यमूर्ति श्रीरामकृष्ण के दर्शन कर हम अपने इस मनुष्य-जन्म को सार्थक करें।

आज रविवार है, २६ अक्टूबर १८८४। कार्तिक की शुक्ला सप्तमी; हेमन्तकाल है। दिन का दूसरा पहर है। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में भक्तों के साथ बैठे हुए हैं। कमरे के साथ मिला हुआ पश्चिम की ओर अर्धगोलाकार एक बरामदा है। बरामदे के पश्चिम ओर बगीचे का रास्ता है जो उत्तर-दक्षिण की ओर गया हुआ है। रास्ते के पश्चिम ओर फुलवाड़ी है, आगे पवित्र

सलिला जाह्नवी दक्षिणवाहिनी हो रही हैं।

भक्तों में से कितने ही आये हुए हैं। आज आनन्द का हाट लगा है। आनन्दमय श्रीरामकृष्ण का ईश्वर-प्रेम भक्तों के मुख-दर्पण में प्रतिबिम्बित हो रहा है। कितना आश्चर्य है! केवल भक्तों ही के मुखदर्पण में नहीं, बाहर के उद्यानों में, वृक्षपत्रों में, खिले हुए अनेक प्रकार के फूलों में, विशाल भागीरथी के हृदय में, सूर्य की किरणों से दीप्तिमान नीलिमामय नभोमण्डल में, भगवान विष्णु के चरणों से च्युत हुई गंगाजी के जलकणों को छूकर प्रवाहित होती हुई शीतल वायु में यही आनन्द प्रतिभासित हो रहा था! कितने आश्चर्य की बात है!—'मधुवत् पार्थिवं रजः'—सचमुच उद्यान की धूलि भी मधुमय हो रही है!—इच्छा होती है, गुप्त भाव से या भक्तों के साथ इस धूलि पर लोटपोट हो जायँ। इच्छा होती है, इस उद्यान के एक ओर खड़े होकर दिन भर इस मनोहर गंगावारि के दर्शन करें। इच्छा होती है, लता-गुल्म और पत्रपुष्पों से लदे हुए, सुशोभित हरे-भरे वृक्षों को अपना आत्मीय समझ उनसे मधुर सम्भाषण करें—उन्हें हृदय से लगा लें। इसी धूलि के ऊपर से श्रीरामकृष्ण के कोमल चरण चलते हैं। इन्हीं पेड़ों के भीतर से वे सदा आया-जाया करते हैं। इच्छा होती है, ज्योतिर्मय आकाश की ओर टकटकी लगाये हेरते रहें; क्योंकि जान पड़ता है, भूलोक और द्युलोक, दोनों ही प्रेम और आनन्द में तैर रहे हैं।

श्रीठाकुर-मन्दिर के पुजारी, दरबान, परिचारक, सब को न जाने क्यों आत्मीय कहने की इच्छा होती है!—क्यों यह जगह, बहुत दिनों के बाद देखी गयी जन्मभूमि की तरह मधुर लग रही है? आकाश, गंगा, देवमन्दिर, उद्यान-पथ, वृक्ष, लता, गुल्म, सेवकगण,

आसन पर बैठी हुई भक्तमण्डली, सब मानो एक ही वस्तु से बनाये हुए जान पड़ते हैं। जिस वस्तु से श्रीरामकृष्ण बनाये गये हैं, जान पड़ता है, ये भी उसी वस्तु से बनाये गये हैं। जैसे एक मोम का बगीचा हो, पेड़, पल्लव, फूल, फल, सब मोम के! बगीचे के रास्ते, बगीचे के माली, बगीचे के निवासी, बगीचे के भीतर का गृह, सब मोम के! यहाँ का सब कुछ मानो आनन्द ही से रचा गया है!

श्रीमनमोहन, श्रीयुत महिमाचरण और मास्टर वहाँ बैठे हुए थे, क्रमशः ईशान, हृदय और हाजरा भी आये। और भी बहुत से भक्त बैठे हुए थे। बलराम और राखाल इस समय वृन्दावन में थे। इस समय कुछ नये भक्त भी आते-जाते थे—नारायण, पल्टू, छोटे नरेन्द्र, तेजचन्द्र, विनोद, हरिपद। बाबूराम कभी कभी यहीं आकर रह जाते हैं। राम, सुरेश, केदार और देवेन्द्र आदि भक्तगण प्रायः आते हैं—कोई एक हफ्ते के बाद—कोई दो हफ्ते के बाद। लाटू यहीं रहते हैं। योगीन का घर नजदीक है, वे प्रायः रोज आया-जाया करते हैं। नरेन्द्र कभी कभी आते हैं, आते ही आनन्द का मानो हाट लग जाता है। नरेन्द्र जब अपने उस देव-दुर्लभ कण्ठ से ईश्वर का नामगुण गाते हैं, तब श्रीरामकृष्ण को अनेक प्रकार के भावों का आवेश होता रहता है—समाधि होती है, जैसे एक उत्सव हो। श्रीरामकृष्ण की बड़ी इच्छा है कि लड़कों में से कोई उनके पास रहे, क्योंकि वे शुद्धात्मा हैं, संसार में विवाहादि के बन्धनों में नहीं पड़े। बाबूराम से श्रीरामकृष्ण रहने के लिए कहते हैं; वे कभी कभी रहते भी हैं। श्रीयुत अधर सेन प्रायः आया करते हैं। कमरे के भीतर भक्तगण बैठे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण बच्चे की तरह खड़े होकर कुछ सोच रहे हैं। भक्तगण

उनकी ओर देख रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण-(मनमोहन से)-सब राममय देख रहा हूँ, तुम लोग सब बैठे हुए हो, देखता हूँ, सब राम ही हैं, एक एक अलग अलग।

मनमोहन-राम ही सब हुए हैं, परन्तु आप जैसा कहते हैं, आपो नारायणः, जल नारायण है, परन्तु कोई जल पिया जाता है, किसी जल से मुँह धोना तक चल सकता है और किसी जल से बर्तन साफ किये जाते हैं।

श्रीरामकृष्ण-हाँ, परन्तु देखता हूँ, वे ही सब कुछ हैं। जीव जगत् वे ही हुए हैं।

यह बात कहते हुए श्रीरामकृष्ण अपनी छोटी खाट पर जा बैठे।

श्रीरामकृष्ण- (महिमाचरण से)-क्यों जी, सच बोलना है इसलिए मुझे कहीं शुचिता का रोग तो नहीं हो गया। अगर एकाएक कह दूँ कि मैं न खाऊँगा, तो भूख लगने पर भी फिर खाना न होगा। अगर कहूँ, झाऊतल्ले में मेरा लोटा लेकर अमुक आदमी को जाना होगा, तो यदि कोई दूसरा आदमी ले जाता है तो उसे लौटा देना पड़ता है। यह क्या हुआ भाई! इसका क्या कोई उपाय नहीं है?

"हाथ भी कुछ लाने की शक्ति नहीं। पान, मिठाई, कोई वस्तु हाथ नहीं ला सकता। इस तरह जब होता है तो हाथ से मिट्टी भी नहीं ला सकता।"

इसी समय किसी ने आकर कहा, 'महाराज, हृदय यदु मल्लिक के बगीचे में आया है, फाटक के पास खड़ा है, आपसे मिलना चाहता है।'

श्रीरामकृष्ण भक्तों से कह रहे हैं, 'हृदय से जरा मिल लूँ?

तुम लोग बैठो।'

यह कहकर काले रंग की चट्टी पहनकर पूर्व वाले फाटक की ओर चले। साथ में केवल मास्टर हैं।

लाल सुरखी की राह है। इसी राह से श्रीरामकृष्ण पूर्व की ओर जा रहे हैं। रास्ते में खजानची खड़े थे, उन्होंने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। दाहिनी ओर आँगन का फाटक छूट गया, वहाँ लम्बी दाढ़ीवाले सिपाही बैठे हुए थे। बायीं ओर 'कोठी' है—बाबुओं का बैठकखाना, पहले यहाँ नील की कोठी थी, इसीलिए इसे कोठी कहते हैं। इसके आगे रास्ते के दोनों ओर फूल के पेड़ हैं। थोड़ी ही दूर पर रास्ते के बिलकुल दक्षिण ओर गाजीतल्ला और काली-मन्दिर का तालाब है, पक्के घाट की सीढ़ियाँ दिखायी पड़ती हैं। क्रमशः आगे पूर्व द्वार आया, उसके बायीं ओर दरवान का घर है और दाहिनी ओर तुलसी का चौरा। उद्यान के बाहर आकर देखा, यदु मल्लिक के बगीचे के फाटक के पास हृदय खड़ा था।

(२)

हृदय का आगमन

हृदय* हाथ जोड़कर खड़े हैं। श्रीरामकृष्ण को राजपथ पर देखते ही उन्होंने साष्टांग प्रणाम किया—दण्डवत् भूमि पर

* हृदय श्रीरामकृष्ण की जन्मभूमि कामारपुकुर के पास सिहोड ग्राम में रहते थे। बीस साल तक लगातार श्रीरामकृष्ण के पास रहकर दक्षिणेश्वर काली-मन्दिर में उन्होंने काली की पूजा और श्रीरामकृष्ण की सेवा की थी। बगीचे के मालिकों के असन्तोष का कोई काम कर बैठने के कारण उनका बगीचे के भीतर आना बन्द कर दिया गया था। हृदय की दादी श्रीरामकृष्ण की बुआ थीं।

लेट गये, श्रीरामकृष्ण ने उठने के लिए कहा। हृदय फिर हाथ जोड़कर बालक की तरह रो रहे हैं।

आश्चर्य है कि श्रीरामकृष्ण भी रो रहे हैं। नेत्र में कई बूंद आँसू दीख पड़े। उन्होंने हाथ से आँसू पोंछ डाले—जैसे आँसू आये ही न हों। जिस हृदय ने उन्हें इतना कष्ट दिया था, उसी के लिए वे दौड़े आये और रो रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—इस समय तू कैसे आया?

हृदय—(रोते हुए)—आप ही से भेंट करने के लिए आया हूँ। अपना दुःख मैं और किससे कहूँ?

श्रीरामकृष्ण—(सान्त्वनार्थ, सहास्य)—संसार में ऐसा दुःख क्लश ही है। संसार में रहो तो सुख और दुःख होते ही रहते हैं। (मास्टर को दिखाकर) ये लोग कभी कभी इसीलिए आते हैं। आकर ईश्वर की दो बातें सुनते हैं तो मन में शान्ति आ जाती है। तुझे किस बात का दुःख है?

हृदय—(रोते हुए)—आपका सब छूटा हुआ है, यही दुःख है।

श्रीरामकृष्ण—तू ने ही तो कहा था—'तुम्हारा मनोभाव तुम्हीं में रहे, मेरा—मुझमें।'

हृदय—हाँ, ऐसा कहा तो था, परन्तु मैं इतना क्या जानूं?

श्रीरामकृष्ण—आज अब तू यहीं-कहीं रह जा। कल बैठकर हम दोनों बातचीत करेंगे। आज रविवार है, बहुत से आदमी आये हैं? वे सब बैठे हैं, इस बार देश में धान कैसा हुआ?

हृदय—हाँ, एक तरह से पैदावार बुरी नहीं रही।

श्रीरामकृष्ण—तो आज तू जा, किसी दूसरे दिन आना।

हृदय ने फिर श्रीरामकृष्ण को साष्टांग प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण उसी रास्ते से लौटने लगे। मास्टर साथ है।

श्रीरामकृष्ण-(मास्टर से)-इसने मेरी सेवा जितनी की है मुझे कष्ट भी उतना ही दिया है। जब पेट की बीमारी से मेरी देह में बस दो हाड़ रह गये थे, कुछ खाया नहीं जाता था, तब इसने मुझसे कहा—'यह देखो, मैं किस तरह खाता हूँ। अपने ही गुणों से तुमसे नहीं खाया जाता।' फिर कहता था—'अक्ल के दुश्मन! मैं अगर न होता, तो तुम्हारी साधुगिरी निकल गयी होती।' एक दिन तो इसने इतना कष्ट दिया कि मैं पोस्ता के ऊपर से ज्वार के पानी में प्राण छोड़ देने के लिए चला गया था।

मास्टर यह सब सुनकर आश्चर्यचकित हो गये। सोचने लगे, इस तरह के आदमी के लिए भी ये रो रहे थे!

श्रीरामकृष्ण-(मास्टर से)-अच्छा इतनी सेवा करता था, फिर उसे ऐसा क्यों हुआ? जिस तरह आदमी बच्चे की देख-रेख करते हैं, इसने उसी तरह मेरी की थी। मैं दिन-रात बेहोशी की हालत में रहता था, तिस पर बहुत दिनों तक बीमार पड़ा था। वह जिस तरह मुझे रखता था, मैं उसी तरह रहता था।

मास्टर क्या कहते! चुप थे। वे शायद सोच रहे थे कि हृदय ने निष्काम भाव से श्रीरामकृष्ण की सेवा नहीं की।

बातचीत करते हुए श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में आये। भक्तगण प्रतीक्षा कर रहे थे। श्रीरामकृष्ण फिर छोटी खाट पर बैठ गये।

(३)

भाव, महाभाव का गूढ़ तत्त्व

श्रीयुत महिमाचरण आदि कोन्नगर के कई भक्त आये हैं;

कितनी कोठियाँ हैं, कितने बगीचे हैं, कम्पनी का कागज कितने का है, यह सब पहले से जानने के लिए इतने उतावले क्यों हो रहे हो? नौकरों के पास जाते हो तो वे खड़े भी नहीं रहने देते—कम्पनी के कागज की खबर भला क्या देंगे ! परन्तु किसी तरह बड़े बाबू से एक बार मिल भर लो, चाहे धक्के खाकर मिलो और चाहे चारदीवारी लाँघकर, तब उनके कितने मकान हैं, कितने बगीचे हैं, कितने का कम्पनी-कागज है, वे खुद बतला देंगे। बाबू से भेंट हो जाने पर नौकर और दरबान सब सलाम करेंगे।"

(सब हँसते हैं।)

भक्त—अब बड़े बाबू से भेंट भी कैसे हो ? (हास्य)

श्रीरामकृष्ण—इसीलिए कर्म चाहिए। ईश्वर है, यह कहकर बैठे रहने से कुछ न होगा। किसी तरह उनके पास तक जाना होगा। निर्जन में उन्हें पुकारो, प्रार्थना करो, 'दर्शन दो' कह-कहकर व्याकुल होकर रोओ! कामिनी और कांचन के लिए पागल होकर घूम सकते हो, तो उनके लिए भी कुछ पागल हो जाओ। लोग कहें कि ईश्वर के लिए अमुक व्यक्ति पागल हो गया है। कुछ दिन, सब कुछ छोड़कर उन्हें अकेले में पुकारो।

"केवल वे हैं, यह कहकर बैठे रहने से क्या होगा ? हालदार तालाब में बहुत बड़ी बड़ी मछलियाँ हैं, परन्तु तालाब के किनारे केवल बैठे रहने से क्या कहीं मछली पकड़ी जा सकती है ? पानी में मसाला डालो, क्रमश गहरे पानी से मछलियाँ निकलकर मसाले के पास आयेंगी, तब पानी भी हिलता-डुलता रहेगा। तब तुम्हें आनन्द होगा। कभी किसी मछली का कुछ अंश दिखलायी पड़ा, मछली उछली और पानी में एक शब्द हुआ। जब देखा, तब तुम्हें और भी आनन्द मिला।

"दूध जमाकर दही मथोगे तभी तो मक्खन निकलेगा। (महिमा से) यह अच्छी बला सिर चढ़ी, ईश्वर से मिला दो और आप चुपचाप बैठे रहेंगे ! मक्खन निकालकर मुंह के पास रखा जाय ! (सब हँसते है।) अच्छी बला आयी, मछली पकड़कर हाथ में रख दी जाय !

"एक आदमी राजा से मिलना चाहता है। सात ड्योढ़ियों के बाद राजा का मकान है। पहली ड्योढ़ी को पार करते ही वह पूछता है—'राजा कहाँ है ?' जिस तरह का प्रबन्ध है, उसी के अनुसार सातों ड्योढ़ियों को पार करना होगा या नहीं ?"

महिमाचरण—किस कर्म से हम उन्हें प्राप्त कर सकते है ?

श्रीरामकृष्ण—उन्हें अमुक कर्म से आदमी पाता है और अमुक से नहीं, यह बात नहीं। उनका मिलना उनकी कृपा पर अवलम्बित है। हाँ, व्याकुल होकर कुछ कर्म करते रहना चाहिए। विकलता के रहने पर उनकी कृपा होती है।

"कोई सुयोग मिलना चाहिए, चाहे साधु-संग हो या विवेक हो या सद्गुरु की प्राप्ति। कभी इस तरह का सुयोग मिल जाता है कि बड़े भाई ने संसार का कुल भार ले लिया, या स्त्री 'विद्याशक्ति' धर्मात्मा निकली, या विवाह ही न हुआ, इस तरह संसार में न फँसना पड़ा। इस प्रकार के शुभ संयोग के मिलने पर काम बन जाता है।

"किसी के घर में सख्त बीमारी थी—अब-तब हो रहा था। किसी ने कहा—'स्वाति नक्षत्र में बरसात का पानी अगर मुर्दे की खोपड़ी में गिरकर रुक जाय और एक साँप मेढ़क का पीछा करे, साँप के लपककर पकड़ते समय मेंढ़क खोपड़ी के उस पार उछलकर चला जाय और साँप का विष उसी खोपड़ी में गिर

जाय, उसी विष की दवा यदि बनायी जाय और वह दवा अगर मरीज को दी जा सके तो वह बच सकता है।' तब जिसके यहाँ बीमारी थी, वह आदमी दिन, मुहूर्त, नक्षत्र आदि देखकर घर से निकला, और व्याकुल होकर यही सब खोजने लगा। मन ही मन वह ईश्वर को पुकारकर कहता गया—'हे ईश्वर! तुम अगर सब इकट्ठा कर दो तो हो सकता है।' इस तरह जाते जाते सचमुच ही उसने देखा कि एक मुर्दे की खोपड़ी पड़ी हुई है। देखते ही देखते थोड़ा पानी भी बरस गया। तब उसने कहा—'हे गुरु! मुर्दे की खोपड़ी मिली और थोड़ा पानी भी बरस गया और उसकी खोपड़ी में जमा भी हो गया। अब कृपा करके और जो दो-एक योग है, उन्हें भी पूर्ण कर दो, भगवान्!'

"व्याकुल होकर वह सोच ही रहा था कि इतने में उसने देखा कि एक विषधर साँप आ रहा है। तब उसे बड़ा आनन्द हुआ। वह इतना व्याकुल हुआ कि छाती धड़कने लगी, और कहने लगा, 'हे गुरु! साँप भी आ गया है। कई योग तो पूरे हो गये। कृपा करके और जो बाकी है, उन्हें भी पूर्ण कर दो।' कहते ही कहते मेंढक भी आ गया। साँप मेंढक को खदेरने भी लगा। मुर्दे के सिर के पास साँप ने ज्योंही उस पर चोट करना चाहा कि मेंढक उछलकर इधर से उधर हो गया, और विष उसी खोपड़ी में गिर गया। तब वह आदमी तालियाँ बजाने और नाचने लगा।

"इसीलिए कहता हूँ, व्याकुलता के होने पर सब हो जाता है।"

(४)

संन्यास तथा गृहस्थाश्रम। ईश्वर-लाभ और त्याग

श्रीरामकृष्ण—मन से सम्पूर्ण त्याग के हुए बिना ईश्वर दो

नहीं मिलते। साधु संचय नहीं कर सकता। कहते हैं, पक्षी और दरवेश, ये दोनों संचय नहीं करते। यहाँ का तो भाव यह है कि हाथ में मिट्टी लगाने के लिए मैं मिट्टी भी नहीं ले जा सकता। पानदान में पान भी नहीं ले जा सकता। हृदय जब मुझे बड़ी तकलीफ दे रहा था, तब मेरी इच्छा हुई, यहाँ से काशी चला जाऊँ। सोचा, कपड़े तो लूँगा, परन्तु रुपये कैसे लूँगा? इसीलिए फिर काशी जाना भी न हुआ।

(सब हँसते हैं।)

(महिमा से) "तुम लोग संसार में हो, तुम लोग यह भी रखते हो और वह भी रखते हो। संसार भी रखते हो और धर्म भी।"

महिमाचरण—यह और वह दोनों कभी रह सकते हैं?

श्रीरामकृष्ण—मैंने पंचवटी के पास गंगाजी के तट पर, 'रुपया मिट्टी है—मिट्टी ही रुपया है—रुपया ही मिट्टी है,' इस तरह विचार करते हुए, जब रुपया गंगाजी में फेंक दिया, तब पीछे से कुछ भय भी हुआ! सोचा, मैं बिना लक्ष्मी के कहीं अभागा तो न हो जाऊँगा, माता लक्ष्मी अगर भोजन बन्द कर दें तो फिर क्या होगा? तब हाजरा की तरह पटवारी बुद्धि आयी। मैंने कहा—'माँ, तुम हृदय में रहना।' एक आदमी की तपस्या पर सन्तुष्ट हो भगवती ने कहा, तुम वरदान लो। उसने कहा, 'माँ, अगर तुम्हें वरदान देना है तो यह वर दो कि मैं नाती के साथ सोने की थाली में भोजन करूँ।' एक ही वर में नाती, ऐश्वर्य, सोने की थाली, सब कुछ हो गया! (लोग हँसते हैं।)

"मन से कामिनी-कांचन का जब त्याग हो जाता है तब ईश्वर की ओर मन जाता है, तब मन उन्हीं में लिप्त भी रहता

है। जो बद्ध है, उन्हीं में मुक्त होने की शक्ति भी है। ईश्वर से विमुख होने के कारण ही वे बद्ध है। कर्रटे की दो सुइयों में कब अन्तर होता है? यह तभी होता है जब एक पल्ला किसी भार से नीचे दबता है। कामिनी और कांचन ही भार है।

"बच्चा पैदा होते ही क्यों रोता है? 'मैं गर्भ में था तब योग में था।' भूमिष्ठ होकर यही कहकर रोता है—'कहाँ यह—कहाँ यह—यह मैं कहाँ आया, ईश्वर के पादपद्मों की चिन्ता कर रहा था, यह मैं कहाँ आया!'

"तुम लोग मन से त्याग करो, अनासक्त होकर संसार में रहो।"

महिमा—उन पर मन जाय तो क्या फिर संसार रह सकता है?

श्रीरामकृष्ण—यह क्या? संसार में नहीं रहोगे तो जाओगे कहाँ? मैं देखता हूँ, मैं जहाँ रहता हूँ, वह राम की अयोध्या है। यह संसार राम की अयोध्या है। श्रीरामचन्द्रजी ने ज्ञान प्राप्त करके गुरु से कहा, मैं संसार का त्याग करूँगा। दशरथ ने उन्हें समझाने के लिए वसिष्ठ को भेजा। वसिष्ठ ने देखा, राम को तीव्र वैराग्य है। तब कहा, 'राम! पहले मेरे साथ कुछ विचार कर लो, फिर संसार छोड़ना। अच्छा, प्रश्न यह है, क्या संसार ईश्वर से कोई अलग चीज है? अगर ऐसा हो तो तुम इसका त्याग कर सकते हो।' राम ने देखा, ईश्वर ही जीव और जगत् सब कुछ हुए हैं। उनकी सत्ता के कारण सब कुछ सत्य जान पड़ता है। तब श्रीरामचन्द्रजी चुप हो रहे।

"संसार में काम और क्रोध, इन सब के साथ लड़ाई करनी पड़ती है, कितनी ही वासनाओं से संग्राम करना पड़ता है, आस-

त्तियों से भिड़ना पड़ता है। लड़ाई किले में रहकर की जाय तो सुविधाएँ हैं। घर से लड़ना ही अच्छा है। भोजन मिलता है—धर्मपत्नी भी बहुत कुछ सहायता करती है। कलिकाल में प्राण अन्नगत हैं—अन्न के लिए दस जगहों में मारे-मारे फिरने की अपेक्षा एक जगह रहना ही अच्छा है। घर में, किले के भीतर रहकर लड़ना अच्छा है।

"और संसार में आँधी में उड़ती हुई जूठी पत्तल की तरह रहो। जूठी पत्तल को आँधी कभी घर के भीतर ले जाती है, कभी नाबदान में। हवा का रुख जिस ओर होता है, पत्तल भी उसी ओर उड़ती है। कभी अच्छी जगह पर गिरती है और कभी बुरी जगह पर। तुम्हें इस समय उन्होंने संसार में डाल रखा है। अच्छा है, इस समय यहीं रहो। फिर जब यहाँ से उठाकर अच्छी जगह ले जायेंगे, तब देखा जायेगा, जो होगा सो होता रहेगा।

"संसार में रखा है, तो क्या करोगे? सब कुछ उन्हें अर्पित कर दो—उन्हें आत्मसमर्पण कर दो तो फिर कोई झंझट नहीं रह जायेगी। तब देखोगे, वे ही सब कुछ कर रहे हैं। सभी 'राम की इच्छा' है।"

एक भक्त—राम की इच्छा, यह कैसी कहावत है?

श्रीरामकृष्ण—किसी गाँव में एक जुलाहा रहता था। वह बड़ा धर्मात्मा था। सब को उस पर विश्वास था और सब लोग उसे प्यार भी करते थे। जुलाहा बाजार में कपड़े बेचा करता था। जब खरीददार दाम पूछते तो वह कहता, 'राम की इच्छा से सूत का दाम हुआ एक रुपया, मेहनत चार आने की, राम की इच्छा से मुनाफा दो आने, और कुल कीमत राम की इच्छा से एक रुपया छः आने।' लोगों का उस पर इतना विश्वास था कि उसी समय वे

दाम देकर कपड़ा ले लेते थे। वह जुलाहा बड़ा भक्त था, रात को भोजन करके बड़ी देर तक चण्डी-मण्डप में बैठा ईश्वर-चिन्तन किया करता था। उनके नाम और गुणों का कीर्तन भी वहीं करता था। एक दिन बड़ी रात हो गयी, फिर भी उसको आँख न लगी, वह बैठा हुआ था, कभी कभी तम्बाकू पीता था। उसी समय उस रास्ते से डाकुओं का एक दल डाका डालने के लिए जा रहा था।

"उनमें मुलियों की कमी थी। उसे देखकर उन्होंने कहा, अबे, हमारे साथ चल। यह कहकर उसका हाथ पकड़ लिया और उसे ले चले। फिर एक गृहस्थ के यहाँ उन लोगों ने डाका डाला। कुछ चीजें जुलाहे पर लाद दीं, इतने में ही पुलिस आ गयी! डाकू भाग गये, सिर्फ जुलाहा सिर पर गट्ठर लिये हुए पकड़ा गया। उस रात को उसे हवालात में रखा। दूसरे दिन मैजिस्ट्रेट साहब के कोर्ट में वह पेश किया गया। गाँव के आदमी मामला सुनकर कोर्ट में हाजिर हुए। उन सब लोगों ने कहा, हुजूर! यह आदमी कभी डाका नहीं डाल सकता। साहब ने तब जुलाहे से पूछा, 'क्यों जी, तुम्हें क्या हुआ है? कहो।'

"जुलाहे ने कहा, 'हुजूर! राम की इच्छा से मैंने रात को रोटी खायी। इसके बाद राम की इच्छा से मैं चण्डी-मण्डप में बैठा हुआ था, राम की इच्छा से रात बहुत हो गयी। मैं राम की इच्छा से उनकी चिन्ता कर रहा था और उनके भजन गा रहा था। उसी समय राम की इच्छा से डाकुओं का एक दल उस रास्ते से आ निकला। राम की इच्छा से वे लोग मुझे पकड़कर घसीट ले गये। राम की इच्छा से उन लोगों ने एक गृहस्थ के घर डाका डाला। राम की इच्छा से मेरे सिर पर गट्ठर लाद

दिया। इतने में ही राम की इच्छा से पुलिस आ गयी। राम की इच्छा से मैं पकड़ा गया, तब मुझे राम की इच्छा से हवालात में पुलिस ने बन्द कर रखा। आज सुबह को राम की इच्छा से वह हुजूर के पास ले आयी है।'

"उसे धर्मात्मा देखकर साहब ने जुलाहे को छोड़ देने की आज्ञा दी। जुलाहे ने रास्ते में अपने मित्रों से कहा, 'राम की इच्छा से मैं छोड़ दिया गया।' संसार करना, सन्यास, यह भी सब राम की इच्छा से होता है, इसीलिए उन पर सब भार छोड़कर संसार का काम करना चाहिए।

"नहीं तो और कुछ करो भी, तो क्या करोगे ?

"किसी क्लर्क को जेल हो गयी थी। मियाद पूरी हो जाने पर वह जेल से निकाल दिया गया। अब बताओ, वह जेल से निकलकर मारे आनन्द के नाचता रहे या फिर क्लर्की करे ?

"संसारी अगर जीवन्मुक्त हो जाय तो वह अनायास ही संसार में रह सकता है; जिसे ज्ञान की प्राप्ति हो गयी है, उसके लिए यहाँ-वहाँ नहीं है, उसके लिए सब बराबर है। जिसके मन में वहाँ है, उसके मन में यहाँ भी है।

"जब मैंने पहले-पहल बगीचे में केशव सेन को देखा, तब कहा, इसकी पूँछ गिर गयी है! सभा भर के आदमी हँस पड़े। केशव ने कहा, 'तुम लोग हँसो मत, इसका कोई अर्थ है, इनसे पूछता हूँ।' मैंने कहा, 'जब तक मेढ़क के बच्चे की पूँछ नहीं गिर जाती, तब तक उसे पानी में ही रहना पड़ता है; वह किनारे से चढ़कर सूखी जमीन में विचर नहीं सकता; ज्योंहीं उसकी पूँछ गिर जाती है त्योंही वह फिर उछल-कूदकर जमीन पर आ जाता है। तब वह पानी में भी रह सकता है और जमीन पर भी। उसी

तरह आदमी की जब तक अविद्या की पूँछ नहीं गिर जाती, तब तक वह संसार रूपी जल में ही पड़ा रहता है। अविद्यारूपी पूँछ के गिर जाने पर—ज्ञान होने पर ही मुक्त भाव से मनुष्य विचरण कर सकता है और इच्छा होने पर संसार में भी रह सकता है।"'

(५)
निर्लिप्त संसारी

श्रीयुत महिमाचरण आदि भक्तगण बैठे हुए श्रीरामकृष्ण के मधुर वचनामृत का पान कर रहे हैं। बातें क्या हैं, अनेक वर्णों के रत्न हैं! जिससे जितना हो सकता है, वह उतना ही संग्रह कर रहा है। अंचल भर गया है, इतना भारी हो रहा है कि उठाया नहीं जाता। छोटे छोटे आधारों से और अधिक धारणा नहीं होती। सृष्टि से लेकर आज तक मनुष्यों के हृदय में जितनी समस्याओं का उद्भव हुआ है, सब की पूर्ति हो रही है। पद्मलोचन, नारायण शास्त्री, गौरी पण्डित, दयानन्द सरस्वती आदि शास्त्र-वेत्ता पण्डितों को आश्चर्य हो रहा है। दयानन्दजी ने जब श्रीराम-कृष्ण और उनकी समाधि-अवस्था को देखा था, तब उन्होंने उसे लक्ष्य करते हुए कहा था, "हम लोगों ने इतना वेद और वेदान्त पढ़ा, परन्तु उसका फल इस महापुरुष में ही नजर आया। इन्हें देखकर प्रमाण मिला कि सब पण्डितगण शास्त्रों का मन्थन कर केवल उसका मट्ठा पीते हैं, मक्खन तो ऐसे ही महापुरुष खाया करते हैं।" उधर अंग्रेजी के उपासक केशवचन्द्र सेन, जैसे पण्डितों को भी आश्चर्य हुआ है। वे सोचते हैं, "कितने आश्चर्य की बात है, एक निरक्षर मनुष्य ये सब बातें कैसे कह रहा है? यह तो बिल्कुल मानो ईसा की बातें हैं, वही,

ग्रामीण भाषा, उसी तरह कहानियों में समझाना जिससे स्त्री-पुरुष, बच्चे, सब लोग आसानी से समझ सकें। ईसा 'पिता-पिता' कहकर पागल हुए थे, ये 'माँ-माँ' कहकर पागल हुए हैं। केवल ज्ञान का भण्डार नही, ईश्वर-प्रेम की अविरल वर्षा हो रही है, फिर भी उसकी समाप्ति नही होती। ये भी ईसा की तरह त्यागी हैं, उन्हीं के जैसा अटल विश्वास इनमें भी मिल रहा है, इसीलिए तो इनकी बातों में इतना बल है। संसारी आमियों के कहने पर इतना बल नही आ सकता; क्योंकि वे त्यागी नहीं है, उनमें वह प्रगाढ विश्वास कहाँ?" केशव सेन जैसे पण्डित भी यह सोचते हैं कि इस निरक्षर आदमी में इतना उदार भाव कैसे आया? कितने आश्चर्य की बात है, इनमें किसी तरह का द्वेष-भाव नही। ये सब धर्मों के मनुष्यों का आदर करते हैं—इसीसे वैमनस्य नही होता।

आज महिमाचरण के साथ श्रीरामकृष्ण की बातचीत सुनकर कोई कोई भक्त सोचते हैं—'श्रीरामकृष्ण ने तो संसार का त्याग करने के लिए कहा नही, बल्कि कहते है, संसार किला है, किले में रहकर काम, क्रोध आदि के साथ लड़ाई करने में सुविधा होती है। फिर उन्होंने कहा, जेल से निकलकर बाबू अपना ही काम फिर करता है; इससे एक तरह यही बात कही गयी कि जीवन्मुक्त संसार में भी रह सकता है। परन्तु एक बात है, श्रीरामकृष्ण कहते है, कभी कभी एकान्त में रहना चाहिए। पौधे को घेरना चाहिए। जब वह बड़ा हो जायेगा, तब उसे घेरने की जरूरत न रह जायेगी, तब हाथी बाँध देने से भी वह उसका कुछ कर नही सकता। निर्जन में रहकर भक्तिलाभ या ज्ञानलाभ करने के पश्चात् संसार में रहने से भी फिर भय की कोई बात

नहीं रह जाती।'

भक्तगण इसी तरह की चिन्ताएँ कर रहे हैं। केशव के बारे में बातचीत करके श्रीरामकृष्ण और दो-एक संसारी भक्तों की-बातें कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण--(महिमाचरण से)--फिर 'सेजोबाबू के साथ देवेन्द्रबाबू से मिलने गया था। सेजोबाबू से मैंने कहा, 'सुना है, देवेन्द्र ठाकुर (रवीन्द्रनाथ के पिता) ईश्वर की चिन्ता करता है, उसे देखने की मेरी इच्छा होती है।' सेजोबाबू ने कहा, 'अच्छा बाबा, मैं तुम्हें ले जाऊँगा, हम दोनों हिन्दू कालेज में एक साथ पढ़ते थे, मेरे साथ बड़ी घनिष्ठता है।' सेजोबाबू से उनकी बहुत दिन बाद मुलाकात हुई। सेजोबाबू को देखकर देवेन्द्र ने कहा, 'तुम्हारा शरीर कुछ बदल गया है, तुम्हारे कुछ तोंद निकल आयी है।' सेजोबाबू ने मेरी बात कही। उन्होंने कहा, 'ये तुम्हें देखने के लिए आये हैं, ये ईश्वर के लिए पागल हो रहे हैं।' लक्षण देखने के लिए मैंने देवेन्द्र से कहा, 'देखूँ जी तुम्हारी देह।' देवेन्द्र ने देह से कुर्ता उतार डाला। मैंने देखा, गोरा रंग, तिस पर सेंदुर-सा लगाया हुआ, तब देवेन्द्र के बाल नहीं पके थे।

"पहले पहल मैंने उसमें कुछ अभिमान देखा था। होना भी चाहिए--इतना ऐश्वर्य है, विद्या है, मान है। अभिमान देखकर सेजोबाबू से मैंने पूछा, 'अच्छा, अभिमान ज्ञान से होता है या अज्ञान से? जिसे ब्रह्मज्ञान हो जाता है, उसे क्या 'मैं पण्डित हूँ, मैं ज्ञानी हूँ, मैं धनी हूँ, इस तरह का अभिमान हो सकता है?'

"देवेन्द्र के साथ बातचीत करते हुए एकाएक मेरी वही अवस्था हो गयी। उस अवस्था के होने पर कौन आदमी कैसा है, यह मैं स्पष्ट देखता हूँ। मेरे भीतर से हँसी उमड़ पड़ी। जब यह

अवस्था होती है तब पण्डित-फण्डित सब तिनके-से जान पड़ते हैं। जब देखता हूँ, पण्डित में विवेक और वैराग्य नहीं है, तब वे सब घास-फूस जैसे जान पड़ते हैं। तब यही दिखता है कि गीध बहुत ऊँचे उड़ रहा है परन्तु उसकी नजर नीचे मरघट पर ही लगी हुई है।

"देखा योग और भोग दोनों हैं, छोटे छोटे बहुत से लड़के थे, डाक्टर आया हुआ था—इसीसे सिद्ध है कि इतना ज्ञानी तो है, परन्तु संसार में रहना पड़ता है। मैंने कहा—'तुम कलिकाल के जनक हो। जनक इधर-उधर दोनों ओर रहकर दूध का कटोरा खाली किया करते थे। मैंने सुना था, तुम संसार में रहकर भी ईश्वर पर मन लगाये हुए हो, इसीलिए तुम्हें देखने आया हूँ, मुझे कुछ ईश्वर की बातें सुनाओ।'

"तब वेद से कुछ अंश उसने सुनाये। कहा, 'यह संसार एक दीपक के पेड़ के समान है और प्रत्येक जीव इस पेड़ का एक एक दीपक है।' मैं जब यहाँ ध्यान करता था, तब बिलकुल इसी तरह देखता था। देवेन्द्र की बात से मेल हुआ, देखकर मैंने सोचा, तब तो यह बहुत बड़ा आदमी है। मैंने उसे व्याख्या करने के लिए कहा। उसने कहा, 'इस संसार को पहले कौन जानता था?—ईश्वर ने अपनी महिमा को प्रकाशित कर दिखाने के उद्देश्य से मनुष्य की सृष्टि की। पेड़ के उजाले के न रहने पर सब अँधेरा हो जाता है, पेड़ भी नहीं दिख पड़ता।'

"बहुत कुछ बातें होने के बाद देवेन्द्र ने खुश होकर कहा, 'आपको उत्सव में आना होगा।' मैंने कहा, 'वह ईश्वर की इच्छा, मेरी यह अवस्था तो देख ही रहे हो—वे कभी किसी भाव में रखते हैं, कभी किसी भाव में।' देवेन्द्र ने कहा, 'नहीं, आना ही

होगा। परन्तु धोती और चद्दर ये दोनों कपड़े आप जरूर पहने हुए हों, आपको ऊलजलूल देखकर अगर किसी ने कुछ कह दिया तो मुझे बड़ा कष्ट होगा।' मैंने कहा, 'यह मुझसे न होगा, मैं बाबू न बन सकूँगा!' देवेन्द्र और सेजोबाबू हँसने लगे।

"उसके दूसरे ही दिन सेजोबाबू के पास देवेन्द्र की चिट्ठी आयी—मुझे उत्सव देखने के लिए जाने से उन्होंने रोका था। लिखा था, देह पर एक चद्दर भी न रहेगी तो असभ्यता होगी।

(सब हँसते हैं।)

(महिमा से) "एक और है—कप्तान। संसारी तो है परन्तु बड़ा भक्त है। तुम उससे मिलना।

"कप्तान को वेद, वेदान्त, गीता, भागवत, यह सब कण्ठाग्र याद है। तुम बातचीत करके देखना।

"बड़ी भक्ति है। मैं बराहनगर की राह से जा रहा था, वह मेरे ऊपर छाता लगाता था। अपने घर ले जाकर बड़ी खातिर की।—पंखा झलता था, पैर दबाता था और कितनी ही तरह की तरकारियाँ बना कर खिलाता था। मैं एक दिन उसके यहाँ पाखाने में बेहोश हो गया। वह इतना आचारी तो है, परन्तु पाखाने के भीतर मेरे पास जाकर मेरे पैर फैलाकर मुझे बैठा दिया। इतना आचारी है, परन्तु घृणा नहीं की।

"कप्तान के पल्ले बड़ा खर्च है। उसके भाई बनारस में रहते हैं, उन्हें खर्च देना पड़ता है। उसकी बीबी पहले बड़ी कंजूस थी। अब इतनी पलट गयी है कि खर्च सँभाल नहीं सकती।

"कप्तान की स्त्री ने मुझसे कहा, 'इन्हें संसार अच्छा नहीं लगता, इसलिए एक बार इन्होंने कहा था कि संसार छोड़ दूँगा।' हाँ, वह ऐसा बराबर कहा करता है।

"उसका वंश ही भक्त है। उसका बाप लड़ाई में जाया करता था, मैंने सुना है लड़ाई के समय वह एक हाथ से शिव की पूजा करता था और दूसरे से तलवार चलाता था।

"बड़ा आचारी आदमी है। मैं केशव सेन के पास जाता था, इसीलिए इधर महीने भर से नहीं आया। कहता है, 'केशव सेन के आचार भ्रष्ट हैं—अंग्रेजों के साथ भोजन करता है, उसने दूसरी जाति में अपनी लड़की का विवाह किया है, उसकी कोई जाति नहीं है।' मैंने कहा, 'मुझे उन सब बातों से क्या काम? केशव सेन ईश्वर का नाम लेता है, इसलिए मैं उसे देखने जाया करता हूँ। ईश्वर की बातें सुनने के लिए वहाँ जाता हूँ—मैं बेर खाता हूँ; काँटों से मुझे क्या काम?' फिर भी मुझे कप्तान ने न छोड़ा। कहा, 'तुम केशव सेन के यहाँ क्यों जाते हो?' तब मैंने कुछ चिढ़कर कहा, 'मैं रुपयों के लिए तो जाता नहीं— मैं ईश्वर का नाम सुनने के लिए जाया करता हूँ—और तुम लाट साहब के यहाँ कैसे जाया करते हो? वे म्लेच्छ हैं। उनके साथ कैसे रहते हो?' यह सब कहने के बाद कहीं वह रुका।

"परन्तु उसमें बड़ी भक्ति है। जब पूजा करता है, तब कपूर की आरती करता है और पूजा करते हुए आसन पर बैठकर स्तवपाठ करता है। तब वह एक दूसरा ही आदमी रहता है, मानो तन्मय हो जाता है।

(६)

वेदान्त-विचार। मायावाद और श्रीरामकृष्ण

(महिमाचरण) "वेदान्त के विचार से संसार मायामय है—स्वप्न की तरह सब मिथ्या है। जो परमात्मा है, वे साक्षी-

स्वरूप है—जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति तीनों अवस्थाओं के साक्षी-स्वरूप। ये सब तुम्हारे ही भाव की बातें हैं। स्वप्न जितना सत्य है, जागृति भी उतनी ही सत्य है। तुम्हारे भाव की एक कहानी कहता हूँ, सुनो।

"किसी देश में एक किसान रहता था। वह बड़ा ज्ञानी था। किसानी करता था—स्त्री थी, एक लड़का बहुत दिनों के बाद हुआ था। नाम उसका हारू था। बच्चे पर माँ और बाप, दोनों का प्यार था, क्योंकि एकमात्र वही नीलमणि जैसा धन था। किसान धर्मात्मा था। गाँव के सब आदमी उसे चाहते थे। एक दिन वह मैदान में काम कर रहा था, किसी ने आकर खबर दी, हारू को हैजा हुआ। किसान ने घर जाकर उसकी बड़ी दवादारू की, परन्तु अन्त में लड़का गुजर गया। घर के सब लोगों को बड़ा शोक हुआ, परन्तु किसान को जैसे कुछ भी न हुआ हो। उल्टा वही सब को समझाता था कि शोक करने में कुछ नहीं है। फिर वह खेती करने चला गया। घर लौटकर उसने देखा, उसकी स्त्री रो रही है। उसने अपने पति से कहा, 'तुम बड़े निष्ठुर हो, लड़का जाता रहा और तुम्हारी आँखों से आँसू तक न निकले!' तब उस किसान ने स्थिर होकर कहा, 'मैं क्यों नहीं रोता, बतलाऊँ? कल मैंने एक बड़ा भारी स्वप्न देखा। देखा कि मैं राजा हुआ हूँ और मेरे आठ बच्चे हुए हैं—बड़े सुख से हूँ। फिर आँख खुल गयी। अब मुझे बड़ी चिन्ता है—अपने उन आठ लड़कों के लिए रोऊँ या तुम्हारे इस एक लड़के हारू के लिए रोऊँ?'

"किसान ज्ञानी था, इसीलिए वह देख रहा था, स्वप्न की अवस्था जिस तरह मिथ्या थी, उसी तरह जागृति की अवस्था भी मिथ्या है, एक नित्य वस्तु केवल आत्मा ही है।

"मैं सब कुछ लेता हूँ, तुरीय और जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्त -सब कुछ। मैं पिछली तीनों अवस्थाओं को मानता हूँ। ब्रह्म और माया, जीव-जगत्, सब लेता हूँ, यदि मैं कुछ कम लूँ तो मुझे पूरा वजन न मिले।"

एक भक्त-वजन में क्यों घटता है? (सब हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण-ब्रह्म जीवजगत् विशिष्ट है। पहले नेति नेति करते समय जीवजगत् को छोड़ देना पड़ता है। अहंबुद्धि जब तक है, तब तक वे ही सब हुए हैं, ऐसा भासित होता है--चौबीसों तत्त्व वे ही हुए हैं।

"बेल का सार कहो तो उसका गूदा ही समझा जाता है, तब बीज और खोपड़ा निकाल देने पड़ते हैं, परन्तु बेल वजन में कितना था इसके कहने की आवश्यकता हुई तो केवल गूदा तौलने से काम नहीं चल सकता। तौलते समय गूदा, बीज, खोपड़ा, सब कुछ लेना चाहिए। जिसका गूदा है, उसके बीज भी हैं और खोपड़ा भी। जिनकी नित्यता है, लीला भी उन्हीं की है।

"इसलिए मैं नित्यता और लीला सब मानता हूँ। संसार को माया कहकर मैं उसका अस्तित्व लोप नहीं करता। यदि मैं वैसा करूँ तो वजन पूरा न मिले।"

महिमाचरण-यह बहुत अच्छा सामञ्जस्य है। नित्यता से ही लीला है और लीला से ही नित्यता है।

श्रीरामकृष्ण-ज्ञानी सब कुछ स्वप्नवत् देखते हैं। भक्तगण सभी अवस्थाएँ मानते हैं। ज्ञानी दूध तो देते हैं, पर बूँद बूँद करके। (सब हँसते हैं।) कोई कोई गौ ऐसी होती है कि घास चुन-चुनकर चरती है, इसलिए दूध भी थोड़ा थोड़ा करके देती है। जो गौएँ इतना चुनती नहीं और सब कुछ, जो आगे आया

खा लेती हैं, वे दूध भी खूब खर्राटे के साथ देती हैं। उत्तम भक्त नित्य और लीला दोनों ही मानता है। इसीलिए नित्य से मन के उतर आने पर भी वह उन्हें सम्भोग करने के लिए पाता है। उत्तम भक्त खर्राटे के साथ दूध देता है! (सब हँसते हैं।)

महिमा-परन्तु दूध में कुछ बू आती है! (हास्य)

श्रीरामकृष्ण-(सहास्य)-हाँ, आती है, परन्तु कुछ उबाल लेना पड़ता है। ज्ञानाग्नि पर दूध कुछ गरम कर लिया जाय तो फिर बू नहीं रह जाती। (सब हँसते हैं।)

(महिमा से) "ओंकार की व्याख्या तुम लोग केवल यही करते हो—अकार, उकार, मकार।"

महिमाचरण-अकार, उकार और मकार का अर्थ है सृष्टि, स्थिति और प्रलय।

श्रीरामकृष्ण-मैं उपमा देता हूँ घण्टे की टंकार से। ट्—अ—म्। लीला से नित्य में लीन होना, स्थूल, सूक्ष्म और कारण से महाकारण में लीन होना, जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति से तुरीय में लीन होना। घण्टे का बजना मानो महासमुद्र में एक वजनदार चीज का गिरना है। फिर तरंगों का उठना शुरू होता है, नित्य से लीला का आरम्भ होता है; महाकारण से स्थूल, सूक्ष्म, कारण शरीर का उद्भव होता है; तुरीय से जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति ये सब अवस्थाएँ आती हैं। फिर महासमुद्र की तरंग महासमुद्र में ही लीन हो जाती है। नित्य से लीला है और लीला से नित्य। इसीलिए मैं टंकार की उपमा दिया करता हूँ। मैंने यह सब यथार्थ रूप में देखा है। मुझे उसने दिखाया है; चित्-समुद्र है, उसका ओर-छोर नहीं है। उसीसे ये सब लीलाएँ उठी हैं और फिर उसीमें लीन हो गयी हैं।

चिदाकाश में करोड़ों ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति होकर वे फिर उसीमें लीन हो गये हैं। तुम्हारी पुस्तक में क्या लिखा है, यह सब में नहीं जानता।

महिमा–जिन्होंने देखा है, उन्होंने शास्त्र लिखा ही नहीं, वे तो अपने ही भाव में मस्त रहते थे, शास्त्र कब लिखते? लिखने बैठिये तो कुछ हिसाबी बुद्धि की जरूरत होती ही है। उनसे सुनकर दूसरों ने लिखा है।

श्रीरामकृष्ण–संसारी पूछते हैं, कामिनी और कांचन की आसक्ति क्यों नहीं जाती? अरे भाई, उन्हें प्राप्त करो तो आसक्ति चली जाय। अगर एक बार ब्रह्मानन्द मिल जाता है तो इन्द्रिय-सुखों या अर्थ या सम्मान आदि की ओर फिर मन नहीं जाता।

"कीड़ा अगर एक बार उजाला देख लेता है, तो फिर अँधेरे में नहीं जाता।

'रावण से किसी ने कहा था, तुम सीता के लिए माया से अनेक रूप तो धरते हो, एक बार राम-रूप धारण करके सीता के पास क्यों नहीं जाते? रावण ने कहा, 'तुच्छं ब्रह्मपदं, परवधू-संगः कुतः—जब श्रीराम की चिन्ता करता हूँ, तब ब्रह्मपद भी तुच्छ जान पड़ता है, पराई स्त्री की तो बात ही क्या है? अतएव राम का रूप धारण करके मैं क्या करूँगा?'

भक्ति से संसारासक्ति कम होती है

"इसीके लिए साधन-भजन है। जितनी ही उनकी चिन्ता करेंगे, संसार की भोगवासना उतनी ही घटती जायेगी। उनके पादपद्मों में जितनी भक्ति होगी, उतनी ही आसक्ति घटती जायेगी।

उतना ही देहसुख की ओर से मन हटता रहेगा, पराई स्त्री माता के समान जान पड़ेगी, अपनी स्त्री धर्म में सहायता देनेवाली मित्र जान पड़ेगी, पशुभाव दूर हो जायेगा, देवभाव आयेगा, संसार से बिलकुल अनासक्त हो जाओगे। तब संसार में रहने पर भी जीवन्मुक्त होकर विचरण करोगे। चैतन्यदेव जैसे भक्त अनासक्त होकर संसार में थे।

(महिमा से) "जो सच्चा भक्त है, उसके पास चाहे हजार वेदान्त का विचार करो और 'स्वप्नवत्' कहो, उसकी भक्ति जाने की नहीं। घूम-फिरकर कुछ न कुछ रहेगी ही। बेंत के वन में एक मूसल पड़ा था, वही 'मूषल कुलनाशनम्' हो गया था।

"शिव के अंश से पैदा होने पर मनुष्य ज्ञानी होता है। ब्रह्म सत्य है और संसार मिथ्या, इसी भाव की ओर मन झुका रहता है। विष्णु के अंश से पैदा होने पर प्रेम और भक्ति होती है। वह प्रेम और वह भक्ति मिट नहीं सकती। ज्ञान और विचार के बाद यह प्रेम और भक्ति अगर घट जाय, तो एक दूसरे समय बड़े जोरों से बढ़ जाती है।"

(७)

मातृसेवा और श्रीरामकृष्ण। हाजरा महाशय

श्रीरामकृष्ण के कमरे के पूर्ववाले बरामदे में हाजरा महाशय बैठकर जप करते हैं। उम्र ४६-४७ होगी। श्रीरामकृष्ण के देश के आदमी हैं। बहुत दिनों से वैराग्य है। बाहर बाहर घूमते हैं, कभी घर जाकर रहते हैं। घर में कुछ जमीन आदि है। उसी से उनकी स्त्री और लड़के बच्चे पलते हैं। परन्तु एक हजार रुपये के लगभग ऋण है। इसके लिए हाजरा महाशय को बड़ी चिन्ता

रहती है कि कब ऋण का शोध हो । इसके लिए वे सदा प्रयत्न-शील भी रहते हैं । श्रीयुत हाजरा महाशय कलकत्ता भी आया-जाया करते हैं । वहाँ ठनठनिया के ईशानचन्द्र मुखोपाध्याय महाशय उनकी बड़ी खातिर करते हैं और साधु की तरह सेवा भी करते हैं । श्रीरामकृष्ण ने उन्हें यत्नपूर्वक अपने पास रखा है, उनके कपड़े फट जाते हैं तो भक्तों से कहकर बनवा देते हैं । सदा उनकी खबर लेते हैं और सदा उनसे ईश्वरी प्रसंग किया करते हैं । हाजरा महाशय बड़े तार्किक हैं । प्रायः बातचीत करते हुए तर्क की तरंग में बहकर इधर से उधर हो जाते हैं । बरामदे में अपने आसन पर सदा माला लिये हुए जप किया करते हैं ।

हाजरा महाशय की माता के बीमार पड़ने का हाल आया है । रामलाल के आते समय उन्होंने (हाजरा की माँ ने) उनका हाथ पकड़कर बहुत तरह से कहा था, 'अपने चाचा (श्रीरामकृष्ण) से मेरी विनय सुनाकर कहना वे प्रताप (हाजरा महाशय) को किसी तरह घर भेज दें; एक बार मैं देख लूँ ।' श्रीरामकृष्ण ने हाजरा महाशय से कहा था, 'एक बार घर जाकर अपनी माँ के दर्शन कर आओ । उन्होंने रामलाल से बहुत समझाकर कहा है, माँ को कष्ट देकर भी कभी ईश्वर को पुकारना हो सकता है? मुलाकात करके चले आना ।'

भक्तों के उठ जाने पर महिमाचरण हाजरा को साथ लेकर श्रीरामकृष्ण के पास आये । मास्टर भी हैं ।

महिमाचरण—(श्रीरामकृष्ण से, सहास्य)—महाराज, आपसे एक निवेदन है, आपने हाजरा को घर जाने के लिए क्यों कहा ? फिर से संसार में जाने की उसकी इच्छा नहीं है ।

श्रीरामकृष्ण—उसकी माँ रामलाल के पास बहुत रोयी है ।

इसीलिए मैंने कहा, तीन ही दिन के लिए चले आओ, एक बार मिलकर फिर चले जाना। माता को कष्ट देकर क्या कभी ईश्वर की साधना होती है? मैं वृन्दावन में रहता था, तब माँ की याद आयी, सोचा, माँ रोयेगी, बस, सेजोबाबू के साथ यहाँ चला आया। संसार में जाते हुए ज्ञानी को क्या डर है?

महिमाचरण–(सहास्य)–महाराज, हाजरा को ज्ञान जब हो तब न?

श्रीरामकृष्ण–(सहास्य)–हाजरा को सब कुछ हो गया है। संसार में थोड़ा सा मन है, कारण, बच्चे आदि हैं और कुछ ऋण है। 'मामी की सब बीमारी अच्छी हो गयी है, एक नासूर रोग है।' (महिमाचरण आदि सब हँसते हैं।)

महिमाचरण–कहाँ ज्ञान हुआ महाराज?

श्रीरामकृष्ण–(हँसकर)–नहीं जी, तुम नहीं जानते हो। सब लोग कहते हैं हाजरा एक विशेष व्यक्ति है, रासमनि की ठाकुरबाड़ी में रहते हैं। सब लोग हाजरा का ही नाम लेते हैं, यहाँ का (अपने को लक्ष्य कर) नाम कौन लेता है?

हाजरा–आप निरुपम हैं, आपकी उपमा नहीं है, इसीलिए आपको कोई समझ नहीं पाता।

श्रीरामकृष्ण–यही तो, निरुपम से कोई काम भी नहीं निकलता, अतएव यहाँ का नाम कोई क्यों लेने लगा?

महिमा–महाराज, वह क्या जाने? आप जैसा उपदेश देंगे, वह वैसा ही करेगा।

श्रीरामकृष्ण–नहीं, तुम चाहे उससे पूछ देखो, उसने मुझसे कहा है, तुम्हारे साथ मेरा कोई लेना देना नहीं है।

महिमा–तर्क बहुत करता है।

श्रीरामकृष्ण–वह कभी कभी मुझे शिक्षा देता है। (सब हँसते हैं।) जब तर्क करता है तब कभी मैं गाली दे बैठता हूँ। तर्क के बाद कभी मसहरी के भीतर लेटा हुआ रहता हूँ, फिर यह सोचकर कि मैंने कुछ कह तो नहीं डाला, निकल आता हूँ, हाजरा को प्रणाम कर जाता हूँ, तब चित्त स्थिर होता है।

श्रीरामकृष्ण–(हाजरा से)–तुम शुद्धात्मा को ईश्वर क्यों कहते हो? शुद्धात्मा निष्क्रिय है, तीनों अवस्थाओं का साक्षीस्वरूप है। जब हम सृष्टि, स्थिति और प्रलय के कार्यों की चिन्ता करते हैं, तभी ईश्वर को मानते हैं। शुद्धात्मा उसी तरह है जैसे दूर पर पड़ा हुआ चुम्बक पत्थर, सुई हिल रही है, परन्तु चुम्बक पत्थर चुपचाप पड़ा हुआ है—निष्क्रिय है।

(८)

सन्ध्या-संगीत और ईशान से संवाद

सन्ध्या हो रही है। श्रीरामकृष्ण टहल रहे हैं। मणि को अकेले बैठे हुए और कुछ सोचते हुए देखकर एकाएक श्रीरामकृष्ण ने उनसे स्नेह भरे स्वरों में कहा—"मरकीन के एक-दो कुर्ते ला देना, सब के कुर्ते मैं पहन भी नहीं सकता—कप्तान से कहने के लिए सोचा था, परन्तु अब तुम्हीं ला देना।" मणि खड़े हो गये, कहा, "जो आज्ञा।"

सन्ध्या हो गयी है। श्रीरामकृष्ण के कमरे में धूप दी गयी। वे देवताओं को प्रणाम करके, बीज मन्त्र जपकर, नामकीर्तन कर रहे हैं। घर के बाहर विचित्र शोभा है। आज कार्तिक की शुक्ला सप्तमी है। चन्द्रमा की निर्मल किरणों से एक ओर श्रीठाकुर-मन्दिर जैसे हँस रहा है, दूसरी ओर भागीरथी सोते हुए शिशु के

हृदय की तरह काँप रही है। ज्वार पूरा हो गया है। आरती का शब्द गंगा के स्निग्ध और उज्ज्वल प्रवाह में उठती हुई कलध्वनि से मिलकर बहुत दूर जाकर विलीन हो रहा था। श्रीठाकुर-मन्दिर में एक ही साथ तीन मन्दिरों में आरती हो रही है--काली-मन्दिर में, विष्णु-मन्दिर में और शिव-मन्दिर में। द्वादश-शिव-मन्दिरों में एक एक के बाद आरती होती है। पुरोहित एक शिव-मन्दिर से दूसरे में जा रहे हैं, बायें हाथ में घण्टा है, दाहिने में पंच प्रदीप, साथ में परिचारक है, हाथ में झाँझ लिये हुए। आरती हो रही है, उसके साथ श्रीठाकुर-मन्दिर के दक्षिण-पश्चिम के कोने से शहनाई की मधुर ध्वनि सुन पड़ रही है। वहीं नौबतखाना है, सन्ध्या की रागिनी बज रही है। आनन्दमयी के नित्य उत्सव से जीवों को मानो यह शिक्षा मिल रही है, कोई निरानन्द न होना, ऐहिक भावों में सुख और दुःख तो हैं ही; जगदम्बा भी तो है, फिर क्या चिन्ता, आनन्द करो। दासी के लड़के को अच्छा भोजन और अच्छे कपड़े नहीं मिलते, न उसके अच्छा घर है, न अच्छा द्वार, फिर भी उसके हृदय में यह भरोसा रहता है कि उसके माँ है। एकमात्र माता की गोद उसका अवलम्ब है। यह बनी-बनायी माँ नहीं, अपनी निजी माँ है। मैं कौन हूँ, कहाँ से आया, कहाँ जाऊँगा, सब माँ जानती है। इतना सोचेगा कौन? मैं जानना भी नहीं चाहता। अगर समझने की जरूरत होगी तो वे समझा देंगी।

बाहर कौमुदी की उज्ज्वलता में संसार हँस रहा है और भीतर कमरे में भगवत्-प्रेमाभिलिप्त श्रीरामकृष्ण बैठे हुए हैं। कलकत्ते से ईशान आये हैं। फिर ईश्वरी प्रसंग हो रहा है। ईशान को ईश्वर पर बड़ा विश्वास है। वे कहते हैं, जो घर से निकलते

समय एक बार भी दुर्गा नाम स्मरण कर लेते हैं, शूल हाथ में लिये हुए शूलपाणि उनके साथ जाया करते हैं। विपत्ति में फिर भय क्या है ? शिव स्वयं उसकी रक्षा करते है ।

श्रीरामकृष्ण–(ईशान से)–तुम्हें बड़ा विश्वास है। हम लोगों को इतना नहीं है। (सब हँसते हैं।) विश्वास से ही वे मिलते हैं।

ईशान–जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण–तुम जप, सन्ध्या, उपवास, पुरश्चरण, यह सब कर्म कर रहे हो। यह अच्छा है। जिसकी ईश्वर पर अन्तर से लगन रहती है, उससे वे यह सब काम करा लेते हैं। फल की कामना न करके यह सब कर्म कर लेने से मनुष्य उन्हें अवश्य पाता है।

"शास्त्रों मे बहुत से कर्म करने के लिए कहा है, इस लिए मै कर रहा हूँ"–इस तरह की भक्ति को वैधी भक्ति कहते हैं। एक और है, राग-भक्ति। वह अनुराग से होती है। ईश्वर पर प्रीति आने पर होती है, जैसे प्रह्लाद को हुई थी। उस भक्ति के आने पर फिर कभी कर्मों की आवश्यकता नहीं होती।"

(९)

सेवक (मणि) के विचार

सन्ध्या होने के पूर्व मणि घूम रहे हैं और सोच रहे हैं कि 'राम की इच्छा' यह तो बहुत अच्छी बात है। इससे तो अदृष्ट (Predestination), स्वाधीन इच्छा (Free Will), स्वतन्त्रता (Liberty), आवश्यकता (Necessity), आदि सब का झगड़ा मिट जाता है। मुझे डाकुओं ने पकड़ लिया, इसमें भी 'राम की इच्छा';

फिर मैं तम्बाकू पीता हूँ इसमें भी 'राम की इच्छा'; डाकूगिरी करता हूँ इसमें भी 'राम की इच्छा'; मुझे पुलिस ने पकड़ लिया, इसमें भी 'राम की इच्छा'; मैं साधु हो गया, इसमें भी 'राम की इच्छा'; मैं प्रार्थना करता हूँ कि हे प्रभु! मुझे असद्बुद्धि मत देना—मुझसे डकैती मत कराना, यह भी 'राम की इच्छा' है। सद् इच्छा और असद् इच्छा वे ही देते हैं। फिर भी एक बात है, असद् इच्छा वे क्यों देंगे?—डकैती करने की इच्छा वे क्यों देंगे? इसके उत्तर में श्रीरामकृष्णदेव ने कहा, "उन्होंने जानवरों में जिस प्रकार बाघ, सिंह, सर्प उत्पन्न किये हैं, पेड़ों में जिस प्रकार विष का भी पेड़ पैदा किया है, उसी प्रकार मनुष्यों में चोर-डाकू भी बनाये हैं। ऐसा उन्होंने क्यों किया? इसे कौन कह सकता है? ईश्वर को कौन समझेगा?

"किन्तु यदि उन्होंने ही सब किया है तो उत्तरदायित्व का भाव (Sense of Responsibility) नष्ट हो जाता है, पर यह क्यों होगा? जब तक ईश्वर को न जानोगे, उनके दर्शन न होंगे, तब तक 'राम की इच्छा' इस बात का सोलह आने बोध नहीं होगा। उन्हें प्राप्त न करने से यह बात एक बार समझ में आती है, फिर भूल हो जाती है। जब तक पूर्ण विश्वास न होगा, तब तक पाप-पुण्य का बोध, उत्तरदायित्व (Responsibility) का बोध रहेगा ही। श्रीरामकृष्णदेव ने समझाया, 'राम की इच्छा'। तोते की तरह 'राम की इच्छा' मुँह से कहने से नहीं चल सकता। जब तक ईश्वर को नहीं जाना जाता, उनकी इच्छा से हमारी इच्छा का ऐक्य नहीं होता, जब तक 'मैं यन्त्र हूँ' ऐसा बोध नहीं होता, तब तक वे पाप-पुण्य का ज्ञान, सुख-दुःख का ज्ञान, पवित्र-अपवित्र का ज्ञान, अच्छे बुरे का ज्ञान नष्ट नहीं होने देते, उत्तरदायित्व का

ज्ञान (Sense of Responsibility) नष्ट नहीं होने देते; ऐसा न होने से उनका मायामय संसार कैसे चलेगा?

"श्रीरामकृष्णदेव की भक्ति की बात जितनी सोचता हूँ, उतना ही अवाक् रह जाता हूँ। जब उन्होंने सुना कि केशव सेन हरिनाम लेते हैं, ईश्वर का चिन्तन करते हैं, तो वे तुरन्त उन्हें मिलने के लिए गये और केशव तुरन्त उनके आत्मीय भी हो गये। उस समय उन्होंने कप्तान की बातें नहीं सुनी। केशव विलायत गये हैं, उन्होंने साहबों के साथ खाया है, कन्या को दूसरी जाति के पुरुष के साथ ब्याह दिया है—कप्तान की ये सब बातें गायब हो गयीं।

"भक्ति के सूत्र में साकारवादी और निराकारवादी एक हो जाते हैं; हिन्दू, मुसलमान, ईसाई एक हो जाते हैं; चारों वर्ण एक हो जाते हैं। भक्ति की ही जय होती है। धन्य श्रीरामकृष्ण! तुम्हारी भी जय! तुम्हीं ने सनातन धर्म के इस विश्वजनीन भाव को फिर से मूर्तिमान किया। इसीलिए समझता हूँ कि तुम्हारा इतना आकर्षण है! सब धर्मावलम्बियों को तुम परम आत्मीय समझकर आलिंगन करते हो! तुम्हारी भक्ति है। तुम सिर्फ देखते हो—अन्दर ईश्वर की भक्ति और प्रेम है या नहीं? यदि ऐसा हो तो वह व्यक्ति तुम्हारा परम आत्मीय है—भक्तिमान यदि दिखायी पड़े तो वह जैसा तुम्हारा आत्मीय है। मुसलमान को भी यदि अल्लाह के ऊपर प्रेम हो, तो वह भी तुम्हारा अपना आदमी होगा; ईसाई को यदि ईसा के ऊपर भक्ति हो, तो वह तुम्हारा परम आत्मीय होगा। तुम कहते हो कि सब नदियाँ भिन्न-भिन्न दिशाओं से बहकर समुद्र में गिरती हैं। सब का गन्तव्य-स्थान एक समुद्र ही है।

"सुना है, यह जगत्-ब्रह्माण्ड महाचिदाकाश में आविर्भूत होता है, फिर कुछ समय के बाद उसी में लय हो जाता है— महासमुद्र में लहर उठती है, फिर समय पाकर लय हो जाती है। आनन्द-सिन्धु के जल में अनन्त-लीला-तरंगें हैं। इन लीलाओं का आरम्भ कहाँ है? अन्त कहाँ है? उसे मुँह से कहा नहीं जाता— मन से सोचा नहीं जाता। मनुष्य की क्या शक्ति—उसकी बुद्धि की ही क्या शक्ति! सुनते हैं, महापुरुष समाधिस्थ होकर उसी नित्य परम पुरुष का दर्शन करते हैं—नित्य लीलामय हरि का साक्षात्कार करते हैं। अवश्य ही करते हैं कारण, श्रीरामकृष्णदेव ऐसा कहते हैं। किन्तु चर्मचक्षुओं से नहीं, मालूम पड़ता है, —दिव्य चक्षु जिसे कहते हैं उसके द्वारा—जिन नेत्रों को पाकर अर्जुन ने विश्वरूप का दर्शन किया था, जिन नेत्रों से ऋषियों ने आत्मा का साक्षात्कार किया था जिस दिव्य चक्षु से ईसा अपने स्वर्गीय पिता का बराबर दर्शन करते थे! वे नेत्र किसे होते हैं? श्रीरामकृष्णदेव के मुँह से सुना था, वह व्याकुलता के द्वारा होता है! इस समय वह व्याकुलता किस प्रकार हो सकती है? क्या संसार का त्याग करना होगा? ऐसा भी तो उन्होंने आज नहीं कहा!"

परिच्छेद ३०

श्रीरामकृष्ण तथा ज्ञानयोग

(१)

संन्यासी तथा संचय। पूर्ण ज्ञान तथा प्रेम के लक्षण

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर के काली-मन्दिर में विराजमान हैं। अपने कमरे में छोटी खाट पर पूर्व की ओर मुंह किये हुए बैठे हैं। भक्तगण जमीन पर बैठे हैं। आज कार्तिक की कृष्णा सप्तमी है, ९ नवम्बर, १८८४।

दोपहर का समय है। श्रीयुत मास्टर आये, दूसरे भक्त भी धीरे धीरे आ रहे हैं। श्रीयुत विजयकृष्ण गोस्वामी के साथ कई ब्राह्म भक्त आये हुए हैं। पुजारी राम चक्रवर्ती भी आये हैं। क्रमशः महिमाचरण, नारायण और किशोरी भी आये। कुछ देर बाद और भी कई भक्त आये।

जाड़ा पड़ने लगा है। श्रीरामकृष्ण को कुर्ते की जरूरत है। मास्टर से ले आने के लिए कहा था। वे नैनगिलाट के कुर्तों के सिवा एक और जीन का कुर्ता भी ले आये हैं; परन्तु इसके लिए श्रीरामकृष्ण ने नहीं कहा था।

श्रीरामकृष्ण–(मास्टर से)–तुम बल्कि इसे लेते जाओ। तुम्हीं पहनाना। इसमें दोष नहीं है। अच्छा, तुमसे मैंने किस तरह के कुर्तों के लिए कहा था?

मास्टर–जी आपने सादे कुर्तों की बात कही थी। जीन का कुर्ता ले आने के लिए नहीं कहा था।

श्रीरामकृष्ण–तो जीन वाले को ही लौटा ले जाओ।

(विजय आदि से) "देखो, द्वारका बाबू ने एक शाल दिया था। मारवाड़ी भक्तों ने भी एक लाया था, पर मैंने नहीं लिया।" श्रीरामकृष्ण और भी कहना चाहते थे, उसी समय विजय बोल उठे—

विजय—जी हाँ ठीक तो है। जो कुछ चाहिए और जितना चाहिए, उतना ही ले लिया जाता है। किसी एक को तो देना ही होगा। आदमी को छोड़ और देगा भी कौन?

श्रीरामकृष्ण—देनेवाले वही ईश्वर हैं। सास ने कहा, 'बहू' सब की सेवा करने के लिए आदमी हैं, परन्तु तुम्हारे पैर दबाने वाला कोई नहीं है।' कोई होता तो अच्छा होता। बहू ने कहा, 'माँ' मेरे पैर भगवान दबायेंगे, मुझे किसी की जरूरत नहीं है।' उसने भक्तिपूर्वक यह बात कही थी।

"एक फकीर अकबरशाह के पास कुछ भेंट लेने गया था। बादशाह उस समय नमाज पढ़ रहा था और कह रहा था, ऐ खुदा; मुझे दौलतमन्द कर दे। फकीर ने जब बादशाह की याचनाएं सुनीं तो उठकर वापस जाना चाहा। परन्तु अकबरशाह ने उससे बैठने के लिए इशारा किया। नमाज समाप्त होने पर उन्होंने पूछा, तुम क्यों वापस जा रहे थे? उसने कहा, 'आप खुद ही याचना कर रहे हैं, ऐ खुदा, मुझे दौलतमन्द कर दे। इसलिए मैंने सोचा, अगर माँगना ही है तो भिक्षुक से क्यों माँगूँ, खुदा से ही क्यों न माँगूँ?'"

विजय—गया में मैंने एक साधु देखा था। वे स्वयं कुछ प्रयत्न नहीं करते थे। एक दिन इच्छा हुई, भक्तों को खिलाऊँ। देखा, न जाने कहाँ से मैदा और घी आ गया। फल भी आये।

श्रीरामकृष्ण (विजय आदि से)—साधुओं के तीन दर्जे

हैं, उत्तम, मध्यम और अधम। जो उत्तम हैं, वे भोजन की खोज में नहीं फिरते। मध्यम और अधम दण्डियों की तरह के होते हैं। मध्यम जो है, वे नमोनारायण करके खड़े हो जाते हैं। जो अधम हैं वे न देने पर झगड़ा करते हैं। (सब हँसे।)

"उत्तम श्रेणी के साधु अजगर-वृत्ति के होते हैं। उन्हें बैठे हुए ही आहार मिलता है। अजगर हिलता-डुलता नहीं। एक छोकरा साधु था—बाल-ब्रह्मचारी। वह कहीं भिक्षा लेने के लिए गया। एक लड़की ने आकर भिक्षा दी। उसके स्तन देखकर उसने सोचा, इसकी छाती पर फोड़ा हुआ है। तब उसने पूछा तो घर की पुरखिन ने आकर उसे समझाया। इसके पेट में बच्चा होगा, उसके पीने के लिए ईश्वर इनमें दूध भर दिया करेंगे इसीलिए पहले से इसका बन्दोबस्त कर रखा है। यह बात सुनकर उस साधु को बड़ा आश्चर्य हुआ। तब उसने कहा, तो अब मुझे भिक्षा माँगने की क्या जरूरत है? ईश्वर मेरे लिए भी भोजन तैयार कर दिया करेंगे।'

"कुछ भक्त मन में सोचते हैं कि तब तो हम लोग भी यदि चेष्टा न करें, तो चल सकता है।

"जिसके मन में यह है कि चेष्टा करनी चाहिए, उसे चेष्टा करनी होगी।"

विजय—भक्तमाल में एक बड़ी अच्छी कहानी है।

श्रीरामकृष्ण—कहो, जरा सुनें तो।

विजय—आप कहिये।

श्रीरामकृष्ण—नहीं, तुम्हीं कहो, मुझे पूरी याद नहीं है। पहले पहल सुनना चाहिए, इसीलिए मैं सुना करता था।

"मेरी अब वह अवस्था नहीं है। हनुमान ने कहा था, वार,

तिथि, नक्षत्र, इतना सब मैं नहीं जानता, मैं तो बस श्रीरामचन्द्रजी की चिन्ता किया करता हूँ।

"चातक को बस स्वाति के जल की चाह रहती है। मारे प्यास के जी निकल रहा है, परन्तु गला उठाये वह आकाश की बूँदों की ही प्रतीक्षा करता है। गंगा-यमुना और सातों समुद्र इधर भरे हुए हैं, परन्तु वह पृथ्वी का पानी नहीं पीता।

"राम और लक्ष्मण जब पम्पा सरोवर पर गये तब लक्ष्मण ने देखा, एक कौआ व्याकुल होकर बार बार पानी पीने के लिए जा रहा था, परन्तु पीता न था। राम से पूछने पर उन्होंने कहा 'भाई, यह कौआ परम भक्त है। दिनरात यह रामनाम जप रहा है। इधर मारे प्यास के छाती फटी जा रही है, परन्तु पानी पी नहीं सकता। सोचता है, पानी पीने लगूँगा तो जप छूट जायेगा।' मैंने पूर्णिमा के दिन हलधर से पूछा, दादा, आज क्या अमावस है? (सब हँसते हैं।)

(सहास्य) "हाँ यह सत्य है। ज्ञानी पुरुष की पहचान यह है कि पूर्णिमा और अमावस में भेद नहीं पाता। परन्तु हलधारी को इस विषय में कौन विश्वास दिला सकता है? उसने कहा 'यह निश्चय ही कलिकाल है। वे (श्रीरामकृष्ण) पूर्णिमा और अमावस में भेद नहीं जानते और फिर भी लोग उनका आदर करते हैं।'" (इसी समय महिमाचरण आ गये।)

श्रीरामकृष्ण—(सम्भ्रमपूर्वक)—आइये, आइये, बैठिये। (विजय आदि से) इस अवस्था में दिन और तिथि का ख्याल नहीं रहता। उस दिन वेणीपाल के बगीचे में उत्सव था—मैं दिन भूल गया। 'अमुक दिन संक्रान्ति है, अच्छी तरह ईश्वर का नाम लूँगा,' यह अब याद नहीं रहता। (कुछ देर विचार

करने के बाद) परन्तु अगर कोई आने को होता है तो उसकी याद रहती है।

"ईश्वर पर सोलहों आने मन आने पर यह अवस्था होती है। राम ने पूछा, 'हनुमान, तुम सीता की खबर तो ले आये, अच्छा, तो उन्हें कैसा देखा? कहो, मेरी सुनने की इच्छा है।' हनुमान ने कहा, 'राम, मैंने देखा, सीता का शरीर मात्र पड़ा हुआ है। उसमें मन, प्राण नहीं है। आप के ही पादपद्मों में उन्होंने वे समर्पण कर दिये हैं। इसलिए केवल शरीर ही पड़ा हुआ है। और मैंने देखा काल (यमराज) पास ही था; परन्तु वह करे क्या? वहाँ तो शरीर ही है, मन और प्राण तो है ही नहीं।'

"जिसकी चिन्ता की जाती है, उसकी सत्ता आ जाती है। दिनरात ईश्वर की चिन्ता करते रहने पर ईश्वर की सत्ता आ जाती है। नमक का पुतला समुद्र की थाह लेने गया तो गलकर खुद वही हो गया। पुस्तकों या शास्त्रों का उद्देश्य क्या है?— ईश्वरलाभ। साधु की पोथी को एक ने खोलकर देखा, उसमें सिर्फ रामनाम लिखा हुआ था, और कुछ भी नहीं।

"ईश्वर पर प्रीति होने पर थोड़े ही में उद्दीपन हुआ करता है। तब एक बार रामनाम करने पर कोटि सन्ध्योपासन का फल होता है।

"मेघ देखकर मयूर को उद्दीपन होता है। आनन्द से पंख फैलाकर नृत्य करता है। श्रीमती राधा को भी ऐसा ही हुआ करता था। मेघ देखकर उन्हें कृष्ण की याद आती थी।

"चैतन्यदेव मेड़गाँव के पास ही से जा रहे थे। उन्होंने सुना इस गाँव की मिट्टी से ढोल बनता है। बस भावावेश में विह्वल हो गये—क्योंकि संकीर्तन के समय ढोल का ही वाद्य होता है।

"उद्दीपन किसे होता है ? जिसकी विषयबुद्धि दूर हो गयी है, जिसका विषयरस सूख जाता है, उसे ही थोड़े में उद्दीपन होता है। दियासलाई भीगी हुई हो तो चाहे कितना ही क्यों न घिसो, वह जल नहीं सकती, पानी अगर सूख जाय तो जरा सा घिसने से ही वह जल जाती है।

"देह में सुख और दुःख लगे ही हैं। जिसे ईश्वरलाभ हो चुका है, वह मन, प्राण, आत्मा, सब उन्हें दे देता है। पम्पा सरोवर में नहाते समय राम और लक्ष्मण ने सरोवर के तट की मिट्टी में धनुष गाड़ दिए। स्नान करके लक्ष्मण ने धनुष निकालते हुए देखा, धनुष में खून लगा हुआ था। राम ने देखकर कहा, भाई, जान पड़ता है, कोई जीव-हिंसा हो गयी। लक्ष्मण ने मिट्टी खोदकर देखा तो एक बड़ा मेंढक था, वह मरणासन्न हो गया था। राम ने करुणापूर्ण स्वर में कहा, 'तुमने आवाज क्यों नहीं दी ? हम लोग तुम्हें बचा लेते। जब साँप पकड़ता है, तब तो खूब चिल्लाते हो।' मेंढक ने कहा, 'राम, जब साँप पकड़ता है, तब मैं चिल्लाता हूँ, राम, रक्षा करो—राम, रक्षा करो। पर अब देखता हूँ, राम स्वयं मुझे मार रहे हैं, इसीलिए मुझे चुपचाप रह जाना पड़ा।'"

(२)

गुरु-महिमा। ज्ञानयोग

श्रीरामकृष्ण चुपचाप बैठे हुए महिमाचरण आदि भक्तों को देख रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण ने सुना है कि महिमाचरण गुरु नहीं मानते। इस विषय पर वे कहने लगे—

श्रीरामकृष्ण—गुरु की बात पर विश्वास करना चाहिए।

गुरु के चरित्र की ओर देखने की आवश्यकता नहीं। 'मेरे गुरु यद्यपि शराबवाले की दूकान जाते हैं, फिर भी मैं उन्हें नित्यानन्द राय मानता हूँ,' यह भाव रखना चाहिए।

"एक आदमी चण्डी भागवत सुनाता था। उसने कहा, झाड़ू स्वयं तो अस्पृश्य है, परन्तु स्थान को पवित्र करता है।"

महिमाचरण वेदान्त की चर्चा किया करते हैं। उद्देश्य ब्रह्मज्ञान है। उन्होंने ज्ञानी का मार्ग ग्रहण किया है और सदा ही विचार करते रहते हैं।

श्रीरामकृष्ण--(महिमा से)--ज्ञानी का उद्देश्य है, वह स्वरूप को समझे; यही ज्ञान है और इसे ही मुक्ति कहते हैं। परब्रह्म जो हैं, वे ही सब के स्वरूप हैं। मैं और परब्रह्म दोनों एक ही सत्ता है। माया समझने नहीं देती। हरीश से मैंने कहा, 'और कुछ नहीं--सोने पर कुछ टोकरी मिट्टी पड़ गयी है, उसी मिट्टी को निकाल देना है।'

"भक्तगण 'मैं' रखते हैं, ज्ञानी नहीं रखते। किस तरह स्वरूप में रहना चाहिए, 'न्यांगटा' (तोतापुरी) इसका उपदेश देता था, कहता था, 'मन को बुद्धि में लीन करो और बुद्धि को आत्मा में, तब स्वरूप में रह सकोगे।'

"परन्तु 'मैं' रहेगा ही, वह नहीं जाता। जैसे अनन्त जल राशि, ऊपर-नीचे, सामने-पीछे, दाहिने-बायें पानी भरा हुआ है। उसी जल के भीतर एक जलपूर्ण कुम्भ है। 'मैं' रूपी कुम्भ।

"ज्ञानी का शरीर ज्यों का त्यों ही रहता है; परन्तु इतना होता है कि ज्ञानाग्नि में कामादि रिपु दग्ध हो जाते हैं। काली-मन्दिर में बहुत दिन हुए आंधी और पानी दोनों एक साथ आये, फिर मन्दिर पर बिजली गिरी। हम लोगों ने जाकर देखा, कपाट

ज्यों के त्यों ही थे, नुकसान नहीं हुआ था; परन्तु स्क्रू जितने थे उनका सिर टूट गया था। कपाट मानो शरीर है और कामादि आसक्तियाँ जैसे स्क्रू।

"ज्ञानी केवल ईश्वर की बात चाहता है। विषय की बातें होने पर उसे बड़ा कष्ट होता है। विषयी और दर्जे के हैं। उनकी अविद्या की पगड़ी नहीं उतरती, इसीलिए घूम घामकर वही विषय की बात ले आते हैं।

"वेदों में सप्त भूमियों की बातें हैं; पंचम भूमि पर जब ज्ञानी चढ़ता है, तब ईश्वरी बात के सिवा न तो कुछ और सुन सकता है, न कह सकता है; तब उसके मुँह से केवल ज्ञान का उपदेश निकलता है।

"वेदों में सच्चिदानन्द ब्रह्म की बात है। ब्रह्म न एक है, न दो, एक और दो के बीच में है। उसे न तो कोई अस्ति कह सकता है, न नास्ति। वह अस्ति और नास्ति के बीच की वस्तु है।

"रागभक्ति के आने पर अर्थात् ईश्वर पर प्यार होने पर मनुष्य उन्हें पाता है। वैधी भक्ति जिस तरह होती है, उसी तरह चली भी जाती है। इतना जप करना है, इतना ध्यान करना है, इतना याग यज्ञ और होम करना है, इन उपचारों से पूजा करनी है, पूजा के समय इन मन्त्रों का पाठ करना है, ये सब वैधी भक्ति के लक्षण हैं। यह होती है जैसे, जाती भी है वैसे ही। कितने आदमी कहते हैं, 'अरे भाई, कितना हविष्यान्न किया, कितनी बार घर में पूजा की, परन्तु क्या हुआ?' रागभक्ति का कभी पतन नहीं होता। रागभक्ति उन्हें होती है जिनका बहुत सा काम पूर्व जन्म में किया हुआ है, अथवा जो लोग नित्य-सिद्ध हैं। जैसे किसी गिरी हुई इमारत का ढेर साफ करते हुए लोगों को एक

नलदार फव्वारा मिल गया। उसके ऊपर मिट्टी और सुरखी पड़ी हुई थी, ज्योंही सब कूड़ा हटा दिया गया कि जोरों से पानी निकलने लगा।

"जिन्हें रागभक्ति होती है, वे यह बात नहीं कहते कि भाई इतना हविष्यान्न किया, परन्तु कहीं कुछ न हुआ! जो लोग पहले पहल किसानी करते हैं, अगर उपज नहीं होती तो वे किसानी छोड़ देते हैं। जिसके पुश्त-दरपुश्त से खेती हो रही है, वह यह काम नहीं छोड़ता, चाहे दो-एक बार पैदावार अच्छी न भी हो। वे जानते हैं कि खेती से ही उनका जीवन-निर्वाह होगा।

"जिनमें रागभक्ति है, उनका भाव आन्तरिक है, उनका भार ईश्वर लेते हैं। अस्पताल में नाम लिखाने पर जब तक रोगी अच्छा नहीं हो जाता तब तक डाक्टर छोड़ता नहीं। ईश्वर जिन्हें पकड़े हुए हैं उनके लिए किसी भय की बात नहीं। खेत की मेंड़ पर से चलते हुए जो लड़का अपने बाप का हाथ पकड़े रहता है, वह चाहे भले ही गिर जाय—सम्भव है वह किसी दूसरे ख्याल में डूबकर बाप का हाथ छोड़ दे, परन्तु जिस लड़के को बाप खुद पकड़े रहता है, वह कभी नहीं गिर सकता।

"विश्वास से क्या नहीं होता? जो सच्चे मार्ग पर है, वह सब पर विश्वास करता है—साकार, निराकार, राम, कृष्ण भगवती—सब पर।

"उस देश (कामारपुकुर) में मैं जा रहा था, एकाएक रास्ते में आँधी और पानी एक साथ आये। बीच मैदान में डाकुओं का भी भय था। तब मैंने सब कुछ कह डाला—राम, कृष्ण, भगवती, फिर मैंने हनुमानजी की याद की! अच्छा मैंने सब कुछ कहा, इसका क्या अर्थ है?

"बात यह है जब कि नौकर या नौकरानी बाजार करने को पैसे लेती हैं तब हर चीज के पैसे अलग अलग लेती है, कहती है —ये आलू के पैसे हुए, ये बैंगन के, ये मछली के, इस तरह सब पैसे अलग अलग लेती है। सब हिसाब करके फिर पैसे मिला देती है।

"ईश्वर पर प्यार होने पर केवल उन्हीं की बात कहने को जी चाहता है। जो जिसे प्यार करता है, उसे उसी की बातें सुनते और कहते हुए प्रीति होती है। संसारी आदमियों के मुँह से अपने बच्चे की बातें करते हुए लार टपक पड़ती है। अगर कोई उसके बच्चे की तारीफ करता है तो वह अपने बच्चे से उसी समय कहता है, अरे देख, अपने चाचा को पैर धोने के लिए पानी तो ले आ!

"कबूतरों पर जिनकी रुचि है, उनके पास कबूतरों की तारीफ करो तो खुश हो जाते हैं। अगर कोई उनकी निन्दा करता है, तो वह कहता है, तुम्हारे बाप-दादे ने भी कभी कबूतरों को पाला है?

(महिमाचरण से) "संसार को एकदम छोड़ देने की क्या जरूरत है? आसक्ति के जाने ही से हुआ, परन्तु साधना चाहिए। इन्द्रियों के साथ लड़ाई करनी पड़ती है।

"किले के भीतर से लड़ने में और सुविधाएं हैं। वहाँ बड़ी सहायता मिलती है। संसार भोग की जगह है। एक-एक चीज का भोग करके उसी समय उसे छोड़ देना चाहिए। मेरी इच्छा थी कि सोने की करधनी पहनूं। अन्त में वह मिली भी। मैंने सोने की करधनी पहनी। पहनने के बाद उसे उसी समय खोल डाला।

"प्याज खाया और उसी समय विचार करने लगा। कहा, 'रे मन, यही प्याज है।' फिर मुँह में एक बार इधर, एक बार उधर, इस तरह चबाकर उसे फेंक दिया।"

(३)

संकीर्तनानन्द में

आज एक गानेवाले आयेंगे, अपनी मण्डली के साथ कीर्तन करेंगे। श्रीरामकृष्ण बार बार अपने शिष्यों से पूछ रहे हैं, 'कीर्तनिया कहाँ है?' महिमाचरण ने कहा, "हम लोग ऐसे ही अच्छे हैं।"

श्रीरामकृष्ण-नहीं जी, हम लोगों का मिलना तो बारहों महीने लगा है।

बाहर से किसी ने कहा, "कीर्तनिया आ गया।"

श्रीरामकृष्ण ने आनन्द के उच्छ्वास में इतना ही कहा—"क्या आ गया?"

कमरे के दक्षिण-पूर्व के लम्बे बरामदे में शतरंजी बिछायी गयी। श्रीरामकृष्ण ने कहा—"इस पर थोड़ा सा गंगाजल छिड़क देना। न जाने कितने विषयी मनुष्यों ने इसे रौंदा है।"

बाली के प्यारी बाबू की स्त्रियाँ और लड़कियाँ आजो का दर्शन करने लिए आयी हुई हैं। कीर्तन होने का आयोजन देखकर उन्हें भी सुनने की इच्छा हुई। एक ने श्रीरामकृष्ण से आकर कहा, 'वे सब पूछती हैं—क्या कमरे में जगह होगी? क्या वे भी बैठें?'

श्रीरामकृष्ण कीर्तन सुनते हुए ही कह रहे थे—'नहीं नहीं, जगह कहाँ है?' इसी समय नारायण आये और उन्होंने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, 'तू क्यों आया ? घरवालों ने तुझे इतना मारा !' नारायण श्रीरामकृष्ण के कमरे की ओर जा रहे थे; श्रीरामकृष्ण ने बाबूराम को इशारे से कह दिया—इसे खाने के लिए देना।

नारायण कमरे के अन्दर गये। एकाएक श्रीरामकृष्ण ने उठकर कमरे में प्रवेश किया, नारायण को अपने हाथों भोजन करायेंगे। खिलाने के बाद फिर वे कीर्तन में आकर बैठे।

(४)

भक्तों के साथ संकीर्तनानन्द

बहुत से भक्त आये हुए हैं, श्रीयुत विजय गोस्वामी, महिमाचरण, नारायण, अधर, मास्टर, छोटे गोपाल आदि। राखाल, बलराम इस समय वृन्दावन में हैं।

दिन के ३–४ बजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण बरामदे में कीर्तन सुन रहे हैं, पास में नारायण आकर बैठे। चारों ओर दूसरे भक्त बैठे हुए हैं।

इसी समय अधर आये। अधर को देखकर श्रीरामकृष्ण में कुछ उद्दीपना हो गयी। अधर के प्रणाम करके आसन ग्रहण करने पर श्रीरामकृष्ण ने उन्हें और निकट बैठने के लिए इशारा किया।

कीर्तनियों ने कीर्तन समाप्त किया। सभा उठ गयी। बगीचे में भक्तगण इधर-उधर टहल रहे हैं। कोई कोई काली और राधाकान्तजी की आरती देखने के लिए गये।

सन्ध्या के बाद श्रीरामकृष्ण के कमरे में भक्तगण फिर आये। उनके कमरे में कीर्तन का आयोजन फिर होने लगा। उनमें खूब उत्साह है। कहते हैं, एक बत्ती इधर भी देना। दो

बत्तियाँ जला दी गयीं, खूब रोशनी होने लगी।

श्रीरामकृष्ण विजय से कह रहे हैं—'तुम ऐसी जगह क्यों बैठे ? इधर आकर बैठो।'

अब की बार कीर्तन खूब जमा। श्रीरामकृष्ण मस्त होकर नृत्य कर रहे हैं। भक्तगण उन्हें घेर-घेरकर खूब नाच रहे हैं। विजय नाचते हुए दिगम्बर हो गये। होश कुछ भी नहीं है।

कीर्तन के बाद विजय चाभी खोज रहे हैं। कहीं गिर गयी है। श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, "अब भी एक बार 'बोल वृन्दावन बिहारी की जय' होनी चाहिए !" यह कहकर हँस रहे हैं, विजय से और भी कह रहे हैं, "अब यह सब क्यों ?"(अर्थात् अब चाभी के साथ क्यों सम्बन्ध रखते हो ?)

किशोरी प्रणाम करके बिदाई ले रहे हैं। श्रीरामकृष्ण स्नेहार्द्र हो उनकी देह पर हाथ फेरने लगे और बोले, 'अच्छा आओ।' बातों में करुणा मिली हुई है। कुछ देर बाद मणि और गोपाल ने आकर प्रणाम किया—वे लोग भी चलने वाले हैं। श्रीरामकृष्ण की करुणापूर्ण बातें ! कहा, कल सुबह को उठकर जाना, कहीं ओस लगकर तबीयत न खराब हो जाय।

मणि और गोपाल फिर नहीं गये। वे आज रात को यहीं रहेंगे। वे तथा और भी दो-एक भक्त जमीन पर बैठे हुए हैं। कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण श्रीयुत राम चक्रवर्ती से कह रहे हैं, "राम, यहाँ एक पाँवपोश और था, क्या हो गया ?"

श्रीरामकृष्ण को दिन भर अवकाश नहीं मिला कि जरा विश्राम करते। भक्तों को छोड़कर जाते भी कहाँ ? अब एक बार बाहर की ओर जाने लगे।

कमरे में लौटकर उन्होंने देखा, मणि रामलाल से सुनकर

गाना लिख रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण ने मणि से पूछा, 'क्या लिखते हो?' गाने का नाम सुनकर कहा, यह तो बहुत बड़ा गाना है।

रात को श्रीरामकृष्ण जरा सी सूजी की खीर और दो-एक पूड़ियाँ खाते हैं। उन्होंने रामलाल से पूछा, 'क्या सूजी है?'

गाना दो-एक लाइन लिखकर मणि ने लिखना बन्द कर दिया।

श्रीरामकृष्ण जमीन पर बिछे हुए आसन पर बैठकर सूजी की खीर खा रहे हैं। भोजन करके आप छोटी खाट पर बैठे। मास्टर खाट की बगल में तख्त पर बैठे हुए श्रीरामकृष्ण से बातचीत कर रहे हैं। नारायण की बात करते हुए श्रीरामकृष्ण को भावावेश हो रहा है।

श्रीरामकृष्ण–आज नारायण को मैंने देखा।

मास्टर–जी हाँ, आँखें डबडबाई हुई थीं। उसका मुँह देखकर रुलाई आती थी।

श्रीरामकृष्ण–उसे देखकर वात्सल्य भाव का उद्रेक होता है। यहाँ आता है, इसीलिए घरवाले उसे मारते हैं। उसकी ओर से कहनेवाला कोई नहीं है।

मास्टर–(सहास्य)–हरिपद के घर में पुस्तकें रखकर वह यहाँ भाग आया।

श्रीरामकृष्ण—यह अच्छा नहीं किया।

श्रीरामकृष्ण चुप हैं। कुछ देर बाद बोले—

"देखो, उसमें बड़ी शक्ति है। नहीं तो कीर्तन सुनते हुए मुझे क्या कभी आकर्षित भी कर सकता था? मुझे कमरे के भीतर आना पड़ा। कीर्तन छोड़कर आना—ऐसा कभी नहीं हुआ।

"उससे मैंने भावावेश में पूछा था, उसने एक ही वाक्य में

कहा—मैं आनन्द में हूं। (मास्टर से) तुम उसे कभी कभी कुछ मोल लेकर खिलाया करो—वात्सल्य भाव से।"

श्रीरामकृष्ण ने फिर तेजचन्द्र की बात निकाली।

(मास्टर से) "एक बार उससे पूछना तो सही, एक शब्द में वह मुझे क्या बतलाता है?—ज्ञानी या कुछ और। सुना, तेजचन्द्र अधिक बातचीत नहीं करता। (गोपाल से) देख, तेजचन्द्र से शनि या मंगल के दिन आने के लिए कहना।"

श्रीरामकृष्ण जमीन पर बैठे हुए सूजी की खीर खा रहे हैं। पास ही एक दीपदान पर दिया जल रहा है। श्रीरामकृष्ण के पास मास्टर बैठे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण ने पूछा, 'क्या कुछ मिठाई है?' मास्टर नये गुड़ के सन्देश ले आये थे। रामलाल ने कहा, ताक पर सन्देश रखे हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण—कहाँ हैं? जरा ले आओ।

मास्टर फुर्ती से उठकर ताक पर खोजने लगे। वहाँ सन्देश न थे। भक्तों की सेवा में गये होंगे। मास्टर सकुचित होकर श्रीरामकृष्ण के पास आकर बैठे। श्रीरामकृष्ण बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, अबकी बार अगर तुम्हारे स्कूल में जाकर देखूं—

मास्टर ने सोचा, ये नारायण को देखने के लिए स्कूल जाने की बात कह रहे हैं। उन्होंने कहा, हमारे घर में चलकर बैठिये तो भी काम हो जायेगा।

श्रीरामकृष्ण—एक इच्छा है। वह यह कि वहाँ और कोई लड़का उस तरह का है या नहीं, जरा देखूं चलकर।

मास्टर—आप अवश्य चलिये। दूसरे आदमी देखने जाया करते हैं, उसी तरह आप भी जाइयेगा।

श्रीरामकृष्ण भोजन करके छोटी खाट पर बैठे। इस बीच में मास्टर और योगीन ने बरामदे में बैठकर भोजन किया—रोटी और दाल। उन लोगों ने नौबतखाने में सोने का निश्चय किया।

भोजन करके मास्टर श्रीरामकृष्ण के पादपोश पर आकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण—(मास्टर से)—नौबतखाने में हण्डियां-बर्तन न रखे हों, यहीं सोओगे—इस कमरे में ?

मास्टर—जी हाँ।

(५)

सेवक के संग में

रात के १०-११ बजे होंगे। श्रीरामकृष्ण छोटी खाट पर तकिये के सहारे विश्राम कर रहे हैं। मणि जमीन पर बैठे हैं। मणि के साथ श्रीरामकृष्ण बातचीत कर रहे हैं। कमरे की दीवार के पास उसी दीपदान पर दिया जल रहा है।

श्रीरामकृष्ण—मेरे पैर सुहराते हैं, जरा हाथ फेर दो।

मणि श्रीरामकृष्ण के पैरों की ओर छोटी खाट पर बैठे हुए धीरे धीरे पैरों पर हाथ फेर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण रह-रहकर बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—अकबर बादशाह की बात कैसी रही ?

मणि—जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण—कौन सी बात, कहो तो जरा।

मणि—फकीर बादशाह से मिलने आया था। अकबर बादशाह उस समय नमाज पढ़ रहे थे। नमाज पढ़ते हुए ईश्वर से धनदौलत की प्रार्थना करते थे। यह सुनकर फकीर धीरे से अपने घर चल दिया। बाद में अकबर बादशाह के पूछने पर उसने कहा,

'अगर माँगना ही है तो भिखारी से क्या माँगूँ?'

श्रीरामकृष्ण-और कौन कौन सी बातें हुई थीं?

मणि-संचय की बातें खूब हुईं।

श्रीरामकृष्ण-(सहास्य)—कौन-कौन सी?

मणि—जब यह ज्ञान रहता है कि हमें प्रयत्न करना चाहिए तब तक प्रयत्न करना चाहिए। संचय की बात सीती में कैसी कही आपने?

श्रीरामकृष्ण—कौन सी बात?

मणि--जो पूर्ण रूप से उन पर अवलम्बित है, उसका भार वे लेते भी हैं—नाबालिग का भार जैसे वली लेता है। एक बात और सुनी थी, वह यह कि जिस घर में न्योता रहता है, वहाँ छोटा लड़का खुद स्थान ग्रहण नहीं कर सकता, खाने के लिए दूसरे उसे बैठाते हैं।

श्रीरामकृष्ण—नहीं। यह ठीक नहीं हुआ। बाप अगर लड़के का हाथ पकड़कर ले जाता है तो वह लड़का नहीं गिरता।

मणि--और आज आपने तीन तरह के साधुओं की बात कही थी। उत्तम साधु को बैठे हुए ही भोजन मिलता है। आपने उस बालक साधु की बात कही। उसने लड़की के स्तन देखकर पूछा था, इसकी छाती पर ये फोड़े कैसे हुए? और भी बहुत सी सुन्दर सुन्दर बातें आपने कही थीं, सब बातें कैसे ऊँचे लक्ष्य की थीं!

श्रीरामकृष्ण-(सहास्य)—कौन कौन सी बातें?

मणि—पम्पा सरोवर के उस कौए की बात। दिन-रात राम-नाम जपता है, इसीलिए पानी के पास पहुँचकर भी पानी पी नहीं सकता। और उस साधु की पोथी की बात जिसमें केवल 'श्रीराम' लिखा हुआ था। और हनुमान ने श्रीरामजी से जो कुछ कहा—

श्रीरामकृष्ण-क्या कहा ?

मणि-'सीता को मैंने देखा, केवल उनकी देह पड़ी हुई है, मन और प्राण सब तुम्हारे श्रीचरणों में उन्होंने अर्पित कर दिये हैं।'

"और चातक की बात—स्वाति की बूँदों को छोड़ और दूसरा पानी नहीं पीता।

और ज्ञानयोग और भक्तियोग की बातें।"

श्रीरामकृष्ण-कौन सी ?

मणि-जब तक 'कुम्भ' का ज्ञान है, तब तक 'मैं कुम्भ हूँ' यह भाव रहेगा ही। जब तक 'मैं' है, तब तक 'मैं भक्त हूँ, तुम भगवान हो' यह भाव भी रहेगा।

श्रीरामकृष्ण-नहीं, 'कुम्भ' का ज्ञान रहे या न रहे, 'कुम्भ' मिट नहीं सकता। उसी तरह 'मैं' भी नहीं मिटता। चाहे लाख विचार करो, वह नहीं जाता।

मणि कुछ देर चुप हो रहे; फिर बोले—

"काली-मन्दिर में ईशान मुखर्जी से आपकी बातचीत हुई थी—भाग्यवश उस समय हम लोग भी वहाँ थे और सब बातें सुनी थीं।

श्रीरामकृष्ण-(सहास्य)—हाँ, कौन-कौन सी बातें हुई थीं, जरा कहो तो सही।

मणि-आपने कहा था, कर्मकाण्ड प्रथम अवस्था की क्रिया है, शम्भु मल्लिक से आपने कहा था,'अगर ईश्वर तुम्हारे सामने आयें तो क्या तुम उनसे कुछ अस्पतालों और दवाखानों की प्रार्थना करोगे ?'

"एक बात और हुई थी। वह यह कि जब तक कर्मों में आसक्ति रहती है, तब तक ईश्वर दर्शन नहीं देते। केशव सेन से

इसी सम्बन्ध की बातें आपने कही थीं।"

श्रीरामकृष्ण—कौन-कौन सी बातें ?

मणि—जब तक लड़का खिलौने पर रीझा रहता है, तब तक माँ रोटी-पानी में लगी रहती है, पर खिलौना फेंककर जब लड़का चिल्लाता रहता है तब माँ तवा उतारकर बच्चे के लिए दौड़ती है।

"एक बात और उस दिन हुई थी। लक्ष्मण ने पूछा था, 'कहाँ कहाँ ईश्वर के दर्शन हो सकते हैं ?' राम ने बहुत सी बातें कहकर फिर कहा, 'भाई, जिस मनुष्य मे यथार्थ भक्ति देखोगे, ऐसी भक्ति कि वह हँसता है, रोता है, नाचता है, गाता है, मारे प्रेम के मतवाला हो रहा है, वहाँ समझना, मैं अवश्य हूँ।'"

श्रीरामकृष्ण—आहा—आहा !

श्रीरामकृष्ण कुछ देर चुप रहे।

मणि—ईशान से तो आपने केवल निवृत्ति की बातें कही थीं। उसी दिन से बहुतों की अक्ल दुरुस्त हो गयी। अब कर्तव्यकर्मों के घटाने की ओर हम लोगों का रुख है। आपने कहा था एक दूसरे की बला अपने सिर क्यों लादी जाय ?

श्रीरामकृष्ण यह बात सुनकर बड़े जोर से हँसे।

मणि—(बड़े विनय-भाव से)—अच्छा, कर्तव्य-कर्म, यह जंजाल घटाना तो अच्छा है न ?

श्रीरामकृष्ण—हाँ, परन्तु सामने कोई पड़ गया, वह और बात है। साधु या गरीब आदमी अगर सामने आया, तो उनकी सेवा करनी चाहिए।

मणि—और उस दिन ईशान मुखर्जी से खुशामद की बात भी आपने खूब कही। मुर्दे पर जैसे गीध टूटते हैं। यही बात आपने पण्डित पद्मलोचन से भी कही थी।

श्रीरामकृष्ण—नहीं, उसी के रामलाल से कही थी।

श्रीरामकृष्ण को नींद आ रही है। उन्होंने मणि से कहा—"तुम अब सोओ जाकर। गोपाल कहाँ गया? तुम दरवाजा बन्द कर लो, पर जंजीर न चढ़ाना।"

दूसरे दिन सोमवार था। श्रीरामकृष्ण बिस्तरे से प्रातःकाल उठकर देवताओं के नाम ले रहे हैं। रह-रहकर गंगा-दर्शन कर रहे हैं। उधर काली और श्रीराधाकान्त के मन्दिर में मंगलारती हो रही है। मणि श्रीरामकृष्ण के कमरे में जमीन पर लेटे हुए थे। वे भी बिस्तर से उठकर सब देख और सुन रहे हैं।

प्रातःकृत्य समाप्त करके वे श्रीरामकृष्ण के पास आकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण स्नान करके काली-मन्दिर जा रहे हैं। उन्होंने मणि से कमरे में ताला बन्द कर लेने के लिए कहा।

काली-मन्दिर में जाकर श्रीरामकृष्ण आसन पर बैठे और फूल लेकर कभी अपने मस्तक पर और कभी श्रीकाली के पादपद्मों पर चढ़ा रहे हैं। फिर चमर लेकर व्यजन करने लगे।

श्रीरामकृष्ण अपने कमरे की ओर लौटे। मणि से ताला खोलने के लिए कहा। कमरे में प्रवेश कर छोटी खाट पर बैठे। इस समय भाव में मग्न होकर नाम ले रहे हैं। मणि जमीन पर अकेले बैठे हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण गाने लगे। भाव में मस्त हुए आप मणि को गीतों से क्या यह शिक्षा दे रहे हैं कि "काली ही ब्रह्म है; काली निर्गुण हैं और सगुण भी हैं, अरूप हैं और अनन्तरूपिणी भी हैं।"

गाना (भावार्थ)—"ऐ तारिणी, मेरा त्राण कर। तू जल्दी कर, इधर यम-त्रास से मेरा जी निकल रहा है। तू जगदम्बा है, तू लोकों का पालन करती है, मनुष्यों को मुग्ध भी तू ही करती

है, तू संसार की जननी है, यशोदा के गर्भ से जन्म लेकर कृष्ण की लीला में तू ही ने सहायता दी थी। वृन्दावन में तू विनोदिनी राधा थी, व्रजवल्लभ कृष्ण के साथ तूने विहार किया था। रासरंगिनी और रसमयी होकर रास में तूने अपनी लीला का प्रकाशन किया था। . . . तू शिवानी है, सनातनी है, ईशानी है, सदानन्दमयी है, सगुणा भी है, निर्गुणा भी है, सदा ही तू शिव की प्यारी है, तेरी महिमा कहने के योग्य ऐसा कौन है ?"

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण ने पूछा 'अच्छा, इस समय मेरी कैसी अवस्था तुम देख रहे हो ?'

मणि—(सहास्य)--यह आपकी सहजावस्था है।

श्रीरामकृष्ण मन ही मन गाने का एक चरण अलाप रहे हैं।

परिच्छेद ३१

श्रीरामकृष्ण तथा श्री वंकिमचन्द्र

(१)

वंकिम और राधाकृष्ण; युगल-रूप व्याख्या

आज श्रीरामकृष्णदेव अधर के मकान पर पधारे हैं; मार्गशीर्ष की कृष्णा चतुर्थी है, शनिवार ६ दिसम्बर, सन् १८८४। श्रीरामकृष्ण पुष्य नक्षत्र में आये हैं।

अधर विशेष भक्त हैं; वे डिप्टी मैजिस्ट्रेट हैं। उम्र २९-३० होगी। श्रीरामकृष्ण उनसे विशेष प्रेम रखते हैं। अधर की भी कैसी भक्ति है! सारा दिन आफिस के परिश्रम के बाद मुंह-हाथ धोकर प्राय: प्रतिदिन ही सन्ध्या के समय श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने जाया करते थे। मकान शोभाबाजार बेनेटोला में है। वहाँ से दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर में श्रीरामकृष्ण के पास गाड़ी करके जाते थे। इस प्रकार प्रतिदिन प्राय: दो रुपये गाड़ीभाड़ा देते थे। केवल श्रीरामकृष्ण का दर्शन करेंगे, यही आनन्द है। उनके श्रीमुख की वाणी सुनने का अवसर प्राय: नहीं होता था। पहुँचकर श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ हो प्रणाम करते थे; कुशलप्रश्न आदि के बाद मां काली का दर्शन करने जाते थे। बाद में जमीन पर चटाई बिछी रहती थी, उस पर विश्राम करते थे। श्रीरामकृष्ण स्वयं ही उनको विश्राम करने को कहते थे। अधर का शरीर परिश्रम के कारण इतना क्लान्त हो जाता था कि वे थोड़े ही समय में सो जाते थे। रात के ९-१० बजे उन्हें उठा दिया जाता था। वे भी उठकर श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर फिर गाड़ी पर सवार होते

और घर लौट जाते थे।

अधर श्रीरामकृष्ण को अक्सर शोभाबाजार में अपने घर पर ले जाते थे। श्रीरामकृष्णदेव के आने पर वहाँ उत्सव लग जाता था। श्रीरामकृष्ण तथा अन्य भक्तों के साथ अधर खूब आनन्द मनाते थे और अनेक प्रकार उन्हें तृप्ति के साथ भोजन कराते थे।

एक दिन श्रीरामकृष्ण उनके घर पर पधारे। अधर ने कहा, "आप बहुत दिनों से इस मकान पर नहीं आये थे; घर बड़ा मैला पड़ा था, न जाने कैसी दुर्गन्ध पैदा हो गयी थी; आज देखिये, घर की कैसी शोभा हुई है। और कैसी सुगन्ध फैली हुई है! मैंने आज ईश्वर को बहुत पुकारा था। यहाँ तक कि आँखों से आँसू निकल पड़े थे।" श्रीरामकृष्ण बोले, "कहते क्या हो जी" और यह कहकर अधर की ओर स्नेह-भरी दृष्टि से देखकर हँसने लगे।

आज भी उत्सव होगा। श्रीरामकृष्ण भी आनन्दमय हैं, भक्तगण भी आनन्द से पूर्ण हैं; क्योंकि जहाँ श्रीरामकृष्ण उपस्थित हैं, वहाँ ईश्वर की चर्चा के अतिरिक्त और कोई भी बात न होगी। भक्तगण आये हैं और श्रीरामकृष्ण को देखने के लिए अनेक नये नये व्यक्ति आये हैं। अधर स्वयं डिप्टी मॅजिस्ट्रेट हैं। वे अपने कुछ मित्र तथा डिप्टी मॅजिस्ट्रेट को आमन्त्रित करके लाये हैं। वे स्वयं श्रीरामकृष्ण को देखेंगे और कहेंगे, वास्तव में वे महापुरुष हैं या नहीं।

श्रीरामकृष्ण हँसमुख हो भक्तों के साथ बातचीत कर रहे हैं। इसी समय अधर अपने कुछ मित्रों को साथ लेकर श्रीरामकृष्ण के पास आकर बैठे।

अधर-(बंकिम को दिखाकर, श्रीरामकृष्ण के प्रति)-
हाराज, ये बड़े विद्वान हैं, अनेक पुस्तकें लिखी हैं। आपको

देखने आये हैं। इनका नाम है बंकिमबाबू।

श्रीरामकृष्ण–(हँसते हुए)–बंकिम! तुम फिर किसके भाव में बंकिम (टेढ़े) हो भाई!

बंकिम–(हँसते हँसते)–जी महाराज, जूते की चोट से! (सभी हँसे।) साहब के जूते की चोट से टेढ़ा।

श्रीरामकृष्ण–नहीं जी, श्रीकृष्ण प्रेम से बंकिम बने थे। श्रीमती राधा के प्रेम से त्रिभंग हुए थे। कृष्ण-रूप की व्याख्या कोई कोई करते हैं, श्रीराधा के प्रेम से त्रिभंग।

"काला क्यों है जानते हो? और साढ़े तीन हाथ—उतने छोटे क्यों हैं?

"जब तक ईश्वर दूर हैं, तब तक काले दिखते हैं, जैसा समुद्र का जल दूर से नीला दिखता है। समुद्र के जल के पास जाने से और हाथ में उठाने से फिर जल काला नहीं रहता; उस समय बहुत साफ—सफेद दिखता है। सूर्य दूर है, इसलिए छोटा दिखता है; पास जाने पर फिर छोटा नहीं रहता, ईश्वर का स्वरूप ठीक जान लेने पर फिर काला भी नहीं रहता, छोटा भी नहीं रहता। यह बहुत दूर की बात है। समाधिमग्न न होने से उन्हीं की सब लीला है। 'मैं' 'तुम' है तब तक नाम-रूप भी है। उन्हीं की सब लीला है। 'मैं-तुम' जब तक रहते हैं, तब तक वे अनेक रूपों में प्रकट होते हैं।

"श्रीकृष्ण पुरुष हैं, श्रीमती राधा उनकी शक्ति हैं—आद्याशक्ति। पुरुष और प्रकृति। युगल-मूर्ति का अर्थ क्या है? पुरुष और प्रकृति अभिन्न हैं। उनमें भेद नहीं है। पुरुष प्रकृति के बिना नहीं रह सकता, प्रकृति भी पुरुष के बिना नहीं रह सकती। एक का नाम करने से ही दूसरे को उसके साथ ही समझना होगा।

जिस प्रकार अग्नि और उसकी दाहिका शक्ति। दाहिका शक्ति को छोड़कर अग्नि का चिन्तन नहीं किया जा सकता और अग्नि को छोड़कर दाहिका शक्ति का भी चिन्तन नहीं किया जा सकता। इसलिए युगल-मूर्ति में श्रीकृष्ण की दृष्टि श्रीमती की ओर, और श्रीमती की दृष्टि श्रीकृष्ण की ओर है। श्रीमती का गौर वर्ण है, बिजली की तरह; श्रीमती ने नीली साड़ी पहनी है और उन्होंने नीलकान्त मणि से अंग को सजाया है। श्रीमती के चरणों में नूपुर हैं इसलिए श्रीकृष्ण ने भी नूपुर पहने हैं, अर्थात् प्रकृति के साथ पुरुष का अन्दर तथा बाहर मेल है।"

ये सब बातें समाप्त हुई। अब अधर के बंकिम आदि मित्रगण अंग्रेजी में धीरे धीरे बातें करने लगे।

श्रीरामकृष्ण—(हँसते हुए बंकिम आदि के प्रति)—क्या जी आप लोग अंग्रेजी में क्या बातचीत कर रहे हैं? (सभी हँसे।)

अधर—जी, इसी विषय में जरा बात हो रही थी, कृष्णरूप की व्याख्या की बात!

श्रीरामकृष्ण—(हँसते हुए सभी के प्रति)—एक कहानी की याद आने से मुझे हँसी आ रही है है। सुनो कहानी कहूँ। नाई हजामत बनाने गया था। एक भद्र पुरुष हजामत बनवा रहे थे। अब हजामत बनवाते बनवाते उन्हें जरा कहीं अस्तुरा लग गया और उस भद्र पुरुष ने कहा 'डॅम' (damn) परन्तु नाई तो डॅम का मतलब नहीं जानता था। जाड़े का दिन था, उसने अस्तुरा, आदि छोड़-छाड़कर अपनी कमीज की अस्तीन उठाकर कहा 'तुमने मुझे डॅम कहा, अब कहो, इसका मतलब क्या है?' उस व्यक्ति ने कहा, 'अरे, तू हजामत बना न! उसका मतलब विशेष कुछ भी नहीं है, परन्तु जरा होशियारी से बनाना!' नाई भी

छोड़नेवाला न था। वह कहने लगा, 'डॅम का मतलब यदि अच्छा है, तो मैं डॅम, मेरा बाप डॅम, मेरे चौदह पुरुष डॅम हैं। (सभी हँसे।) और डॅम का मतलब यदि खराब हो तो तुम डॅम, तुम्हारा बाप डॅम, तुम्हारे चौदह पुरुष डॅम हैं। (सभी हँसे।) फिर केवल डॅम ही नहीं—डॅम डॅम डॅम डॅम डॅम डॅम।' (सभी जोर से हँसे।)

(२)

श्रीरामकृष्ण और प्रचारकार्य

सब की हँसी बन्द होने पर बंकिम ने फिर बातचीत प्रारम्भ की।

बंकिम—महाराज, आप प्रचार क्यों नहीं करते?

श्रीरामकृष्ण—(हँसते हँसते)—प्रचार? यह सब गर्व की बातें हैं। मनुष्य तो क्षुद्र जीव है। प्रचार वे ही करेंगे जिन्होंने चन्द्र-सूर्य पैदा करके इस जगत् को प्रकाशित किया है। प्रचार करना क्या साधारण बात है? उनके दर्शन देकर आदेश न देने तक प्रचार नहीं होता। परन्तु प्रचार करने से तुम्हें कोई रोक नहीं सकता। तुम्हें आदेश नहीं मिला, फिर भी तुम बक-बक कर रहे हो। यही दो दिन लोग सुनेंगे फिर भूल जायेंगे। जैसे एक लहर। जब तक तुम कह रहे हो, तब तक लोग कहेंगे, 'अहा, अच्छा कह रहे हैं वे।' तुम रुकोगे,उसके बाद कहीं कुछ भी न होगा।

"जब तक दूध की कड़ाई के नीचे आग जलती रहेगी, तब तक दूध खौल करके उबल उठता है। लकड़ी खींच लो, दूध भी ज्यों का त्यों नीचे उतर गया!

"और साधना करके अपनी शक्ति बढ़ानी चाहिए, नहीं तो प्रचार नहीं होता। 'अपन सोने के लिए जगह नहीं पाता और

ऊपर से शंकरा को पुकारता है।' अपने ही सोने के लिए स्थान नहीं, फिर पुकारता है, 'अरे शंकरा, आओ मेरे पास आकर सोओ।' (हँसी।)

"उस देश में हालदारों के तालाब के किनारे लोग रोज शौच को जाते थे, सवेरे लोग आकर देखते थे और गाली-गलौज करते थे। लोग गाली देते थे, फिर भी लोगों का शौच जाना बन्द नहीं होता था। अन्त में मुहल्लेवालों ने अर्जी भेजकर कम्पनी को सूचित किया। उन्होंने एक नोटिस लगा दिया, 'यहाँ पर शौच जाना या पेशाब करना मना है, जो ऐसा करेगा उसे सजा दी जायेगी।' उसके बाद सब एकदम बन्द और फिर कोई गड़बड़ी नहीं। कम्पनी का हुक्म—सभी को मानना होगा।

"उसी प्रकार ईश्वर का साक्षात्कार होने पर यदि वे आदेश दें, तभी प्रचार होता है, लोकशिक्षा होती है, नहीं तो तुम्हारी बात कौन सुनेगा?" इन बातों को सभी गम्भीर भाव से स्थिर होकर सुनने लगे।

श्रीरामकृष्ण–(बंकिम के प्रति)–अच्छा, आप तो बड़े पण्डित हैं, और कितनी पुस्तकें लिखी हैं आपने! आप क्या कहते हैं, मनुष्य का क्या कर्तव्य है? साथ क्या जायेगा? परकाल तो है न?

बंकिम–परकाल? वह क्या चीज है?

श्रीरामकृष्ण–हाँ, ज्ञान के बाद और दूसरे लोक में जाना नहीं पड़ता, पुनर्जन्म नहीं होता। परन्तु जब तक ज्ञान नहीं होता, ईश्वर की प्राप्ति नहीं होती, तब तक संसार में लौटकर आना पड़ता है, बचने का कोई भी उपाय नहीं है। तब तक परलोक भी है। ज्ञान प्राप्त होने पर, ईश्वर का दर्शन होने पर मुक्ति हो

जाती है—और आना नहीं पड़ता। उबाला हुआ धान बोने से फिर पौधा नहीं होता। ज्ञानरूपी अग्नि से यदि कोई उबाला हुआ हो, तो उसे लेकर और सृष्टि का खेल नहीं होता। वह गृहस्थी कर नहीं सकता, उसकी तो कामिनी-काञ्चन में आसक्ति नहीं है। उबाले हुए धान को फिर खेत में बोने से क्या होगा?

बंकिम–(हँसते हँसते)–महाराज, हाँ और घास-पतवार से भी तो पेड़ का कार्य नहीं होता! ·

श्रीरामकृष्ण–परन्तु ज्ञानी घास-पतवार नहीं है। जिसने ईश्वर का दर्शन किया है, उसने अमृतफल प्राप्त किया है—वह कद्दू फल नहीं है! उसका पुनर्जन्म नहीं होता। पृथ्वी कहो, सूर्यलोक कहो, चन्द्रलोक कहो—कहीं पर भी उसे आना नहीं पड़ता।

"उपमा एकदेशी है। तुमने न्यायशास्त्र नहीं पढ़ा? बाघ की तरह भयानक कहने से बाघ की तरह एक भारी दुम या बड़े भारी मुँह से अर्थ हो, सो नहीं। (सभी हँसे।)

"मैंने केशव सेन से यही बात कही थी। केशव ने पूछा—'महाराज, क्या परलोक है?' मैंने न इधर बताया और न उधर। कहा, कुम्हार लोग मिट्टी के बर्तन बनाकर सूखने के लिए बाहर रखते हैं। उनमें पक्के बर्तन भी हैं और फिर कच्चे बर्तन भी। कभी कोई जानवर आकर उन्हें कुचलकर चले जाते हैं। पक्के बर्तन टूट जाने पर कुम्हार उन्हें फेंक देता है, परन्तु कच्चे बर्तन टूट जाने पर उन्हें कुम्हार फिर घर में लाता है, लाकर पानी मिलाता है और उसे गीला करके रगड़कर फिर चाक पर चढ़ाता और नया बर्तन बना लेता है, छोड़ता नहीं। इसीलिए केशव से कहा, जब तक कच्चा रहेगा तब तक कुम्हार नहीं छोड़ेगा, जब तक ज्ञान प्राप्त नहीं होता, जब तक ईश्वर का दर्शन नहीं मिलता,

तब तक कुम्हार फिर चाक पर डालेगा; छोड़ेगा नहीं। अर्थात् लौट-लौटकर इस संसार में आना पड़ेगा—छुटकारा नहीं। उन्हें प्राप्त करने पर तब मुक्ति होती है, तब कुम्हार छोड़ देता है, क्योंकि उसके द्वारा माया की सृष्टि का कोई काम नहीं होता। ज्ञानी माया के परे चले गये हैं; वे फिर माया के संसार में क्या करेंगे?

"परन्तु किसी किसी को वे माया के संसार में रख देते हैं, लोक-शिक्षा के लिए। लोगों को शिक्षा देने के लिए। ज्ञानी विद्यामाया का सहारा लेकर रहते हैं। ईश्वर ही अपने काम के लिए उन्हें रख छोड़ते हैं; जैसे शुकदेव, शंकराचार्य। अच्छा, आप क्या कहते हैं, मनुष्य का क्या कर्तव्य है?"

बंकिम—(हँसते हँसते)—यदि आप पूछते ही हैं तो उसका कर्तव्य है, आहार, निद्रा और मैथुन।

श्रीरामकृष्ण—(विरक्त होकर)—ओह! तुम बहुत ही बेहूदे हो! तुम दिन-रात जो करते हो वही तुम्हारे मुख से निकल रहा है। लोग जो कुछ खाते हैं उसी की डकार आती है। मूली खानेपर मूली की डकार आती है। नारियल खाने पर नारियल की डकार आती है। कामिनी-कांचन में दिन-रात रहते हो और वही बात मुख से निकल रही है। केवल विषय का चिन्तन करने से हिसाबी स्वभाव बन जाता है, मनुष्य कपटी बन जाता है। ईश्वर का चिन्तन करने पर सरल होता है, ईश्वर का साक्षात्कार होने पर ऐसी बातें कोई नहीं कहेगा।

"यदि ईश्वर का चिन्तन न हो, यदि विवेक-वैराग्य न हो तो केवल विद्वत्ता रहने से क्या होगा? यदि कामिनी-कांचन में मन रहे, तो केवल पण्डिताई से क्या होगा?

"गिद्ध बहुत ऊँचाई पर उड़ता है परन्तु दृष्टि उसकी केवल

मरघट पर ही रहती है। पण्डितजी अनेक पुस्तकें, शास्त्र पढ़ते हैं, श्लोक गाउ सकते हैं, कितनी ही पुस्तकें लिखते हैं, परन्तु औरत के प्रति आसक्त हैं, धन और मान को सार समझते हैं, वह फिर कैसा पण्डित? ईश्वर में यदि मन न रहा तो फिर क्या पण्डित और क्या उसकी पण्डिताई?

"कोई-कोई समझते हैं कि ये लोग केवल ईश्वर-ईश्वर कर रहे हैं; पगले हैं। ये लोग बौरा गये हैं। हम कैसे चालाक हैं, कैसे सुख भोग रहे हैं—धन-सम्मान, इन्द्रिय-सुख! कौआ भी समझता है, मैं बहुत चालाक हूँ, परन्तु सवेरे उठकर ही दूसरों की विष्ठा खाता है। कौओं को नहीं देखते हो, कितनी ऐंठ के साथ घूमते-फिरते हैं, बड़े सयाने! (सभी चुप हैं।)

"जो लोग ईश्वर का चिन्तन करते हैं, विषय में आसक्ति, कामिनी-कांचन में प्रेम दूर करने के लिए दिन-रात प्रार्थना करते हैं, जिन्हें विषय का रस कड़ुआ लगता है, हरि-पाद पद्म की सुधा को छोड़कर जिन्हें और कुछ भी अच्छा नहीं लगता, उनका स्वभाव हंस का सा होता है। हंस के सामने दूध-जल मिलाकर रखो, जल छोड़कर दूध पी जायेगा। हंस की चाल देखी है? एक ओर सीधा चला जायेगा। और शुद्ध भक्ति की गति भी केवल ईश्वर की ओर होती है। वह और कुछ नहीं चाहता; उसे और कुछ भी अच्छा नहीं लगता। (बंकिम के प्रति कोमल भाव से) आप कुछ बुरा न मानियेगा।"

बंकिम—जी, मैं यहाँ मीठी बातें सुनने नहीं आया हूँ।

(३)

जगत् का उपकार तथा कर्मयोग

श्रीरामकृष्ण—(बंकिम के प्रति)—कामिनी-कांचन ही

संसार है। इसीका नाम माया है। ईश्वर को देखने तथा उसका चिन्तन नही करने देती। एक-दो बच्चे होने पर स्त्री के साथ भाई-बहन के सदृश रहना चाहिए और आपस में सदा ईश्वर की बातचीत करनी चाहिए। इससे दोनों का ही मन उनकी ओर जायेगा और स्त्री धर्म की सहायक बनेगी। पशुभाव न मिटने पर ईश्वर के आनन्द का आस्वादन हो नहीं सकता। ईश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए कि जिससे पशुभाव दूर हो। व्याकुल होकर प्रार्थना। वे अन्तर्यामी है, अवश्य ही सुनेंगे—यदि प्रार्थना आन्तरिक हो।

"फिर 'कांचन'। मैंने पंचवटी में गंगा के किनारे पर बैठकर 'रुपया मिट्टी' 'रुपया मिट्टी' 'मिट्टी ही रुपया' 'रुपया ही मिट्टी' कहकर दोनों जल में फेंक दिये थे।"

बंकिम—रुपया मिट्टी! महाराज, चार पैसे रहे तो गरीब को दिये जा सकते हैं। रुपया यदि मिट्टी है तो फिर दया परोपकार कैसे होगा?

श्रीरामकृष्ण—(बंकिम के प्रति)—दया! परोपकार! तुम्हारी क्या शक्ति है कि तुम परोपकार करो? मनुष्य का इतना घमण्ड, परन्तु जब सो जाता है, तो यदि कोई खड़े होकर उसके मुँह में पेशाब भी कर दे, तो पता नही लगता। उस समय अहंकार, गर्व, दर्प कहाँ जाता है?

"संन्यासी को कामिनी-कांचन का त्याग करना पड़ता है। उसे फिर वह ग्रहण नही कर सकता। थूक को फेंककर फिर उसे चाटना नही चाहिए। संन्यासी यदि किसी को कुछ देता है तो वह ऐसा नहीं समझता कि उसने स्वयं दिया। दया ईश्वर की है, मनुष्य बेचारा क्या दया करेगा? दान आदि सभी राम की इच्छा पर निर्भर है। यथार्थ संन्यासी मन से भी त्याग करता है, बाहर

से भी त्याग करता है। वह गुड़ नहीं खाता, उसके पास गुड़ रहना भी ठीक नहीं। पास गुड़ रखते यदि वह कहे कि 'न खाओ' तो लोग सुनेंगे नहीं।

"गृहस्थ लोगों को रुपयों की आवश्यकता है, क्योंकि स्त्री-बच्चे हैं। उन्हें संचय करना चाहिए—स्त्री-बच्चों को खिलाना होगा। संचय नहीं करेंगे केवल पंछी और दरवेश, अर्थात् चिड़िया और सन्यासी। परन्तु चिड़ियें का बच्चा होने पर वह मुँह में उठाकर खाना लाती है। उसे भी उस समय संचय करना पड़ता है। इसीलिए गृहस्थ लोगों को धन की आवश्यकता है—परिवार का पालन-पोषण करना चाहिए।

"गृहस्थ लोग यदि शुद्ध भक्त हों तो अनासक्त होकर कर्म कर सकते हैं। वह कर्म का फल, हानि, लाभ, सुख, दुःख ईश्वर को समर्पित करता है। और उनसे दिन-रात भक्ति की प्रार्थना करता है, और कुछ भी नहीं चाहता। इसी का नाम है 'निष्काम कर्म'—अनासक्त होकर कर्म करना। सन्यासी के सभी कर्म निष्काम होने चाहिए। परन्तु संन्यासी गृहस्थों की तरह विषय-कर्म नहीं करता।

"गृहस्थ व्यक्ति निष्काम भाव से यदि किसी को कुछ दान दे, तो वह अपने ही उपकार के लिए होता है। परोपकार के लिए नहीं। सर्व भूतों में हरि विद्यमान हैं, उन्हीं की सेवा होती है। हरि-सेवा होने से अपना ही उपकार हुआ, 'परोपकार' नहीं। यही सर्व भूतों में हरि की सेवा है—केवल मनुष्य की नहीं, जीव-जन्तुओं में भी हरि की सेवा यदि कोई करे, और यदि वह मान, यश, मरने के बाद स्वर्ग न चाहे, जिनकी सेवा कर रहा है उनसे बदले में कोई उपकार न चाहे—इस प्रकार यदि सेवा करे, तो

उसका निष्काम कर्म, अनासक्त कर्म होता है। इस प्रकार निष्काम कर्म करने पर उसका अपना कल्याण होता है। इसी का नाम कर्मयोग है। यह कर्मयोग भी ईश्वर को प्राप्त करने का एक उपाय है, परन्तु यह मार्ग है बड़ा कठिन। कलियुग के लिए नहीं है।

"इसलिए कहता हूँ, जो व्यक्ति अनासक्त होकर इस प्रकार कर्म करता है, दया-दान करता है, वह अपना ही भला करता है। दूसरों का उपकार, दूसरों का कल्याण—यह सब ईश्वर करते हैं जिन्होंने जीव के लिए चन्द्र, सूर्य, माँ बाप, फल, फूल, अनाज पैदा किया है। पिता आदि में जो स्नेह देखते हो, वह उन्हीं का स्नेह है, जीव की रक्षा के लिए ही उन्होंने यह स्नेह दिया है। दयालु के भीतर जो दया देखते हो वह उन्हीं की दया है, उन्होंने असहाय जीव की रक्षा के लिए दी है। तुम दया करो या न करो, वे किसी न किसी उपाय से अपना काम करेंगे ही। उनका काम रुका नहीं रह सकता।

"इसीलिए जीव का कर्तव्य क्या है? वह यह कि उनकी शरण में जाना, और जिससे उनकी प्राप्ति हो, उनका दर्शन हो उसी के लिए व्याकुल होकर उनसे प्रार्थना करना—और दूसरा क्या?

"शम्भु ने कहा था, 'मेरी इच्छा होती है कि अनेक डिस्पेन्सरियाँ (दवाखाने), अस्पताल बनवा दूँ। इससे गरीबों का बहुत उपकार होगा।' मैंने कहा, 'हाँ, अनासक्त होकर यदि यह सब करो तो बुरा नहीं।' परन्तु ईश्वर पर आन्तरिक भक्ति न रहने पर अनासक्त बनना बड़ा कठिन है। फिर अनेक काम बढ़ा लेने से न जाने किधर से आसक्ति आ जाती है, जाना नहीं जाता। मन में सोचता हूँ कि निष्काम भाव से काम कर रहा हूँ, परन्तु सम्भव है, यश की इच्छा हुई, ख्याति प्राप्त करने की इच्छा हुई।

फिर जब अधिक कर्म करने को आता है तो कर्म की भीड़ में ईश्वर को भूल जाता है। और कहा 'शम्भु ! तुमसे एक बात पूछता हूँ। यदि ईश्वर तुम्हारे सामने आकर प्रकट हों तो क्या तुम उनसे कुछ डिस्पेन्सरियाँ या अस्पताल माँगोगे या स्वयं उन्हें माँगोगे ?' उन्हें प्राप्त करने पर और कुछ भी अच्छा नहीं लगता। मिश्री का शरबत पीने पर फिर गुड़ का शरबत अच्छा नहीं लगता।

"जो लोग अस्पताल, डिस्पेन्सरी खोलेंगे और इसी में आनन्द अनुभव करेंगे, वे भी भले आदमी हैं। परन्तु उनकी श्रेणी अलग है। जो शुद्ध भक्त है, वह ईश्वर के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं चाहता, अधिक कर्म के बीच में यदि वह पड़ जाय तो व्याकुल होकर प्रार्थना करता है, 'हे ईश्वर, दया करके मेरा कर्म कम कर दो, नहीं तो, जो मन रातदिन तुम्हीं में लगा रहेगा, वह मन व्यर्थ में इधर-उधर खर्च हो रहा है। उसी मन से विषय का चिन्तन किया जा रहा है।' शुद्धा भक्ति की श्रेणी अलग ही होती है। ईश्वर वस्तु है, बाकी सभी अवस्तु—यह बुद्धि न होने पर शुद्धा भक्ति नहीं होती। यह संसार अनित्य है, दो दिन के लिए है, और इस संसार के जो कर्ता हैं, वे ही सत्य हैं, नित्य हैं। यह ज्ञान न होने पर शुद्धा भक्ति नहीं होती।

"जनक आदि ने आदेश पाने पर ही कर्म किया है।"

(४)

पहले विद्या (Science) या पहले ईश्वर ?

श्रीरामकृष्ण—(बंकिम के प्रति)—कोई कोई समझते हैं कि बिना शास्त्र पढ़े अथवा पुस्तकों का अध्ययन किये ईश्वर को प्राप्त नहीं किया जा सकता। वे सोचते हैं, पहले जगत् के बारे में, जीव

के बारे में जानना चाहिए, पहले साइन्स (Science) पढ़ना चाहिए। (सभी हँसे।) वे कहते हैं, ईश्वर की यह सारी सृष्टि समझे बिना ईश्वर को जाना नहीं जाता। तुम क्या कहते हो? पहले साइन्स या पहले ईश्वर?

बंकिम–जी हाँ, पहले जगत् के बारे में दस बातें जान लेनी चाहिए। थोड़ा इधर का ज्ञान हुए बिना ईश्वर को कैसे जानूंगा? पहले पुस्तकें पढ़कर कुछ जान लेना चाहिए।

श्रीरामकृष्ण–वही तुम लोगों का एक ख्याल है। पहले ईश्वर, उसके बाद सृष्टि। उन्हें प्राप्त करने पर, आवश्यक हो तो सभी जान सकोगे। किसी भी तरह यदु मल्लिक के साथ बातचीत कर सकोगे फिर यदि तुम यह जानना चाहोगे कि उसके कितने मकान है, कितने कम्पनी के कागज है, कितने बगीचे हैं—तो यह सब भी जान सकोगे। यदु मल्लिक ही खुद सब बता देगा। परन्तु यदि उसके साथ बातचीत न हो, और मकान के अन्दर घुसना चाहोगे, तो दरवान लोग ही घुसने न देंगे। फिर ठीक-ठीक कैसे जानोगे कि उसके कितने मकान है, कितने कम्पनी के कागजात हैं, कितने बगीचे हैं आदि आदि? उन्हें जान लेने पर सब कुछ जाना जा सकता है। परन्तु फिर मामूली चीजें जानने की इच्छा नहीं रहती। वेद में भी यही बात है। जब तक किसी व्यक्ति को देखा नहीं जाता तब तक उसके गुणों की बातें बतायी जा सकती हैं; जब वह सामने आ जाता है, उस समय वे सब बातें बन्द हो जाती हैं। लोग उसे ही लेकर मस्त रहते हैं। उसके साथ ही बातचीत करते हुए विभोर हो जाते हैं, उस समय दूसरी बातें नहीं सूझतीं।

"पहले ईश्वर की प्राप्ति, उसके बाद सृष्टि या दूसरी

बातचीत। वाल्मीकि को राममन्त्र का जप करने को कहा गया, परन्तु उनसे कहा गया, 'मरा' 'मरा' का जप करो। 'म' अर्थात् ईश्वर और 'रा' अर्थात् जगत्। पहले ईश्वर, उसके बाद जगत्, एक को जानने पर सभी जाना जा सकता है। १ के बाद यदि पचास शून्य रहें तो संख्या बढ़ जाती है। १ को मिटा देने से कुछ भी नहीं रहता। एक को लेकर ही अनेक है। पहले एक, उसके बाद अनेक; पहले ईश्वर, उसके बाद जीव-जगत्।

"तुम्हारी आवश्यकता है ईश्वर को प्राप्त करने की। तुम इतना जगत्, सृष्टि, साइन्स-फाइन्स यह सब क्या कर रहे हो? तुम्हें आम खाने से मतलब। बगीचे में कितने सौ पेड़ हैं, कितने हजार टहनियाँ, कितने लाख करोड़ पत्ते हैं—इन सब हिसाबों से तुम्हारा क्या काम? तुम आम खाने आये हो, आम खाकर चले जाओ। इस संसार में मनुष्य आया है भगवान को प्राप्त करने के लिए। उसे भूलकर अन्य विषयों में मन लगाना ठीक नहीं। आम खाने के लिए आये हो, आम खाकर ही चले जाओ।"

बंकिम—आम पाता हूँ कहाँ?

श्रीरामकृष्ण—उनसे व्याकुल होकर प्रार्थना करो, आन्तरिक प्रार्थना होने पर वे अवश्य सुनेंगे। सम्भव है कि ऐसा कोई सत्संग जुटा दें, जिससे सुभीता हो जाय। सम्भव है कोई कह दे, ऐसा-ऐसा करो, तो ईश्वर को पाओगे।

बंकिम—कौन? गुरु? वे अच्छे आम स्वयं खाकर मुझे खराब आम देते हैं! (हँसी।)

श्रीरामकृष्ण—क्यों जी! जिसके पेट में जो सहन होता है। सभी लोग क्या पुलाव-कलिया खाकर पचा सकते हैं? घर में अच्छी चीज बनने पर माँ सभी बच्चों को पुलाव-कलिया नहीं

देती। जो कमजोर है, जिसे पेट की बीमारी है, उसे सादी तरकारी देती है; तो क्या माँ उस बच्चे से कम स्नेह करती है ?

"गुरुवाक्य में विश्वास करना चाहिए। गुरु ही सच्चिदानन्द, सच्चिदानन्द ही गुरु हैं; उनकी बात पर विश्वास करने से, बालक की तरह विश्वास करने से, ईश्वर-प्राप्ति होती है। बालक का क्या ही विश्वास है ! माँ ने कहा, 'वह तेरा भाई लगता है,' उसी समय जान लिया, 'वह मेरा भाई है।' एकदम पूरा पक्का विश्वास। ऐसा भी हो सकता है कि वह लड़का ब्राह्मण के घर का है, और वह 'भाई' सम्भव है कि किसी दूसरी जाति का हो। माँ ने कहा, उस कमरे में 'जूजू' है। बस, पक्का जान लिया, उस कमरे में 'जूजू' है। यही बालक का विश्वास है; गुरुवाक्य में इसी प्रकार विश्वास चाहिए। सयानी बुद्धि, हिसाबी बुद्धि, विचार बुद्धि करने से ईश्वर को प्राप्त नहीं किया जा सकता। विश्वास और सरलता होनी चाहिए, कपटी होने से न होगा। सरल के लिए वे बहुत सहज हैं। कपटी से वे बहुत दूर हैं।

"परन्तु बालक जिस प्रकार माँ को न देखने से बेचैन हो जाता है, लड्डू मिठाई हाथ पर लेकर चाहे भुलाने की चेष्टा करो परन्तु वह कुछ भी नहीं चाहता, किसी से नहीं भूलता और कहता है, 'नहीं, मैं माँ के ही पास जाऊँगा,' इसी प्रकार ईश्वर के लिए व्याकुलता चाहिए। अहा ! कैसी स्थिति!—बालक जिस प्रकार 'माँ माँ' कहकर पागल हो जाता है, किसी भी तरह नहीं भूलता! जिसे संसार के ये सब सुखभोग फीके लगते हैं, जिसे अन्य कुछ भी अच्छा नहीं लगता, वही हृदय से 'माँ माँ' कहकर कातर होता है। उसी के लिए माँ को फिर सभी कामकाज छोड़कर दौड़ आना पड़ता है।

"यही व्याकुलता है। किसी भी पथ से क्यों न आओ, हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, शाक्त, ब्राह्म—किसी पथ से आओ, यह व्याकुलता ही असली बात है। वे तो अन्तर्यामी हैं, यदि भूल पथ में भी चले गये हो तो भी दोष नहीं है—पर व्याकुलता रहे। वे ही फिर ठीक पथ में उठा लेते हैं।

"फिर सभी पथों में भूल है—सभी समझते हैं, मेरी घड़ी ठीक जा रही है, पर किसी की घड़ी ठीक नहीं चलती। तिस पर भी किसी का काम बन्द नहीं रहता। व्याकुलता हो तो साधु-संग मिल जाता है, साधु-संग से अपनी घड़ी बहुत कुछ मिला ली जा सकती है।"

(५)

श्रीरामकृष्ण कीर्तनानन्द में

ब्राह्म समाज के श्री त्रैलोक्य गाना गा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण कीर्तन सुनते-सुनते एकाएक खड़े हो गये और ईश्वर के आवेश में बाह्यज्ञान-शून्य हो गये। एकदम अन्तर्मुख, समाधिमग्न। खड़े खड़े समाधिमग्न। सभी लोग घेरकर खड़े हुए। बंकिम व्यस्त होकर भीड़ हटाकर श्रीरामकृष्ण के पास जाकर एकदृष्टि से देख रहे हैं। उन्होंने कभी समाधि नहीं देखी थी।

थोड़ी देर बाद थोड़ा बाह्य ज्ञान होने के बाद श्रीरामकृष्ण प्रेम से उन्मत्त होकर नृत्य करने लगे। मानो श्रीगौरांग श्रीवास के मन्दिर में भक्तों के साथ नृत्य कर रहे हैं। वह अद्भुत नृत्य बंकिम आदि अंग्रेजी पढ़े लोग देखकर दंग रह गये। क्या आश्चर्य! क्या इसी का नाम प्रेमानन्द है? ईश्वर से प्रेम करके क्या मनुष्य इतना मतवाला हो जाता है? क्या ऐसा ही नृत्य नवद्वीप में

श्रीगौरांग ने किया था ? क्या इसी तरह उन्होंने नवद्वीप में और श्रीक्षेत्र में (पुरी में) प्रेम का बाजार बैठाया था ? इसमें तो ढोंग नहीं हो सकता । ये सर्वत्यागी हैं, इन्हें धन, मान, यश—किसी चीज की आवश्यकता नहीं है । तो क्या यही जीवन का उद्देश्य है ? किसी ओर मन न लगाकर ईश्वर से प्रेम करना ही क्या जीवन का उद्देश्य है ? अब उपाय क्या है ? उन्होंने कहा, 'माँ के लिए बेचैन होकर व्याकुल होना, व्याकुलता, प्रेम करना ही उपाय है, प्रेम ही उद्देश्य है । सच्चा प्रेम आते ही दर्शन होता है ।'

भक्तगण इसी प्रकार चिन्तन करने लगे और उस अद्‌भुत देवदुर्लभ नृत्य एवं कीर्तन का आनन्द प्रत्यक्ष करने लगे । सभी श्रीरामकृष्ण के चारों ओर खड़े हैं—और एकटक उन्हें देख रहे हैं ।

कीर्तन के बाद श्रीरामकृष्ण भूमिष्ठ होकर प्रणाम कर रहे हैं । 'भगवान-भक्त-भगवान' इस कथन का उच्चारण करके कह रहे हैं, 'ज्ञानी, योगी, भक्त—सभी के चरणों में प्रणाम ।'

फिर सब लोग उनके चारों ओर घेरकर बैठे गये ।

(६)

श्रीबंकिम और भक्तियोग । ईश्वरप्रेम

बंकिम—(श्रीरामकृष्ण के प्रति)—महाराज, भक्ति का क्या उपाय है ?

श्रीरामकृष्ण—व्याकुलता । लड़का जिस प्रकार माँ के लिए, माँ को न देखकर बेचैन होकर रोता है, उसी प्रकार व्याकुल होकर ईश्वर के लिए रोने से ईश्वर को प्राप्त तक किया जाता है ।

"अरुणोदय होने पर पूर्व दिशा लाल हो जाती है, उस

समय समझा जाता है कि सूर्योदय में अब अधिक विलम्ब नहीं है। उसी प्रकार यदि किसी का प्राण ईश्वर के लिए व्याकुल देखा जाय, तो भलीभाँति समझा जा सकता है कि इस व्यक्ति का ईश्वर प्राप्ति में अधिक विलम्ब नहीं है।

"एक व्यक्ति ने गुरु से पूछा था, 'महाराज, ईश्वर को कैसे प्राप्त करूँ, बता दीजिये।' गुरु ने कहा, 'आओ, मैं तुम्हें बता देता हूँ।' यह कहकर वे उसे एक तालाब के किनारे ले गये। दोनों जल में उतर पड़े। इतने में ही एकाएक गुरु ने शिष्य का सिर पकड़कर उसे जल में डुबो दिया और कुछ देर पानी में डुबाकर रखा। फिर थोड़ी देर बाद उसे छोड़ दिया। शिष्य सिर उठाकर खड़ा हो गया। गुरु ने पूछा, 'कहो, तुम्हें कैसा लग रहा था?' शिष्य ने कहा, 'ऐसा लग रहा था कि अभी प्राण जाते ही हैं, प्राण बेचैन हो रहे थे।' तब गुरु ने कहा, 'ईश्वर के लिए जब प्राण इसी प्रकार बेचैन होंगे, तभी जानो कि अब उनके साक्षात्कार में विलम्ब नहीं है।'

"तुमसे कहता हूँ, ऊपर ऊपर बहने से क्या होगा? जरा गोता लगाओ। गहरे जल के नीचे रत्न है, जल के ऊपर हाथ-पैर पटकने से क्या होगा? यथार्थ मणि भारी होता है, वह जल पर तैरता नहीं; वह जल के नीचे डूबा हुआ रहता है। असली मणि प्राप्त करना हो तो जल के भीतर गोता लगाना पड़ेगा।"

बंकिम-महाराज, क्या करूँ, पीठ पर काग बँधी हुई है। (सभी हँसे।) वह डूबने नहीं देती।

श्रीरामकृष्ण-उनका स्मरण करने से सभी पाप कट जाते हैं। उनके नाम से काल का फन्दा कट जाता है। गोता लगाना होगा, नहीं तो रत्न नहीं मिलेगा। एक गाना सुनो—

श्रीरामकृष्णवचनामृत

परिच्छेद १

ईश्वर-दर्शन के उपाय

(१)

श्रीरामकृष्ण तथा तान्त्रिक भक्त

आज पौष शुक्ला चतुर्थी है; २ जनवरी १८८४। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर में निवास कर रहे हैं। आजकल राखाल, लाटू, हरीश, रामलाल, मास्टर दक्षिणेश्वर में निवास कर रहे हैं।

दिन के तीन बजे का समय होगा—श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने के लिए मणि बेलतला से उनके कमरे की ओर आ रहे हैं। वे एक तान्त्रिक भक्त के साथ पश्चिम के बरामदे में बैठे हैं।

मणि ने आकर भूमि पर माथा टेककर प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण ने उन्हें अपने पास बैठने के लिए कहा। सम्भव है, तान्त्रिक भक्त के साथ वार्तालाप करते करते उन्हें भी उपदेश देंगे। श्री महिम चक्रवर्ती ने तान्त्रिक भक्त को श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने के लिए भेजा है। भक्त गेरुआ वस्त्र धारण किये है।

श्रीरामकृष्ण—(तान्त्रिक भक्त के प्रति)—ये सब तान्त्रिक साधना के अंग हैं; कपाल-पात्र में सुधा का पान करना! उस सुधा को कारणवारि कहते है, है न ?

(भावार्थ) " रे मेरे मन, रूप के समुद्र में गोता लगा। ओ रे, तल, अतल, पाताल खोजने पर प्रेमरूपी धन को पायेगा। ढूंढो, ढूंढो, ढूंढने पर हृदय के बीच में वृन्दावन पाओगे और हृदय में सदा ज्ञान का दीपक जलता रहेगा। कबीर कहते हैं, सुन सुन, गुरु के श्रीचरणों का चिन्तन कर।"

श्रीरामकृष्ण ने अपने देवदुर्लभ मधुर कण्ठ से इस गाने को गाया। सभा के सभी लोग आकृष्ट होकर एक-मन से गाना सुनने लगे। गाना समाप्त होने पर फिर वार्तालाप शुरू हुआ।

श्रीरामकृष्ण–(बंकिम के प्रति)–कोई कोई गोता लगाना नहीं चाहते। वे कहते हैं, 'ईश्वर ईश्वर करके ज्यादती करके अन्त में क्या पागल हो जाऊँ?' जो लोग ईश्वर के प्रेम में मस्त हैं, उन्हें कहते हैं 'बौरा गये हैं', परन्तु ये सब लोग इस बात को नहीं समझते कि सच्चिदानन्द अमृत का समुद्र है।

"मैंने नरेन्द्र से पूछा था, 'मान लो कि एक बर्तन रस है, और तू मक्खी बना है; तो तू कहाँ पर बैठकर रस पीयेगा?' नरेन्द्र ने कहा, 'किनारे पर बैठकर मुँह बढ़ाकर पीऊँगा।' मैंने कहा, 'क्यों? बीच में जाकर डूबकर पीने में क्या हर्ज है?' नरेन्द्र ने कहा, 'फिर तो रस में डूबकर मर जाऊँगा।' तब मैंने कहा, 'भैया, सच्चिदानन्द-रस ऐसा नहीं है, यह रस अमृत-रस है। इसमें डूबने से मनुष्य मरता नहीं, अमर हो जाता है।'

"तभी कह रहा हूँ, 'गोता लगाओ।' कोई भय नहीं है। डूबने से अमर हो जाओगे।"

अब बंकिम ने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। वे विदा लेंगे।

बंकिम–महाराज, मुझे आपने जितना बेवकूफ समझा है, उतना नहीं हूँ। एक प्रार्थना है, दया करके कुटिया में एक बार

परमभूमि—।

श्रीरामकृष्ण—ठीक तो है, ईश्वर की इच्छा।

बंकिम—वहाँ पर भी देखेंगे, भक्त हैं।

श्रीरामकृष्ण—(हँसते हुए)—कैसा जी? कैसे सब भक्त हैं वहाँ पर? जिन्होंने गोपाल गोपाल, केशव केशव कहा था, उनकी तरह हैं क्या?—(सभी हँसे।)

एक भक्त—महाराज, गोपाल गोपाल की कहानी क्या है?

श्रीरामकृष्ण—(हँसते हँसते)—अरे वह कहानी! अच्छा सुनो। एक स्थान पर एक सुनार की दूकान है। वे लोग परम वैष्णव हैं, गले में माला, तिलक है। हमेशा हाथ में हरिनाम का झोला और मुख में सदैव हरिनाम। उन्हें कोई भी साधु ही कहेगा और सोचेगा कि ये पेट के लिए ही सुनार का काम करते हैं, क्योंकि औरत-बच्चों को तो पालना ही है। परम वैष्णव जानकर अनेक ग्राहक उन्हीं की दूकान में आते हैं, क्योंकि वे जानते हैं कि इनकी दूकान में सोने-चाँदी में गड़बड़ी न होगी। ग्राहक दूकान में आते ही देखता है कि वे मुख से हरिनाम जप रहे हैं और बैठे हुए काम-काज भी कर रहे हैं। खरीददार ज्योंही जाकर बैठा कि एक आदमी बोल उठा, 'केशव! केशव! केशव!' थोड़ी देर बाद एक दूसरा कह उठा, 'गोपाल! गोपाल! गोपाल!' फिर थोड़ी देर बातचीत होने पर एक तीसरा व्यक्ति कह उठा, 'हरि हरि हरि।' अब जेवर बनाने की बातचीत एक प्रकार से समाप्त हो रही है। इतने में ही एक व्यक्ति बोल उठा, 'हर हर हर।' इसीलिए तो इतनी भक्ति प्रेम देखकर वे लोग इन सुनारों के पास अपना रुपया-पैसा देकर निश्चिन्त हो जाते हैं। सोचा कि ये लोग कभी न ठगेंगे।

"परन्तु असली बात क्या है जानते हो? ग्राहक के आने

के बाद जिसने कहा था, 'केशव केशव' उसका मतलब है, ये सब लोग कौन है ? अर्थात् ये ग्राहक लोग कौन हैं ? जिसने कहा, 'गोपाल गोपाल'—उसका मतलब है, ये लोग गाय के दल हैं। जिसने कहा, 'हरि हरि', इसका मतलब है, ये लोग मूर्ख हैं, तो फिर 'हरि' अर्थात् हरण करूँ ? और जिसने कहा, 'हर हर,' इसका मतलब है, इनका सब कुछ हरण कर लो। ऐसे वे परम भक्त साधु थे ! (सभी हँसे।)

बंकिम ने विदा ली। परन्तु एकाग्र मन से न जाने क्या सोच रहे थे। कमरे में दरवाजे के पास आकर देखते हैं, चद्दर छोड आये हैं। केवल कमीज पहने हैं। एक बाबू ने चद्दर उठा ली और दौड़कर उनके हाथ में दे दी। बंकिम क्या सोच रहे होंगे ?

राखाल आये हैं। वे बलराम के साथ श्रीवृन्दावनधाम गये थे। वहाँ से कुछ दिन हुए लौटे हैं। श्रीरामकृष्ण ने शरत् और देवेन्द्र के पास उनकी बात कही थी और उनसे कहा था कि उनके साथ बातचीत करें। इसीलिए वे राखाल के साथ परिचय करने के लिए उत्सुक होकर आये हैं। सुना, इन्हीं का नाम राखाल है।

शरत् और सान्याल ब्राह्मण हैं और अधर है जाति के सुवर्ण वणिक् (बनिया)। कहीं उनके घरवाले भोजन करने के लिए न बुला लें इसीलिए जल्दी से भाग गये। नये आये हैं; अभी नहीं जानते कि श्रीरामकृष्ण अधर से कितना स्नेह करते हैं। श्रीराम-कृष्ण का कहना है, भक्तों की एक अलग जाति है। उनमें जाति-भेद नहीं है।

अधर ने श्रीरामकृष्ण को तथा उपस्थित भक्तों को अत्यन्त आदर के साथ बुलाकर सन्तोषपूर्वक भोजन कराया। भोजन के बाद भक्तगण श्रीरामकृष्ण के मधुर वचनों का स्मरण करते करते

उनका विचित्र प्रेममय चित्र हृदय में धारण कर घर लौटे।

अधर के घर शुभागमन के दिन श्री बंकिम ने श्रीरामकृष्ण-देव से उनके मकान पर पधारने का अनुरोध किया था। अतएव थोड़े दिनों के बाद श्रीरामकृष्ण ने श्री गिरीश व मास्टर को उनके कलकत्ते के मकान पर भेज दिया था। उनके साथ श्रीरामकृष्ण के सम्बन्ध में काफी बातचीत हुई। बंकिम ने श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने के लिए फिर आने की इच्छा प्रकट की थी, परन्तु काम में व्यस्त रहने के कारण न आ सके।

पंचवटी के नीचे 'देवी चौधरानी' का पाठ

ता. ६ दिसम्बर, १८८४ ई. को श्रीरामकृष्ण ने श्री अधर के घर पर शुभागमन किया था और श्री बंकिम बाबू के साथ वार्तालाप किया था। प्रथम से षष्ठ विभाग तक ये ही सब बातें विवृत हुईं।

इस घटना के कुछ दिनों के बाद अर्थात् २७ दिसम्बर, शनिवार को श्रीरामकृष्ण ने पंचवटी के नीचे भक्तों के साथ बंकिम रचित 'देवी चौधरानी' के कुछ अंश का पाठ सुना था और गीतोक्त निष्काम धर्म के बारे में अनेक बातें कही थी।

श्रीरामकृष्ण पंचवटी के नीचे चबूतरे पर अनेक भक्तों के साथ बैठे थे। मास्टर से पढ़कर सुनाने के लिए कहा। केदार, राम, नित्यगोपाल, तारक (शिवानन्द), प्रसन्न (त्रिगुणातीतानन्द), सुरेन्द्र आदि अनेक भक्त उपस्थित थे।

परिच्छेद ३२

प्रह्लाद-चरित्र का अभिनय-दर्शन

(१)

समाधि में

श्रीरामकृष्ण आज स्टार थिएटर में प्रह्लाद-चरित्र का अभिनय देखने आये हैं। साथ में बाबूराम, मास्टर, नारायण आदि हैं। तब स्टार थिएटर बीडन स्ट्रीट में था। बाद में इसी रंगमंच पर एमरेल्ड थिएटर और क्लासिक थिएटर का अभिनय होता था।

आज रविवार है। १४ दिसम्बर, १८८४। श्रीरामकृष्ण एक बाक्स में उत्तर की ओर मुँह किये हुए बैठे हैं। रंगमंच रोशनी से जगमगा रहा है। श्रीरामकृष्ण के पास बाबूराम, मास्टर और नारायण बैठे हैं। गिरीश आये हैं, अभी अभिनय का आरम्भ नहीं हुआ है। श्रीरामकृष्ण गिरीश से बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण--(हँसकर)--वाह, तुमने तो यह सब बहुत अच्छा लिखा है।

गिरीश--महाराज, धारणा कहाँ? सिर्फ लिखता गया हूँ।

श्रीरामकृष्ण--नहीं, तुम्हें धारणा है। उसी दिन तो मैंने तुमसे कहा था, भीतर भक्ति हुए बिना कोई चित्र नहीं खींच सकता।

"धारणा भी इसके लिए चाहिए। केशव के यहाँ मैं नव-वृन्दावन नाटक देखने गया था। देखा एक डिप्टी आठ सौ-रुपया महीना पाता है। सब लोगों ने कहा, बड़ा पण्डित है; परन्तु वह गोद में एक बच्चा लिए हैरान हो रहा था। क्या किया जाय जिससे बच्चा अच्छी जगह बैठे, अच्छी तरह नाटक देखे, इसी के लिए

वह व्याकुल हो रहा था। इधर ईश्वरी बातें हो रही थी, उसका जी नहीं लगता था। बच्चा बार बार पूछ रहा था, 'बाबूजी, यह क्या है? यह क्या है?' वह भी बच्चे के साथ उलझा हुआ था। उसने बस पुस्तकें पढ़ी हैं, धारणा नहीं हुई है।"

गिरीश–दिल में आता है अब थिएटर-थिएटर क्या करूँ?

श्रीरामकृष्ण—नहीं, नहीं, इसका रहना जरूरी है, इससे लोकशिक्षा होगी।

अभिनय होने लगा। प्रह्लाद पाठशाला में पढ़ने के लिए आये हैं। प्रह्लाद को देखकर श्रीरामकृष्ण 'प्रह्लाद प्रह्लाद' कहते हुए एकदम समाधिमग्न हो गये।

प्रह्लाद को हाथी के पैरों के नीचे देखकर श्रीरामकृष्ण रो रहे हैं। अग्निकुण्ड में जब वे फेंक दिये गये तब भी श्रीरामकृष्ण के आँसू बह चले।

गोलोक में लक्ष्मीनारायण बैठे हैं। प्रह्लाद के लिए नारायण सोच रहे हैं! यह दृश्य देखकर श्रीरामकृष्ण फिर समाधिमग्न हो गये।

(२)

ईश्वरदर्शन का उपाय। कर्मयोग तथा चित्तशुद्धि

थिएटर-भवन के जिस कमरे में गिरीश रहते हैं, अभिनय हो जाने पर श्रीरामकृष्ण को वहीं ले गये। गिरीश ने पूछा, "विवाह-विभ्राट आप सुनेंगे?" श्रीरामकृष्ण ने कहा, "नहीं। प्रह्लाद-चरित्र के बाद यह सब क्या है? मैंने इसीलिए गोपाल उड़िया के दल से कहा था 'तुम लोग अन्त में कुछ ईश्वरी बातें किया करो।' बहुत अच्छी ईश्वरी बातें हो रही थी, फिर 'विवाह-

विभ्राट'—संसार की बात आ गयी ! 'जो मैं था, वही हो गया।' फिर वही पहले के भाव आ जाते हैं।" श्रीरामकृष्ण गिरीश आदि के साथ ईश्वरी बातें कह रहे हैं। गिरीश पूछ रहे है, 'महाराज, आपने कैसा देखा ?'

श्रीरामकृष्ण—साक्षात् वे ही सब कुछ हुए हैं। जो अभिनय कर रहे थे उनमें मैंने साक्षात् आनन्दमयी माता को देखा। जो लोग गोलोक के गोपाल बने थे, उन्हें मैंने साक्षात् नारायण देखा। वे ही सब कुछ हुए हैं। परन्तु ईश्वर-दर्शन ठीक होता है या नहीं इसके लक्षण हैं। एक लक्षण तो आनन्द है। दूसरा, सकोच का लोप हो जाना। जैसे समुद्र में ऊपर तो हिलोरें और आवर्त उठ रहे हैं, परन्तु भीतर गम्भीर जल है। जिसे ईश्वर के दर्शन हो चुके हैं, वह कभी पागल की तरह रहता है, कभी पिशाच की तरह। शुचि और अशुचि में भेद नहीं रहता है। कभी जड की तरह है, क्योंकि भीतर और बाहर ईश्वर के दर्शन करके आश्चर्यचकित हो गया है। कभी बालकवत् है, दृढ़ता नही, जैसे बालक बगल में धोती दबाये घूमता है। इस अवस्था में कभी तो बाल्यभाव होता है, कभी तरुणभाव—तब दिल्लगी सूझती है, कभी युवाभाव—तब कर्म करता है, लोक-शिक्षा देता है, तब वह सिंहतुल्य है।

"जीवों में अहंकार है, इसीलिए वे ईश्वर को नहीं देख पाते। मेघों के उमड़ने पर फिर सूर्य नहीं दीख पड़ता। सूर्य दिख नही पड़ता इसलिए क्या कभी यह कहना चाहिए कि सूर्य है ही नही ? सूर्य अवश्य है।

"परन्तु बालक के 'मैं' में दोष नहीं, बल्कि उपकार है। साग के खाने से बीमारी होती है, परन्तु 'हिंचा' साग के खाने से

उपकार होता है। इसीलिए 'हिंचा' साग में नहीं है। मिश्री भी इसी प्रकार मिठाइयों में नहीं है। दूसरी मिठाइयों से बीमारी होती है, परन्तु मिश्री से कफ का दोष होता ही नहीं।

"इसीलिए मैंने केशव सेन से कहा था, तुम्हें और अधिक कहने से फिर यह दल न रह जायेगा। केशव डर गया। तब मैंने कहा, बालक का 'मैं', दास का 'मैं'—इनमें दोष नहीं है।

"जिन्होंने ईश्वर का दर्शन किया है वे देखते हैं, ईश्वर ही जीव और जगत् हुए हैं। सब कुछ वे ही हैं। इन्हें ही उत्तम भक्त कहते हैं।"

गिरीश–(सहास्य) – सब कुछ तो वे ही हैं, परन्तु जरा सा 'मैं' रह जाता है, इसमें कोई दोष नहीं है।

श्रीरामकृष्ण–(हँसकर) –हाँ, इससे हानि नहीं। यह 'मैं' केवल सम्भोग के लिए है। 'मैं' अलग और 'तुम' अलग जब होता है तभी सम्भोग हो सकता है, सेव्य-सेवक के भाव से।

"और मध्यम दर्जे के भी भक्त हैं। वे देखते हैं, ईश्वर सब भूतों में अन्तर्यामी के रूप से विराजमान हैं। अधम दर्जे के भक्त कहते हैं,–वे हैं— अर्थात् आकाश के उस पार! (सब हँसे।)

"गोलोक के गोपालों को देखकर मुझे यह ज्ञात हुआ कि वे ही सब कुछ हुए हैं। जिन्होंने ईश्वर को देखा है वे स्पष्ट देखते हैं, ईश्वर ही कर्ता हैं, वे ही सब कुछ कर रहे हैं।"

गिरीश–महाराज, मैंने ठीक समझा है कि वे ही सब कुछ कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण–मैं कहता हूँ, 'माँ, मैं यन्त्र हूँ, तुम यन्त्री हो; मैं जड़ हूँ, तुम चेतना भरनेवाली हो; तुम जैसा कराती हो, मैं वैसा ही करता हूँ; जैसा कहलाती हो, वैसा ही कहता हूँ।' जो

अज्ञान दशा में हैं, वे कहते हैं, 'कुछ तो वे करते हैं, कुछ मैं करता हूँ।'

गिरीश–महाराज, मैं और करता ही क्या हूँ ? और अब कर्म ही क्यों किये जायँ ?

श्रीरामकृष्ण–नहीं जी, कर्म करना अच्छा है। जमीन जुती हुई हो तो उसमें जो कुछ बोओगे वही होगा। परन्तु इतना है कि कर्म निष्काम भाव से करना चाहिए।

"परमहंस दो तरह के हैं। ज्ञानी परमहंस और प्रेमी परमहंस। जो ज्ञानी हैं, उन्हें अपने काम से काम। जो प्रेमी हैं, जैसे शुकदेवादि, वे ईश्वर को प्राप्त करके फिर लोक-शिक्षा देते हैं। कोई अपने आप ही आम खाकर मुँह पोंछ डालता है, और कोई और पाँच आदमियों को खिलाता है। कोई कुआँ खोदते समय टोकरी और कुदार अपने घर उठा ले जाते हैं; कोई कुआँ खुद जाने पर टोकरी और कुदार उसी कुएँ में डाल देते हैं; कोई दूसरों के लिए रख देते हैं ताकि पड़ोसियों के ही काम आ जाय। शुकदेव आदि ने दूसरों के लिए टोकरी और कुदार रख दी। (गिरीश से) तुम भी दूसरों के लिए रखना।"

गिरीश–तो आप आशीर्वाद दीजिये।

श्रीरामकृष्ण–तुम माता के नाम पर विश्वास करना, बस हो जायेगा।

गिरीश–मैं पापी तो हूँ।

श्रीरामकृष्ण–जो सदा पाप पाप सोचा करता है, वह पापी हो जाता है।

गिरीश–महाराज, मैं जहाँ बैठता था, वहाँ की मिट्टी भी अशुद्ध है।

श्रीरामकृष्ण-यह क्या ! हजार साल के अँधेरे घर में अगर उजाला लाता है तो क्या जरा जरा करके उजाला होता है या एकदम ही प्रकाश फैल जाता है ?

गिरीश-आपने आशीर्वाद दिया।

श्रीरामकृष्ण-तुम्हारे अन्दर से अगर यही बात हो तो मैं इस पर क्या कह सकता हूँ ? मैं तो खाता-पीता हूँ और उनका नाम लिया करता हूँ।

गिरीश-आन्तरिकता है नहीं, परन्तु वह कृपया आप दे जाइये।

श्रीरामकृष्ण-क्या मैं ? नारद, शुकदेव, ये लोग होते तो दे देते।

गिरीश-नारदादि तो दृष्टि के सामने हैं नहीं, पर आप मेरे सामने हैं।

श्रीरामकृष्ण-(सहास्य)-अच्छा, तुम्हें विश्वास है !

सभी कुछ देर चुप रहे। फिर बातचीत होने लगी।

गिरीश-एक इच्छा है, अहेतुकी भक्ति की।

श्रीरामकृष्ण-अहेतुकी भक्ति ईश्वर-कोटि को होती है। जीव-कोटि को नहीं होती।

श्रीरामकृष्ण ऊर्ध्वदृष्टि हैं। आप ही आप गाने लगे—

"श्यामा को क्या सब लोग पाते हैं ? नादान मन समझाने पर भी नहीं समझता। उन सुरजित चरणों में मन लगाना शिव के लिए भी असाध्य साधन है। जो माता की चिन्ता करता है, उसके लिए इन्द्रादि का सुख और ऐश्वर्य भी तुच्छ हो जाता है। अगर वे कृपा की दृष्टि फेरती हैं, तो भक्त सदा ही आनन्द में मग्न रहता है। योगीन्द्र, मुनीन्द्र और इन्द्र उनके श्रीचरणों का

ध्यान करके भी उन्हें नहीं पाते। निर्गुण में रहकर भी कमलाकान्त उन चरणों की चाह रखता है।"

गिरीश–निर्गुण में रहकर भी कमलाकान्त उन चरणों की चाह रखता है!

(३)

क्या संसार में ईश्वरलाभ होता है?

श्रीरामकृष्ण–(गिरीश से)–तीव्र वैराग्य के होने पर वे मिलते हैं। प्राणों में विकलता होनी चाहिए। शिष्य ने गुरु से पूछा था, क्या करूँ जो ईश्वर को पाऊँ? गुरु ने कहा, मेरे साथ आओ। यह कहकर गुरु ने उसे एक तालाब में डुबाकर ऊपर से पकड़ रखा। कुछ देर बाद उसे पानी से निकाल लिया और पूछा, 'पानी के भीतर तुम्हें कैसा लगता था?' 'महाराज, मेरे प्राण डूबते-उतराते थे, जान पड़ता था अभी प्राण निकलना चाहते हैं।' गुरु ने कहा, 'देखो, इसी तरह ईश्वर के लिए जब जी डूबता-उतराता है तब उनके दर्शन होते हैं।'

"इस पर मैं कहता हूँ, जब तीनों आकर्षण एकत्र होते हैं तब ईश्वर मिलते हैं। विषयी का जैसा आकर्षण विषय की ओर है, सती का पति की ओर तथा माता का सन्तान की ओर, इन तीनों को अगर एक साथ मिलाकर कोई ईश्वर को पुकार सके तो उसी समय उनके दर्शन हो जायँ।

"'मन! जिस तरह पुकारा जाता है उस तरह तू पुकार तो सही, देखूँ भला, कैसे श्यामा रह सकती है?' उस तरह व्याकुल होकर पुकारने पर उन्हें दर्शन देना ही होगा।

"उस दिन तुमसे मैंने कहा था—भक्ति का अर्थ क्या है।

यह है मन, वाणी और कर्म से उन्हें पुकारना । कर्म—अर्थात् हाथों से उनकी पूजा और सेवा करना, पैरों से उनके स्थानों तक जाना, कानों से भगवान और उनके नाम, गुणों और भजनों को सुनना, आँखों से उनकी मूर्ति के दर्शन करना । मन अर्थात् सदा उनका ध्यान—उनकी चिन्ता करना तथा उनकी लीलाओं का स्मरण करना । वाणी—अर्थात् उनकी स्तुतियाँ पढ़ना—उनके भजन गाना ।

"कलिकाल के लिए नारदीय भक्ति है—सदा उनके नाम और गुणों का कीर्तन करना । जिन्हें समय नहीं है, उन्हें कम से कम शाम को तालियाँ बजाकर एकाग्र चित्त हो 'श्रीमन्नारायण नारायण' कहकर उनके नाम का कीर्तन करना चाहिए ।

"भक्ति के 'मैं' में अहंकार नहीं होता । यह अज्ञान नहीं लाता, बल्कि ईश्वर की प्राप्ति करा देता है । यह 'मैं' में नहीं गिना जाता, जैसे 'हिंचा' साग नहीं गिना जाता । दूसरे सागों से बीमारी हो सकती है, परन्तु 'हिंचा' साग पित्तनाशक है; इससे उपकार ही होता है । मिश्री मिठाइयों में नहीं गिनी जाती । दूसरी मिठाइयों के खाने से अपकार होता है, परन्तु मिश्री के खाने से अम्लविकार हटता है ।

"निष्ठा के बाद भक्ति होती है । भक्ति की परिपक्व अवस्था भाव है । भाव के घनीभूत होने पर महाभाव होता है । सब से अन्त में है प्रेम ।

"प्रेम रज्जु है । प्रेम के होने पर भक्त के निकट ईश्वर बँधे रहते हैं, फिर भाग नहीं सकते । साधारण जीवों को केवल भाव तक होता है । ईश्वर-कोटि के हुए बिना महाभाव या प्रेम नहीं होता । प्रेम चैतन्यदेव को हुआ था ।

"ज्ञान वह है, जिस रास्ते से चलकर मनुष्य स्वरूप का पता पाता है। 'ब्रह्म ही मेरा रूप है,' यह बोध होना चाहिए।

"प्रह्लाद कभी स्वरूप में रहते थे। कभी देखते थे 'एक मैं हूँ और एक तुम,' तब वे भक्तिभाव में रहते थे।

"हनुमान ने कहा था, 'राम, कभी देखता हूँ, तुम पूर्ण हो, मैं अंश हूँ, कभी देखता हूँ, तुम प्रभु हो, मैं दास हूँ, और राम, जब तत्त्वज्ञान होता है, तब देखता हूँ, तुम्हीं मैं हो, मैं ही तुम हूँ।'"

गिरीश-अहा!

श्रीरामकृष्ण-संसार में होगा क्यों नहीं? परन्तु विवेक और वैराग्य चाहिए। ईश्वर ही वस्तु हैं, और सब अनित्य और अवस्तु—दो दिन के लिए है, यह विचार दृढ़ रहना चाहिए। ऊपर उतराते रहने से न होगा। डुबकी मारनी चाहिए।

"एक बात और, काम आदि घड़ियालों का भय है।"

गिरीश-परन्तु यम का भय मुझे नहीं है।

श्रीरामकृष्ण-नहीं, काम आदि घड़ियालों का भय है। इसीलिए हल्दी लगाकर डुबकी मारनी चाहिए—हल्दी है विवेक और वैराग्य।

"संसार में किसी किसी को ज्ञान होता है। इस पर दो तरह के योगियों की बात कही गयी है—गुप्त योगी और व्यक्त योगी। जिन लोगों ने संसार का त्याग कर दिया है, वे व्यक्त योगी हैं, उन्हें सब लोग पहचानते हैं। गुप्त योगी व्यक्त नहीं होता। जैसे नौकरानी—सब काम तो करती है, परन्तु मन अपने देश में बालबच्चों पर लगाये रहती है। और जैसा मैंने तुमसे कहा है, व्यभिचारिणी औरत घर का कुल काम तो बड़े उत्साह

से करती है, परन्तु मन से वह सदा अपने यार की याद करती रहती है। विवेक और वैराग्य का होना बड़ा मुश्किल है, 'मैं कर्ता हूँ' और 'ये सब चीजें मेरी हैं,' यह भाव बड़ी जल्दी दूर नहीं होता। एक डिप्टी को मैंने देखा, आठ सौ रुपया महीना पाता है; ईश्वरी बातें हो रही थीं, उधर उसका जरा भी मन नहीं लगा। एक लड़का साथ ले आया था, उसे कभी यहाँ बैठाता था, कभी वहाँ। मैं एक आदमी को जानता हूँ, उसका नाम न लूँगा, खूब जप करता था, परन्तु दस हजार रुपयों के लिए उसने झूठी गवाही दी थी।

"इसीलिए कहा, विवेक और वैराग्य के होने पर संसार में भी ईश्वर प्राप्ति होती है।"

गिरीश–इस पापी के लिए क्या होगा?

श्रीरामकृष्ण ऊर्ध्वदृष्टि हो गाने लगे—

"ऐ जीवो, उस भरकान्तकारी श्रीकान्त का चिन्तन करो, इस तरह कृतान्त के भय का अन्त हो जायेगा। उनका स्मरण करने पर भवभावना दूर हो जाती है, उस त्रिभंग के एक ही भ्रूभंग से मनुष्य इस घोर तरंग को पार कर जाता है। सोचो तो, किस तत्त्व की प्राप्ति के लिए तुम इस मर्त्यलोक में आये, पर यहाँ आकर चित्त में बुरी वृत्तियाँ भरना शुरू कर दिया! यह तुम्हें कदापि उचित नहीं, इस तरह तुम अपने को डुबा दोगे। अतएव उस नित्यपद की चिन्ता करके अपने इस चित्त का प्रायश्चित्त करो।"

श्रीरामकृष्ण-(गिरीश से)–उस त्रिभंग के एक ही भ्रूभंग से मनुष्य इस घोर तरंग को पार कर जाता है।

"महामाया के द्वार छोड़ने पर उनके दर्शन होते हैं, महामाया की दया चाहिए। इसीलिए शक्ति की उपासना की जाती

है। देखो न, पास ही भगवान हैं, फिर भी उन्हें जानने के लिए कोई उपाय नहीं, बीच में महामाया है, इसलिए। राम, सीता और लक्ष्मण जा रहे हैं; आगे राम हैं, बीच में सीता और पीछे लक्ष्मण। राम बस ढाई हाथ के फासले पर हैं, फिर भी लक्ष्मण उन्हें नहीं देख पाते।

"उनकी उपासना करने के लिए एक भाव का आश्रय लिया जाता है। मेरे तीन भाव हैं, सन्तानभाव, दासीभाव और सखीभाव। दासीभाव और सखीभाव में मैं बहुत दिनों तक था। उस समय स्त्रियों की तरह गहने और कपड़े पहनता था। सन्तानभाव बहुत अच्छा है।

"वीरभाव अच्छा नहीं। मुण्डे और मुण्डियाँ, भैरव और भैरवियाँ, ये सब वीरभाव के उपासक हैं, अर्थात् प्रकृति को स्त्री-रूप से देखना और रमण के द्वारा उसे प्रसन्न करना—इस भाव में प्रायः पतन हुआ करता है।"

गिरीश—मुझ में एक समय वही भाव आया था।

श्रीरामकृष्ण चिन्तित हुए-से गिरीश को देखने लगे।

गिरीश—इस भाव का कुछ अंश शेष है। अब उपाय क्या है, बतलाइये।

श्रीरामकृष्ण—(कुछ देर चिन्ता करके)—उन्हें आम मुख्तारी दे दो, उनकी जो इच्छा हो, वे करें।

(८)

सत्त्वगुण तथा ईश्वरलाभ

श्रीरामकृष्ण भक्त बालकों की बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—(गिरीश से)—ध्यान करता हुआ मैं उनके

सब लक्षण देख लेता हूँ। 'घर सँवारेंगा' यह भाव उनमें नहीं है। स्त्री-सुख की इच्छा नहीं है। जिनके स्त्री है भी, वे उसके साथ नहीं सोते। बात यह है कि रजोगुण के बिना गये, शुद्ध सत्वगुण के बिना आये, ईश्वर पर मन स्थिर नहीं होता, उन पर प्यार नहीं होता, उन्हें मनुष्य पा नहीं सकता।

गिरीश—आपने मुझे आशीर्वाद दिया है।

श्रीरामकृष्ण—कब ? परन्तु हाँ, यह कहा है कि आन्तरिकता के होने पर सब हो जायगा।

बातचीत करते हुए श्रीरामकृष्ण 'आनन्दमयी' कहकर समाधिलीन हो रहे हैं। बड़ी देर तक समाधि की अवस्था में रहे। जरा समाधि से उतरकर कह रहे हैं—"ये सब कहाँ गये ?" मास्टर बाबूराम को बुला लाये। श्रीरामकृष्ण बाबूराम और दूसरे भक्तों की ओर देखकर बोले—"सच्चिदानन्द ही अच्छा है, और कारणानन्द ?"

इतना कहकर श्रीरामकृष्ण गाने लगे—

"अबकी बार मैंने अच्छा सोचा है। एक अच्छे सोचनेवाले से मैंने सोचने का ढंग सीखा है। जिस देश में रात नहीं है, मुझे उसी देश का एक आदमी मिला है। दिन की तो बात ही न पूछो, सन्ध्या को भी मैंने वन्ध्या बना डाला है। मेरी आँखें खुल गयी हैं, अब क्या फिर मैं सो सकता हूँ ? मैं योग और याग में जाग रहा हूँ। माँ, योगनिद्रा तुझे देकर नींद को ही मैंने सुला दिया है। सोहागा और गन्धक को पीसकर मैंने बड़ा ही सुन्दर रंग चढ़ाया है, आँखों की कूँची बनाकर मैं मणि-मन्दिर को साफ कर लूँगा। रामप्रसाद कहते हैं, भुक्ति और मुक्ति दोनों को सिर पर रखे हुए हूँ और 'काली ही ब्रह्म है' यह मर्म समझकर धर्म

और अधर्म, दोनों को मैंने छोड़ दिया है ।"

फिर उन्होंने दूसरा गाना गाया ।

"यदि 'काली काली' कहते मेरी मृत्यु हो जाय तो गंगा, गया, काशी, कांची, प्रभासादि क्षेत्रों में मैं क्यों जाऊँ ?..."

फिर वे कहने लगे, "मैंने माँ से प्रार्थना करते हुए कहा था, माँ, मैं और कुछ नहीं चाहता, मुझे शुद्धा भक्ति दो ।"

गिरीश का शान्त भाव देखकर श्रीरामकृष्ण को प्रसन्नता हुई है। वे कह रहे हैं, "तुम्हारी यही अवस्था अच्छी है। सहज अवस्था ही उत्तम अवस्था है ।"

श्रीरामकृष्ण नाट्यभवन के मैनेजर के कमरे में बैठे हुए हैं। एक ने आकर पूछा, "क्या आप 'विवाह-विभ्राट' देखेंगे ?— अब अभिनय हो रहा है ?"

श्रीरामकृष्ण ने गिरीश से कहा, "यह तुमने क्या किया ? प्रह्लाद-चरित्र के बाद विवाह-विभ्राट ? पहले खीर देकर पीछे से कड़वी तरकारी ?"

अभिनय समाप्त हो जाने पर गिरीश के आदेश से रंगमंच की अभिनेत्रियाँ (actresses) श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करने आयीं। सब ने भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया। भक्तगण कोई खड़े, कोई बैठे हुए देख रहे हैं। उन्हें देखकर आश्चर्य होने लगा। अभिनेत्रियों में कोई-कोई श्रीरामकृष्ण के पैरों पर हाथ रखकर प्रणाम कर रही हैं। पैरों पर हाथ रखते समय श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, "माँ, बस हो गया—माँ बस, रहने दो।" बातों में करुणा सनी हुई थी।

उनके प्रणाम करके चले जाने पर श्रीरामकृष्ण भक्तों से कह रहे हैं—"सब वही हैं—एक एक अलग रूप में।"

अब श्रीरामकृष्ण गाड़ी पर चढ़े। गिरीश आदि भक्तों ने उनके साथ चलकर उन्हें गाड़ी पर चढ़ा दिया।

गाड़ी पर चढ़ते ही श्रीरामकृष्ण गम्भीर समाधि में लीन हो गये। नारायण आदि भक्त भी गाड़ी में बैठे। गाड़ी दक्षिणेश्वर की ओर चल दी।

परिच्छेद ३३

'देवी चौधरानी' का पठन

(१)

दक्षिणेश्वर मन्दिर में श्रीरामकृष्ण

आज शनिवार है, २७ दिसम्बर, १८८४, पूस की शुक्ला सप्तमी। बड़े दिन की छुट्टियों में भक्तों को अवकाश मिला है। कितने ही श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने आये हैं। सुबह को ही बहुतेरे आ गये हैं। मास्टर और प्रसन्न ने आकर देखा, श्रीरामकृष्ण अपने कमरे के दक्षिण दालान में थे। उन लोगों ने आकर श्रीरामकृष्ण की चरण-वन्दना की।

श्रीयुत शारदाप्रसन्न ने पहले ही पहल श्रीरामकृष्ण को देखा है।

श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से कहा—"क्यों जी, तुम बंकिम को नहीं ले आये ?"

बंकिम स्कूल का विद्यार्थी है। श्रीरामकृष्ण ने उसे बागबाजार में देखा था। दूर से देखकर ही कहा था, लड़का अच्छा है।

बहुत से भक्त आये हुए हैं। केदार, राम, नृत्यगोपाल, तारक, सुरेश आदि और बहुत से भक्तबालक भी आये हुए हैं।

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ पंचवटी में जाकर बैठे। भक्तगण उन्हें चारों ओर से घेरे हुए हैं—कोई बैठे हैं, कोई खड़े हैं। श्रीरामकृष्ण पंचवटी में ईंटों के बने हुए चबूतरे पर बैठे हैं। दक्षिण-पश्चिम की ओर मुँह किये हुए हैं। हँसते हुए मास्टर से उन्होंने पूछा, क्या तुम पुस्तक ले आये हो ?

मास्टर–जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण–जरा पढ़कर मुझे सुनाओ तो।

भक्तगण उत्सुकता के साथ देख रहे हैं कि कौन सी पुस्तक है। पुस्तक का नाम है 'देवी चौधरानी।' श्रीरामकृष्ण सुन रहे हैं। देवी चौधरानी में निष्काम कर्म की बातें लिखी हैं। वे लेखक श्रीयुत बंकिमचन्द्र की तारीफ भी सुन चुके थे। पुस्तक में उन्होंने क्या लिखा है, इसे सुनकर वे उनके मन की अवस्था समझ लेंगे। मास्टर ने कहा, यह स्त्री डाकुओं के पाले पड़ी थी, इसका नाम प्रफुल्ल था, बाद में देवी चौधरानी हुआ था। जिस डाकू के साथ यह स्त्री पड़ी थी, उसका नाम भवानी पाठक था। भवानी पाठक बड़ा अच्छा आदमी था। उसी ने प्रफुल्ल से बहुत कुछ साधना करायी थी, और किस तरह निष्काम कर्म किया जाता है, इसकी शिक्षा दी थी। डाकू दुष्टों से रुपया-पैसा छीनकर गरीबों को दिया करता था, उनके भोजन-वस्त्र के लिए। प्रफुल्ल से उसने कहा था, मैं दुष्टों का दमन और शिष्टों का पालन करता हूँ।

श्रीरामकृष्ण–यह तो राजा का काम है।

मास्टर–और एक जगह भक्ति की बातें हैं। भवानी पाठक ने प्रफुल्ल के पास रहने के लिए एक लड़की को भेजा था, उसका नाम था निशि, वह लड़की बड़ी भक्तिमती थी। वह कहती थी, मेरे स्वामी श्रीकृष्ण हैं। प्रफुल्ल का विवाह हो गया था। उसके बाप न था, माँ थी। अकारण एक कलंक लगाकर गाँववालों ने उसे जाति-पाँति से अलग कर दिया था, इसीलिए प्रफुल्ल को उसका ससुर अपने यहाँ नहीं ले गया। अपने लड़के के उसने और दो विवाह कर दिये थे। प्रफुल्ल अपने पति को बहुत चाहती थी। अब पुस्तक का यह अंश समझ में आ जायेगा।

निशि–उनकी (भवानी पाठक की) कन्या हूँ, वे मेरे पिता हैं। उन्होंने भी एक तरह से मेरा विवाह कर दिया है।

प्रफुल्ल–एक तरह से, इसके क्या मानी?

निशि–मैंने अपना सब कुछ श्रीकृष्ण को अर्पित किया है।

प्रफुल्ल–वह कैसे?

निशि–मेरा रूप, यौवन और प्राण।

प्रफुल्ल–क्या वही तुम्हारे स्वामी हैं?

निशि–हाँ, क्योंकि जिनका मुझ पर पूर्ण अधिकार है, वे ही मेरे स्वामी हैं।

प्रफुल्ल ने एक लम्बी साँस छोड़कर कहा, "मैं नहीं कह सकूँगी। कभी तुमने पति का मुख नहीं देखा, इसीलिए कह रही हो। पति को अगर देखा होता तो कभी श्रीकृष्ण पर तुम्हारा मन न जाता।"

मूर्ख ब्रजेश्वर (प्रफुल्ल का पति) यह न जानता था कि उसकी स्त्री उससे इतना प्रेम करती है।

निशि ने कहा, "श्रीकृष्ण पर सब का मन लग सकता है, क्योंकि उनका रूप अनन्त है, यौवन अनन्त है, ऐश्वर्य अनन्त है।"

यह युवती भवानी पाठक की शिष्या थी, निरक्षर प्रफुल्ल उसकी बातों का उत्तर न दे सकी। केवल हिन्दू-समाजधर्म के प्रणेतागण उत्तर जानते थे। मैं जानता हूँ, ईश्वर अनन्त है, परन्तु अनन्त को इस छोटे से हृदय-पिञ्जर में हम रख नहीं सकते, सान्त को रख सकते हैं। इसीलिए अनन्त ईश्वर हिन्दुओं के हृदय-पिञ्जर में सान्त श्रीकृष्ण के रूप में है। पति और भी अच्छी तरह सान्त है। इसीलिए प्रेम के पवित्र होने पर, पति ईश्वर के पथ पर चढ़ने का प्रथम सोपान है। यही कारण है कि पति ही

हिन्दू स्त्रियों का देवता है। इस जगह दूसरे समाज हिन्दू समाज से निकृष्ट हैं।

प्रफुल्ल मूर्खा थी, वह कुछ समझ न सकी। उसने कहा, "बहन, मैं इतनी बातें नहीं समझ सकती। तुम्हारा नाम क्या है, तुमने तो अब तक नहीं बताया।"

निशि बोली, "भवानी पाठक ने मेरा नाम निशि रखा है। मैं दिवा की बहन निशि हूँ। दिवा को एक दिन तुमसे मिलने के लिए लाऊँगी; परन्तु मैं जो कह रही थी, सुनो। एकमात्र ईश्वर हमारे स्वामी हैं। स्त्रियों का पति ही देवता है। श्रीकृष्ण सब के देवता हैं। क्यों बहन, दो देवता फिर क्यों रहें? इस छोटे से जी में जो जरा भक्ति है, उसके दो टुकड़े कर डालने पर फिर कितना बच रहता है?"

प्रफुल्ल–अरी चल! स्त्रियों की भक्ति का भी कहीं अन्त है?

निशि–स्त्रियों के प्यार का तो अन्त नहीं है, परन्तु भक्ति और चीज है, प्यार और चीज।

मास्टर–भवानी पाठक प्रफुल्ल से साधना कराने लगे।

"पहले साल भवानी पाठक प्रफुल्ल के घर किसी पुरुष को न जाने देते थे, और न घर के बाहर किसी पुरुष से उसे मिलने ही देते थे। दूसरे साल मिलने-जुलने में इतनी रोक-टोक न रही; परन्तु उसके यहाँ किसी पुरुष को न जाने देते थे। फिर तीसरे साल, जब प्रफुल्ल ने सिर घुटाया, तब भवानी पाठक अपने चुने हुए चेलों को लेकर उसके पास जाया करते थे—प्रफुल्ल सिर घुटाये आँखें नीची करके शास्त्रीय चर्चा किया करती थी।

"फिर प्रफुल्ल की शिक्षा का आरम्भ हुआ। वह व्याकरण समाप्त कर चुकी; रघुवंश, कुमार, नैषध, शकुन्तला पढ़ चुकी।

कुछ सांख्य, कुछ वेदान्त और कुछ न्याय भी उसने पढ़ा।"

श्रीरामकृष्ण—इसका मतलब समझे? बिना पढ़े ज्ञान नहीं होता। जिसने लिखा है, वैसे आदमियों का यही मत है। वे सोचते हैं, पहले पढ़ना-लिखना है, फिर ईश्वर है। यदि ईश्वर को समझना है तो पढ़ना-लिखना आवश्यक है। परन्तु अगर मुझे यदु मल्लिक से मिलना है, तो उसके कितने मकान हैं, कितने रुपये हैं, कितने का कम्पनी का कागज है, क्या यह सब पहले जानने की आवश्यकता है? मुझे इतनी खबरों का क्या काम? स्तव या स्तुति करके किसी भी तरह से हो अथवा दरबान के धक्के ही सहकर, किसी तरह घर के भीतर घुसकर यदु मल्लिक से मिलना चाहिए। और अगर रुपया-पैसा और ऐश्वर्य के जानने की इच्छा हो, तो यदु मल्लिक से पूछने ही से काम सिद्ध हो जाता है। बहुत सहज में ही मतलब निकल आता है। पहले राम हैं, फिर राम का ऐश्वर्य यह संसार। इसीलिए वाल्मीकि ने 'मरा' जाना था। 'म' अर्थात् ईश्वर और 'रा' अर्थात् संसार—उनका ऐश्वर्य।

(२)

निष्काम कर्म और श्रीरामकृष्ण। फल-समर्पण और भक्ति

मास्टर—प्रफुल्ल के अध्ययन समाप्त करने और बहुत दिनों तक साधना कर चुकने के पश्चात् भवानी पाठक उससे मिलने के लिए आये। अब वे उसे निष्काम कर्म का उपदेश देना चाहते थे। उन्होंने गीता का एक श्लोक कहा—

तस्मादसक्त: सततं कार्यं कर्म समाचार।
असक्तो ह्याचरन् कर्म परमाप्नोति पूरुषः॥

अनासक्ति के उन्होंने तीन लक्षण बतलाये—

(१) इन्द्रिय-संयम (२) निरहंकार (३) श्रीकृष्ण के चरणों में फल-समर्पण। निरहंकार के बिना धर्माचरण नहीं होता। गीता में और भी कहा गया है— ·

प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः।
अहंकारविमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते ॥

इसके पश्चात् श्रीकृष्ण को सब कर्मों का फलार्पण। उन्होंने गीता के श्लोक का उल्लेख किया—

यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत्।
यत्तपस्यसि कौन्तेय, तत्कुरुष्व मदर्पणम् ॥

निष्काम कर्म के ये तीन लक्षण कहे हैं।

श्रीरामकृष्ण–यह अच्छा है। गीता की बात है। अकाट्य है। परन्तु एक बात है। श्रीकृष्ण को फलार्पण कर देने के लिए तो कहा, परन्तु उन पर भक्ति करने की बात तो नहीं कही।

मास्टर–यहाँ यह बात विशेषतया नहीं कही गयी।

फिर धन का व्यय किस तरह करना चाहिए, यह बात हुई। प्रफुल्ल ने कहा, यह सब धन श्रीकृष्ण के लिए मैंने समर्पित किया।

प्रफुल्ल–जब मैंने अपने सब कर्म श्रीकृष्ण को समर्पित किये, तब अपने धन का भी समर्पण मैंने श्रीकृष्ण को ही कर दिया।

भवानी–सब ?

प्रफुल्ल–सब।

भवानी–तो कर्म वास्तव में अनासक्त कर्म न हो सकेगा। अगर तुम्हें अपने भोजन के लिए प्रयत्न करना पड़ा तो इससे आसक्ति होगी। अतएव, सम्भवतः तुम्हें भिक्षावृत्ति के द्वारा भोजन का संग्रह करना होगा या इसी धन से अपनी शरीर-रक्षा के लिए कुछ रखना होगा। भिक्षा में भी आसक्ति है, अतएव

तुम्हें इसी धन से अपने शरीर की रक्षा करनी चाहिए।

मास्टर-(श्रीरामकृष्ण से)-यह इनका पटवारीपन है।

श्रीरामकृष्ण-हाँ, यह इनका पटवारीपन है। हिसाबी बुद्धि है। जो ईश्वर को चाहता है, वह एकदम कूद पड़ता है। देह-रक्षा के लिए इतना रखे, यह हिसाब नहीं आता।

मास्टर-फिर भवानी ने पूछा-'धन लेकर श्रीकृष्ण के लिए समर्पण कैसे करोगी?' प्रफुल्ल ने कहा, 'श्रीकृष्ण सर्व भूतों में विराजमान हैं। अतएव सर्व भूतों के लिए इसका व्यय करूँगी।' भवानी ने कहा, 'यह बहुत ही अच्छा है,' और वे गीता के श्लोक पढ़ने लगे—

> यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति।
> तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति॥
> सर्वभूतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः।
> सर्वथा वर्तमानोऽपि स योगी मयि वर्तते॥
> आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति योऽर्जुन।
> सुखं वा यदि वा दुःखं स योगी परमो मतः॥
>
> गीता-अ० ६, श्लोक ३०-३१-३२

श्रीरामकृष्ण-ये उत्तम भक्त के लक्षण हैं।

मास्टर पढ़ने लगे।

"सर्व भूतों को दान करने के लिए बड़े परिश्रम की आवश्यकता है। इसलिए कुछ साज-सजावट, कुछ भोग-विलास की जरूरत है। भवानी पाठक ने इसीलिए कहा, 'कभी कभी कुछ दुकानदारी की भी आवश्यकता होती है'।"

श्रीरामकृष्ण-(विरक्ति के भाव से)-'दुकानदारी की भी आवश्यकता होती है!' जैसा आकर है, माल भी वैसा ही

निकलती है। दिन-रात विषय की चिन्ता, मनुष्यों से धोखेबाजी, यह सब करते हुए बातें भी उसी ढंग की हो जाती हैं। मूली खाने पर मूली की ही डकार आती है। 'दूकानदारी' न कहकर वही बात अच्छे ढंग से भी कही जा सकती थी; वह कह सकता था, 'अपने को अकर्ता समझ कर्ता की तरह कार्य करना।' उस दिन एक आदमी गा रहा था। उस गाने के भीतर लाभ और घाटा, इन्हीं बातों की भरमार थी। मैंने मना किया। आदमी दिन-रात जो चिन्ताएँ किया करता है, मुँह से वही बातें निकलती रहती हैं।

(३)

योग की दूरबीन। पतिव्रता-धर्म

पठन जारी है। अब ईश्वर-दर्शन की बात आयी। प्रफुल्ल अब देवी चौधरानी हो गयी है। वैशाख शुक्ला सप्तमी तिथि है। देवी छतरवाली नाव पर बैठी हुई दिया के साथ बातचीत कर रही है। चन्द्रोदय हो गया है। नाव का लंगर छोड़ दिया गया है, गंगा के वक्ष पर नाव स्थिर भाव से खड़ी है। नाव की छत पर देवी और उसकी दोनों सहेलियाँ बैठी हुई हैं। ईश्वर प्रत्यक्ष होते हैं या नहीं, यही बात हो रही है। देवी ने कहा, जैसे फूल की सुगन्ध घ्राणेन्द्रिय के निकट प्रत्यक्ष है, उसी तरह ईश्वर मन के निकट प्रत्यक्ष होते हैं।

श्रीरामकृष्ण—जिस मन के निकट प्रत्यक्ष होते हैं, वह यह मन नहीं, वह शुद्ध मन है, तब यह मन नहीं रहता, विषयासक्ति के जरा भी रहने पर नहीं होता। मन जब शुद्ध होता है, तब चाहे उसे शुद्ध मन कह लो, चाहे शुद्ध आत्मा।

मास्टर—मन के निकट सहज ही वे प्रत्यक्ष नहीं होते, यह बात कुछ आगे है। कहा है, प्रत्यक्ष करने के लिए दूरबीन चाहिए। दूरबीन का नाम योग है। फिर जैसा गीता में लिखा है, योग तीन तरह के हैं—ज्ञानयोग, कर्मयोग, भक्तियोग। इस योगरूपी दूरबीन से ईश्वर दीख पड़ते हैं।

श्रीरामकृष्ण—यह बड़ी अच्छी बात है। गीता की बात है।

मास्टर—अन्त में देवी चौधरानी अपने स्वामी से मिली। स्वामी पर उसकी बड़ी भक्ति थी। स्वामी से उसने कहा—'तुम मेरे देवता हो। मैं दूसरे देवता की अर्चना करना सीख रही थी, परन्तु सीख नहीं सकी। तुमने सब देवताओं का स्थान अधिकृत कर लिया है।'

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—'सीख न सकी।' इसे पतिव्रता का धर्म कहते हैं। यह भी एक मार्ग है।

पठन समाप्त हो गया, श्रीरामकृष्ण हँस रहे हैं। भक्तगण टकटकी लगाये देख रहे हैं, कुछ सुनने के आग्रह से।

श्रीरामकृष्ण—(हँसकर, केदार तथा भक्तों से)—यह एक प्रकार से बुरा नहीं। इसे पतिव्रता-धर्म कहते हैं। प्रतिमा में ईश्वर की पूजा तो होती है, फिर जीते-जागते आदमी में क्यों नहीं होगी! आदमी के रूप में वे ही लीला कर रहे हैं।

"कैसी अवस्था बीत चुकी है! हरगौरी के भाव में कितने ही दिनों तक रहा था! फिर कितने ही दिन श्रीराधाकृष्ण भाव में बीते थे! कभी सीताराम का भाव था! राधा के भाव में रहकर 'कृष्ण-कृष्ण' कहता था, सीता के भाव में 'राम-राम'!

"परन्तु लीला ही अन्तिम बात नहीं है। इन सब भावों के बाद मैंने कहा, माँ, इन सब में विच्छेद है। जिसमें विच्छेद नहीं है, ऐसी

अवस्था कर दो; इसीलिए अनेक दिन अखण्ड सच्चिदानन्द के भाव में रहा। देवताओं की तस्वीरें मैंने कमरे से निकाल दीं।

"उन्हें सर्व भूतों में देखने लगा। पूजा उठ गयी। यहीं बेल का पेड़ है, यहाँ से बेल-पत्र लेने आया करता था। एक दिन बेल-पत्र तोड़ते हुए कुछ छाल निकल गयी। मैंने पेड़ में चेतना देखी। मन में कष्ट हुआ। दूर्वादल लेते समय देखा, पहले की तरह से चुन नहीं सकता। तब बलपूर्वक चुनने लगा।

"मैं नीबू नहीं काट सकता। उस रोज बड़ी मुश्किल से 'जय काली' कहकर उनके सामने बलि देने की तरह एक नीबू मैं काट सका था। एक दिन मैं फूल तोड़ रहा था। उसने दिखाया पेड़ में फूल खिले हुए हैं, जैसे सामने विराट की पूजा हो रही हो—विराट के सिर पर फूल के गुच्छे रखे हुए हों। फिर मैं फूल तोड़ न सका।

"वे आदमी होकर भी लीलाएँ कर रहे हैं। मैं तो साक्षात् नारायण को देखता हूँ। काठ को घिसने से जिस तरह आग निकल पड़ती है, उसी तरह भक्ति का बल रहने पर आदमी में भी ईश्वर के दर्शन होते हैं। वंशी में अगर बढ़िया मसाला लगाया हो, तो 'रोहू' और 'कातला' फौरन उसे निगल जाती हैं। प्रेमोन्माद होने पर सर्व भूतों में ईश्वर का साक्षात्कार होता है। गोपियों ने सर्व भूतों में श्रीकृष्ण के दर्शन किये थे। सब को कृष्णमय देखा, कहा था, 'मैं ही कृष्ण हूँ।' तब उनकी उन्मादावस्था थी। पेड़ देखकर उन लोगों ने कहा, 'ये तपस्वी हैं, कृष्ण का ध्यान कर रहे हैं।' तृणों को देखकर कहा था, 'श्रीकृष्ण के स्पर्श से पृथ्वी को रोमाञ्च हो रहा है।'

"पतिव्रता-धर्म में स्वामी देवता है, और यह होगा भी क्यों

नहीं ? मूर्ति की पूजा तो होती है, फिर जीते-जागते आदमी की क्या नहीं होगी ?

"प्रतिमा के आविर्भाव के लिए तीन बातों की जरूरत होती है—पहली बात, पुजारी में भक्ति हो; दूसरी, प्रतिमा सुन्दर हो, तीसरी गृहस्वामी स्वयं भक्त हो। वैष्णवचरण ने कहा था, अन्त में नरलीला में ही मन लीन हो जाता है।

"परन्तु एक बात है—उन्हें बिना देखे इस तरह लीला-दर्शन नहीं होता। साक्षात्कार का लक्षण जानते हो? देखनेवाले का स्वभाव बालक जैसा हो जाता है। बालस्वभाव क्यों होता है? इसलिए कि ईश्वर स्वयं बालस्वभाव है। अतएव जिसे उनके दर्शन होते हैं, वह भी उसी स्वभाव का हो जाता है।

"यह दर्शन होना चाहिए। अब उनके दर्शन भी कैसे हों? तीव्र वैराग्य होना चाहिए। ऐसा चाहिए कि कहे—'क्या तुम जगत्‌पिता हो, तो मैं क्या संसार से अलग हूँ? मुझ पर तुम दया न करोगे?—साला!'

"जो जिसकी चिन्ता करता है, उसे उसी की सत्ता मिलती है। शिव की पूजा करने पर शिव की सत्ता मिलती है। श्रीरामचन्द्रजी का एक भक्त था। वह दिन-रात हनुमान की चिन्ता किया करता। वह सोचता था, मैं हनुमान हो गया हूँ। अन्त में उसे दृढ़ विश्वास हो गया कि उसके जरा सी पूँछ भी निकली है।

"शिव के अंश से ज्ञान होता है, विष्णु के अंश से भक्ति। जिनमें शिव का अंश है, उनका स्वभाव ज्ञानियों जैसा है, जिनमें विष्णु का अंश है, उनका भक्तों जैसा स्वभाव है।"

मास्टर—चैतन्यदेव के लिए तो आपने कहा था, उनमें ज्ञान और भक्ति दोनों थे।

श्रीरामकृष्ण—(विरक्तिपूर्वक)—उनकी और बात है। वे ईश्वर के अवतार थे। उनमें और जीवों में बड़ा अन्तर है। उन्हें ऐसा वैराग्य था कि सार्वभौम ने जब जीभ पर चीनी डाल दी, तब चीनी हवा में 'फर-फर' करके उड़ गयी, भीगी तक नहीं। वे सदा ही समाधिमग्न रहते थे। कितने बड़े कामजयी थे वे, जीवों के साथ उनकी तुलना कैसे हो? सिंह बारह वर्ष में एक बार रमण करता है, परन्तु मांस खाता है; चिड़ियाँ दाने चबाती हैं, परन्तु दिन रात रमण करती हैं। उसी तरह अवतार और जीव हैं। जीव काम का त्याग तो करते हैं, परन्तु कुछ दिन बाद कभी भोग कर लेते हैं, सँभाल नहीं सकते। (मास्टर से) लज्जा क्यों? जो पार हो जाता है, वह आदमी को कीड़े के बराबर देखता है। 'लज्जा, घृणा और भय', ये तीन न रहने चाहिए। ये सब पाश हैं। 'अष्ट पाश' हैं न?

"जो नित्यसिद्ध है, उसे संसार का क्या डर? चौसे घरों का खेल है, पासे फेंकने से कुछ और न पड़ जाय, यह डर उसे फिर नहीं रहता।

"जो नित्यसिद्ध है, वह चाहे तो संसार में भी रह सकता है। कोई कोई दो तलवारें भी चला सकते हैं—वे ऐसे खिलाड़ी हैं कि कंकड़ फेंककर मारो तो तलवार में लगकर अलग हो जाता है।"

भक्त—महाराज, किस अवस्था में ईश्वर के दर्शन होते हैं?

श्रीरामकृष्ण—बिना सब तरफ से मन को समेटे ईश्वर के दर्शन थोड़े ही होते हैं? भागवत में शुकदेव की बातें हैं—वे रास्ते पर जा रहे थे—मानो संगीन चढ़ाई हुई हो! किसी ओर नजर नहीं जाती! एक लक्ष्य—केवल ईश्वर की ओर दृष्टि, योग यह है।

"चातक बस स्वाति का जल पीता है। गंगा, यमुना, गोदा

वरी सब नदियों में पानी भरा हुआ है, सातों सागर पूर्ण हैं, फिर भी उनका जल वह नहीं पीता। स्वाति में वर्षा होगी तब वह पानी पीयेगा।

"जिसका योग इस तरह का हुआ हो, उसे ईश्वर के दर्शन हो सकते हैं। थिएटर में जाओ तो जब तक पर्दा नहीं उठता तब तक आदमी बैठे हुए अनेक प्रकार की बातें करते हैं—घर की बातें, आफिस की बातें, स्कूल की बातें, यही सब। पर्दा उठा नहीं कि सब बातें बन्द! जो नाटक हो रहा है, टकटकी लगाये उसे ही देखते हैं। बड़ी देर बाद अगर एक-आध बातें करते भी हैं तो उसी नाटक के सम्बन्ध की।

"शराबखोर शराब पीने के बाद आनन्द की ही बातें करता है।"

(४)

पंचवटी में श्रीरामकृष्ण

नृत्यगोपाल सामने बैठे हुए हैं। सदा ही भावस्थ रहते हैं, बिलकुल चुपचाप।

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—गोपाल! तू तो बस चुपचाप बैठा रहता है।

नृत्यगोपाल—(बालक की तरह)—मैं—नहीं—जानता।

श्रीरामकृष्ण—मैं समझा, तू क्यों कुछ नहीं बोलता। शायद तू अपराध से डरता है।

"सच है। जय और विजय नारायण के द्वारपाल थे। सनक सनातन आदि ऋषियों को भीतर जाने से उन्होंने रोका था। इसी अपराध से उन्हें इस संसार में तीन बार जन्म-ग्रहण करना पड़ा था।

"श्रीदाम गोलोक में विरजा के द्वारी थे। श्रीमती (राधिका)

कृष्ण को विरजा के मन्दिर में पकड़ने के लिए उनके द्वार पर गयी थी, और भीतर घुसना चाहा—श्रीदाम ने घुसने नहीं दिया; इस पर राधिका ने शाप दिया कि तू मर्त्यलोक में असुर होकर पैदा हो। श्रीदाम ने भी शाप दिया था। (सब मुस्कराये।) परन्तु एक बात है—बच्चा अगर अपने बाप का हाथ पकड़ता है, तो वह गड्ढे में गिर भी सकता है, परन्तु जिसका हाथ बाप पकड़ता है, उसे फिर क्या भय है ?"

श्रीदाम की बात ब्रह्मवैवर्त पुराण में है।

केदार चैटर्जी इस समय ढाका में रहते हैं। वे सरकारी नौकरी करते हैं। पहले उनका आफिस कलकत्ते में था। अब ढाके में है। वे श्रीरामकृष्ण के परम भक्त हैं। ढाके में बहुत से भक्तों का साथ हो चुका है। वे भक्त सदा ही उनके पास आते और उपदेश ले जाया करते हैं। खाली हाथ दर्शनों के लिए न जाना चाहिए, इस विचार से वे भक्त केदार के लिए मिठाइयाँ ले आया करते हैं।

केदार—(विनयपूर्वक)—क्या मैं उनकी चीजें खाया करूँ ?

श्रीरामकृष्ण—अगर ईश्वर पर भक्ति करके देता हो तो दोष नहीं है। कामना करके देने से वह चीज अच्छी नहीं होती।

केदार—मैंने उन लोगों से कह दिया है। मैं अब निश्चिन्त हूँ। मैंने कहा है, मुझ पर जिन्होंने कृपा की है, वे सब जानते हैं।

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—यह तो सच है, यहाँ बहुत तरह के आदमी आते हैं, वे अनेक प्रकार के भाव भी देखते हैं।

केदार—मुझे अनेक विषयों के जानने की जरूरत नहीं है।

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—नहीं जी, जरा जरा सा सब कुछ चाहिए। अगर कोई पंसारी की दूकान खोलता है, तो उसे

सब तरह की चीजें रखनी पड़ती हैं ।—कुछ मसूर की दाल भी चाहिए और कहीं जरा इमली भी रख ली—यह सब रखना ही पड़ता है ।

"जो बाजे का उस्ताद है, वह कुछ कुछ सब तरह के बाजे बजा सकता है ।"

श्रीरामकृष्ण झाऊतल्ले में शौच के लिए गये । एक भक्त गड़ुआ लेकर वहीं रख आये ।

भक्तगण इधर-उधर घूम रहे हैं । कोई श्रीठाकुरमन्दिर की ओर चले गये, कोई पंचवटी की ओर लौट रहे हैं । श्रीरामकृष्ण ने वहाँ आकर कहा—"दो तीन बार शौच के लिए जाना पड़ा, मल्लिक के यहाँ का खाना—घोर विषयी है, पेट गरम हो गया ।"

श्रीरामकृष्ण के पान का डब्बा पंचवटी के चबूतरे पर अब भी पड़ा हुआ है; और भी दो एक चीजें पड़ी हुई हैं ।

श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से कहा—"यह डब्बा, और क्या क्या है, कमरे में ले आओ ।" यह कहकर श्रीरामकृष्ण अपने कमरे की ओर जाने लगे । पीछे पीछे भक्त भी आ रहे हैं । किसी के हाथ में पान का डब्बा है, किसी के हाथ में गड़ुआ आदि ।

श्रीरामकृष्ण दोपहर के बाद कुछ विश्राम कर रहे हैं । दो-चार भक्त भी वहाँ आकर बैठे । श्रीरामकृष्ण छोटी खाट पर एक छोटे तकिये के सहारे बैठे हुए हैं । एक भक्त ने पूछा—

"महाराज, ज्ञान के द्वारा क्या ईश्वर के गुण समझे जाते हैं ?"

श्रीरामकृष्ण ने कहा—"वे इस ज्ञान से नहीं समझे जाते; एकाएक क्या कभी कोई उन्हें जान सकता है ? साधना करनी चाहिए । एक बात और, किसी भाव का आश्रय लेना । जैसे दासभाव । ऋषियों का शान्तभाव था । ज्ञानियों का भाव क्या

है, जानते हो? स्वरूप की चिन्ता करना। (एक भक्त के प्रति हँसकर) तुम्हारा क्या है?"

भक्त चुपचाप बैठे रहे।

श्रीरामकृष्ण-(सहास्य)-तुम्हारे दो भाव हैं। स्वरूप-चिन्ता करना भी है और सेव्य-सेवक का भाव भी है। क्यों, ठीक है या नहीं?

भक्त-(सहास्य और ससंकोच)-जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण-(सहास्य)-इसीलिए हाजरा कहता है, तुम मन की बातें सब समझ लेते हो। यह भाव कुछ बढ़ जाने पर होता है। प्रह्लाद को हुआ था।

"परन्तु उस भाव की साधना के लिए कर्म चाहिए।

"एक आदमी बेर का काँटा एक हाथ से दबाकर पकड़े हुए है—हाथ से खून टप-टप गिर रहा है, फिर भी वह कहता है, मुझे कुछ नहीं हुआ। लगा नहीं। पूछने पर कहता है, मैं खूब अच्छा हूँ। मुझे कुछ नहीं हुआ। पर यह बात केवल जबान से कहने से क्या होगा? भाव की साधना होनी चाहिए।"

टेलिग्राफ का तार टूटा रहने पर अथवा उसमें अन्य कोई दोष रहने पर तार का समाचार नहीं पहुँचेगा।

"मैं व्याकुल होकर एकान्त में रोता था। 'कहाँ हो नारायण' कह कर रोता था। रोते-रोते बाह्य ज्ञान लुप्त हो जाता था। मैं महावायु में लीन हो जाता था।

"योग कैसे होता है? टेलिग्राफ का तार टूटा न रहने पर या उसमें कोई दोष न रहने पर होता है। विषयों के प्रति आसक्ति का एकदम त्याग।

"किसी प्रकार की कामना-वासना नहीं रखनी चाहिए। कामना-वासना रहने पर उसे सकाम भक्ति कहते हैं, निष्काम भक्ति को अहेतुकी भक्ति कहते हैं। तुम प्यार करो या न करो फिर भी मैं तुम्हें प्यार करता हूँ—इसीका नाम है अहेतुक प्रेम।

"बात यह है,—उनसे प्रेम करना। प्रेम गहरा होने पर दर्शन होता है। पति पर सती का आकर्षण, सन्तान पर माँ का आकर्षण और विषयप्रिय व्यक्ति का सांसारिक विषयों के प्रति आकर्षण—ये तीन आकर्षण यदि एक ही साथ हों तो ईश्वर का दर्शन होता है।"

जयगोपाल विषयप्रिय व्यक्ति हैं, क्या इसीलिए श्रीरामकृष्ण उन्हीं के योग्य ये सब उपदेश दे रहे हैं?

ज्ञान-पथ और विचार-पथ। भक्तियोग और ब्रह्मज्ञान

श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में बैठे हुए हैं। रात के आठ बजे होंगे। आज पूस की शुक्ला पञ्चमी है, बुधवार, २ जनवरी १८८४। कमरे में राखाल और मणि हैं। श्रीरामकृष्ण के साथ रहते मणि का आज इक्कीसवाँ दिन है।

श्रीरामकृष्ण ने मणि को तर्क-विचार करने से मना किया है।

श्रीरामकृष्ण--(राखाल से)--ज्यादा तर्क-विचार करना अच्छा नहीं। पहले ईश्वर है, फिर संसार। उन्हें पा लेने पर उनके संसार के सम्बन्ध में भी ज्ञान हो जाता है।

(मणि और राखाल से) "यदु मल्लिक से बातचीत करने पर उसके कितने मकान हैं, कितने बगीचे हैं, कम्पनी के कागजात कितने हैं--यह सब समझ में आ जाता है।

"इसीलिए तो ऋषियों ने वाल्मीकि को 'मरा-मरा' जपने के लिए उपदेश दिया था। इसका एक विशेष अर्थ है। 'म' का अर्थ है ईश्वर और 'रा' का अर्थ संसार,--पहले ईश्वर, फिर संसार।

"कृष्णकिशोर ने कहा था, 'मरा-मरा' शुद्ध मन्त्र है; क्योंकि वह ऋषि का दिया हुआ है। 'म' अर्थात् ईश्वर और 'रा' अर्थात् संसार।

"इसीलिए वाल्मीकि की तरह पहले सब कुछ छोड़कर निर्जन में व्याकुल हो रो-रोकर ईश्वर को पुकारना चाहिए। पहले आवश्यक है ईश्वर-दर्शन। उसके बाद है तर्क-विचार--शास्त्र और संसार के सम्बन्ध में।

(मणि के प्रति) "इसीलिए तुमसे कहता हूँ, अब और अधिक तर्क-विचार न करना। यही बात कहने के लिए मैं झाऊतल्ले से उठकर आया हूँ। ज्यादा तर्कविचार करने पर अन्त में हानि होती है। अन्त में हाजरा की तरह हो जाओगे। मैं रात में अकेला रास्ते पर रो-रोकर टहलता और कहता था, 'माँ, मेरी विचार-बुद्धि पर वज्रप्रहार कर दो।'

"कहो, अब तो तर्क-विचार न करोगे?"

मणि—जी नहीं ।

श्रीरामकृष्ण—भक्ति से ही सब कुछ प्राप्त होता है । जो लोग ब्रह्मज्ञान चाहते हैं, यदि वे भक्तिमार्ग पकड़े रहें, तो उन्हें ब्रह्मज्ञान भी हो जाता है ।

"उनकी दया रहने पर क्या कभी ज्ञान का अभाव भी होता है ? उस देश में (कामारपुकुर में) धान नापते हैं । जब राशि चुक जाती है, तब एक आदमी और धान ठेल देता है, इस तरह राशि फिर तैयार हो जाती है । माँ ही ज्ञान की राशि पूरी करती जाती हैं ।

"उन्हें प्राप्त कर लेने पर पण्डितगण सब घास-पात की तरह जान पड़ते हैं । पद्मलोचन ने कहा था, तुम्हारे साथ अछूतों के घर की सभा में भी जाऊँगा, इसमें भला हर्ज ही क्या है ?—तुम्हारे साथ चमार के यहाँ भी जाकर मैं भोजन कर सकता हूँ ।

"भक्ति के द्वारा सब मिलते हैं । उन्हें प्यार कर सकने पर फिर किसी चीज का अभाव नहीं रह जाता । (माता भगवती के पास कार्तिकेय और गणेश बैठे हुए थे । उनके गले में मणियों की माला पड़ी थी । माता ने कहा, जो पहले इस ब्रह्माण्ड की परिक्रमा करके आ जायगा, उसी को मैं यह माला दे दूँगी । कार्तिक उसी समय फौरन ही मयूर पर चढ़कर चल दिये । गणेश ने धीरे-धीरे माता की परिक्रमा करके उन्हें प्रणाम किया । गणेश जानते थे, माता के भीतर ही ब्रह्माण्ड है । माँ ने प्रसन्न होकर गणेश को हार पहना दिया । बड़ी देर बाद कार्तिक ने आकर देखा कि उनके दादा हार पहने हुए बैठे हैं ।)

"मैंने माँ से रो-रोकर कहा था, 'माँ ! वेद-वेदान्त में क्या है, मुझे बता दो,—पुराण-तन्त्रों में क्या है, मुझे बता दो ।'

"उन्होंने मुझे सब कुछ बता दिया है—कितनी बातें दिखायी हैं।
"सच्चिदानन्द गुरु को रोज प्रातःकाल पुकारते हो न ?"

मणि—जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण—गुरु कर्णधार हैं। फिर देखा, 'मैं' एक अलग हूँ, 'तुम' एक अलग। फिर कूदा और मछली बन गया। देखा कि सच्चिदानन्द-समुद्र में आनन्दपूर्वक विचर रहा हूँ।

"ये सब बड़ी ही गुह्य कथाएँ हैं। तर्क-विचार करके क्या समझोगे? वे जब दिखा देते हैं, तब सब प्राप्त होता है, किसी वस्तु का अभाव नहीं रहता।"

शुक्रवार, ४ जनवरी १८८४ ई०। दिन के चार बजे के समय श्रीरामकृष्ण पंचवटी में बैठे हैं। मुख पर हँसी है और साथ हैं मणि, हरिपद आदि। हरिपद के साथ स्व० आनन्द चॅटर्जी के बारे में बातें हो रही हैं और घोषपाड़ा के साधन-भजन की बातें।

धीरे-धीरे श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में आकर बैठे हैं। मणि, हरिपद, राखाल आदि भक्तगण भी उनके साथ रहते हैं। मणि अधिक समय बेलतला में रहते हैं।

साधनाकाल में श्रीरामकृष्ण के दर्शन

श्रीरामकृष्ण—एक दिन दिखाया चारों ओर शिव और शक्ति! शिव और शक्ति का रमण! मनुष्यों, जीव-जन्तुओं, वृक्षों और लताओं—सभी में वही शिव और शक्ति—पुरुष और प्रकृति—सर्वत्र इन्हीं का रमण।

"दूसरे दिन दिखाया कि नर-मुण्डों की राशि लगी हुई है!—पर्वताकार—और कहीं कुछ नहीं! उनके बीच में मैं अकेला बैठा हुआ हूँ।

"और एक बार दिखाया, महासमुद्र, मैं नमक का पुतला होकर उसकी थाह लेने जा रहा हूँ! थाह लेते समय श्रीगुरुकृपा से पत्थर बन गया! देखा, एक जहाज आ रहा है, बस चढ़ पड़ा!—श्रीगुरुदेव कर्णधार थे।"

श्रीरामकृष्ण-(मणि के प्रति)-और अधिक विचार न करो। उससे अन्त में हानि होती है। उन्हें बुलाते समय किसी एक भाव का सहारा लेना पड़ता है—सखीभाव, दासीभाव, सन्तानभाव या वीरभाव।

"मेरा सन्तानभाव है। इस भाव को देखने पर मायादेवी रास्ता छोड़ देती हैं—शर्म से!

"वीरभाव बहुत कठिन है। शाक्त तथा वैष्णव बाउलों का है। उस भाव में स्थिर रहना बहुत कठिन है। फिर है—शान्त, दास्य, सख्य, वात्सल्य तथा मधुरभाव। मधुरभाव में—शान्त, दास्य, सख्य और वात्सल्य—सब हैं। (मणि के प्रति) तुम्हें कौन भाव अच्छा लगता है?"

मणि-सभी भाव अच्छे लगते हैं।

श्रीरामकृष्ण-सब भाव सिद्ध स्थिति में अच्छे लगते हैं। उस स्थिति में काम की गन्ध तक नहीं रहती। वैष्णव-शास्त्र में चण्डीदास तथा धोबिन की कथा है—उनके प्रेम में काम की गन्ध तक न थी।

"इस स्थिति में प्रकृतिभाव होता है।

"अपने को पुरुष मानने की बुद्धि नहीं रहती। मीराबाई के स्त्री होने के कारण रूप गोस्वामीजी उनसे मिलना नहीं चाहते थे। मीराबाई ने कहला भेजा, 'श्रीकृष्ण ही एकमात्र पुरुष हैं; वृन्दावन में सभी लोग उस पुरुष की दासियाँ हैं।' क्या गोस्वामीजी

को पुरुषत्व का अभिमान करना उचित था ?"

सायंकाल के बाद मणि फिर श्रीरामकृष्ण के चरणों के पास बैठे हैं। समाचार आया है कि श्री केशव सेन की अस्वस्थता बढ़ गयी है। उन्हीं के सम्बन्ध में वार्तालाप के सिलसिले में ब्राह्म समाज की बातें हो रही हैं।

श्रीरामकृष्ण–(मणि के प्रति)–हाँ जी, उनके यहाँ क्या केवल व्याख्यान ही होते हैं, या ध्यान भी ? वे अपनी प्रार्थना को शायद कहते हैं 'उपासना'।

"केशव ने पहले ईसाई धर्म, ईसाई मत का बहुत चिन्तन किया था—उस समय तथा उससे पूर्व वे देवेन्द्र ठाकुर के यहाँ थे।"

मणि–केशव बाबू यदि पहले-पहल यहाँ आये होते, तो समाज-संस्कार पर माथापच्ची न करते। जातिभेद को उठा देना, विधवा विवाह, असवर्ण विवाह, स्त्री-शिक्षा आदि सामाजिक कामों में उतने व्यस्त न होते।

श्रीरामकृष्ण–केशव अब काली मानते हैं—चिन्मयी काली—आद्याशक्ति। और माँ माँ कहकर उनके नामगुणों का कीर्तन करते हैं। अच्छा, क्या ब्राह्म समाज बाद में सिर्फ सामाजिक संस्कार की ही एक संस्था बन जायगा ?

मणि–इस देश की जमीन वैसी नहीं है। जो ठीक है वही यहाँ पर जड़ पा सकेगा।

श्रीरामकृष्ण–हाँ, सनातन धर्म, ऋषिलोग जो कुछ कह गये हैं वही रह जायगा। तथापि ब्राह्म समाज और उसी प्रकार के सम्प्रदाय भी कुछ-कुछ रहेंगे। सभी ईश्वर की इच्छा से हो रहे हैं, जा रहे हैं।

दोपहर के बाद कलकत्ते से कुछ भक्त आये हैं। उन्होंने

श्रीरामकृष्ण को अनेक गीत सुनाये थे। उनमें से एक गीत का भावार्थ यह है—'माँ, तुमने हमारे मुँह में लाल चुसनी देकर भुला रखा है; हम जब चुसनी फेंककर चिल्लाकर रोयेंगे तब तुम हमारे पास अवश्य ही दौड़कर आओगी।'

श्रीरामकृष्ण–(मणि के प्रति)–उन्होंने लाल चुसनी का नया ही गाना गाया।

मणि–जी, आपने केशव सेन से इस लाल चुसनी की बात कही थी।

श्रीरामकृष्ण–हाँ, और चिदाकाश की बात—और भी कई बातें हुआ करती थीं—और बड़ा आनन्द होता था। गाना—नृत्य सब होता था।

परिच्छेद २

मणि के प्रति उपदेश

(१)

कामिनी-काञ्चन-त्याग

श्रीरामकृष्ण दोपहर का भोजन कर चुके हैं। एक बजे का समय होगा। शनिवार, ५ जनवरी १८८४ ई०। मणि को श्रीरामकृष्ण के साथ रहते हुए आज २३वाँ दिन है।

मणि भोजन करके नौबतखाने में थे, वहीं से किसी को नाम लेकर पुकारते हुए सुना। बाहर आकर उन्होंने देखा कि घर के उत्तरवाले लम्बे बरामदे से श्रीरामकृष्ण स्वयं उन्हें पुकार रहे थे। मणि ने आकर उन्हें प्रणाम किया।

दक्षिण के बरामदे में श्रीरामकृष्ण मणि से वार्तालाप कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—तुम लोग किस तरह ध्यान करते हो?—मैं तो बेल के नीचे कितने ही रूप साफ साफ देखता था। एक दिन देखा, सामने रुपये, दुशाला, एक थाल, सन्देश और दो औरतें! तब मैंने मन से पूछा, मन! तू इनमें से कुछ चाहता है?—फिर सन्देशों को देखा, विष्ठा है! औरतों में एक बुलाक पहने हुए थी। उनका भीतर बाहर सब मुझे दीख पड़ता था—आँतें-मल-मूत्र-हाड़-मांस-खून! मन ने कुछ न चाहा।

"मन उन्हीं के पाद-पद्मों में लगा रहा। निक्ती (काँटेवाला तराजू) के नीचे भी काँटा होता है और ऊपर भी। मन नीचेवाला

काँटा है। मुझे सदा ही भय लगा रहता था कि कहीं ऐसा न हो कि ऊपरवाले काँटे से (ईश्वर से) मन विमुख हो जाय। तिस पर एक आदमी सदा ही हाथ में त्रिशूल लिये मेरे पास बैठा रहता था। उसने डराया, कहा, नीचेवाला काँटा ऊपरवाले काँटे से इधर-उधर झुका नहीं कि यही त्रिशूल भोंक दूँगा।

"बात यह है कि कामिनी-कांचन का त्याग हुए बिना कुछ होने का नहीं। मैंने तीन त्याग किये थे—ज़मीन, जोरू और रुपया। भगवान रघुवीर के नाम की जमीन रजिस्ट्री कराने के लिए मुझे उस देश में (कामारपुकुर में) जाना पड़ा था। मुझसे दस्तखत करने के लिए कहा गया। मैंने दस्तखत नहीं किये। मुझे यह ख्याल था ही नहीं कि यह मेरी जमीन है। रजिस्ट्री आफिसवालों ने केशव सेन का गुरु समझकर मेरा खूब आदर किया था। आम ला दिये, परन्तु घर ले जाने का अख्तियार था ही नहीं, क्योंकि संन्यासी को सचय नहीं करना चाहिए।

"त्याग के बिना कोई कैसे उन्हें पा सकता है? अगर एक वस्तु के ऊपर दूसरी वस्तु रखी हो, तो पहली वस्तु को बिना हटाये दूसरी वस्तु कैसे मिल सकती है?

"निष्काम होकर उन्हें पुकारना चाहिए। परन्तु सकाम भजन करते करते भी निष्काम भजन होता है। ध्रुव ने राज्य के लिए तपस्या की थी, परन्तु उन्होंने ईश्वर को प्राप्त किया था। उन्होंने कहा था, अगर कोई काँच के लिए आकर कांचन पा जाय तो उसे क्यों छोड़े?

दया-दान आदि और श्रीरामकृष्ण। श्रीचैतन्य देव का दान

"सत्त्वगुण के पाने पर मनुष्य ईश्वर को पाता है। संसारी

उनके मत्थे मढ़कर फिर तो मनुष्य खूब पाप कर सकता है, तो यह ठीक न होगा; क्योंकि जिसने यह समझा है कि ईश्वर ही कर्ता है और जीव अकर्ता, उसका पैर कभी बेताल नहीं पड़ सकता।

"इग्लिशमैन जिसे स्वाधीन इच्छा (Free Will) कहते हैं, वह उन्होंने दे रखी है।

"जिन लोगों ने उन्हें नहीं पाया, उनमें अगर इस स्वाधीन इच्छा का बोध न होता तो उनसे पाप की वृद्धि हो सकती थी। 'अपने दोषों से मैं पाप कर रहा हूँ'—यह ज्ञान अगर उन्होंने न दिया होता तो पाप की और भी वृद्धि होती।

"जिन्होंने उन्हें पा लिया है, वे जानते हैं स्वाधीन इच्छा नाममात्र की है। वास्तव में वे ही यन्त्री है, मैं केवल यन्त्र हूँ; वे इंजिनियर हैं, मैं गाड़ी!"

(२)

दिन का पिछला पहर है। चार बजे का समय होगा। पंचवटी-वाले कमरे में श्रीयुत राखाल तथा और भी दो-एक भक्त मणि का कीर्तन सुन रहे हैं।

गाना सुनकर राखाल को भावावेश हो गया है।

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण पंचवटी में आये। उनके साथ बाबूराम और हरीश हैं।

राखाल—इन्होंने कीर्तन सुनाकर हम लोगों को खूब प्रसन्न किया।

श्रीरामकृष्ण भावावेश में गा रहे हैं—'ऐ सखि, कृष्ण का नाम सुनकर मेरे जी में जी आ गया।' श्रीरामकृष्ण ने कहा, यही सब गाना चाहिए—'सब सखि मिलि बैठल।' फिर कहा—बात यही है कि भक्ति और भक्तों को लेकर रहना चाहिए।

मनुष्यों के दानादि कर्म प्रायः सकाम ही होते हैं। यह अच्छा नहीं। निष्काम कर्म करना ही अच्छा है। परन्तु निष्काम भाव से करना है बड़ा कठिन।

"ईश्वर से भेंट होने पर क्या उनसे यह प्रार्थना करोगे कि मैं कुछ तालाब खुदवाऊँगा? या रास्ता, घाट, दवाखाना और अस्पताल बनवाऊँगा? क्या उनसे कहोगे, हे ईश्वर, मुझे ऐसा वर दीजिये कि मैं यही सब करूँ? उनका दर्शन होने पर ये सब वासनाएँ एक ओर पड़ी रहती हैं।

"परन्तु इसलिए क्या दया और दान के कर्म ही न करना चाहिए?

"नहीं, यह बात नहीं। आँखों के आगे दुःख और विपत्ति देखकर धन के रहते सहायता अवश्य करनी चाहिए। ऐसे समय ज्ञानी कहता है, 'दे, इसे कुछ दे।' परन्तु भीतर ही भीतर 'मैं *क्या कर सकता हूँ—कर्ता ईश्वर ही हैं, अन्य सब अकर्ता हैं'*—ऐसा बोध उसे होता रहता है।

"महापुरुषगण जीवों के दुःख से दुःखी होकर उन्हें ईश्वर का मार्ग बतला जाते हैं। शंकराचार्य ने जीवों की शिक्षा के लिए 'विद्या का अहं' रखा था।

"अन्नदान की अपेक्षा ज्ञानदान और भक्तिदान अधिक ऊँचा है। चैतन्यदेव ने इसीलिए चाण्डालों तक में भक्ति का वितरण किया था। देह का सुख और दुःख तो लगा ही है। यहाँ आम खाने के लिए आये हो, आम खा जाओ। आवश्यकता ज्ञान और भक्ति की है। ईश्वर ही वस्तु है, और सब अवस्तु।

क्या स्वाधीन इच्छा (Free Will) है? श्रीरामकृष्ण का सिद्धान्त

"सब कुछ वे ही कर रहे हैं। अगर यह कहो कि सब कुछ

"श्रीकृष्ण के मथुरा जाने पर यशोदा राधिका के पास गयी थीं। राधिका उस समय ध्यान में थी। फिर उन्होंने यशोदा से कहा, मैं आदिशक्ति हूँ। तुम मुझसे वरयाचना करो। यशोदा ने कहा—वर और क्या दोगी,—यही कहो जिससे मन, वचन और कर्मों से उनकी सेवा कर सकूँ—इन्हीं आँखों से उनके भक्तों के दर्शन हों—इस मन से उनका ध्यान और उनका चिन्तन हो और वाणी से उनके नाम और गुणों का कीर्तन हो।

"परन्तु जिनकी भक्ति दृढ़ हो गयी है, उनके लिए भक्तों का संग न होने पर भी कुछ हर्ज नहीं है। कभी कभी तो भक्तों से विरक्ति भी हो जाती है। बहुत चिकनी दीवाल पर से चूना-कारी धस जाती है। अर्थात् वे जिनके अन्तर-बाहर सर्वत्र हैं, उन्हीं की यह अवस्था है।"

श्रीरामकृष्ण झाऊतल्ले से लौटकर पंचवटी के नीचे मणि से फिर कह रहे हैं-"तुम्हारी आवाज स्त्रियों जैसी है। तुम इस तरह के गानों का अभ्यास कर सकते हो?—(भावार्थ) सखि, वह वन कितनी दूर है जहाँ मेरे श्यामसुन्दर हैं?

(बाबूराम की ओर देखकर मणि से) "देखो, जो अपने आदमी हैं, वे पराये हो जाते हैं,—रामलाल तथा और सब लोग अब जैसे कोई दूसरे हों। फिर जो लोग दूसरे हैं, वे अपने हो जाते हैं। देखो न, बाबूराम से कहता हूँ, जगल जा, हाथ-मुँह धो। अब तो भक्त ही अपने आत्मीय हैं।"

मणि-जी हाँ।

चित्‌शक्ति और चिदात्मा

श्रीरामकृष्ण-(पंचवटी की ओर देखकर)-इस पंचवटी में

में बैठना था—ऐसा भी समय आया कि मुझे उन्माद हो गया! वह समय भी बीत गया! काल ही ब्रह्म है। जो काल के साथ रमण करती है, वही काली है—आद्याशक्ति अटल को टाल देती है।

यह कहकर श्रीरामकृष्ण गाने लगे।

(भावार्थ) 'तुम्हारा भाव क्या है, यह सोचते हुए यहाँ तो प्राण ही निकलने पर आ गये! जिनके नाम से काल भी दूर हट जाता है, जिनके पैरों के नीचे महाकाल पड़े हुए हैं, उनका स्वरूप काला क्यों हुआ?'

श्रीरामकृष्ण-आज शनिवार है, आज काली मन्दिर जाना।

बकुल के पेड़ के नीचे आकर श्रीरामकृष्ण मणि से कह रहे हैं— "चिदात्मा और चित्-शक्ति। चिदात्मा पुरुष हैं और चित्-शक्ति प्रकृति। चिदात्मा श्रीकृष्ण हैं और चित्-शक्ति श्रीराधा। भक्तगण उसी चित्-शक्ति के एक-एक स्वरूप हैं। वे सखी-भाव या दास-भाव को लेकर रहेंगे। यही असली बात है।"

सन्ध्या हो जाने पर श्रीरामकृष्ण काली-मन्दिर गये। मणि माता का स्मरण कर रहे हैं, यह देखकर श्रीरामकृष्ण प्रसन्न हुए।

सब देवालयों में आरती हो गयी। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में तख्त पर बैठे हुए माता का स्मरण कर रहे हैं। जमीन पर सिर्फ मणि बैठे हैं। श्रीरामकृष्ण समाधिस्थ हो गये हैं।

कुछ देर बाद वे समाधि से उतरने लगे; परन्तु फिर भी अभी भाव पूर्ण मात्रा में है। श्रीरामकृष्ण माँ से बातचीत कर रहे हैं, जैसे छोटा बच्चा माँ से दुलार करते हुए बातचीत करता है। माँ से करुण स्वर में कह रहे हैं—"माँ, क्यों तूने वह रूप नहीं दिखाया—वही भुवन-मोहन रूप! कितना मैंने तुझसे कहा। परन्तु

कहने से तू सुनेगी काहे को ?—तू इच्छामयी जो है ।"

श्रीरामकृष्ण ने माँ से ऐसे स्वर में ये बातें कहीं कि जिसे सुनकर पत्थर भी पिघलकर पानी हो जाय !

श्रीरामकृष्ण फिर माँ से बातचीत कर रहे हैं—

"माँ ! विश्वास चाहिए ! यह साला तर्क-विचार दूर हो जाय !—उसका भरोसा क्या ? वह तो जरा-सी बात से बदल जाता है ! विश्वास चाहिए—गुरुवाक्य में विश्वास—बालक जैसा विश्वास !—माँ ने कहा, वहाँ भूत है—तो उसने ठीक समझ रखा है कि वहाँ भूत है ! माँ ने कहा, वहाँ हौआ है ! तो उसीको उसने ठीक समझ रखा है । माँ ने कहा, वह तेरा दादा है, तो समझ लिया कि बस सोलहों आने दादा है ! विश्वास चाहिए !

"परन्तु माँ उन्हीं का क्या दोष है ! वे क्या करेंगे ! विचार एक बार तो कर लेना चाहिए ! देखो न, अभी उस दिन इतना समझाकर कहा, परन्तु कुछ न हुआ—आज बिलकुल . . ."

श्रीरामकृष्ण माँ के पास करुणापूर्ण गद्गद स्वर से रोते हुए प्रार्थना कर रहे हैं । क्या आश्चर्य है ! भक्तों के लिए माँ के पास रो रहे हैं—"माँ, तुम्हारे पास जो लोग आते हैं उनका मनोरथ पूर्ण करो ।—सब त्याग न करना, माँ ! अच्छा, अन्त में जैसा तुम्हें समझ पड़े करना !

"माँ, संसार में अगर रखना तो एक एक बार दर्शन देना ! नहीं तो कैसे रहेंगे ? एक एक बार दर्शन दिये बिना उत्साह कैसे होगा, माँ !—इसके बाद अन्त में चाहे जो करना ।"

श्रीरामकृष्ण अब भी भावावेश में हैं । इसी अवस्था में एकाएक मणि से कह रहे हैं—"देखो तुमने जो कुछ विचार किया वह बहुत हो गया है । अब बस करो । कहो, अब तो विचार नहीं

करोगे ?"

मणि हाथ जोड़कर कह रहे है "जी नही, अब नहीं करूँगा।"

श्रीरामकृष्ण–बहुत हो चुका! —तुम्हारे आते ही तो मैंने तुम्हें बतला दिया था— तुम्हारा आध्यात्मिक ध्येय। मै यह सब तो जानता हूँ।

मणि–(हाथ जोड़कर)–जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण–तुम्हारा ध्येय, तुम कौन हो, तुम्हारा अन्दर और बाहर, तुम्हारी पहले की बातें, आगे तुम्हारा क्या होगा यह सब मैं तो जानता हूँ।

मणि–(हाथ जोड़े हुए)–जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण–तुम्हारे लड़के हुए हैं, सुनकर तुम्हे फटकारा था—अब जाकर घर मे रहो—उन्हे दिखाना कि तुम उनके अपने आदमी हो, परन्तु भीतर से समझे रहना, तुम भी उनके अपने नही हो और वे भी तुम्हारे अपने नही।

मणि चुपचाप बैठे हैं। श्रीरामकृष्ण फिर कहने लगे–

"अपने पिता को सन्तुष्ट रखना। अब उड़ना सीखा है तो भी उनमें प्रेम रखना। तुम अपने पिता को साष्टांग प्रणाम कर सकोगे न ?

मणि–(हाथ जोड़े हुए)–जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण–तुम्हें और क्या कहूँ, तुम तो सब जानते हो —सब समझ गये हो। (मणि चुपचाप बैठे हैं।)

श्रीरामकृष्ण–सब समझ गये हो न ?

मणि–जी हाँ, कुछ कुछ समझा हूँ।

श्रीरामकृष्ण–नहीं, तुम्हारी समझ में बहुत कुछ आता है। राखाल यहाँ है, इससे उसके पिता को सन्तोष है।

मणि हाथ जोड़े चुपचाप बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हैं—तुम जो कुछ सोच रहे हो, वह भी हो जायगा।

श्रीरामकृष्ण अब अपनी साधारण दशा में आ गये हैं। कमरे में राखाल और रामलाल बैठे हैं। रामलाल से उन्होंने गाने के लिए कहा। रामलाल ने दो गाने गाये।

श्रीरामकृष्ण—माँ और जननी। जो संसार के रूप में सर्व-व्यापिनी हैं वे माँ हैं, और जो जन्मस्थान हैं वे जननी। माँ कहते ही मुझे समाधि हो जाती थी।—माँ कहते हुए मानो जगज्जननी को आकर्षित कर लेता था! जैसे धीवर जाल फेंकते हैं, फिर बड़ी देर बाद जाल खींचते रहते हैं। फिर उसमें बड़ी-बड़ी मछलियाँ आ जाती हैं।

गौरी पण्डित का कथन। काली और श्रीगौरांग एक हैं

"गौरी ने कहा था, काली और श्रीगौरांग को एक समझने पर ज्ञान पक्का होगा। जो ब्रह्म हैं, वही शक्ति काली हैं, वही नर के स्वरूप में श्रीगौरांग हैं।"

श्रीरामकृष्ण की आज्ञा पाकर रामलाल ने फिर गाना शुरू किया। गाना समाप्त होने पर श्रीरामकृष्ण ने मणि से कहा—"जो नित्य हैं, उन्हीं की लीला है—भक्तों के लिए। उन्हें जब नररूप में देख लेंगे तभी तो भक्त उन्हें प्यार कर सकेंगे? तभी तो उन्हें भाई, बहन, माँ, बाप और सन्तान की तरह प्यार कर सकेंगे? वे भक्तों की प्रीति के कारण छोटे होकर लीला करने के लिए आते हैं।"

परिच्छेद ३

ईश्वर-दर्शन के लिए व्याकुलता

(१)

दक्षिणेश्वर में राखाल, लाटू, मास्टर, महिमा आदि के साथ

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर-मन्दिर में अपने उसी कमरे में हैं। दिन के तीन बजे होंगे। आज शनिवार है, ता. २ फरवरी १८८४।

एक दिन श्रीरामकृष्ण भावावेश में झाऊतल्ले की ओर जा रहे थे। साथ में किसी के न रहने के कारण रेलिंग के पास गिर गये। इससे उनके बायें हाथकी हड्डी हट गयी और गहरी चोट आ गयी। मास्टर कलकत्ते से चोट में बाँधने का सामान लेने गये हैं।

श्रीयुत राखाल, महिमाचरण, हाजरा आदि भक्त कमरे में बैठे हैं। मास्टर ने आकर भूमिष्ठ हो श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण–क्यों जी, तुम्हें कौनसी बीमारी हुई थी? अब तो अच्छे हो न?

मास्टर–जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण–(महिमाचरण से)–क्यों जी, यहाँ का भाव है, 'तुम यन्त्री हो–मैं यन्त्र हूँ।' फिर भी इस तरह क्यों हुआ?

श्रीरामकृष्ण खाट पर बैठे हैं। महिमाचरण अपने तीर्थ-दर्शन की बातें कह रहे हैं। श्रीरामकृष्ण सुन रहे हैं। बारह वर्ष पहले का तीर्थ-दर्शन।

महिमाचरण–काशी, सिकरौल में एक बगीचे में मैंने एक ब्रह्मचारी देखा। उसने कहा, इस बगीचे में मैं बीस साल से हूँ।

परन्तु किसका बगीचा है, वह नहीं जानता था। मुझसे पूछा, क्यों बाबू, नौकरी करते हो ? मैंने कहा—नहीं। तब उसने कहा, तो क्या परिव्राजक हो ?

"नर्मदा-तट पर एक साधु देखा था। अन्तर में गायत्री का जप कर रहे थे, शरीर पुलकायमान हो रहा था। और वे इस तरह प्रणव और गायत्री का उच्चारण कर रहे थे कि सुननेवालों को भी रोमांच हो रहा था।"

श्रीरामकृष्ण का बालकों का सा स्वभाव है—भूख लगी है; मास्टर से कह रहे हैं, "क्यों कुछ लाये हो ?" राखाल को देखकर श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये।

समाधि छूट रही है। प्रकृतिस्थ होने के लिए श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं—'मैं जलेबी खाऊँगा', 'मैं जल पिऊँगा।'

बालस्वभाव श्रीरामकृष्ण जगन्माता से रोकर कह रहे हैं—'ब्रह्ममयी ! मुझे ऐसा क्यों कर दिया ? मेरे हाथ में बड़ा दर्द हो रहा है !' (राखाल, महिमाचरण, हाजरा आदि के प्रति)—'मेरा दर्द अच्छा हो जायगा ?' भक्तगण, छोटे लड़के को जिस तरह लोग समझाते हैं, उसी तरह कहने लगे—'अच्छा क्यों न होगा ?'

श्रीरामकृष्ण—(राखाल से)—यद्यपि तू शरीर-रक्षा के लिए है, तथापि तेरा दोष नहीं, क्योंकि तू रहने पर भी रेलिंग तक तो जाता नहीं।

श्रीरामकृष्ण फिर भावाविष्ट हो गये। भावावेश में ही कह रहे हैं—'ॐ, ॐ, ॐ,—माँ, मैं क्या कह रहा हूँ ! माँ, मुझे ब्रह्मज्ञान देकर बेहोश न करना। मैं तेरा बच्चा जो हूँ ! —डरता हूँ—मुझे माँ चाहिए।—ब्रह्मज्ञान को मेरा कोटि कोटि नमस्कार !

वह जिसे देना हो उसे दो। आनन्दमयी! — आनन्दमयी!'

श्रीरामकृष्ण उच्च स्वर से आनन्दमयी, आनन्दमयी कहकर रो रहे हैं और कह रहे हैं—'इसीलिए तो मुझे दुःख है कि तुम जैसी माँ के रहते, मेरे जागते, घर में चोरी हो जाय।'

श्रीरामकृष्ण फिर माँ से कह रहे हैं—'माँ, मैंने क्या अन्याय किया है? — क्या मैं कुछ करता हूँ, माँ! तू ही तो सब कुछ करती है। मैं यन्त्र हूँ, तू यन्त्री। (राखाल के प्रति हँसते हुए) देखना, तू कहीं गिर न जाना, अभिमानवश स्वयं को कहीं ठगना नहीं।'

श्रीरामकृष्ण माँ से फिर कह रहे हैं—"माँ, चोट लग जाने से मैं रोता हूँ? — नहीं। मैं तो इसलिए रोता हूँ कि 'तुम जैसी माँ के रहते, मेरे जागते, घर में चोरी हो।'"

(२)

ईश्वर को किस प्रकार पुकारना चाहिए। व्याकुल होओ

श्रीरामकृष्ण बच्चे की तरह फिर हँस रहे हैं और बातचीत कर रहे हैं—जैसे बालक ज्यादा बीमार पड़ने पर भी कभी कभी हँसी-खेल की ओर चला जाता है। श्रीरामकृष्ण महिमा आदि भक्तों से बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—सच्चिदानन्द को प्राप्त नहीं किया तो कुछ न हुआ, भाई।

"विवेक और वैराग्य के सदृश और दूसरी चीज नहीं है।

"संसारियों का अनुराग क्षणिक है। तभी तक है जब तक तपे हुए तवे पर पानी रहता है।"—कभी शायद एक फूल को देखकर कह दिया—अहा! ईश्वर की कैसी विचित्र सृष्टि है!

"व्याकुलता चाहिए। जब लड़का सम्पत्ति का अपना हिस्सा अलग कर देने के लिए अपने माँ-बाप को परेशान करने लगता है तब माँ-बाप दोनों आपस में सलाह करके लड़के का हिस्सा तुरन्त दे देते हैं। व्याकुल होने से ईश्वर जरूर सुनेंगे। जब उन्होंने हमें पैदा किया है, तब सम्पत्ति में हमारा भी हिस्सा है। वे अपने बाप, अपनी माँ हैं—उन पर अपना जोर चल सकता है। हम उनसे कह सकते हैं, 'मुझे दर्शन दो, नहीं तो गले में छुरी मार लूँगा।'"

किस तरह माँ को पुकारना चाहिए, श्रीरामकृष्ण बतला रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—मैं माँ को इस तरह पुकारता था—माँ आनन्दमयी, तुम्हें दर्शन देना होगा।

"फिर कभी कहता था—हे दीनानाथ! जगन्नाथ! मैं जगत् से अलग थोड़े ही हूँ? मैं ज्ञानहीन हूँ, भक्तिहीन हूँ, साधनहीन हूँ, मैं कुछ भी नहीं जानता —कृपा करके दर्शन देना होगा।"

श्रीरामकृष्ण अत्यन्त करुण स्वर में गाने के ढंग पर बतला रहे हैं, किस तरह उन्हें पुकारना चाहिए। वह करुण स्वर सुनकर भक्तों का हृदय द्रवीभूत हो रहा है, महिमाचरण की आँखों से धारा बह रही है।

महिमाचरण को देखकर श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हैं—

"मन! जिस तरह पुकारना चाहिए, उसी तरह तुम पुकारो तो सही, फिर देखो, कैसे श्यामा रह सकती हैं!"

(३)

सदसद्-विचार

कुछ भक्त शिवपुर से आये हैं। वे लोग इतनी दूर से कष्ट

उठाकर आये हैं, श्रीरामकृष्ण और अधिक चुप न रह सके। चुनी हुई बातें उनसे कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण–(शिवपुर के भक्तों से)–ईश्वर ही सत्य है, और सब अनित्य। बाबू और बगीचा। ईश्वर और उनका ऐश्वर्य। लोग बगीचा ही देख लेते है, पर बाबू को कितने लोग देखना चाहते हैं?

भक्त–अच्छा, फिर उपाय क्या है?

श्रीरामकृष्ण–सदसद्-विचार। वे ही सत्य हैं और सब अनित्य, इसका सर्वदा विचार करना, और व्याकुल होकर उन्हें पुकारना।

भक्त–जी, समय कहाँ है?

श्रीरामकृष्ण–जिन्हे समय है वे ध्यान-भजन करेंगे।

"जो लोग बिलकुल कुछ न कर सके वे दोनों समय भक्ति-पूर्वक दो बार प्रणाम करें। वे भी तो अन्तर्यामी है, वे समझते हैं कि ये क्या करते है। तुम्हे कितने ही काम हैं। तुम्हें पुकारने का समय नहीं, तो उन्हे आममुख्तारी दे दो, परन्तु अगर उन्हे पा न सके, उनके दर्शन न कर सके, तो कुछ न हुआ।"

एक भक्त–आपको देखना और ईश्वर को देखना बराबर है।

श्रीरामकृष्ण–यह बात अब फिर न कहो। गंगा की ही तरंग है, परन्तु तरंगों की गंगा नहीं। मैं इतना बड़ा आदमी हूँ, मैं अमुक हूँ–यह सब अहंकार बिना गये उन्हें कोई पा नहीं सकता। 'मैं' रूपी मेड़ को भक्ति के आँसुओं से भिगोकर बराबर जमीन बना दो।

संसार क्यों है? भोग के अन्त में व्याकुलता तथा ईश्वरलाभ

भक्त–संसार में क्यों उन्होंने रखा है?

श्रीरामकृष्ण—सृष्टि के लिए रखा है, उनकी इच्छा। उनकी माया। कामिनी-कांचन देकर उन्होंने रखा है।

भक्त—क्यों भुलाकर रखा है ? क्या उनकी यह इच्छा है ?

श्रीरामकृष्ण—वे अगर ईश्वरीय आनन्द एक बार दे दे तो फिर कोई संसार मे ही न रहे—फिर सृष्टि ही न चले।

"चावल की आढ़त में बडी बडी गोदामो में चावल रहता है। चावल का पता कही चूहों को न लग जाय इस डर से दूकानदार गोदाम के सामने एक ओर गुड़ मिलाकर लावे (खीलें) रख देता है। मीठा लगने से चूहे रात भर वही खाते रहते हैं। चावल की खोज के लिए उतावले होते ही नही।

"परन्तु देखो, सेर भर चावल के १४ सेर लावे होते है। कामिनी-कांचन के आनन्द से ईश्वर का आनन्द कितना अधिक है! उनके स्वरूप का चिन्तन करने से रम्भा और तिलोत्तमा का रूप चिता की भस्म के समान जान पड़ता है।"

भक्त—उन्हे पाने के लिए व्याकुलता क्यों नही होती ?

श्रीरामकृष्ण—भोग का अन्त हुए विना व्याकुलता नही होती। कामिनी-कांचन की भोग-वासना जितनी है, उनकी तृप्ति हुए विना जगन्माता की याद नहीं आती। बच्चा जब खेल में लगा रहता है तब वह माँ को नही चाहता। खेल समाप्त हो जाने पर वह कहता है—अम्मा के पास जाऊँगा। हृदय का लड़का कबूतर लेकर खेल रहा था, 'आ-ती-ती' करके कबूतर को बुला रहा था। जब उसे खेल से तृप्ति हो गयी तब उसने रोना शुरू कर दिया। तब एक बिना पहचान के आदमी ने आकर कहा—'आ, तुझे तेरी माँ के पास ले चलूँ।' वह उसी के कन्धे पर चढ़कर चला गया, अनायास ही।

"जो नित्य-सिद्ध है, उन्हे संसार में नही घुसना पड़ता। जन्म से ही उनकी भोग-वासना मिट गयी है।"

पांच बजे का समय है। मधु डाक्टर आये हैं। श्रीरामकृष्ण के हाथ में पटरियां बांधेगे। श्रीरामकृष्ण बालक की तरह हँस रहे है और कहते हैं, ऐहिक और पारत्रिक के मधुसूदन !

मधु–(सहास्य)–केवल नाम का बोझ ढो रहा हूँ।

श्रीरामकृष्ण–(सहास्य)–कोई नाम कम थोड़े ही है ? उनमे और उनके नाम मे कोई भेद नही है। सत्यभामा जब तुला पर स्वर्ण, मणि और मुक्ताएँ रखकर श्रीकृष्ण को तौल रही थी तब वजन पूरा न हुआ। जब रुक्मिणी ने तुलसी पर कृष्ण-नाम लिखकर एक ओर रख दिया तब वजन पूरा उतरा।

अब डाक्टर पटरियां बाँधेगे, जमीन पर बिस्तरा लगाया गया, श्रीरामकृष्ण हँसते हुए बिस्तरे पर आकर लेटे गाने के ढंग से कह रहे है—"राधिका की यह दशम दशा है। वृन्दा कहती है, अभी न जाने क्या क्या होगा।"

चारो ओर भक्तगण बैठे है। श्रीरामकृष्ण फिर गा रहे है— 'सब सखि मिलि बैठल शरोवर-कूले।' श्रीरामकृष्ण भी हँस रहे है और भक्तगण भी हँस रहे है। बैंडेज बाँधना समाप्त हो जाने पर श्रीरामकृष्ण कह रहे है—

"कलकत्ते के डाक्टरो पर मेरा उतना विश्वास नहीं होता। शम्भू को विकार की अवस्था थी, डाक्टर (सर्वाधिकारी) कहता था, यह कुछ नही है; दवा का नशा है। उसके बाद ही शम्भू की देह छूट गयी।"

(४)

मुख्य बात—अहैतुकी भक्ति। अपने स्वरूप को जानो

सन्ध्या के पश्चात् श्रीमन्दिर में आरती हो गयी। कुछ देर बाद कलकत्ते से अधर आये। भूमिष्ठ हो उन्होंने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। कमरे में महिमाचरण, राखाल और मास्टर हैं। हाजरा महाशय भी बीच-बीच में आते हैं।

अधर-आप कैसे हैं ?

श्रीरामकृष्ण-(स्नेह-भरे शब्दों में)-यह देखो, हाथ में लगकर क्या हुआ है। (सहास्य) हूँ और कैसे !

अधर जमीन पर भक्तों के साथ बैठे हैं। श्रीरामकृष्ण उनसे कह रहे हैं—"तुम एक बार इस पर हाथ तो फेर दो।"

अधर छोटी खाट की उत्तर ओर बैठकर श्रीरामकृष्ण की चरण-सेवा कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण फिर महिमाचरण से बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण-(महिमा के प्रति)-अहैतुकी भक्ति—तुम इसे अगर साध्य कर सको तो अच्छा हो।

"'मुक्ति, मान, रुपया, रोग अच्छा होना, कुछ नहीं चाहता, —मैं बस तुम्हें ही चाहता हूँ!' इसे अहैतुकी भक्ति कहते हैं। बाबू के पास कितने ही लोग आते हैं—अनेक कामनाएँ करते हैं, परन्तु यदि कोई ऐसा आदमी आता है जो कुछ नहीं चाहता, और केवल प्यार करने के लिए ही बाबू के पास आता है तो बाबू भी उसे प्यार करते हैं।

"प्रह्लाद की भक्ति अहैतुकी है। ईश्वर पर उनका शुद्ध और निष्काम प्यार है।"

महिमाचरण चुपचाप सुन रहे हैं। श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हैं

"अच्छा, तुम्हारा भाव जैसा है उसी तरह की बातें कहता हूँ, सुनो—

(महिमा के प्रति) "वेदान्त के मत से अपने स्वरूप को पहचानना चाहिए, परन्तु अहं का बिना त्याग किये नहीं होता। अहं एक लाठी की तरह है—मानो पानी को इसने दो भागों में अलग कर रखा है। 'मैं' अलग और 'तुम' अलग।

"समाधि की अवस्था में इस अहं के चले जाने पर ब्रह्म की साक्षात् अनुभूति होती है।

"मैं महिमाचरण चक्रवर्ती हूँ, मैं विद्वान हूँ, इसी 'मैं' का त्याग करना होगा। विद्या के 'मैं' में दोष नहीं है। शंकराचार्य ने लोगों को शिक्षा देने के लिए विद्या का 'मैं' रखा था।

"स्त्रियों के सम्बन्ध में खूब सावधान रहे बिना ब्रह्मज्ञान नहीं होता; इसीलिए गृहस्थी में उसकी प्राप्ति कठिन बात है। चाहे जितने बुद्धिमान बनो न बनो, काजल की कोठरी में रहने से स्याही जरूर लग जायगी। युवतियों के साथ निष्काम मन में भी कामना की उत्पत्ति हो सकती है।

"परन्तु जो ज्ञान के पथ पर है उसके लिए अपनी पत्नी के साथ भोग कर लेना इतने दोष की बात नहीं—जैसे मल और मूत्र त्याग; वैसे ही यह भी—और जैसे शौच की बाद में हमें याद भी नहीं रहती।

"छेने की मिठाई कभी खा ही ली!" महिमाचरण हँसते हैं।

संन्यासियों के कठिन नियम और श्रीरामकृष्ण

"संसारियों के लिए भोग इतने दोष की बात नहीं।

"पर सन्यासी के लिए इसमें बड़ा दोष है। सन्यासी को

स्त्रियों का चित्र भी न देखना चाहिए। संन्यासी के लिए स्त्री-प्रसंग, थूककर चाटने के बराबर है।

"स्त्रियों के बीच में बैठकर संन्यासी को बातचीत न करनी चाहिए। चाहे स्त्री भक्त ही क्यों न हो, जितेन्द्रिय होने पर भी वार्तालाप न करना चाहिए।

"संन्यासी कामिनी-कांचन दोनों का त्याग करें—जैसे स्त्रियों का चित्र उन्हें न देखना चाहिए वैसे ही कांचन-रुपया भी न छूना चाहिए। रुपया पास रहने से भी बुराई है। हिसाब किताब, दुश्चिन्ता, रुपये का अहंकार, लोगों पर क्रोध आदि रुपया रहने से ही होता है। सूर्य दीख पड़ता था, बादलों ने आकर उसे घेर लिया।

"इसीलिए तो मारवाड़ी ने जब हृदय के पास रुपये जमा करने की इच्छा प्रकट की, तब मैंने कहा, 'यह बात न होगी, रुपये पास रहने से ही बादल उठेंगे।'

"सन्यासी के लिए ऐसा कठोर नियम क्यों है? उसके मंगल के लिए भी है और लोगों की शिक्षा के लिए भी। संन्यासी यद्यपि स्वयं निर्लिप्त हो—जितेन्द्रिय हो, तथापि लोगों को शिक्षा देने के लिए उसे कामिनी-कांचन का इस तरह त्याग करना चाहिए।

"सन्यासी का सोलहों आना त्याग देखकर ही दूसरे लोगों को साहस होगा। तभी वे कामिनी-कांचन छोड़ने की चेष्टा करेंगे।

"त्याग की यह शिक्षा यदि सन्यासी न देगा तो कौन देगा?

"उन्हें प्राप्त कर लेने पर फिर संसार में रहा जा सकता है। जैसे मक्खन उठाकर पानी में डाल रखना। जनक ब्रह्मज्ञान प्राप्त कर संसार में रहे थे।

"जनक दो तलवारें चलाते थे—ज्ञान की और कर्म की।

संन्यासी कर्मों का त्याग करता है। इसलिए उसके पास एक ही तलवार है—ज्ञान की। जनक की तरह का ज्ञानी संसार-पेड़ के नीचे का फल भी खा सकता है और ऊपर का भी। साधु-सेवा, अतिथि-सत्कार, ये सब कर सकता है। मैंने माँ से कहा था, 'माँ, मैं सूखा साधु न होऊँगा।'

"ब्रह्मज्ञान-लाभ के पश्चात् खानपान का भी विचार नहीं रहता। ब्रह्मज्ञानी ऋषि ब्रह्मानन्द के बाद कुछ भी खा सकते थे सूकरमांस तक।

चार आश्रम, योगतत्त्व और श्रीरामकृष्ण

(महिमाचरण से) "संक्षेप में योग दो प्रकार के हैं, कर्मों के द्वारा योग और मन के द्वारा योग।

"ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ्य, वानप्रस्थ और सन्यास—इनमें से प्रथम तीनों में कर्म करना पड़ता है। सन्यासी को दण्ड-कमण्डलु और भिक्षापात्र लेने पड़ते हैं। सन्यासी चाहे कभी कभी नित्यकर्म कर ले, परन्तु उसके मन में कभी आसक्ति नहीं होती। उसे उन कर्मों का ज्ञान नहीं रहता। कोई कोई सन्यासी कुछ कुछ नित्यकर्म करते हैं, परन्तु वह होता है लोकशिक्षा के लिए। गृहस्थ अथवा दूसरे आदमी यदि निष्काम कर्म कर सकें तो उन कर्मों के द्वारा उनका ईश्वर से योग हो जाता है।

"परमहंस अवस्था में—जैसी शुकदेव आदि की थी—कर्म सब छूट जाते हैं, पूजा, जप, तर्पण, सन्ध्या, ये सब कर्म। इस अवस्था में केवल मन का योग होता है। बाहर के काम कभी कभी वह इच्छापूर्वक करता है—लोकशिक्षा के लिए। परन्तु वह सदा ही स्मरण और मनन किया करता है।"

(५)

स्तवपाठ

बातचीत में रात के आठ बज गये। श्रीरामकृष्ण महिमाचरण को शास्त्रों से कुछ स्तव आदि सुनाने के लिए कह रहे हैं। महिमाचरण एक पुस्तक लेकर उत्तरगीता के आरम्भ में ही परब्रह्म सम्बन्धी जो श्लोक है वही सुनाने लगे—'यदेकं निष्कलं ब्रह्म व्योमातीतं निरंजनम्। अप्रतर्क्यमविज्ञेयं विनाशोत्पत्तिवर्जितम्।'

फिर तृतीय अध्याय का सातवाँ श्लोक पढ़ते हैं—'अग्निर्देवो द्विजातीनां मुनीनां हृदि दैवतम्। प्रतिमा स्वल्पबुद्धीनां सर्वत्र समदर्शिनाम्।' अर्थात् ब्राह्मणों के देवता अग्नि हैं, मुनियों के देवता हृदय में हैं, स्वल्पबुद्धि मनुष्यों के लिए प्रतिमा ही देवता है और समदर्शी महायोगियों के लिए देवता सर्वत्र हैं।

'सर्वत्र समदर्शिनाम्'—इस अंश का उच्चारण होते ही श्रीरामकृष्ण एकाएक आसन छोड़कर खड़े हो गये और समाधि-मग्न हो गये। हाथ में वही लकड़ी और बैण्डेज बँधा हुआ है। भक्तगण चुपचाप इस सर्वदर्शी महायोगी की अवस्था देख रहे हैं।

बड़ी देर तक इस तरह खड़े रहने के बाद श्रीरामकृष्ण प्रकृतिस्थ हुए। फिर उन्होंने आसन ग्रहण किया। महिमाचरण को अब हरिभक्तिवाले श्लोक पढ़ने के लिए कह रहे हैं।

महिमाचरण—('नारदपंचरात्र' से)—

"अन्तर्बहिर्यदि हरिस्तपसा ततः किम्।
नान्तर्बहिर्यदि हरिस्तपसा ततः किम्॥
आराधितो यदि हरिस्तपसा ततः किम्।
नाराधितो यदि हरिस्तपसा ततः किम्॥

"राखाल मेरी अवस्था नहीं समझता। कहीं कोई देखकर निन्दा न करे, इसलिए टूटे हाथ को कपड़े से छिपा देता है। मधु डाक्टर को अलग ले जाकर सब बातें कह रहा था। तब चिल्लाकर मैंने कहा, यहाँ हो मधुसूदन, देखो आकर मेरा हाथ टूट गया है।

"मथुर बाबू और उनकी पत्नी जिस घर में सोते थे, उसी में मैं भी सोता था। वे ठीक बच्चे के समान मेरी देखभाल करते थे। तब मेरी उन्माद-अवस्था थी। मथुर बाबू कहते थे, 'बाबा, क्या हम लोगों की कोई बातचीत तुम्हारे कान तक पहुँचती है?' मैं कहता था, 'हाँ पहुँचती है।'

"मथुर बाबू की पत्नी ने उन पर (मथुर बाबू पर) सन्देह करके कहा था, 'अगर कहीं जाना तो भट्टाचार्य महाशय को साथ ले जाना।' वे एक जगह गये, मुझे मकान में नीचे बैठा दिया। फिर आध घण्टे बाद आकर कहा, 'चलो बाबा, चलो, गाड़ी पर बैठो चलकर।' घर आकर उनकी पत्नी ने पूछा तो मैंने ठीक येही सब बातें सुना दीं। मैंने कहा, 'सुनो, एक मकान में हम लोग गये थे, उन्होंने मुझे नीचे बैठा दिया था, आप ऊपर गये थे, आध घण्टे के बाद आकर कहा, चलो बाबा, चलो!' उनकी पत्नी ने, इससे जो कुछ समझना था, समझ लिया।

"मथुर का एक हिस्सेदार यहाँ के पेड़ों के फल और गोभियाँ गाड़ी में लादकर घर भेज देता था। दूसरे हिस्सेदारों ने जब पूछा, तब मैंने वही बात बता दी।"

परिच्छेद ४

ईश्वर ही एक मात्र सत्य है।

(१)

दक्षिणेश्वर मन्दिर में राखाल, मास्टर, मणिलाल आदि के साथ

श्रीरामकृष्ण दोपहर के भोजन के बाद कुछ विश्राम कर रहे हैं। जमीन पर मणि मल्लिक बैठे हैं। श्रीरामकृष्ण के हाथ में अब भी तख्ती बँधी हुई है। मास्टर आकर प्रणाम करके जमीन पर बैठ गये। आज रविवार है, दि. २४ फरवरी १८८४।

श्रीरामकृष्ण–(मास्टर से)–किस तरह आये?

मास्टर–जी, आलमबाजार तक किराये की गाड़ी पर आया, वहाँ से पैदल।

मणिलाल–ओह! बिलकुल पसीने-पसीने हो गये हैं।

श्रीरामकृष्ण–(सहास्य) –इसलिए सोचता हूँ कि मेरे सब अनुभव सिर्फ मस्तिष्क के ही खयाल नहीं हैं; नहीं तो ये सब इतने 'इंग्लिशमेन' (अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोग) इतनी तकलीफ करके क्यों आते हैं!

श्रीरामकृष्ण अपने स्वास्थ्य के बारे में बोल रहे हैं, हाथ टूटने की बात हो रही है।

श्रीरामकृष्ण–मैं इसके लिए कभी कभी अधीर हो जाता हूँ।—इसे दिखाता हूँ, फिर उसे दिखाता हूँ, और पूछता हूँ, क्यों जी, क्या यह अच्छा हो जायगा?

"राखाल चिढ़ता है, मेरी अवस्था समझता तो है नहीं।

कभी कभी दिल में आता है, यहाँ से जाय, तो चला जाय—परन्तु फिर माँ से कहता हूँ, माँ कहाँ जायगा?—कहाँ जलने-मरने जाय?

"मेरी बालक जैसी अधीर अवस्था आज नयी थोड़े ही है? मथुर बाबू को नाड़ी दिखाता था, पूछता, क्यों जी, मुझे कोई बीमारी हो गयी है?

"अच्छा, तो फिर ईश्वर पर निष्ठा कहाँ रही? जब मैं उस देश को* जा रहा था, तब बैलगाड़ी के पास डाकुओं की तरह लाठी लिये हुए कुछ आदमी आये। मैं देवताओं के नाम लेने लगा। परन्तु कभी कहता था राम राम, कभी दुर्गा दुर्गा, कभी ॐ तत् सत्—इसलिए कि किसी के नाम का असर तो इन डाकुओं पर पड़ेगा ही!

(मास्टर से) "अच्छा, मुझमें इतनी अधीरता क्यों है?"

मास्टर—आप सदा ही समाधिस्थ हैं। भक्तों के लिए सिर्फ थोड़ासा मन शरीर पर रखा है। इसीलिए शरीर-रक्षा के निमित्त कभी कभी अधीर होते हैं।

श्रीरामकृष्ण—हाँ; थोड़ा-सा मन शरीर पर है। भक्ति और भक्तों को लेकर रहने के लिए।

मणिलाल मल्लिक प्रदर्शनी की बात कह रहे हैं।

यशोदा कृष्ण को गोद में लिये हैं—बड़ी सुन्दर मूर्ति है, यह सुनकर श्रीरामकृष्ण की आँखों में आँसू आ गये! उस वात्सल्यरस की प्रतिमा यशोदा की बात सुनकर श्रीरामकृष्ण को उद्दीपना होने लगी, रो रहे हैं।

मणिलाल—आपका जी अच्छा नहीं, नहीं तो आप भी एक बार जाकर देख आते—किले के मैदान की प्रदर्शनी।

* उनकी जन्मभूमि कामारपुकुर को

श्रीरामकृष्ण-(मास्टर आदि से)-मैं जाऊँ तो भी सब कुछ मुझे देखने को न मिलेगा। कोई एक चीज देखने ही से बेहोश हो जाऊँगा--और चीजें फिर देखने को रह जायेंगी। चिड़ियाखाना दिखाने के लिए ले गये थे। सिंह देखकर ही समाधि हो गयी। ईश्वरी भगवती के वाहन को देखकर ईश्वरी उद्दीपना हुई। तब फिर दूसरे जानवरों को कौन देखता है, सिंह देखकर ही लौट आया। इसलिए यदु मल्लिक की माँ ने एक बार कहा था, इनको प्रदर्शनी ले चलो,--फिर उसने कहा, नहीं, रहने दो।

मणि मल्लिक पुराने ब्राह्मसमाजी हैं। उम्र ६५ की होगी। श्रीरामकृष्ण उन्हींके भावों में बातचीत करते हुए, उपदेश दे रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण-जयनारायण पण्डित बड़ा उदार था। जाकर मैंने देखा, उसका भाव बड़ा अच्छा है। लड़के बूट पहने हुए थे। उसने खुद कहा, मैं काशी जाऊँगा। जो कुछ कहा, अन्त में वही किया। काशी में रहा और उसकी देह भी वहीं छूटी।

"उम्र होने पर इस तरह चले जाकर ईश्वर-चिन्तन करना अच्छा है, क्यों ?"

मणिलाल-जी हाँ। संसार की अड़चनों से जी ऊब जाता है।

श्रीरामकृष्ण-गौरी फूलदल लेकर अपनी स्त्री की पूजा करता था। सभी स्त्रियाँ भगवती की एक एक मूर्ति हैं।

(मणिलाल से) "अपनी वह बात जरा इन लोगों से भी तो कहो।"

मणिलाल-(सहास्य)-नाव पर चढ़कर कुछ लोग गंगा पार कर रहे थे। उनमें एक पण्डित अपनी विद्या का खूब परिचय दे रहा था। 'मैंने अनेक शास्त्र पढ़े हैं--वेद--वेदान्त--षड्दर्शन।' एक

मैं उससे पूछा, 'वेदान्त क्या है, जानते हो?' उसने कहा, 'जी नहीं'। 'फिर तुम पातञ्जल जानते हो?' उसने कहा— 'जी नहीं।' 'दर्शन आदि कुछ भी नहीं पढ़ा?' 'जी नहीं।'

"पण्डितजी बड़े गर्व से बातचीत कर रहे हैं, दूसरा चुपचाप बैठा है कि इतने में जोरों की आँधी आयी—नाव डूबने लगी। उस आदमी ने पूछा, 'पण्डितजी, आप तैरना जानते हैं?' पण्डितजी ने कहा, 'नहीं।' उसने कहा, 'मैंने दर्शन-फर्शन तो नहीं पढ़ा पर तैरना जानता हूँ।'"

ईश्वर ही वस्तु और सब अवस्तु। लक्ष्य-भेद

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—अनेकानेक शास्त्रों के ज्ञान से क्या होगा? भवनदी किस तरह पार की जाती है, यही जानना आवश्यक है। ईश्वर ही वस्तु है और सब अवस्तु।

"लक्ष्य-भेद के समय द्रोणाचार्य ने अर्जुन से पूछा था, 'तुम क्या देख रहे हो?—क्या तुम इन राजाओं को देख रहे हो?' अर्जुन ने कहा—'नहीं।' 'मुझे देख रहे हो?' 'नहीं।' 'पेड़ देख रहे हो?' 'नहीं।' 'पेड़ पर पक्षी देख रहे हो?' 'नहीं।' 'तो क्या देख रहे हो?' 'बस पक्षी की आँख, जिसे भेदना है।'

"जो केवल पक्षी की आँख देखता है, वही लक्ष्य-भेद कर सकता है।

"जो देखता है, ईश्वर ही वस्तु है और सब अवस्तु है, वही चतुर है। अन्य खबरों से हमें क्या काम है? हनुमान ने कहा था, 'मैं तिथि और नक्षत्र, यह सब कुछ नहीं जानता। मैं तो बस श्रीरामचन्द्रजी का स्मरण किया करता हूँ।'

(मास्टर से) "यहाँ के लिए पंखे मोल ले दो।

(मणिलाल से) "ए जी, तुम एक बार इनके (मास्टर के) बाप के पास जाना। भक्त को देखकर उद्दीपना होगी।"

(२)

मणिलाल आदि को उपदेश। नरलीला

श्रीरामकृष्ण अपने आसन पर बैठे हैं। मणिलाल आदि भक्तगण जमीन पर बैठे हुए श्रीरामकृष्ण की मधुर बातें सुन रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण-(मास्टर से)-"इस हाथ के टूटने के बाद से एक बड़ी विचित्र अवस्था हो रही है। केवल नर-लीला अच्छी लगती है।

"नित्य और लीला। नित्य—अर्थात् वही अखण्ड सच्चिदानन्द।

"लीला—ईश्वर-लीला, देव-लीला, नर-लीला, संसार-लीला।

"वैष्णवचरण कहता था कि नर-लीला पर विश्वास होने से पूर्ण ज्ञान हो जाता है। तब उसकी बात मैं न सुनता था। अब देखता हूँ, ठीक है। वैष्णवचरण मनुष्य की तस्वीरें देखकर जिनमें कोमल भाव, प्रेम-भाव पाता था, उन्हें पसन्द करता था।

(मणि से) "ईश्वर ही मनुष्य बनकर लीला कर रहे हैं—वे ही मणि मल्लिक हुए हैं। सिक्ख लोग शिक्षा देते हैं कि तू ही सच्चिदानन्द है। कभी कभी मनुष्य अपने सत्य स्वरूप की झलक पा जाता है और आश्चर्य से चकित हो निर्वाक् रह जाता है। ऐसे समय में वह आनन्द-समुद्र में तैरने लगता है। एकाएक आत्मियों को देखकर जैसा होता है। (मास्टर से) उसी दिन गाड़ी पर आते हुए बाबूराम को देखकर जैसा हुआ था।

शिव, जब अपना स्वरूप देखते हैं, तब 'मैं क्या हूँ' कहकर नृत्य करते हैं।

"अध्यात्म-रामायण में यही बात है। नारद कहते हैं, हे राम, जितने पुरुष हैं, सब तुम हो और जितनी स्त्रियाँ हैं, सब सीता।

"रामलीला में जिन जिन लोगों ने भाग लिया था उन्हें देखकर मुझे यही जान पड़ा कि इन सब रूपों में एकमात्र नारायण की ही सत्ता है। असल और नकल दोनों बराबर जान पड़े।

"कुमारी पूजा क्यों करते हैं? सब स्त्रियाँ भगवती की एक-एक मूर्ति हैं। शुद्धात्मा कुमारी में भगवती का अधिक प्रकाश है!

(मास्टर से) "तकलीफ होने पर क्यों मैं अधीर हो जाता हूँ? मुझे बच्चे के स्वभाव में रखा है। बालक का सब अवलम्ब माँ पर है।

"दासी का लड़का बाबू के लड़के से लड़ाई करते समय कहता है, 'मैं अपनी माँ से कह दूँगा!'

"राधाबाजार में मुझे फोटो उतरवाने के लिए ले गये थे। उस दिन राजेन्द्र मित्र के घर जाने की बात थी। सुना था, केशव सेन और दूसरे लोग भी जायेंगे। कुछ बातें कहने के लिए सोच रखी थीं। राधाबाजार जाकर सब भूल गया। तब मैंने कहा, माँ, तू कहेगी!—मैं भला क्या कहूँगा!

"मेरा ज्ञानियों जैसा स्वभाव नहीं है। ज्ञानी अपने को बड़ा देखता है, कहता है, मुझे फिर रोग कैसे?

"कुँवरसिंह ने कहा, 'आप अब भी देह की चिन्ता में रहते हैं।'

"मेरा यह स्वभाव है—मेरी माँ सब जानती हैं। राजेन्द्र मित्र

के यहाँ वे ही (माँ) बातचीत करेंगी। वही बात बात है। सरस्वती के ज्ञान की एक किरण से एक हजार पण्डित दाँत में उँगली दबा लेते हैं।

"भक्त की अवस्था में—विज्ञानी की अवस्था में मुझे रखा है; इसीलिए राखाल आदि से मजाक किया करता हूँ। ज्ञानी की अवस्था में रखने से यह बात न होती!

"इस अवस्था में देखता हूँ, माँ ही सब कुछ हुई हैं! सब जगह उन्हीं को देखता हूँ।

"काली-मण्डप में देखा, दुष्ट मनुष्य में भी एवं भागवत पण्डित के भाई में भी माँ का ही प्रकाश है।

"रामलाल की माँ को डाटने के लिए गया तो सही, पर फिर हो न सका। देखा उन्हीं का एक रूप है! माँ को कुमारी के भीतर देखता हूँ, इसलिए कुमारी-पूजन करता हूँ।

"मेरी स्त्री पैरों पर हाथ फेरती है, फिर मैं उसे नमस्कार करता हूँ।

"तुम लोग मेरे पैर छूकर नमस्कार करते हो,—हृदय अगर रहता तो किसकी मजाल थी, जो पैरों में हाथ लगाता!—वह किसी को पैर छूने ही न देता!

"इस अवस्था में रखा है, इसीलिए नमस्कार के बदले नमस्कार करना पड़ता है।

"देखो, दुष्ट आदमी तक को अलग करने की जगह नहीं है। तुलसी सूखी हो, छोटी हो, श्रीठाकुरजी की सेवा में लग ही जाती है।"

परिच्छेद ५

गृहस्थ तथा संन्यासियों के नियम

(१)

दक्षिणेश्वर मन्दिर में नरेन्द्र आदि भक्तों के साथ

"श्रीरामकृष्ण काली-मन्दिर में, अपनी उसी छोटी खाट पर बैठे हुए गाना सुन रहे हैं। ब्राह्मसमाज के श्री त्रैलोक्य सान्याल गा रहे हैं। आज रविवार है, २ मार्च १८८४। जमीन पर भक्तगण बैठे हुए गाना सुन रहे हैं।—नरेन्द्र, सुरेन्द्र मित्र, मास्टर, त्रैलोक्य आदि कितने ही भक्त बैठे हैं।

श्रीयुत नरेन्द्र के पिता बड़ी अदालत के वकील थे। उनका देहान्त हो जाने पर उनके परिवार को इस समय बड़ी तकलीफ है, यहाँ तक कि कभी-कभी फाका भी करना पड़ता है।

श्रीरामकृष्ण का शरीर, जब से हाथ टूटा, अब तक अच्छा नहीं हुआ। हाथ में बहुत दिनों तक तख्ती बँधी थी।

त्रैलोक्य माता का संगीत गा रहे हैं। गाते हुए, कह रहे हैं, माँ, अपनी गोदी में लेकर, आँचल से ढककर मुझे अपनी छाती से लगा रखो।

(संगीत का भाव)

"माँ, मैं तेरे हृदय में छिपा रहूँगा। तेरे मुँह की ओर ताक-ताककर, माँ-माँ कहकर पुकारूँगा। चिदानन्द-रस में डूबकर महायोग की निद्रा के आवेश में निर्निमेष नयनों से, तेरी दृष्टि पर दृष्टि जमाये हुए, तेरा रूप देखूँ। संसार का तमाशा देखकर

और सुनकर भय से हृदय काँप उठता है। मुझे अपने स्नेह के आँचल से ढककर तुम हृदय से लगा लो, फिर कभी अलग न करना।"

गाना सुनते हुए श्रीरामकृष्ण की आँखों से प्रेम के आँसू टपक रहे हैं। भाव में गद्गद कण्ठ से कह रहे हैं—अहा! कैसा भाव है!

त्रैलोक्य फिर गा रहे हैं—(भाव)

(१) "हरे! तुम अपने भक्तों की लाज रखनेवाले हो। तुम मेरी मनोकामना पूर्ण करो। ऐ ईश्वर! तुम भक्तों के सम्मान हो। बिना तुम्हारे और कौन रक्षा कर सकता है? प्राणपति, प्राणाधार तुम्हीं हो। मैं तो तुम्हारा गुलाम हूँ।"

(२) "तुम्हारे चरणों को सार समझकर, जाति-पाँति का विचार छोड़, लाज और भय को भी मैंने तिलांजलि दे दी। अब रास्ते का बटोही होकर मैं कहाँ जाऊँ? अब तो तुम्हारे लिए मैं कलंक-भागी हो चुका, तुम्हें मैं प्यार करता हूँ, इसलिए लोग मेरी कितनी निन्दा करते हैं। अब मेरी शर्म और भ्रम सब तुम्हारा ही है। चाहे तुम मेरी रक्षा करो और चाहे न करो, उत्तरदायित्व और भार तुम्हीं पर है। परन्तु यह सोच लेना कि दास का मान तुम्हारा ही मान है। तुम मेरे हृदय के स्वामी हो, तुम्हारे ही मान से मेरा भी मान है, अतएव जैसी तुम्हारी रुचि हो, वही करो।"

(३) "घर से बाहर निकालकर अगर तुमने मुझे अपने प्रेम में फँसाया है तो मुझे अपने श्रीचरणों में जगह भी तो दो। ऐ प्राणप्यारे, सदा ही मुझे अपना प्रेममधु पिलाते रहो। जो तुम्हारे प्रेम का दास है, उसका परित्राण करो।"

श्रीरामकृष्ण की आँखों से प्रेम की धारा बह रही है। वे ज़मीन पर आकर बैठे और रामप्रसाद के भावों में गाने लगे—

"माँ, अपरस, कुरस, सुरस सब तुम्हारे ही रस हैं। माँ, रसेश्वरि! रस में रहकर रसभग क्यों करती हो?"

त्रैलोक्य से कह रहे हैं—"अहा! तुम्हारे गाने कैसे हैं! तुम्हारे गाने बहुत ठीक हैं। केवल वही जो समुद्र को गया है, वहाँ का जल ला सकता है।' त्रैलोक्य फिर गाते हैं—

"हरि, तुम्हीं नाचते हो, तुम्हीं गाते हो और तुम्हीं ताल ताल पर हथेली बजाते हो। मनुष्य तो एक पुतला मात्र है, वृथा ही वह 'मेरा मेरा' कहता है। जैसे कठपुतली के खिलौने हैं, वैसा ही जीवों का जीवन भी है। मनुष्य यदि तुम्हारे रास्ते पर चलता है, तो वह देवता बन जाता है। देहरूप में यन्त्रीस्वरूप तुम्हीं हो, आत्म-रथ में तुम्हीं रथी हो, जीव तो अपनी स्वाधीनता के पाप से केवल पापों का भोग करता है। तुम सब के मूलाधार हो, तुम प्राणों के प्राण और हृदय के स्वामी हो, तुम अपने पुण्य के बल से असाधु को भी साधु बना देते हो।" गाना समाप्त हुआ। श्रीरामकृष्ण अब बातचीत कर रहे हैं।

नित्यलीला योग। पूर्ण ज्ञान अथवा विज्ञान

श्रीरामकृष्ण—(त्रैलोक्य और दूसरे भक्तों से)—हरि ही सेव्य हैं और हरि ही सेवक हैं—यह भाव पूर्ण ज्ञान का लक्षण है। पहले नेति-नेति करने पर, ईश्वर ही सत्य हैं और सब मिथ्या है, यह बोध होता है। इसके बाद वह देखता है, ईश्वर ही सब कुछ हुए हैं—ईश्वर ही माया, जीव, जगत्, यह सब हुए हैं। अनुलोम हो जाने पर फिर विलोम होता है। यह पुराणों का मत

है। जैसे एक बेल में गूदा, बीज और खोपड़ा है। खोपड़ा और बीज निकाल देने पर गूदा रह जाता है; परन्तु बेल का वजन कितना था, यह जानने की अगर इच्छा हुई तो खोपड़ा और बीज के निकाल देने से काम न बनेगा। इसी तरह जीव-जगत् को छोड़कर पहले सच्चिदानन्द में आया जाता है। फिर उन्हें प्राप्त कर लेने पर मनुष्य देखता है, यह सब जीव-जगत् भी वे ही हुए हैं। जिस वस्तु का गूदा है, उसका खोपड़ा और बीज भी है, जैसे मट्ठे का मक्खन और मक्खन का मट्ठा।

"परन्तु कोई-कोई कह सकते हैं कि सच्चिदानन्द इतने कड़े क्यों हो गये—इस पृथ्वी को दबाने से वह बड़ी कठिन जान पड़ती है। इसका उत्तर यह है कि शोणित और शुक्र तो इतना तरल पदार्थ है, परन्तु उन्हीं से इतने मनुष्य, बड़े-बड़े जीव तैयार हो रहे हैं! ईश्वर से सब कुछ हो सकता है। एक बार अखण्ड सच्चिदानन्द तक पहुँचकर फिर वहाँ से उतरकर यह सब देखो।"

संसार और ईश्वर। योगी और भक्त में भेद

'वे ही सब कुछ हुए हैं। संसार उनसे अलग नहीं है। गुरु के पास वेद पढ़कर श्रीरामचन्द्र को वैराग्य हो गया। उन्होंने कहा, संसार अगर स्वप्नवत् है तो इसका त्याग करना ही उचित है। इससे दशरथ डरे। उन्होंने राम को समझाने के लिए गुरु वशिष्ठ को भेज दिया। वशिष्ठ ने कहा, 'राम, हमने सुना है—तुम संसार छोड़ना चाहते हो। तुम हमें समझा दो कि संसार ईश्वर से अलग एक वस्तु है। यदि तुम समझा सको कि ईश्वर से संसार नहीं हुआ तो तुम इसे छोड़ सकते हो।' राम तब चुप हो रहे, कोई उत्तर न दे सके।

"सब तत्त्व अन्त में आकाश-तत्त्व में लीन हो जाते हैं। सृष्टि के समय आकाश-तत्त्व से महत्-तत्त्व, महत्-तत्त्व से अहंकार, ये सब क्रमशः तैयार हुए हैं। अनुलोम और विलोम। भक्त इन सब को मानते हैं। भक्त अखण्ड सच्चिदानन्द को भी मानते हैं और जीव-जगत् को भी।

"परन्तु योगी का मार्ग अलग है। वह परमात्मा में पहुँचकर फिर वहाँ से नहीं लौटता। उसी परमात्मा से युक्त हो जाता है।

"पीढ़े के भीतर जो ईश्वर को देखता है, उसे खण्ड ज्ञानी कहते हैं। वह सोचता है, उसके परे और उनकी सत्ता नहीं है।

"भक्त तीन श्रेणी के होते हैं। अधम, मध्यम और उत्तम। अधम भक्त कहता है, वे हैं ईश्वर, और ऐसा कहकर आकाश की ओर उँगली उठा देता है। मध्यम भक्त कहता है, वे हृदय में अन्तर्यामी के रूप में विराजमान हैं। उत्तम भक्त कहता है वे ही यह सब हुए हैं,—जो कुछ मैं देख रहा हूँ, सब उन्हीं के एक-एक रूप हैं। नरेन्द्र पहले मजाक करके कहता था, अगर वे ही सब कुछ हुए हैं तो ईश्वर लोटा भी है और थाली भी।" (सब हँसते हैं।)

ईश्वरदर्शन और कर्मत्याग। विराट शिव

"परन्तु उनके दर्शन होने पर सब संशय दूर हो जाते हैं। सुनना एक बात है और देखना दूसरी बात। सुनने से सोलहों आना विश्वास नहीं होता। साक्षात्कार हो जाने पर फिर विश्वास में कुछ बाकी नहीं रह जाता।

"ईश्वर-दर्शन करने पर कर्मों का त्याग हो जाता है।

इसी तरह मेरी पूजा बन्द हो गयी। काली-मन्दिर में पूजा करता था, एकाएक माँ ने दिखाया, सब चिन्मय है—पूजा की चीजें, वेदी—मन्दिर की चौखट—सब चिन्मय है। मनुष्य, जीव, वस्तु, सब चिन्मय है। तब पागल की तरह चारों ओर फूल फेंकने लगा! जो कुछ दृष्टि में आता, उसी की पूजा करने लगा!

"एक दिन पूजा करते समय शिवजी के मस्तक पर चन्दन लगा रहा था, उसी समय दिखलाया,—यह विराट् मूर्ति—यह विश्व ही शिव है। तब शिव-लिंग तैयार करके पूजा करना बन्द हो गया। मैं फूल तोड़ रहा था, उसी समय मुझे दिखलाया—फूल के पेड़ फूल के एक एक गुच्छे हैं।"

काव्यरस और ईश्वर-दर्शन में भेद

त्रैलोक्य—अहा! ईश्वर की रचना कैसी सुन्दर है!

श्रीरामकृष्ण—नहीं जी, आँखों के आगे पेड़ एकाएक फूल के गुच्छे बन गये—यह कुछ मेरा केवल मानसिक भाव ही नहीं था। दिखा दिया, एक एक फूल का पेड़ एक एक गुच्छा है और उस विराट् मूर्ति के सिर पर शोभायमान हो रहा है। उसी दिन से फूल तोड़ना बन्द हो गया। आदमी को भी मैं उसी रूप में देखता हूँ। मानो वेही मनुष्य के आकार में झूम-झूमकर टहल रहे हैं। मानो तरंग पर एक तकिया बह रहा है—इधर उधर हिलता हुआ चला जा रहा है, लहर के लगने पर कभी कभी ऊँचा चढ़ जाता है और फिर लहर के साथ नीचे आ जाता है।

"शरीर दो दिन के लिए है। वही ईश्वर सत्य है। शरीर तो अभी अभी है, अभी अभी नहीं। बहुत दिन हुए, जब पेट की बीमारी से बड़ी तकलीफ मिल रही थी, हृदय ने कहा, माँ से एक

बार कहते क्यों नहीं जिससे अच्छे हो जाओ ! रोग के लिए मुझे कहते हुए बड़ी लज्जा लगी। मैंने कहा, माँ ! सोसायटी (Asiatic Society) में मैंने आदमी का अस्थिपञ्जर (Skeleton) देखा था, तारों से जोड़कर आदमी के आकार का बनाया गया था, माँ, बस केवल उतना ही इस शरीर को रहने दो, अधिक मैं नहीं चाहता। मैं तुम्हारा नाम लेता रहूँ—तुम्हारे गुण कीर्तन करता रहूँ, उतनी ही इच्छा है।

"बचने की इच्छा क्यों है ? जब रावण मारा गया तब राम और लक्ष्मण लङ्का के भीतर गये। जहाँ रावण रहता था, वहाँ जाकर देखा, उन्हें देख रावण की माँ निकषा भाग रही थी। इससे लक्ष्मण को बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने राम से कहा, 'भाई ! जिसके वंश में अब कोई भी नहीं रह गया, उसे भी शरीर की इतनी ममता है।' राम ने निकषा को अपने पास बुलाकर उससे कहा, 'तुम डरो मत, परन्तु यह बतलाओ कि तुम भाग क्यों रही थी?' निकषा ने कहा, 'राम ! मैं इसलिए नहीं भागी कि मुझे देह की प्रीति है, नहीं, मैं बची थी, इसीलिए तो तुम्हारी इतनी लीलाएँ देखीं—यदि और भी कुछ दिन बची रहूँगी तो तुम्हारी और न जाने कितनी लीलाएँ देखूँगी ! इसीलिए मुझे बचने की लालसा है।'

"वासना के बिना रहे शरीर धारण नहीं हो सकता।

(महास्य) "मुझे भी दो-एक इच्छाएँ थीं। मैंने कहा था, 'माँ, कामिनी-काञ्चन-त्यागियों का सत्सग मुझे दो। और ज्ञानी और भक्तों का सत्सग करूँगा। अतएव कुछ शक्ति भी दे दे, जिससे कुछ चल सकूँ—यहाँ-वहाँ जा सकूँ।' परन्तु उसने चलने की शक्ति नहीं दी।"

त्रैलोक्य—(सहास्य)—साध मिटी ?

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—कुछ बाकी है। (सब हँसते हैं।) "शरीर दो दिन के लिए है। हाथ जब टूट गया तब माँ से मैंने कहा—'माँ! बड़ा दर्द हो रहा है!' तब उसने दिखाया, गाड़ी है और उसका इंजीनियर। गाड़ी के पुर्जे कहीं कहीं खुल गये थे! इंजीनियर जैसा चलाता है, गाड़ी वैसे ही चल रही है। उसकी अपनी कोई शक्ति नहीं है।

"फिर देह की देखभाल क्यों करता हूँ? इच्छा है, ईश्वर को लेकर आनन्द करूँ, उनका नाम लूँ,—उनके गुण गाऊँ, उनके ज्ञानियों और भक्तों को देखता फिरूँ।"

(२)

देह का सुख-दुःख

नरेन्द्र ज़मीन पर सामने बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण—(त्रैलोक्य और भक्तों से)—देह के लिए सुख-दुःख तो लगा ही है। देखो न, नरेन्द्र के पिता का देहान्त हो गया, घरवाले सब बड़ी तकलीफ पा रहे हैं, परन्तु कोई उपाय नहीं हो रहा है। वे कभी सुख में रहते हैं, कभी दुःख में।

त्रैलोक्य—जी नरेन्द्र पर ईश्वर की दया होगी।

श्रीरामकृष्ण—(हँसते हुए)—और कब होगी! काशी में अन्नपूर्णा के यहाँ कोई भूखा नहीं रहता, परन्तु किसी किसी को शाम तक बैठा रहना पड़ता है। हृदय ने शम्भू मल्लिक से कहा था, मुझे कुछ रुपये दो। शम्भू मल्लिक अंग्रेजी मत का आदमी है। उसने कहा, 'तुम्हें क्यों रुपये दूँ? तुम मेहनत करके उपार्जन कर सकते हो। तुम कुछ रोजगार तो करते ही हो। हाँ, बहुत

गरीब कोई हो, तो उसकी बात और है । अथवा अन्धे-लँगड़े-लूले को कुछ देने से ठीक भी है ।' तब हृदय ने कहा, 'महाराज, बस यह बात न कहियेगा । मुझे रुपयों की जरूरत नहीं । ईश्वर करें, मुझे अन्धा-लँगड़ा-लूला या दरिद्र न होना पड़े । न अब आपके देने का काम है और न मेरे लेने का ।'

ईश्वर नरेन्द्र पर अब भी दया नहीं करते, इस पर मानो अभिमान करके श्रीरामकृष्ण ने यह बात कही । श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र की ओर स्नेह की दृष्टि से देख रहे हैं ।

नरेन्द्र–मैं 'नास्तिकवाद' पढ़ रहा हूँ ।

श्रीरामकृष्ण–दो है । 'अस्ति' और 'नास्ति' । 'अस्ति' को ही क्यों नहीं लेते ?'

सुरेन्द्र–ईश्वर तो बड़े न्यायी हैं, वे क्या भक्त की देखभाल न करेंगे ?

श्रीरामकृष्ण–शास्त्रों में है, पूर्वजन्म में जो लोग दान आदि करते हैं, उन्हीं को धन मिलता है, परन्तु बात यह है कि संसार उनकी माया है, माया के राज्य में बड़ा गोलमाल है, कुछ समझ में नहीं आता ।

"ईश्वर का काम कुछ समझा नहीं जाता । भीष्मदेव शरशय्या पर लेटे हुए थे । पाण्डव उन्हें देखने गये । साथ में श्रीकृष्ण भी थे । आये तो थोड़ी देर बाद उन्होंने देखा, भीष्म रो रहे थे । पाण्डवों ने श्रीकृष्ण से कहा, 'कृष्ण, यह बड़े आश्चर्य की बात है ! पितामह अष्ट वसुओं में एक हैं, उनकी तरह ज्ञानी देखने में नहीं आते, परन्तु ये भी मृत्यु के समय माया में पड़कर रो रहे हैं !' श्रीकृष्ण ने कहा, 'भीष्म इसलिए नहीं रो रहे हैं । इसका कारण उन्हीं से पूछो ।' पूछने पर भीष्म ने कहा, 'कृष्ण,

ईश्वर के कार्य कुछ समझ न सका। मैं इसलिए रो रहा हूँ कि जिनके साथ साथ साक्षात् नारायण घूम रहे हैं उन पाण्डवों की भी विपत्ति का अन्त नहीं होता! यह बात जब मैं सोचता हूँ तब यही निश्चय होता है कि उनके कार्य का कुछ भी अंश समझ में नहीं आ सकता।'

"मुझे उन्होंने दिखलाया था, जिन्हें वेदों में शुद्धात्मा कहा है, एक वही परमात्मा अटल सुमेरुवत् निर्लिप्त तथा सुख और दुःख से अलग हैं। उनकी माया के कार्यों में बड़ी जटिलता है। किसके बाद क्या होगा, कुछ कहा नहीं जा सकता।"

सुरेन्द्र-(सहास्य)-और पूर्वजन्म में कुछ दान आदि करने से इस जन्म में धन प्राप्त होता है, तो हमें दान आदि करना चाहिए।

श्रीरामकृष्ण-जिसके पास धन है, उसे दान करना चाहिए। (त्रैलोक्य से) जयगोपाल सेन के धन है, उसे दान करना चाहिए। वह नहीं करता, यह उसके लिए निन्दा की बात है। धन के रहने पर भी कोई कोई बड़े हिसाबी होते हैं—परन्तु इसका क्या ठिकाना कि वह धन किसके हिस्से में पड़ जायगा।

"अभी उस दिन जयगोपाल आया था। गाड़ी पर आया करता है। गाड़ी में फूटी लालटेन और घोड़े मरघट से लौटे हुए —बरबाग मेडिकल कालेज के अस्पताल का वापस आया हुआ मरीज—और यहाँ के लिए ले आता है दो सड़े अनार!" (सब हँसते हैं।)

सुरेन्द्र-जयगोपाल बाबू ब्राह्म-समाजी हैं। मेरी समझ में शायद केशव के सम्प्रदाय में अब कोई भी ढंग का आदमी नहीं रह गया है। विजय गोस्वामी, शिवनाथ तथा अन्य बाबुओं ने

मिलकर साधारण ब्राह्मसमाज की स्थापना की है।

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—गोविन्द अधिकारी अपनी नाटक-मण्डली में अच्छा आदमी न रखता था—हिस्सा देने का भय जो था। (सब हँसते हैं।)

"उस दिन केशव के एक शिष्य को मैंने देखा था। केशव के मकान में अभिनय हो रहा था। देखा, वह लड़के को गोद में लेकर नाच रहा है। फिर सुना, व्याख्यान भी देता है। खुद को कौन शिक्षा दे, इसका पता नहीं।"

त्रैलोक्य गाने लगे। गाना जब समाप्त हो गया तब श्रीरामकृष्ण ने उनसे 'आमाय दे माँ पागल करे' गाने के लिए कहा।

(२)

रविवार, ९ मार्च १८८४ ई०। श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर में मणिलाल मल्लिक, सींती के महेन्द्र कविराज, बलराम मास्टर, भवनाथ, राखाल, लाटू, अधर, महिमाचरण, हरीश, किशोरी (गुप्त), शिवचन्द्र आदि अनेक भक्तों के साथ बैठे हैं। अभी तक गिरीश, काली, सुबोध आदि नहीं आये हैं। शरत् तथा शशी ने केवल एक-दो बार ही दर्शन किया है। पूर्ण, छोटे नरेन आदि ने भी अभी तक उन्हें नहीं देखा है।

श्रीरामकृष्ण के हाथ में बैण्डेज बँधा हुआ है। रेलिंग के किनारे गिरकर हाथ टूट गया है—उस समय भाव में विभोर हो गये थे। हाल ही में हाथ टूटा है—निरन्तर पीड़ा बनी रहती है।

परन्तु इस स्थिति में भी वे प्रायः समाधिमग्न रहते हैं और भक्तों के साथ गम्भीर तत्त्वों की बातें करते हैं।

एक दिन कष्ट से रो रहे हैं, उसी समय समाधिमग्न हो गये। समाधिमग्न होने के बाद महिमाचरण आदि भक्तों से वह

रहे है, "भाई, सच्चिदानन्द की प्राप्ति न हुई तो कुछ भी न हुआ। व्याकुल हुए बिना कुछ न होगा। मैं रो-रोकर पुकारता था और कहता था, 'हे दीनानाथ, मेरा साधन-भजन कुछ भी नहीं है, पर मुझे दर्शन देना होगा।' "

उसी दिन रात को फिर महिमाचरण, अधर, मास्टर आदि बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण-(महिमाचरण के प्रति)-एक प्रकार है—अहेतुकी भक्ति, इसे यदि प्राप्त कर सको!

फिर अधर से कह रहे हैं-"इस हाथ पर जरा हाथ फेर सकते हो?"

मणिलाल मल्लिक तथा भवनाथ प्रदर्शनी की बातें कर रहे हैं जो १८८३-८४ ई. में एशियाटिक म्युजियम के पास हुई थी। वे कह रहे हैं, "कितने राजाओं ने मूल्यवान चीजें भेजी हैं; सोने के पलंग आदि देखने योग्य चीजें हैं।"

श्रीरामकृष्ण तथा धन-ऐश्वर्य। योगी का चिह्न

श्रीरामकृष्ण-(भक्तों के प्रति हँसते हुए)-हाँ, वहाँ जाने पर एक लाभ अवश्य होता है। ये सब सोने की चीजें—राजा-महाराजाओं की चीजें देखकर बिलकुल क्षुद्र-सी मालूम होती हैं। यह भी बड़ा लाभ है। जब मैं कलकत्ता आता था, तो हृदय मुझे गवर्नर का मकान दिखाता था, कहता था, 'मामाजी, वह देखो, गवर्नर साहब का मकान, बड़े बड़े खम्भे!' माँ ने दिखा दिया, कुछ मिट्टी की बनी ईंटें एक के ऊपर दूसरी रखकर सजायी हुई हैं!

"भगवान् और उनका ऐश्वर्य। ऐश्वर्य दो दिन के लिए है;

भगवान् ही सत्य हैं। जादूगर और उसका जादू। जादू देखकर सभी लोग विस्मित हो जाते हैं, परन्तु सब झूठा है, जादूगर ही सत्य है। मालिक और उसका बगीचा। बगीचा देखकर बगीचे के मालिक की खोज करनी चाहिए।"

मणि मल्लिक—(श्रीरामकृष्ण के प्रति)—देखो, प्रदर्शनी में कितनी बड़ी बिजली की बत्ती लगायी है। उस बत्ती को देखकर हमें लगता है वे (भगवान्) कितने बड़े हैं, जिन्होंने बिजली को पैदा बनायी है।

श्रीरामकृष्ण—(मणिलाल के प्रति)—एक और मत है, वे ही ये सब कुछ बने हुए हैं। फिर जो कह रहा है वह भी वे ही हैं। ईश्वर, माया, जीव, जगत्।

म्युजियम की चर्चा चली।

श्रीरामकृष्ण—(भक्तों के प्रति)—मैं एक बार म्युजियम में गया था। वहाँ मुझे फासिल* दिखाये गये। मैंने देखा कि लकड़ी पत्थर बन गयी है, पूरा जानवर पत्थर बन गया है। देखा,—संग का क्या गुण है! इसी प्रकार सदा सज्जन का संग करने से वही बन जाता है।

मणि मल्लिक—(हँसकर)—महाराज, यदि आप एक बार प्रदर्शनी में जाते तो शायद हमें १०-१५ वर्ष तक उपदेश देने की सामग्री आपको मिल जाती।

श्रीरामकृष्ण—(हँसकर)—क्या उपमा के लिए?

बलराम—नहीं, वहाँ जाना ठीक नहीं। इधर-उधर जाने

*फासिल (Fossil)—करोड़ों वर्ष पूर्व की लकड़ी, पत्ते, फल, यहाँ तक कि पशु भी हमें आज पत्थर के रूप में प्राप्त हैं, इन्हें 'फासिल' कहते हैं।

से हाथ को आराम नहीं मिलेगा।

श्रीरामकृष्ण-मेरी इच्छा है कि मुझे दो चित्र मिलें। एक चित्र, योगी धुनी जलाकर बैठा है, और दूसरा चित्र, योगी गांजा की चिलम मुंह में लगाकर पी रहा है, और उसमें से एकाएक आग जल उठती है।

"इन सब चित्रों से काफी उद्दीपन होता है। जिस प्रकार मिट्टी का बनावटी आम देखकर सच्चे आम का उद्दीपन होता है।

"परन्तु योग में विघ्न है—कामिनी-कांचन। यह मन शुद्ध होने पर योग होता है। मन का निवास है कपाल में (आज्ञा-चक्र में), परन्तु दृष्टि रहती है लिंग, गुदा और नाभि में—अर्थात् कामिनी और कांचन में। साधना करने पर उस मन की ऊपर की ओर दृष्टि होती है।

"कौनसी साधना करने पर मन की दृष्टि ऊपर की ओर होती है? सदा साधुपुरुषों का संग करने से सब जाना जा सकता है।

"ऋषिगण सदा या तो निर्जन में या साधुओं के संग में रहा करते थे—इसीलिए उन्होंने बिना क्लेश के ही कामिनी-कांचन का त्याग कर ईश्वर में मन लगा लिया था—निन्दा-भय कुछ भी नहीं है।

"त्याग करना हो तो ईश्वर से पुरुषकार के लिए प्रार्थना करनी चाहिए। जो मिथ्या जँचे, उसका उसी समय त्याग करना उचित है।

"ऋषियों का यह पुरुषकार था। इसी पुरुषकार के द्वारा ऋषियों ने इन्द्रियों पर विजय प्राप्त की थी।

"कछुआ अगर हाथ पैर भीतर समेट ले, तो टुकड़े टुकड़े

फेर डालने पर भी वह हाथपैर नहीं निकालेगा !

"विषयी लोग कपटी होते हैं—सरल नहीं होते । मुँह में कहते हैं, 'ईश्वर से प्रेम करता हूँ,' परन्तु उनका विषयों पर जितना आकर्षण तथा कामिनी-कांचन में जितना प्रेम रहता है, उसका एक अंश भी ईश्वर की ओर नहीं रहता । परन्तु मुँह से कहते हैं 'ईश्वर से प्रेम करता हूँ ।' (मणि मल्लिक के प्रति) कपटीपन छोड़ो !"

मणिलाल—मनुष्य के साथ या ईश्वर के साथ ?

श्रीरामकृष्ण—सभी के साथ । मनुष्य के साथ भी, और ईश्वर के साथ भी—कपट कभी नहीं करना चाहिए ।

"भवनाथ कैसा सरल है ! विवाह करके आकर मुझसे कहता है, 'स्त्री पर मेरा इतना प्रेम क्यों हो रहा है ?' अहा, वह बहुत ही सरल है !

"तो, स्त्री पर प्रेम नहीं होगा ? यह जगन्माता की भुवन-मोहिनी माया है । स्त्री को देखकर ऐसा लगता है मानो उसके समान अपना संसार भर में और कोई नहीं है—मानो वह उसका जीवन ही है, इहलोक और परलोक दोनों में !

"पर इसी स्त्री को लेकर मनुष्य क्या क्या दुःख नहीं भोग रहा है, फिर भी समझता है कि उसके समान अपना और कोई नहीं है । क्या दुर्दशा है ! बीस रुपये वेतन, तीन बच्चे हुए हैं—उन्हें अच्छी तरह से खिलाने की शक्ति नहीं है—मकान की छत से पानी टपकता है, मरम्मत कराने को पैसा नहीं है—लड़के को नयी पुस्तके खरीद कर नहीं दे सकता—लड़के का यज्ञोपवीत-संस्कार नहीं कर सकता—किसी से आठ आना, किसी से चार आना करके भीख माँगता है !

"विद्यारूपिणी स्त्री वास्तव में सहधर्मिणी है। वह स्वामी के ईश्वर-पथ में जाने में विशेष सहायता करती है। एक-दो बच्चे होने के बाद दोनों आपस में भाई-बहन की तरह रहते हैं। दोनों ही ईश्वर के भक्त हो जाते हैं—दास तथा दासी। उनकी गृहस्थी विद्या की गृहस्थी है। ईश्वर और भक्तों को लेकर सदा आनन्द मनाते हैं। वे जानते हैं, ईश्वर ही एकमात्र अपना है—चिरकाल के लिए अपना। सुख में, दुःख में कभी उन्हें नहीं भूलते—जैसे पाण्डव।

"संसारियों का ईश्वरप्रेम क्षणिक है—जैसे तपाये हुए तवे पर जल पड़ा ही—'छुन्' शब्द हुआ—और उसके बाद ही सूख गया। संसारी लोगों का मन भोग की ओर रहता है इसलिए वह अनुराग, वह व्याकुलता नहीं होती।

"एकादशी तीन प्रकार की होती है। प्रथम निर्जला एकादशी, जल तक नहीं पिया जाता. इसी प्रकार, फकीर पूर्ण त्यागी होते हैं—एकदम सब भोगों का त्याग। दूसरी में दूधमिठाई खायी जाती है—मानो भक्त ने घर में मामूली भोग रखा है। तीसरी—वह जिसमें हलवापूरी खायी जाती है—खूब भर पेट खा रहा है; इधर रोटी दूध में भी छोड़ रखी है—बाद में खायगा!

"लोग साधन-भजन करते हैं, परन्तु मन रहता है स्त्री तथा धन की ओर; मन भोग की ओर रहता है, इसीलिए साधन-भजन ठीक नहीं होता।

"हाजरा यहाँ पर बहुत जप-तप करता था, परन्तु घर में स्त्री, बच्चे, जमीन आदि थी, इसलिए जप-तप भी करता है, भीतर भीतर दलाली भी करता है। इन सब लोगों की बातों की *स्थिरता नहीं रहती। कभी कहता है, 'मछली नहीं खाऊँगा,' पर*

फिर खाता है।

"धन के लिए लोग क्या नहीं कर सकते। ब्राह्मणों से, साधुओं से कुली का काम ले सकते हैं।

"मेरे कमरे में कभी कभी सन्देश सड़ तक जाता था, फिर भी मैं उसे संसारी लोगों को दे नहीं सकता था। दूसरों के शौच के लोटे का जल ले सकता था परन्तु ऐसे लोगों का तो लोटा भी नहीं छू सकता था।

"दूसरा धनवालों को देखने पर उन्हें अपने पास बुलाता था —बुलाकर लम्बी लम्बी बातें सुनाता था और उनसे कहता था, 'राखाल आदि जिन्हें देख रहे हो ये जप-तप नहीं कर सकते— हो हो करके घूमते हैं।'

"मैं जानता हूँ कि यदि कोई पहाड़ की गुफा में रहता हो, देह पर भभूत मलता हो, उपवास करता हो, अनेक प्रकार के कठोर तप करता हो परन्तु भीतर भीतर उसका विषय की ओर मन रहता हो—कामिनी-कांचन में मन रहता हो—तो उसे मैं धिक्कारता हूँ। और जिसका कामिनी-कांचन में मन नहीं होता है—खाता पीता और मस्त घूमता है, उसे धन्य कहता हूँ।

(मणि मल्लिक को दिखाकर) "इनके घर में साधुओं के चित्र नहीं हैं। साधुओं के चित्र देखने पर ईश्वर का उद्दीपन होता है।"

मणिलाल—हाँ नन्दिनी* के कमरे में एक मेम का चित्र है— विश्वासरूपी पहाड़ को पकड़कर एक व्यक्ति है, नीचे गम्भीर समुद्र है, विश्वास छोड़ने पर एकदम अतल जल में जा गिरेगा।

"एक और है—कुछ लड़कियाँ दूल्हे के आने की प्रतीक्षा

* नन्दिनी—मणि मल्लिक की विधवा कन्या, श्रीरामकृष्ण की भक्तिनी।

में दीपक में तेल भरकर जगती हुई बैठी है। जो सो जायगी, वह देख न सकेगी। ईश्वर का वर्णन दूल्हा कहकर किया गया है (Parable of the ten Virgins)।

श्रीरामकृष्ण--(हँसकर)--यह अच्छा है।

मणिलाल--और भी चित्र हैं।--विश्वास का वृक्ष तथा पाप और पुण्य के चित्र।

श्रीरामकृष्ण--(भवनाथ के प्रति)--अच्छे चित्र हैं सब; तू देखने को जाना।

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, "कभी-कभी इन बातों पर सोचता हूँ तो ये सब अच्छी नहीं लगतीं। पहले एक बार पाप पाप सोचना होता है, कैसे पाप से मुक्ति मिले, परन्तु उनकी कृपा से एक बार प्रेम यदि आ जाय, एक बार प्रेमाभक्ति यदि हो जाय तो पाप पुण्य सब भूल जाता है। उस समय वह शास्त्र के विधि-निषेध के परे चला जाता है। पश्चात्ताप करना पड़ेगा, प्रायश्चित्त करना होगा,--यह सब चिन्ता फिर नहीं रह जाती।

"मानो टेढ़ी नदी में से होकर बहुत कष्ट से और काफी देर के बाद अपने गन्तव्य स्थान पर जा रहे हो। परन्तु यदि बाढ़ आ जाय तो सीधे रास्ते से थोड़े ही समय में उस स्थान पर पहुँच सकते हो। उस समय जमीन पर भी काफी जल हो जाता है।

"प्रथम स्थिति में काफी घूमना पड़ता है, बहुत कष्ट करना पड़ता है।

"प्रेमाभक्ति होने पर बहुत सरल हो जाता है, जैसे धान काट लेने के बाद मैदान में जिधर चाहो, जाओ। पहले मेड़ पर से घूम घूमकर जाना पड़ता था। अब जिधर से चाहो, जाओ।

यदि कुछ कूड़ा-ककंड़ पड़ा हो, तो जूता पहनकर जाने से फिर कोई कष्ट ही नहीं होता। विवेक, वैराग्य, गुरु के वाक्य पर विश्वास—ये सब रहने पर फिर कोई कष्ट नहीं है।"

निराकार ध्यान और साकार ध्यान

मणिलाल-(श्रीरामकृष्ण के प्रति)-अच्छा, ध्यान का क्या नियम है? कहाँ पर ध्यान करना चाहिए?

श्रीरामकृष्ण-प्रसिद्ध स्थान है हृदय। हृदय में ध्यान हो सकता है अथवा सहस्रार में। ये सब विधि के अनुसार ध्यान शास्त्रों में हैं। फिर तुम्हारी जहाँ इच्छा हो ध्यान कर सकते हो। सभी स्थान तो ब्रह्ममय हैं, वे कहाँ नहीं हैं?

"जिस समय बलि की उपस्थिति में नारायण ने तीन पदों से स्वर्ग, मृत्यु, पाताल ढँक लिया था उस समय क्या कोई स्थान बाकी बचा था? गंगातट जैसा पवित्र है वैसा ही वह स्थान भी जहाँ कूड़ाकर्कट है। फिर यह बात भी है कि ये सब उन्हीं की विराट मूर्ति हैं।

"निराकार ध्यान बहुत ही कठिन है। उस ध्यान में तुम जो कुछ देख या सुन रहे हो—उन सब को हटा देना चाहिए। फिर केवल तुम्हारे सत्य स्वरूप का चिन्तन रह जाता है। इसी स्वरूप का चिन्तन कर शिव नृत्य करते हैं। 'मैं क्या हूँ', 'मैं क्या हूँ', कहकर नृत्य करते हैं।

"इसे कहते हैं शिवयोग। इस ध्यान के समय कपाल की ओर दृष्टि रखनी होती है। 'नेति' 'नेति' कहकर जगत् को छोड़ अपने स्वरूप का चिन्तन।

"और एक है विष्णुयोग। नासिका के अग्रभाग में दृष्टि।

आधी भीतर, आधी बाहर। साकार ध्यान में इसी प्रकार होता है।

"शिव कभी कभी साकार चिन्तन करते हुए नाचते हैं— 'राम' 'राम' कहकर नाचते हैं।"

(२)

मणिलाल मल्लिक पुराने ब्राह्म-समाजी हैं। भवनाथ, राखाल, मास्टर बीच बीच में ब्राह्म समाज में जाते थे। श्रीरामकृष्ण ओंकार की व्याख्या तथा यथार्थ ब्रह्मज्ञान और उसके बाद की स्थिति का वर्णन कर रहे हैं।

अनाहत ध्वनि तथा परम पद

श्रीरामकृष्ण—(भक्तों के प्रति)—ॐ शब्द ब्रह्म है, ऋषि मुनि लोग उसी शब्द को प्राप्त करने के लिए तपस्या करते थे। सिद्ध होने पर साधक सुनता है कि नाभि से वह शब्द स्वयं ही उठ रहा है—अनाहत शब्द।

"एक मत है कि केवल शब्द सुनने से क्या होगा? दूर से समुद्र के शब्द का कल्लोल सुनायी देता है। उस शब्द-कल्लोल के सहारे धीरे धीरे आगे बढ़ने से तुम समुद्र तक पहुँच सकते हो। जहाँ कल्लोल होगा, वहाँ समुद्र भी अवश्य होगा। अनाहत ध्वनि के अनुसार आगे बढ़ने पर उसका प्रतिपाद्य जो ब्रह्म उसके पास पहुँचा जा सकता है। उसे ही वेदों में परम पद कहते हैं।* मैंपन रहते वैसा दर्शन नहीं होता। जहाँ 'मैं' भी नहीं, 'तुम' भी नहीं, 'एक' भी नहीं, 'अनेक' भी नहीं, वहीं पर यह दर्शन होता है।

"मानो सूर्य और दस जलपूर्ण घड़े हैं, प्रत्येक घड़े में सूर्य

---

* "घण्टा नादो विलीयते। तद्विष्णोः परमं पदम्। सदा पश्यन्ति सूरयः।"

का प्रतिबिम्ब दिखायी दे रहा है। पहले देखा जाता है एक सूर्य और दस परछाइयों के सूर्य। यदि नौ घड़े तोड़ डाले जायँ, तो बाकी रहते हैं एक सूर्य और एक परछाईंवाला सूर्य। एक एक घड़ा मानो एक एक जीव है। परछाईं के सूर्य को पकड़ पकड़कर वास्तव सूर्य के पास जाया जाता है; जीवात्मा से परमात्मा में पहुँचा जाता है। जीव (जीवात्मा) यदि साधन-भजन करे, तो परमात्मा का दर्शन कर सकता है। अन्तिम घड़े को तोड़ देने पर क्या है वह मुँह से नहीं कहा जा सकता।

"जीव पहले अज्ञानी बना रहता है। ईश्वरबुद्धि नहीं रहती वरन् नाना वस्तुओं की बुद्धि, अनेक चीजों का बोध रहता है। जब ज्ञान होता है, तब उसकी समझ में आता है कि ईश्वर सभी भूतों में है। जिस प्रकार पैर में काँटा चुभता है तो एक और काँटे को ढूँढ़कर उससे वह काँटा निकाला जाता है, अर्थात् ज्ञान-रूपी काँटे के द्वारा अज्ञानरूपी काँटे को निकाल बाहर करना।

"फिर विज्ञान होने पर अज्ञान-काँटा और ज्ञान-काँटा दोनों को ही फेंक देता। उस समय केवल दर्शन ही नहीं, वरन् ईश्वर के साथ रातदिन बातचीत चलती रहती है।

"जिसने केवल दूध की बात सुनी है उसे अज्ञान है, जिसने दूध देखा है उसे ज्ञान हुआ और जो दूध पीकर मोटा-ताजा हुआ है उसे विज्ञान प्राप्त हुआ है।"

अब सम्भव है, श्रीरामकृष्ण अपनी स्थिति भक्तों को समझा रहे हैं। विज्ञानी की स्थिति का वर्णन कर, सम्भव है, अपनी स्थिति कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण--(भक्तों के प्रति)--ज्ञानी साधु और विज्ञानी साधु में भेद है। ज्ञानी साधु के बैठने का कायदा अलग है।

मूँछों पर हाथ फेरकर बैठता है। कोई आये तो कहता है, 'क्या जी, तुम्हें कुछ पूछना है?'

"विज्ञानी साधु सदा ईश्वर का दर्शन करता रहता है, उनके साथ बातचीत करता है, अर्थात् जो विज्ञानी है उसका स्वभाव दूसरा होता है। कभी जड़ की तरह, कभी पिशाच की तरह, कभी बालक की तरह और कभी उन्माद की तरह।

"कभी समाधिमग्न होकर बाहर का ज्ञान खो बैठता है—जड़ की तरह बन जाता है।

"ब्रह्ममय देखता है इसलिए पिशाच की तरह है। पवित्रता-अपवित्रता का ख्याल नहीं रहता। सम्भव है कि शौच करते वेर खा रहा हो—बालक की तरह। स्वप्नदोष के बाद अशुद्धि नहीं समझता है—समझता है, वीर्य से ही शरीर बना है।

"विष्ठा-मूत्र का ज्ञान नहीं है। सब ब्रह्ममय। भात-दाल बहुत दिनों तक रख देने से विष्ठा की तरह बन जाता है।

"फिर उन्माद के समान, उसकी चाल-ढाल देखकर लोग उसे पागल समझते हैं। और फिर कभी बालक की तरह; लज्जा, घृणा, संकोच आदि कोई बन्धन नहीं रहता।

"ईश्वर-दर्शन के बाद यह स्थिति होती है। जैसे चुम्बक पहाड़ के पास होकर जाने में जहाज के स्क्रू-कील-काँटे सब ढीले होकर छूट जाते हैं। ईश्वर-दर्शन के बाद काम, क्रोध आदि नहीं रह जाते।

"माँ काली के मन्दिर पर जब बिजली गिरी थी, तो हमने देखा था, सभी स्क्रू के माथे उड़ गये थे।

"जिन्होंने ईश्वर का दर्शन किया है, उनमें फिर बच्चा पैदा करना अथवा सृष्टि का काम नहीं होता। धान बोने से

पौधा होता है, परन्तु धान उबाल कर बोने से उससे पौधा नहीं होता है।

"जिन्होंने ईश्वर का दर्शन किया है उनका 'मैं' केवल नाम का ही रह जाता है। उस 'मैं' द्वारा कोई अनुचित कार्य नही होता, सिर्फ नाम को रह जाता है।

"मैंने केशव सेन से कहा, 'मैं' को त्याग दो—मैं—कर्ता हूँ—मैं लोगों को शिक्षा दे रहा हूँ—इस 'मैं' को। केशव ने कहा, 'महाशय, तो फिर दल नही रहता!' मैंने कहा, बुरे 'मैं' को त्याग दो।

"'ईश्वर का दास मैं' 'ईश्वर का भक्त मैं' इसे त्यागना नहीं पड़ेगा। 'बुरा मैं' मौजूद है, इसीलिए 'ईश्वर का मैं' नहीं रहता।

"यदि कोई भण्डारी रहे तो मकान का मालिक भण्डार का भार स्वयं नही लेता।"

श्रीरामकृष्ण-(भक्तों के प्रति)-देखो इस हाथ मे चोट लगने के करण मेरा स्वभाव बदलता जा रहा है। अब मनुष्य में ईश्वर का अधिक प्रकाश दिखायी दे रहा है। मानो वे कह रहे हैं, मेरा मनुष्यों मे वास है, तुम मनुष्यो के साथ आनन्द करो।

"वे शुद्ध भक्तों मे अधिक प्रकट हैं—इसीलिए तो मैं नरेन्द्र, राखाल आदि के लिए इतना व्याकुल होता हूँ।

"तालाब के किनारे पर छोटे छोटे गड्ढे रहते हैं, उन्हीं मे मछलियाँ, केकड़े आकर इकट्ठे हो जाते हैं, उसी प्रकार मनुष्य में ईश्वर का प्रकाश अधिक है।

"ऐसा है कि शालग्राम से भी मनुष्य बड़ा है; नर ही

नारायण हैं।

"प्रतिमा में उनका आविर्भाव होता है और भला मनुष्य में नहीं होगा ?

"वे नरलीला करने के लिए मनुष्य-रूप में अवतीर्ण होते हैं— जैसे श्रीरामचन्द्र, श्रीकृष्ण, श्रीचैतन्यदेव। अवतार का चिन्तन करने से ही उनका चिन्तन होता है।"

ब्राह्मभक्त भगवानदास आये है।

श्रीरामकृष्ण—(भगवानदास के प्रति)—ऋषियों का धर्म, सनातन धर्म—अनन्त काल से है और रहेगा। इस सनातन धर्म के भीतर निराकार, साकार सभी प्रकार की पूजाएँ हैं। ज्ञानपथ, भक्तिपथ सभी हैं। अन्य जो सम्प्रदाय हैं, वे आधुनिक हैं। कुछ दिन रहेंगे, फिर मिट जायेंगे।

परिच्छेद ६

ईश्वरलाभ ही जीवन का उद्देश्य है

(१)

दक्षिणेश्वर मन्दिर में राखाल, राम, आदि के साथ

रविवार, २३ मार्च १८८४। श्रीरामकृष्ण दोपहर के भोजन के बाद राखाल, राम आदि भक्तों के साथ बैठे हुए हैं। शरीर पूर्ण स्वस्थ नहीं है। अब तक हाथ में तख्ती बँधी हुई है।

शरीर अस्वस्थ रहने पर भी श्रीरामकृष्ण आनन्द की हाट लगाये हुए हैं। दल के दल भक्त आते हैं। सदैव ही ईश्वरी कथा-प्रसंग और आनन्द है। कभी कीर्तनानन्द और कभी समाधिमग्न होकर श्रीरामकृष्ण ब्रह्मानन्द का अनुभव कर रहे हैं। भक्तगण अवाक् होकर देखते हैं। श्रीरामकृष्ण वार्तालाप करने लगे।

राम-आर. मित्र की कन्या के साथ नरेन्द्र का विवाह ठीक हो रहा है। बहुत धन देने को कहता है।

श्रीरामकृष्ण-(सहास्य)-इसी तरह किसी दल का नेता बन जायगा। वह जिस तरफ झुकेगा, उसी ओर बड़ा व्यक्ति होकर नाम पैदा करेगा।

श्रीरामकृष्ण ने फिर नरेन्द्र की बात ही न उठने दी।

श्रीरामकृष्ण-(राम से)-अच्छा बीमार पड़ने पर मैं इतना अधीर क्यों हो जाया करता हूँ? कभी इससे पूछता हूँ, किस तरह अच्छा होऊँगा, कभी उससे पूछता हूँ!

"बात यह है कि विश्वास या तो सब पर करे या किसी पर न करे।

"वे ही डाक्टर और कविराज हुए हैं; इसलिए सभी चिकित्सकों पर विश्वास करना चाहिए। पर उन लोगों को आदमी सोचने पर फिर विश्वास नहीं होता।

"शम्भु को घोर विकार था। डाक्टर सर्वाधिकारी ने देखकर बतलाया—दवा की गरमी है।

"हलधारी ने नाड़ी दिखायी, डाक्टर ने कहा—'आँख देखें—अच्छा! तुम्हारी प्लीहा बढ़ गयी है!' हलधारी ने कहा—'मेरे प्लीहा-फीहा कहीं कुछ नहीं है।'

"मधु डाक्टर की दवा अच्छी है।"

राम—दवा से फायदा नहीं होता, परन्तु इतना अवश्य होता है कि वह प्रकृति की बहुत कुछ सहायता जरूर करती है।

श्रीरामकृष्ण—दवा से अगर उपकार नहीं होता तो अफीम फिर कैसे दस्त रोक देती है?

राम केशव के देहान्त होने की बात कह रहे हैं।

राम—आपने तो ठीक ही कहा था—अच्छा गुलाब का पेड़ हुआ तो माली उसकी जड़ खोल देता है। ओस पाने पर पौधा और जोरदार होता है। सिद्धवचन का फल तो प्रत्यक्ष कर लिया।

श्रीरामकृष्ण—क्या जाने भाई, इतना तो हिसाब मैंने नहीं किया था, तुम्हीं कह रहे हो।

राम—उन लोगों ने आपकी बात समाचार-पत्रों में निकाल दी थी।

श्रीरामकृष्ण—बाप रे! यह क्या? अभी सेंकाना क्यों? मैं खाता हूँ—पड़ा रहता हूँ, बस, और मैं कुछ नहीं जानता।

"केशव सेन से मैंने कहा, छापा क्यों ? उसने कहा—तुम्हारे पास लोग आयें इसलिए।

(राम आदि से) "आदमी की शक्ति से लोक-शिक्षा नहीं होती। ईश्वर की शक्ति के बिना अविद्या नहीं जीती जा सकती।

"दो आदमी कुश्ती लड़े—हनुमानसिंह और एक पंजाबी मुसलमान। मुसलमान खूब तगड़ा था। कुश्ती के दिन तथा उसके पन्द्रह दिन पहले उसने खूब मांस और घी खाया था। सब सोचते थे वही जीतेगा।

"हनुमानसिंह मैले कपडे पहने रहता था। कुश्ती के कुछ दिन पहले वह बहुत कम खाया करता था, परन्तु महावीरजी का नाम खूब लेता था। जिस दिन कुश्ती होने को थी, उस दिन तो उसने निर्जल उपवास किया। लोग सोचने लगे, यह जरूर हारेगा।

"परन्तु जीता वही, और पन्द्रह दिन तक जिसने खूब खाया था, वह हार गया।

"धक्कामधक्का करने से क्या होगा ?—जिसे लोक-शिक्षा देनी है, उसको शक्ति ईश्वर के पास से आयेगी। और त्यागी हुए बिना लोक-शिक्षा नहीं होती।

'मैं हूँ मूर्खों का सिरमौर—" (लोग हँसते हैं।)

एक भक्त-ऐसा है तो आप के मुंह से वेद-वेदान्त—इसके अलावा भी न जाने क्या क्या—कैसे निकलते हैं ?

श्रीरामकृष्ण-(सहास्य)-परन्तु मेरे लड़कपन में लाहा बाबू के यहाँ साधु-महात्मा जो कुछ पढ़ते थे, वह सब मैं समझ लेता था, परन्तु यहीं कहीं समझ में आता भी नहीं था। कोई पण्डित आकर यदि संस्कृत बोलता है तो मैं समझ लेता हूँ। परन्तु खुद

संस्कृत नहीं बोल सकता।

"उन्हें प्राप्त करना, यही जीवन का उद्देश्य है। लक्ष्य-भेद के समय अर्जुन ने कहा, मुझे और कुछ नहीं दीख पड़ता—केवल चिड़िया की आँख देख रहा हूँ, न राजाओं को देखता हूँ, न पेड़, यहाँ तक कि चिड़िया को भी नहीं देख रहा हूँ।

"उन्हें पाने ही से काम हो गया!—संस्कृत न पढ़ी तो क्या हुआ है?

"उनकी कृपा पण्डित, मूर्ख और सब बच्चों पर है—जो उनको पाने के लिए व्याकुल हो। पिता का स्नेह सब पर बराबर है।

"पिता के पाँच लड़के हैं, उनमें एक-दो बाबूजी कहकर पुकार सकते हैं। कोई बा कहकर पुकारता है। कोई पा कहता है, पूरा पूरा उच्चारण नहीं कर सकता। जो बाबूजी कहता है, उस पर क्या बाप का प्यार ज्यादा होगा और जो पा कहकर पुकारता है, उस पर कम? बाप जानता है, यह छोटा बच्चा अभी साफ बाबूजी नहीं कह सकता।

"हाथ टूटने के बाद से एक अवस्था बदल रही है। नर-लीला की ओर मन बहुत जा रहा है। वे ही आदमी बनकर खेल रहे हैं।

"मिट्टी की मूर्ति में तो उनकी पूजा होती है और मनुष्यों में नहीं हो सकती?

"एक सौदागर, लंका के पास जहाज के डूब जाने से, लंका के तट पर बहकर आ गया। विभीषण के आदमी उसको आज्ञा पा उस आदमी को विभीषण के पास ले गये। 'अहा! मेरे रामचन्द्र जैसी इसकी मूर्ति है। वही नर-रूप!' यह कहकर

विभीषण आनन्द मनाने लगे। उस आदमी को तरह तरह के कपड़े पहनाकर उसकी पूजा-आरती की!

"यह बात जब मैंने पहले पहल सुनी थी, तब मुझे इतना आनन्द हुआ था जिसका ठिकाना नहीं।

"वैष्णवचरण से पूछने पर उसने कहा, जो जिसे प्यार करता है, उसे इष्ट मानने पर ईश्वर पर शीघ्र ही मन लग जाता है। 'तू किसे प्यार करता है?'—'अमुक को।' 'तो उसे ही अपना इष्ट मान।' उस देश में (कामारपुकुर, श्यामबाजार में) मैंने कहा—'इस तरह का मत मेरा नहीं है—मेरा मातृ-भाव है।' देखा, बातें तो बड़ी लम्बी चौड़ी करते हैं और उधर व्यभिचार भी करते हैं। औरतों ने पूछा—क्या हम लोगों की मुक्ति न होगी? मैंने कहा—होगी अगर एक ही पर भगवद्दृष्टि से निष्ठा रहेगी। पाँच मर्दों के साथ रहने से न होगी।"

राम—केदार शायद कर्ताभजावालों (एक सम्प्रदाय) के यहाँ गये थे।

श्रीरामकृष्ण—वह पाँच तरह के फूलों से मधु लिया करता है।

(राम, नित्यगोपाल आदि से)—"यही मेरे इष्ट हैं, इस तरह का जब सोलहों आना विश्वास हो जायेगा, तब ईश्वर मिलेंगे—तब उनके दर्शन होंगे।

"पहले के आदमियों में विश्वास बहुत होता था। हलधारी के बाप को बड़ा पक्का विश्वास था!

"वह अपनी लड़की की ससुराल जा रहा था। रास्ते में बेल खूब फूल रहे थे और बेल के अच्छे दल भी उगे दीख पड़े। श्रीठाकुरजी की सेवा करने के लिए फूल और बेलपत्र लेकर

उल्टे पाँव तीन कोस जमीन अपने घर लौट आया।

"रामलीला हो रही थी। कैकेयी ने राम को वनवास की आज्ञा दी। हलधारी का बाप भी रामलीला देखने गया था। वह बिलकुल उठकर खड़ा हो गया। जो कैकेयी बना था उसके पास पहुँचकर कहा—'अभागिन्!' यह कहकर उसने उसके मुँह में दीया लगा देना चाहा!

"नहाने के बाद जब पानी में खड़ा होकर 'रक्तवर्णं चतुर्मुखम्' कहकर ध्यान करता था, तब उसकी आँखों से आँसुओं की धारा बह चलती थी।

"मेरे पिता जब खड़ाऊ पहनकर रास्ते पर चलते थे तब गाँव के दूकानदार उठकर खड़े हो जाते थे। कहते, वे आ रहे हैं!

"जब वे हलदार तालाब में नहाते थे, तब वहाँ कोई नहाने जाय, ऐसी हिम्मत किसी में न थी। लोग खबर रखते, वे नहाकर गये या नहीं।

"रघुवीर रघुवीर कहते कहते उनकी छाती लाल हो जाती थी।

"मुझे भी ऐसा ही होता था। वृन्दावन में गौओं को चरकर लौटते हुए देखकर, भाव से शरीर की वैसी ही दशा हो गयी थी।

"तब के आदमियों में बड़ा विश्वास था। ऐसी बात भी सुनने में आती है कि भगवान काली के रूप में नाच रहे हैं और साधक तालियाँ बजा रहे हैं।"

पंचवटी के कमरे में एक हठयोगी आये हुए हैं। एँड़ेदा के कृष्णकिशोर के पुत्र रामप्रसन्न और दूसरे भी कई आदमी उस हठयोगी पर बड़ी भक्ति रखते हैं। परन्तु उनके अफीम और दूध के लिए हर महीने पच्चीस रुपये का खर्च होता है। रामप्रसन्न

ने श्रीरामकृष्ण से कहा था, 'आपके यहाँ तो कितने भक्त आते हैं, उनसे कुछ कह दीजियेगा; हठयोगी के लिए कुछ रुपये मिल जायेंगे।'

श्रीरामकृष्ण ने कुछ भक्तों से कहा, "पंचवटी में जाकर हठयोगी को देखो, कैसा आदमी है।"

(२)

ठाकुरदादा अपने दो-एक मित्रों को साथ लेकर श्रीरामकृष्ण के पास आये हैं। उन्होंने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। उम्र २७-२८ होगी। वराहनगर में रहते हैं। ब्राह्मण पण्डित के लड़के हैं। कथाएँ कहने का अभ्यास कर रहे हैं। अब संसार का भार ऊपर आ पड़ा है। कुछ दिन के लिए विरागी होकर घर से निकल गये थे। साधन-भजन अब भी करते हैं।

श्रीरामकृष्ण–क्या तुम पैदल आ रहे हो? कहाँ रहते हो?

ठाकुरदादा–जी हाँ, वराहनगर में रहता हूँ।

श्रीरामकृष्ण–यहाँ क्या कोई काम था?

ठाकुरदादा–जी, आपके दर्शन करने आया हूँ। उन्हें पुकारता हूँ, परन्तु बीच बीच में अशान्ति क्यों होती है? दो-चार दिन तो आनन्द में रहता हूँ, परन्तु उसके बाद फिर अशान्ति क्यों होने लगती है?

कारीगर; मन्त्र में विश्वास; हरिभक्ति; ज्ञान के दो लक्षण

श्रीरामकृष्ण–मैं समझ गया। पटरी ठीक नहीं बैठती। कारीगर दाँत में दाँत ठीक बैठा देता है तब होता है। शायद वहीं कुछ अटक रहा है।

ठाकुरदादा–जी हाँ, ऐसी ही अवस्था हुई है।

श्रीरामकृष्ण—क्या तुम मन्त्र ले चुके हो?

ठाकुरदादा—जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण—मन्त्र पर विश्वास तो है?

ठाकुरदादा के एक मित्र ने कहा—'ये बहुत अच्छा गाते हैं।' श्रीरामकृष्ण ने एक गाना गाने के लिए कहा। ठाकुरदादा गा रहे हैं—

"प्रेम-गिरि की कन्दरा में योगी बनकर रहूँगा। वहाँ आनन्द के झरने के पास मैं ध्यान करता हुआ बैठा रहूँगा। तत्त्व-फलों का संग्रह करके मैं ज्ञान की भूख मिटाऊँगा। और वैराग्यकुसुमों से श्रीपादपद्मों की पूजा करूँगा। विरह की प्यास बुझाने के लिए मैं अब कुएँ के पानी के लिए न जाऊँगा, हृदय के पात्र में शान्ति का सलिल भर लूँगा। कभी भाव के शिखर पर चरणामृत पीकर हँसूँगा, रोऊँगा, नाचूँगा और गाऊँगा।"

श्रीरामकृष्ण—वाह, अच्छा गाना है! आनन्द-निर्झर! तत्त्वफल! हँसूँगा, रोऊँगा, नाचूँगा और गाऊँगा!

"तुम्हारे भीतर से गाना कैसा मधुर लग रहा है! —बस और क्या चाहिए!

"संसार में रहने से सुख और दुःख हैं ही—थोड़ी सी अशान्ति तो मिलेगी ही। काजल की कोठरी में रहने से देह में कुछ कालिख लग ही जाती है।"

ठाकुरदादा—जी, मैं अब क्या करूँ, बतला दीजिये।

श्रीरामकृष्ण—तालियाँ बजा-बजाकर सुबह-शाम ईश्वर के गुण गाया करना—नाम लेना 'हरि बोल' 'हरि बोल' 'हरि बोल' कहकर।

"एक बार और आना—मेरा हाथ कुछ अच्छा होने पर।"

महिमाचरण ने श्रीरामकृष्ण को आकर प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण–(महिमा से)–अहा! उन्होंने एक बड़ा सुन्दर गाना गाया है। गाओ तो जी वही गाना एक बार और।

गाना समाप्त होने पर श्रीरामकृष्ण महिमाचरण से कह रहे हैं—'तुम वही श्लोक एक बार कहो तो जरा, जिसमें ईश्वरभक्ति की बातें हैं।'

महिमाचरण ने, 'अन्तर्बहिर्यदि हरिस्तपसा ततः किम्', कहकर सुनाया; श्रीरामकृष्ण ने कहा, और वह भी कहो जिसमें 'लभ लभ हरिभक्तिम्' है।

महिमाचरण कहने लगे—

विरम विरम ब्रह्मन् किं तपस्यासु वत्स।
व्रज व्रज द्विज शीघ्रं शंकरं ज्ञानसिन्धुम्॥
लभ लभ हरिभक्तिं वैष्णवोक्तां सुपक्वाम्।
भवनिगडनिबन्धच्छेदनी कर्तरी च॥

श्रीरामकृष्ण–शंकर हरि-भक्ति देंगे।

महिमा–पाशमुक्तः सदा शिवः।

श्रीरामकृष्ण–लज्जा, घृणा, भय और संकोच, ये सब पाश हैं, क्यों जी?

महिमा–जी हाँ। गुप्त रखने की इच्छा, प्रशंसा से अत्यधिक सिकुड़ना।

श्रीरामकृष्ण–ज्ञान के दो लक्षण हैं। पहला तो यह कि कूटस्थ बुद्धि हो। लाख दुःख, कष्ट, विपत्तियाँ और विघ्न हों—सब में निर्विकार रहना—जैसे लोहार के यहाँ का लोहा, जिस पर हथौड़ा चलाते हैं। और दूसरा है पुरुषकार—पूरी जिद। काम और क्रोध से अपना अनिष्ट हो रहा है—देखा कि एकदम

त्याग !! कछुआ जब अपने हाथ पैर भीतर समेट लेता है, तब उसके चार खण्ड कर डालने पर भी उन्हें वह बाहर नहीं निकालता।

(ठाकुरदादा आदि से) "वैराग्य दो तरह का है। तीव्र वैराग्य और मन्द वैराग्य। मन्द वैराग्य वह है जिसका भाव है, 'होता है—हो जायगा।' तीव्र वैराग्य शान पर लगाये हुए छुरे की धार है—माया के पाशों को तुरन्त काट देता है।

"कोई किसान कितने ही दिनों से मेहनत करता है, परन्तु पानी खेत में आता ही नहीं! मन में जिद है ही नहीं! और कोई दो-चार दिन मेहनत करने के बाद—'आज पानी लाकर दम लूँगा' इस तरह का हठ ठान बैठता है। नहाना-खाना सब बन्द कर देता है। दिन भर मेहनत करने के बाद जब कुल्-कुल् स्वर से पानी आने लगता है तब उसे कितना आनन्द होता है! तब वह घर जाकर अपनी स्त्री से कहता है—'ले आ तेल—मालिश करके नहाऊँगा'। नहा-खाकर फिर सुख की नींद सोता है।

"एक की स्त्री ने कहा, 'अमुक को बड़ा वैराग्य हुआ है—तुम्हें कुछ भी न हुआ।' जिसे वैराग्य हुआ था, उसके सोलह स्त्रियाँ थीं, एक एक करके वह सब को छोड़ रहा है।

"उस स्त्री का स्वामी कन्धे पर अँगोछा डाले हुए नहाने जा रहा था। उसने कहा, अरी, सुन, त्याग करने की शक्ति उसमें नहीं है, थोड़ा थोड़ा करके कभी त्याग नहीं होता। देख, मैं अब चला!

"घर का कोई प्रबन्ध न करके, उसी अवस्था में कन्धे पर अँगोछा डाले हुए, घर छोड़कर वह चला गया। इसे ही तीव्र वैराग्य कहते हैं।

"एक तरह का वैराग्य और है, उसे मर्कट-वैराग्य कहते

है। संसार की ज्वाला से जलकर गेरुआ वस्त्र पहनकर काशी चला गया। बहुत दिनों तक कोई खबर नहीं। फिर एक चिट्ठी आयी—'तुम लोग कोई चिन्ता न करो, यहाँ मुझे एक काम मिल गया है।'

"संसार की ज्वाला तो है ही। बीबी कहना नहीं मानती, वेतन सिर्फ बीस रुपया महीना, बच्चे का 'अन्नप्राशन' नहीं हो रहा है, बच्चे को पढ़ने का खर्च नहीं, घर टूटा हुआ, छत चू रही है, मरम्मत के लिए रुपये नहीं!

"इसीलिए जब कोई कम उम्र का लड़का आता है तब मैं उससे पूछ लेता हूँ कि तुम्हारे कौन कौन है।

(महिमा के प्रति) "तुम्हारे लिए संसार-त्याग करने की क्या जरूरत है? साधुओं को कितनी तकलीफ होती है! एक की स्त्री ने पूछा, 'तुम संसार छोड़ोगे—क्यों? दस घरों में घूम-घूमकर भीख माँगोगे, इससे तो एक घर में खाते हो, यही अच्छा है।'

"सदाव्रत की तलाश में रास्ता छोड़कर साधु-सन्त तीन कोस से भी दूर चले जाते हैं। मैंने देखा है, जगन्नाथ के दर्शन करके सीधे रास्ते से साधु आ रहे हैं, परन्तु सदाव्रत के लिए उन्हें सीधा रास्ता छोड़कर जाना पड़ता है।

"यह तो अच्छा है—किले से लड़ना। मैदान में खड़े होकर लड़ने में असुविधाएँ हैं। विपत्ति, देह पर गोले और गोलियाँ आकर गिरती हैं।

"हाँ कुछ दिनों के लिए निर्जन में जाकर, ज्ञान-लाभ करके संसार में आकर रहो। जनक ज्ञान-लाभ करके संसार में आकर रहे थे। ज्ञान-लाभ हो जाने पर फिर जहाँ रहो, उसमें कोई

हानि नहीं ।"

महिमाचरण—महाराज, मनुष्य विषय में क्यों फँस जाता है ?

श्रीरामकृष्ण—उन्हें बिना प्राप्त किये ही विषय में रहता है, इसलिए। उन्हें प्राप्त कर लेने पर फिर मुग्ध नहीं होता। पतिंगा अगर एक बार उजाला देख लेता है, तो फिर और उसे अन्धकार अच्छा नहीं लगता।

"उन्हें पाने की इच्छा रखनेवालों को वीर्य-धारण करना पड़ता है।

"शुकदेवादि ऊर्ध्वरेता थे। इनका रेतपात कभी नहीं हुआ।

"एक और हैं धैर्यरेता। पहले रेतपात हो चुका है, परन्तु इसके बाद से वे वीर्यधारण करने लगे हैं। बारह वर्ष तक धैर्यरेता रहने पर विशेष शक्ति पैदा होती है। भीतर एक नयी नाड़ी होती है; उसका नाम है मेधानाड़ी। उस नाड़ी के होने पर सब स्मरण रहता है—आदमी सब जान सकता है।

"वीर्यपात से बल का क्षय होता है। स्वप्नदोष से जो कुछ निकल जाता है, उसमें दोष नहीं। ऐसा खाद्य पदार्थ के गुण से होता है। इस तरह निकल जाने पर भी जो कुछ रहता है, उसी से काम होता है। फिर भी स्त्री-प्रसंग हरगिज न करना चाहिए।

"अन्त में जो कुछ रहता है वह refine (सार पदार्थ) है। लाहा बाबू के यहाँ राव के घड़े रखे थे। घड़ों के नीचे एक एक छेद करके फिर एक साल बाद जब देखा, तब सब दाने बँध गये थे—मिश्री की तरह। जितना सीरा निकलना था, सब छेद से निकल गया था।

"स्त्रियों का सम्पूर्ण त्याग सन्यासियों के लिए है। तुम लोगों का विवाह हो गया है, कोई दोष नहीं है।

"संन्यासी को स्त्रियों का चित्र भी न देखना चाहिए। पर साधारण लोगों के लिए यह सम्भव नहीं है। सा, रे, ग, म, प, ध, नि; 'नि' में तुम्हारी आवाज बहुत देर तक नहीं रह सकती।

"संन्यासी के लिए वीर्यपात बहुत ही बुरा है; इसीलिए उन्हें सावधानी से रहना पड़ता है, ताकि स्त्रियाँ दृष्टि में भी न पड़ें। भक्त-स्त्री होने पर भी वहाँ से हट जाना चाहिए। स्त्री-रूप देखना भी बुरा है। जाग्रत अवस्था में चाहे न हो पर स्वप्न में अवश्य वीर्य-स्खलन हो जाता है।

"सन्यासी जितेन्द्रिय होने पर भी लोक-शिक्षा के लिए स्त्रियों के साथ उसे बातचीत न करनी चाहिए। भक्त-स्त्री होने पर भी उससे ज्यादा देर तक बातचीत न करे।

"संन्यासी की है निर्जला एकादशी। एकादशी और दो तरह की है। एक फलमूल खाकर रखी जाती है, एक पूड़ी-कचौड़ी और मालपुए खाकर। (सब हँसते हैं।)

"कभी तो ऐसा भी होता है कि उधर पूड़ियाँ उड़ रही हैं और इधर दूध में दो-एक रोटियाँ भी भीग रही हैं, फिर खायेंगे! (सब हँसते हैं।)

(हँसते हुए) "तुम लोग निर्जला एकादशी न रख सकोगे।

"कृष्णकिशोर को मैंने देखा, एकादशी के दिन पूड़ियाँ और पकवान उड़ा रहे थे। मैंने हृदय से कहा, हृदय, मेरी इच्छा होती है कि मैं भी कृष्णकिशोर की एकादशी रखूँ। (सब हँसते हैं।) एक दिन ऐसा ही किया भी। खूब कसकर खाया। परन्तु उसके दूसरे दिन फिर कुछ न खाया गया।" (सब हँसते हैं।)

जो भक्त पंचवटी में हठयोगी को देखने गये थे, वे लौटे। श्रीरामकृष्ण उनसे कह रहे हैं—"क्यों जी, कैसा देखा? अपने गज

से तो मापा ही होगा ?" श्रीरामकृष्ण ने देखा, भक्तों में कोई भी हठयोगी को रुपये देने के लिए राजी नहीं है।

श्रीरामकृष्ण-साधु को जब रुपये देने पड़ते हैं तब फिर वह नहीं भाता।

"राजेन्द्र मित्र की तनख्वाह आठ सौ रुपया महीना है—वह प्रयाग से कुम्भ मेला देखकर आया था। मैंने पूछा—'क्यों जी, मेले में कैसे सब साधु देखे ?' राजेन्द्र ने कहा—'कहाँ ?—वैसा साधु एक भी न देखा। एक को देखा था, परन्तु वह भी रुपया लेता था।'

"मैं सोचता हूँ, साधुओं को अगर कोई रुपया-पैसा न देगा तो वे खायेंगे क्या ? यहाँ कुछ देना नहीं पड़ता, इसीलिए सब आते हैं। मैं सोचता हूँ, इन लोगों को अपना पैसा बहुत प्यारा है। तो फिर रहे न उसी को लेकर।"

श्रीरामकृष्ण जरा विश्राम कर रहे हैं। एक भक्त छोटी खाट पर बैठे हुए उनके पैर दबा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण भक्त से धीरे धीरे कह रहे हैं, "जो निराकार है वही साकार भी है। साकार-रूप भी मानना चाहिए। काली-रूप की चिन्ता करते हुए साधक काली-रूप के ही दर्शन पाता है। फिर वह देखता है कि वह रूप अखण्ड में लीन हो गया। जो अखण्ड सच्चिदानन्द है वही काली भी है।"

(३)

श्रीरामकृष्ण पश्चिमवाले गोल बरामदे में महिमाचरण आदि के साथ हठयोगी की बातें कर रहे हैं। रामप्रसन्न भक्त कृष्णकिशोर के पुत्र हैं। इसीलिए श्रीरामकृष्ण उन पर स्नेह करते हैं।

श्रीरामकृष्ण–रामप्रसन्न उसी तरह अल्हड़पने में घूम रहा है। उस दिन यहाँ आकर बैठा, कुछ बोला भी नहीं; प्राणायाम साधकर श्वास चढ़ाये बैठा रहा। खाने को दिया, परन्तु खाया भी नहीं। एक और दूसरे दिन भी बुलाकर बैठाया। वह पैर पर पैर चढ़ाकर बैठा—कप्तान की ओर पैर करके। उसकी माँ का दु:ख देखकर रोता हूँ।

(महिमाचरण से) "उस हठयोगी की बात तुमसे कहने के लिए उसने कहा था। प्रति दिन उसका साढ़े छः आने का खर्च है। इधर खुद कुछ न कहेगा!"

महिमा–कहने से सुनता कौन है! (श्रीरामकृष्ण और दूसरे हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में आकर अपने आसन पर बैठे। पानिहाटी के श्रीयुत मणि सेन दो-एक मित्रों के साथ आये हैं, श्रीरामकृष्ण के हाथ टूटने के सम्बन्ध में पूछताछ कर रहे हैं। उनके साथियों में एक डाक्टर भी है।

श्रीरामकृष्ण आजकल डाक्टर प्रतापचन्द्र मजूमदार का इलाज कर रहे हैं। मणिबाबू के साथवाले डाक्टर ने उनकी चिकित्सा का अनुमोदन नहीं किया। श्रीरामकृष्ण उनसे कह रहे हैं—"वह (प्रताप) कुछ बेवकूफ तो है नहीं, तुम क्यों ऐसी बात कह रहे हो?"

इसी समय लाटू ने जोर से पुकारकर कहा, "शीशी गिरकर फूट गयी है।"

मणि सेन हठयोगी की बात सुनकर कह रहे हैं—"हठयोगी किसे कहते हैं? हट् (hot) का तो अर्थ है गरम!"

मणि सेन के डाक्टर के सम्बन्ध में श्रीरामकृष्ण ने पीछे से

कहा—"इसे जानता हूँ। यदु मल्लिक से मैंने कहा भी था, यह तुम्हारा डाक्टर बिलकुल खोखला है—अमुक डाक्टर से भी इसकी बुद्धि मोटी है।"

अभी सन्ध्या नहीं हुई है। श्रीरामकृष्ण अपने आसन पर बैठकर मास्टर से बातचीत कर रहे हैं। वे खाट के पास पाँवपोश पर पश्चिम की ओर मुँह करके बैठे हैं; इधर महिमाचरण पश्चिमवाले गोल बरामदे में बैठकर मणि सेन के डाक्टर के साथ उच्च स्वर से शास्त्रालाप कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण अपने आसन से सुन रहे हैं और कुछ हँसकर मास्टर से कह रहे हैं—"देखो, झाड़ रहा है, रजोगुण है। रजोगुण होने से कुछ पाण्डित्य दिखलाने और लेक्चर देने की इच्छा होती है। सतोगुण से मनुष्य अन्तर्मुख हो जाता है, खुद के गुण छिपा रखने की इच्छा होती है। पर आदमी साला है—ईश्वर के नाम पर कितना उत्साह है!"

अधर आये, प्रणाम किया और मास्टर के पास बैठ गये। श्रीयुत अधर सेन डिप्टी मैजिस्ट्रेट हैं। उम्र तीस साल की होगी। दिन भर ऑफिस का काम करके, कितने ही दिनों से शाम के बाद श्रीरामकृष्ण के पास आ रहे हैं। इनका मकान कलकत्ते के शोभा बाजार बनियाटोले में है। कई दिनों से ये आये नहीं थे।

श्रीरामकृष्ण—क्यों जी, इतने दिन क्यों नहीं आये?

अधर—कई कामों में फँसा था। स्कूलों की सभाओं और कुछ दूसरी मीटिंग में भी जाना पड़ा था।

श्रीरामकृष्ण—मीटिंग, स्कूल लेकर और सब बिलकुल भूल गये थे!

अधर—(विनयपूर्वक)—जी, नहीं, काम के कारण बाकी सब बातें दबी सी पड़ी थीं। आपका हाथ कैसा है?

श्रीरामकृष्ण—यह देखो, अभी तक अच्छा नहीं हुआ। प्रताप की दवा खा रहा था।

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण एकाएक अधर से कहने लगे— "देखो, यह सब अनित्य है। मीटिंग, स्कूल, ऑफिस, यह सब अनित्य है। ईश्वर ही वस्तु है और सब अवस्तु। बस मन लगाकर उन्हीं की आराधना करनी चाहिए।"

अधर चुप हैं।

श्रीरामकृष्ण—यह सब अनित्य है। शरीर अभी अभी है, अभी अभी नहीं। जल्दी उन्हें पुकार लेना चाहिए।

"तुम लोगों को सब त्याग करने की आवश्यकता नहीं है। कछुए की तरह संसार में रहो। कछुआ स्वयं तो पानी में भोजन की तलाश करता है, परन्तु अपने अण्डे किनारे पर रखता है— उसका सब मन वहीं रहता है जहाँ उसके अण्डे हैं।

"कप्तान का स्वभाव अब अच्छा हो गया है। जब पूजा करने बैठता है तब बिलकुल ऋषि की तरह जान पड़ता है। इधर कपूर की आरती और बहुत ही सुन्दर स्तव पाठ करता है। पूजा करके जब उठता है, तब भाव के कारण उसकी आँखें सूज जाती हैं, मानो चीटियों ने काटा हो। और सारे समय गीता, भागवत यही सब पढ़ता रहता है। मैंने दो-चार अंग्रेजी शब्द कहे, इससे बिगड़ बैठा। कहा—अंग्रेजी पढ़नेवाले भ्रष्टाचारी होते हैं।"

कुछ देर बाद अधर ने बड़े विनीत भाव से कहा—

"हमारे यहाँ बहुत दिनों से आप नहीं पधारे हैं। बैठकखाने में मानो संसारीपन की दुर्गन्ध आती है और बाकी तो सब अँधेरा ही अँधेरा है।"

भक्त की यह बात सुनकर श्रीरामकृष्ण के स्नेह का सागर उमड़ पड़ा। भावावेश में वे उठकर खड़े हो गये। अधर और मास्टर के मस्तक और हृदय पर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया। स्नेहपूर्वक कहा-"मैं तुम लोगों को नारायण देख रहा हूँ। तुम्हीं लोग मेरे अपने आदमी हो।"

अब महिमाचरण भी कमरे में आकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण-(महिमा से)—धैर्यरेता की बात उस समय जो तुम कह रहे थे, वह ठीक है। वीर्यधारण किये बिना इन सब बातों की धारणा नहीं होती।

"किसी ने चैतन्यदेव से कहा, 'आप इन भक्तों को इतना उपदेश दे रहे हैं, तो भी वे अपनी उतनी उन्नति क्यों नहीं कर पाते?'

"चैतन्यदेव ने कहा-'ये लोग योषित्-संग करके सब अपव्यय कर देते हैं, इसीलिए धारणा नहीं कर सकते। फूटे घड़े में पानी रखने से क्रमशः सब निकल जाता है।"

महिमा आदि भक्तगण चुपचाप बैठे हैं। कुछ देर बाद महिमाचरण ने कहा—ईश्वर के पास हम लोगों के लिए प्रार्थना कर दीजिये, जिससे हम लोगों को वह शक्ति प्राप्त हो।

श्रीरामकृष्ण-अब भी सावधान हो जाओ। सच है कि आषाढ़ का पानी है, रोकना मुश्किल है, परन्तु पानी निकल भी तो बहुत चुका है, अब बाँध बाँधने से रुक जायगा।

परिच्छेद ७

अवतारवाद

(१)

प्राणकृष्ण, मास्टर, राम, गिरीश, गोपाल आदि के संग में

शनिवार, ५ अप्रैल १८८४। सुबह के आठ बजे हैं। मास्टर ने दक्षिणेश्वर में पहुँचकर देखा, श्रीरामकृष्ण प्रसन्नचित्त हैं; अपनी छोटी खाट पर बैठे हैं। जमीन पर कई भक्त बैठे थे। उनमें श्रीयुत प्राणकृष्ण मुखोपाध्याय भी थे।

प्राणकृष्ण जनाई के मुखर्जियों के वंश के हैं। कलकत्ते में श्यामपुकुर में रहते हैं, मेकेंजी लायल के एक्सचेंज (Exchange) नामक नीलाम-घर के कार्याध्यक्ष हैं। ये गृहस्थ तो हैं परन्तु वेदान्त-चर्चा में इनकी बड़ी प्रीति है। श्रीरामकृष्णदेव की बड़ी भक्ति करते हैं—कभी कभी उनके दर्शन कर जाया करते हैं। अभी अभी एक दिन श्रीरामकृष्णदेव को अपने घर ले जाकर उन्होंने उत्सव मनाया था। ये बागबाजार के घाट में रोज प्रातःकाल गंगास्नान करते हैं और वहाँ कोई नाव ठीक हो गयी तो उस पर चढ़कर सीधे दक्षिणेश्वर श्रीरामकृष्ण के दर्शन के लिए चले आते हैं। आज भी इसी तरह उन्होंने नाव किराये पर की थी। नाव जब किनारे से आगे बढ़ी तब उसमें लहरों की टक्कर लगने लगी। मास्टर भी उनके साथ थे। उन्होंने कहा, मुझे उतार दीजिये। प्राणकृष्ण और उनके दूसरे मित्र समझाने लगे, परन्तु उन्होंने कहा, नहीं, मुझे उतार दीजिये, मैं पैदल चलकर दक्षिणेश्वर जाऊँगा।

लाचार हो उन्हें उतार देना पड़ा।

मास्टर ने पहुँचकर देखा, वे लोग कुछ पहले ही पहुँच गये हैं; श्रीरामकृष्ण से वार्तालाप कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण को साष्टांग प्रणाम करके वे भी एक ओर बैठे।

अवतारवाद

श्रीरामकृष्ण–(प्राणकृष्ण से)–परन्तु आदमी में उनका ज्यादा प्रकाश है। अगर कहो, अवतार कैसे सिद्ध होगा, जिनमें भूख-प्यास ये सब जीवों के धर्म हैं—सम्भव है कि उनमें रोग-शोक भी हों—तो इसका उत्तर यह है कि पंचभूतों के फन्दे में पड़कर ब्रह्म रो रहे हैं।

"देखो न, श्रीरामचन्द्र सीता के वियोग से रोने लगे थे। जब हिरण्याक्ष का वध करने के लिए वराह का अवतार लिया, तब हिरण्याक्ष का वध हो जाने पर भी भगवान अपने धाम को नहीं गये थे। वराह के ही रूप में रहने लगे। कुछ बच्चे भी हो गये थे! उन्हें लेकर एक तरह से बड़े मजे में रहते थे। देवताओं ने कहा, यह इन्हें क्या हो गया?—ये तो अब आना ही नहीं चाहते। तब सब मिलकर शिव के पास गये और सब हाल उन्हें कह सुनाया। शिव ने उनके पास जाकर उन्हें बहुत समझाया, पर सुनता कौन है, वे अपने बच्चों को दूध पिलाने लगे! (सब हँसे।) तब शिव ने त्रिशूल से देह नष्ट कर दी। भगवान् खिल-खिलाकर हँसे और अपने लोक को चले गये।"

प्राणकृष्ण–(श्रीरामकृष्ण से)–महाराज, यह अनाहत शब्द क्या है?

श्रीरामकृष्ण–अनाहत शब्द सदा आप ही आप हो रहा है।

वह प्रणव-ओंकार की ध्वनि है, परब्रह्म से आती है, योगी इसे सुनते हैं। विषयी जीवों को यह ध्वनि नहीं सुन पड़ती। योगी जानते हैं कि वह ध्वनि एक ओर तो नाभि-कमल से उठती है और दूसरी ओर उस क्षीरसिन्धु-शायी परब्रह्म से।

परलोक के सम्बन्ध में श्री केशव सेन का प्रश्न

प्राणकृष्ण—महाराज, परलोक कैसा है?

श्रीरामकृष्ण—केशव सेन ने भी यह बात पूछी थी। जब तक आदमी अज्ञान दशा में रहता है, अर्थात् जब तक ईश्वर-लाभ नहीं होता, तब तक जन्म ग्रहण करना पड़ता है। परन्तु ज्ञान हो जाने पर, फिर इस संसार में नहीं आना पड़ता। पृथ्वी में या किसी दूसरे लोक में नहीं जाना पड़ता।

"कुम्हार धूप में सूखने के लिए हण्डियाँ रख देता है। देखा नहीं तुमने?—उनमें कच्ची हण्डियाँ रहती हैं और पकी हुई भी। कभी कभी जानवरों के आने-जाने से कुछ हण्डियाँ फूट जाती हैं। उनमें जो हण्डी पकी हुई होती है उसे कुम्हार फेंक देता है, उससे फिर उसका कोई काम नहीं चलता। और अगर कच्ची हण्डी फूटी तो कुम्हार उसे ले लेता है, भिगोकर गाला बनाकर चाक पर फिर चढ़ा देता है—उससे फिर दूसरी हण्डी तैयार करता है। इसी तरह, जब तक ईश्वर-दर्शन नहीं हुए तब तक कुम्हार के हाथ जाना होगा, अर्थात् इस संसार में घूम-घामकर आना होगा।

"उबाले हुए धानों के गाड़ने से क्या होगा? फिर उससे पेड़ नहीं होता! मनुष्य यदि ज्ञानाग्नि में सिद्ध हो जाय, तो फिर वह नयी सृष्टि के काम का नहीं रहता—वह मुक्त हो जाता है।

वेदान्त और अहंकार। ज्ञान और विज्ञान

"पुराणों के मत में हैं भक्त और भगवान्—मैं एक अलग और तुम अलग। शरीर एक पात्र है जिसमें मन-बुद्धि-अहंकार रूपी पानी है। ब्रह्म सूर्य-स्वरूप है। इस पानी में उसका प्रतिबिम्ब गिर रहा है। भक्त ईश्वर का वही रूप देखता है।

"वेदान्त के मत से ब्रह्म ही वस्तु है और सब माया, स्वप्नवत्, अवस्तु। अहं-रूपी एक लाठी सच्चिदानन्द-समुद्र में पड़ी हुई है। (मास्टर से) तुम इसे सुनते जाना—अहं-लाठी को उठा लेने पर एक सच्चिदानन्द-समुद्र रह जाता है। अहं-लाठी के रहने से दो दीख पड़ते हैं। इधर पानी का एक हिस्सा और उधर एक हिस्सा। ब्रह्मज्ञान होने पर मनुष्य को समाधि हो जाती है। तब यह अहं मिट जाता है।

"परन्तु लोक-शिक्षा के लिए शंकराचार्य ने 'विद्या का अहं' रखा था। (प्राणकृष्ण से) परन्तु ज्ञानियों का एक लक्षण और भी है। कोई कोई सोचते हैं, 'मैं ज्ञानी हो गया।' ज्ञान का लक्षण क्या है? ज्ञानी किसी की बुराई नहीं कर सकता। वह बालक-सा हो जाता है। लोहे के खड्ग में अगर पारस-पत्थर छुआ दिया जाय तो खड्ग सोने का हो जाता है। सोने से हिंसा का काम नहीं होता। बाहर से भले ही जान पड़ता हो कि इसमें राग-अहंकार है, परन्तु वास्तव में ज्ञानी में यह कुछ नहीं रहता।

"दूर से जली रस्सी देखिये तो जान पड़ता है कि यह रस्सी ही पड़ी हुई है, परन्तु पास जाकर फूँक मारिये तो सब राख होकर उड़ जाती है। क्रोध का, अहंकार का बस आकार मात्र है, परन्तु वह यथार्थ में क्रोध नहीं—अहंकार नहीं।

"बच्चे में आसक्ति नहीं रहती। अभी अभी उसने घरौंदा बनाया। कोई उसे छू ले तो तिनककर नाचने लगे, रोना शुरू कर दे, परन्तु खुद ही थोड़ी देर में उसे बिगाड़ डालता है। अभी अभी देखो तो कपड़े पर रीझा है। कहता है, मेरे बाबूजी ने ले दिया है, मैं नहीं दूंगा; परन्तु एक खिलौना दो; बस भूल जाता है, कपड़े को वहीं छोड़कर चला जाता है।

"ये ही सब ज्ञानी के लक्षण हैं। चाहे घर में बड़ा ऐश्वर्य हो—शीशे, मेज, तस्वीरें, गाड़ी-घोड़े, परन्तु दिल में आ जाय तो सब छोड़-छाड़कर काशी की राह पकड़ ले।

"वेदान्त के मत से जागरण अवस्था भी कुछ नहीं है। किसी लकड़हारे ने स्वप्न देखा था। कच्ची नींद में ही किसी दूसरे के जगा देने पर उसने झुंझलाकर कहा—'तूने क्यों मुझे कच्ची नींद में जगाया? मैं राजा हो गया था और सात लड़कों का बाप। मेरे बच्चे लिखते-पढ़ते थे, अस्त्रविद्या सीख रहे थे। मैं सिंहासन पर बैठा राज कर रहा था। क्यों मेरा सब्ज-बाग उजाड़ डाला?' उस आदमी ने कहा—'अरे वह तो स्वप्न था, उसमें क्या रखा है?' लकड़हारे ने कहा, 'चल, तू नहीं समझा। मेरा लकड़हारा होना जिस तरह सच है, स्वप्न में राजा होना उसी तरह सच है। लकड़हारा होना यदि सत्य हो तो स्वप्न में राजा होना भी सत्य है।'"

अब श्रीरामकृष्ण विज्ञानी की बात कह रहे हैं—

"नेति-नेति करके आत्म-साक्षात्कार करने को ज्ञान कहते हैं। नेति-नेति विचार करके मनुष्य समाधि में आत्मदर्शन करता है।

"विज्ञान अर्थात् विशेष रूप से ज्ञान प्राप्त करना। किसी ने दूध का नाम ही नाम सुना है, किसी ने दूध देखा भर है और

किसी ने दूध पिया है। जिसने सिर्फ सुना है, वह अज्ञानी है, जिसने देखा है वह ज्ञानी है, और जिसने पिया है, वह विज्ञानी है, विशेष रूप से ज्ञान उसी को हुआ है। ईश्वर को देखकर उनसे वार्तालाप करना, जैसे वे परम आत्मीय हों, इसी का नाम विज्ञान है।

"पहिले 'नेति-नेति' किया जाता है। वे पंचभूत नहीं हैं, मन, बुद्धि अहंकार भी नहीं हैं, वे सब तत्त्वों से परे हैं। छत पर चढ़ना होगा, सब सीढ़ियों को एक एक करके छोड़ जाना होगा। सीढ़ियाँ कभी छत नहीं हैं, परन्तु छत पर पहुँचकर देखा जाता है, जिन चीजों से छत बनी है—ईंट-चूना-सुरखी—उन्हीं चीजों से सीढ़ियाँ भी बनी हैं, पर सीढ़ियाँ कभी छत नहीं हैं। जो परब्रह्म हैं वे ही जीव-जगत् और चौबीसों तत्त्व भी हुए हैं। जो आत्मा हैं वे ही पंचभूत भी हुए हैं। मिट्टी इतनी कड़ी क्यों है अगर वह आत्मा से ही हुई है? उनकी इच्छा से सब हो सकता है। हाड़ और मांस, शोणित और शुक्र से ही तो होते हैं। समुद्र का फेन कितना कड़ा होता है!

क्या गृहस्थ को विज्ञान हो सकता है? साधना चाहिए

"विज्ञान के होने पर संसार में भी रहा जा सकता है। तब अच्छी तरह अनुभव हो जाता है कि जीव और जगत् वे ही हुए हैं, वे संसार से अलग नहीं हैं। श्रीरामचन्द्र ने ज्ञान-लाभ के पश्चात् जब कहा कि मैं संसार में न रहूँगा, तब दशरथ ने समझाने के लिए वशिष्ठ को उनके पास भेजा। वशिष्ठ ने कहा, 'राम! यदि संसार ईश्वर से अलग हो तो तुम इसे छोड़ सकते हो।' श्रीरामचन्द्र चुप हो रहे। वे अच्छी तरह जानते थे, ईश्वर

से अलग कोई चीज नहीं है। उन्हें फिर संसार न छोड़ना पड़ा।) बात यह है कि दिव्य दृष्टि चाहिए। मन के शुद्ध होने पर ही वह दृष्टि होती है। देखो न, कुमारी-पूजा क्या है। मल और मूत्र त्याग करके आयी हुई लड़कियाँ, उन्हें मैंने देखा—साक्षात् भगवती की मूर्ति। एक ओर स्त्री है और एक ओर बच्चा; दोनों को मनुष्य प्यार कर रहा है, किन्तु भाव भिन्न है, तात्पर्य यह है कि खेल सब मन का है। शुद्ध मन में एक खास भाव होता है। उस मन को प्राप्त कर लेने पर इसी संसार में ईश्वर के दर्शन होते हैं। अतएव साधना चाहिए।

"साधना चाहिए। यह समझ लेना चाहिए कि स्त्रियों पर सहज ही आसक्ति हो जाती है। स्त्रियाँ स्वभाव से ही पुरुषों को प्यार करती हैं। पुरुष स्वभाव से ही स्त्रियों को प्यार करते हैं। दोनों इसीलिए जल्दी गिर जाते हैं।"

(हठयोगी आता है।)

पंचवटी में कई दिनों से एक हठयोगी रहते हैं। वे सिर्फ दूध और अफीम खाते हैं और हठयोग करते हैं। रोटी-भात, यह कुछ नहीं खाते। अफीम और दूध के दाम उनके पास नहीं हैं। श्रीरामकृष्ण जब पंचवटी के पास गये थे तब वे हठयोगी से बातचीत करके आये थे। हठयोगी ने राखाल से कहा था, 'परमहंसजी से कहकर मेरी कोई व्यवस्था करा देना।' श्रीरामकृष्ण ने कहला भेजा था कि कलकत्ते के बाबू जब आयेंगे तब उनसे कहा जायगा।

हठयोगी—(श्रीरामकृष्ण से)—आपने राखाल से क्या कहा था?

श्रीरामकृष्ण—कहा था, बाबुओं से कहूँगा। अगर वे कुछ देंगे

तो दे देंगे। परन्तु क्यों—(प्राणकृष्णादि से) तुम शायद इन्हें like (पसन्द) नहीं करते ?

प्राणकृष्ण चुपचाप बैठे रहे।

(हठयोगी चला जाता है।)

श्रीरामकृष्ण की बातचीत होने लगी।

श्रीरामकृष्ण–(प्राणकृष्णादि भक्तों से)–और संसार में रहने पर सत्य का खूब ध्यान चाहिए। सत्य से ही परमात्मा की प्राप्ति होती है। मेरी तो इस समय सत्य की दृढ़ता कुछ कम हो गयी है, पहले बहुत थी। 'नहाऊँगा' यह कहा नहीं कि गंगा में उतरा, मन्त्रोच्चारण किया, सिर पर पानी भी डाला, परन्तु फिर भी सन्देह होता था कि शायद अच्छी तरह नहाना अभी नहीं हुआ। अमुक स्थान पर शौच के लिए जाऊँगा यह सोचा नहीं कि वहीं गया। राम के मकान गया, कलकत्ते में। कह दिया कि पूड़ियाँ न खाऊँगा। जब खाने को दिया गया, तब देखा, भूख लगी है; परन्तु कह जो दिया है कि पूड़ियाँ न खाऊँगा तो मजबूरन मिठाई से पेट भरा। (सब हँसते हैं।) इस समय तो दृढ़ता कुछ घट गयी है। टट्टी की हाजत नहीं है, परन्तु कह डाला है कि टट्टी जाऊँगा, क्या किया जाय ? राम* से पूछा, उसने कहा, नहीं लगी है तो जाकर क्या कीजियेगा ? तब मैंने विचार किया, सभी तो नारायण हैं, राम भी नारायण है, उसकी बात क्यों न मानूँ ? हाथी नारायण है, परन्तु महावत भी तो नारायण है। महावत जिस समय कह रहा है, हाथी के पास मत आओ, उस समय उसकी बात क्यों न मानी जाय ? इस तरह विचार करके अब पहले की अपेक्षा दृढ़ता कुछ घट गयी है।

* राम चैटर्जी—दक्षिणेश्वर मन्दिर के एक पुजारी।

"अब इस समय देख रहा हूँ, एक और अवस्था आ रही है। बहुत दिन हुए वैष्णवचरण ने कहा था, आदमी के भीतर जब ईश्वर के दर्शन होंगे, तब पूर्ण ज्ञान होगा। अब देख रहा हूँ, अनेक रूपों में वही विचरण कर रहे हैं। कभी साधु के रूप में, कभी छल-रूप में, और कभी खल-रूप में। इसीलिए कहता हूँ, साधुरूपी नारायण, छलरूपी नारायण, खलरूपी नारायण, लुच्चारूपी नारायण।

"अब चिन्ता है, सब को किस तरह भोजन कराया जाय। सब को भोजन कराने की इच्छा होती है। इसलिए एक-एक आदमी को यहाँ रखकर भोजन कराता हूँ।"

प्राणकृष्ण—(मास्टर को देखकर, सहास्य)—अच्छा आदमी है! (श्रीरामकृष्ण से) महाराज, नाव से उतरकर ही दम लिया!

श्रीरामकृष्ण—(हँसते हुए)—क्या हुआ?

प्राणकृष्ण—ये नाव पर चढे थे; जरा सी लहर की टक्कर लगी और इन्होंने कहा, उतार दो हमको—(मास्टर से) किस तरह फिर आये आप?

मास्टर—(सहास्य)—पैदल चलकर।

संसारी लोगों के लिए विषय-कर्मत्याग कठिन है

प्राणकृष्ण—(श्रीरामकृष्ण से)—महाराज, अब सोच रहा हूँ, काम छोड़ दूँगा। काम करने लगा, तो फिर और कुछ नहीं होगा। इन्हें (साथ के एक बाबू की ओर इशारा करके) काम सिखा रहा हूँ। मेरे छोड़ देने पर ये काम करेंगे, अब और नहीं होता।

श्रीरामकृष्ण–हाँ, बड़ी झंझट है। इस समय कुछ दिन निर्जन में ईश्वर-चिन्तन करना बहुत अच्छा है। तुम कहते तो हो कि छोड़ोगे। कप्तान ने भी यही बात कही थी। संसारी आदमी कहते तो हैं, पर कर नहीं सकते।

"कितने ही पण्डित हैं जो ज्ञान की बातें कहा करते हैं। वे मुख ही से कहते हैं, काम कुछ नहीं कर सकते। जैसे गिद्ध उड़ता तो बहुत ऊँचे है, परन्तु उसकी नजर मरघट पर ही रहती है। अर्थात् उसी कामिनी-कांचन पर—संसार पर आसक्ति। अगर मैं सुनता हूँ कि किसी पण्डित को विवेक-वैराग्य है तो मुझे सचमुच उनसे श्रद्धापूर्ण भय होता है और नहीं तो वे सब बेड़-बकरे-से ही जान पड़ते हैं।"

प्राणकृष्ण प्रणाम करके बिदा हुए। उन्होंने मास्टर से चलने के लिए पूछा। मास्टर ने कहा, मैं अभी न जाऊँगा, आप चलिये। प्राणकृष्ण ने हँसते हुए कहा, तुम अब और नाव पर कदम रखोगे? (सब हँसते हैं।)

मास्टर ने पंचवटी में थोड़ी देर टहलकर, जिस घाट में श्रीरामकृष्ण नहाते थे, उसी में नहाया। इसके बाद श्रीभवतारिणी और राधाकान्त के दर्शन किये। वे सोच रहे हैं, मैंने सुना था ईश्वर निराकार है, तो फिर क्यों मैं इस मूर्ति के सामने प्रणाम कर रहा हूँ? क्या श्रीरामकृष्ण साकार देव-देवियों को मानते हैं इसलिए? मैं तो ईश्वर के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं समझता; परन्तु जब कि श्रीरामकृष्ण मानते हैं, तो मैं किस खेत की मूली हूँ—मानना ही होगा।

मास्टर श्रीभवतारिणी माता के दर्शन कर रहे हैं। देखा, उनके दोनों बायें हाथों में खड्ग और नरमुण्ड शोभा दे रहे हैं,

दोनों दाहिने हाथों में वर और अभय। एक ओर वे भयंकरा मूर्ति हैं और दूसरी ओर भक्तवत्सला मातृमूर्ति। उनमें दो भावों का एकत्र समावेश हो रहा है। भक्तों के निकट, अपने दीन-हीन जीवों के निकट, माता दयामयी और स्नेहमयी के स्वरूप में आती हैं और यह भी सत्य है कि वे भयंकरा और कालकामिनी भी हैं। एक ही आधार में ये दो भाव क्यों हैं, इसका हाल तो वे ही जानें।

मास्टर श्रीरामकृष्ण की व्याख्या याद कर रहे हैं। सोच रहे हैं—सुना है, केशव सेन ने भी श्रीरामकृष्ण के पास देवी-प्रतिमा का अस्तित्व स्वीकार कर लिया था। 'क्या यही मृण्मय आधार में चिन्मयी मूर्ति है?' केशव यही बात कहते थे।

अब वे श्रीरामकृष्ण के पास आकर बैठे। वे नहा चुके हैं, यह देखकर श्रीरामकृष्ण ने उन्हें फलमूल प्रसाद खाने के लिए दिया। गोल बरामदे में आकर उन्होंने प्रसाद पाया। पानीवाला लोटा बरामदे में ही रह गया था। वे जल्दी से श्रीरामकृष्ण के पास आकर कमरे में बैठ ही रहे थे कि श्रीरामकृष्ण ने कहा, तुम लोटा नहीं लाये?

मास्टर—जी हाँ, लाता हूँ।

श्रीरामकृष्ण—वाह!

मास्टर का चेहरा फीका पड़ गया। बरामदे से लोटा लाकर कमरे में रखा।

मास्टर का घर कलकत्ते में है। घर में शान्ति न मिलने के कारण उन्होंने श्यामपुकुर में किराये का मकान लिया है। उनका स्कूल भी वहीं है। उनके अपने मकान में उनके पिता और भाई रहते हैं। श्रीरामकृष्ण की इच्छा है कि वे अपने

मकान में आकर रहें; क्योंकि एक ही घर और एक ही थाली के खानेवालों में भजन-पूजन करने की बड़ी सुविधा है। यद्यपि श्रीरामकृष्ण बीच-बीच में ऐसा कहते थे, तथापि दुर्भाग्यवश मास्टर अपने घर वापस नहीं जा सके। आज श्रीरामकृष्ण ने फिर वही बात उठायी।

श्रीरामकृष्ण—क्यों, अब तुम घर जाओगे?

मास्टर—मेरा तो वहाँ रहने के लिए किसी तरह जी नहीं चाहता।

श्रीरामकृष्ण—क्यों, तुम्हारा बाप मकान गिरवाकर वहाँ नयी इमारत खड़ी कर रहा है।

मास्टर—घर में मुझे बड़ी तकलीफ मिली है। वहाँ जाने को मेरा किसी तरह मन नहीं होता।

श्रीरामकृष्ण—तुम किससे डरते हो?

मास्टर—सब से।

श्रीरामकृष्ण—(गम्भीर स्वर में)—वह भय वैसा ही है जैसा तुम्हें नाव पर चढ़ते समय होता है।

देवताओं का भोग लग गया। आरती हो रही है। कालीमन्दिर में आनन्द हो रहा है। आरती का शब्द सुनकर, कंगाल, साधु, फकीर, सब अतिथि-शाला में दौड़े आ रहे हैं। किसी के हाथ में पत्तल है, किसी के हाथ में थाली लोटा। सब ने प्रसाद पाया। आज मास्टर ने भी भवतारिणी का प्रसाद पाया।

(३)

केशवचन्द्र सेन और 'नवविधान'। 'नवविधान में सार है'

श्रीरामकृष्ण प्रसाद ग्रहण करके जरा विश्राम कर रहे हैं।

इतने में राम, गिरीन्द्र तथा और भी कई भक्त आ पहुँचे। भक्तों ने माथा टेककर प्रणाम किया और आसन ग्रहण किया।

श्रीयुत केशवचन्द्र सेन के नवविधान की चर्चा चली।

राम-(श्रीरामकृष्ण से)-महाराज, मुझे तो ऐसा नहीं जान पड़ता कि नवविधान से कोई उपकार हुआ हो। केशव बाबू अगर सच्चे होते, तो फिर उनके शिष्यों की यह दशा क्यों होती? मेरे मन से उनके भीतर कुछ भी नहीं है। जैसे खपरे बजाकर दरवाजे में ताला लगाना। लोग सोचते हैं, इनके खूब रुपये हैं —झनकार हो रही है, परन्तु भीतर बस खपरे ही खपरे हैं! बाहर के लोग भीतर की खबर क्या जानें!

श्रीरामकृष्ण-कुछ सार जरूर है। नहीं तो इतने आदमी केशव को क्यों मानते हैं? शिवनाथ को लोग क्यों नहीं पहचानते? ईश्वर की इच्छा के बिना ऐसा कभी होता नहीं।

"परन्तु संसार का त्याग किये बिना आचार्य का काम नहीं होता। लोग कहते हैं, यह संसारी आदमी है, यह खुद तो कामिनी और कांचन का छिपकर भोग करता है और हमसे कहता है, 'ईश्वर ही सत्य हैं—संसार स्वप्नवत् अनित्य है।' सर्वत्यागी हुए बिना उनकी बात सब लोग नहीं मानते। जो लोग संसार में पड़े हैं उन्हीं में कोई कोई मान सकते हैं। केशव के घर-द्वार, कुटुम्ब-परिवार था, अतएव मन भी संसार में था। संसार की रक्षा भी तो करनी होगी? इसीलिए इतना लेक्चर उसने दिया, परन्तु अपने संसार को बड़ी मजबूती से रख गया है। कैसा दामाद है! मैं उसके घर के भीतर गया, देखा बड़े बड़े पलंग हैं। सांसारिक काम करने लगो तो धीरे धीरे ये सब आ जाते हैं। भोग की ही भूमि संसार कहलाती है।"

राम—वे पलंग और मकान केशव को हिस्से में मिले थे। महाराज, आप कुछ भी कहें, परन्तु विजय बाबू ने कहा है—'केशव सेन ने मुझसे कहा था, मैं ईसा और गौरांग का अंश हूँ और तुम अपने को अद्वैत का अंश बतलाया करो।' और उसने क्या कहा था—आप जानते हैं? आपको कहा था—वे भी नवविधान के हैं! (श्रीरामकृष्ण और सब हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण—(हँसते हुए)—परमात्मा जाने, मैं तो यह भी नहीं जानता कि नवविधान का अर्थ क्या है। (सब हँसते हैं।)

राम—केशव की शिष्यमण्डली कहती है, ज्ञान और भक्ति का समन्वय सब से पहले केशव बाबू ने किया है।

श्रीरामकृष्ण—(आश्चर्य में आकर)—यह क्या! तो फिर अध्यात्म-रामायण है क्या? नारद श्रीरामचन्द्र की स्तुति करते हैं—'हे राम! वेदों में जिस परब्रह्म की कथा है, वह तुम्हीं हो। तुम्हीं (ब्रह्म ही) मनुष्य के रूप में हमारे पास हो, तुम्हें (ब्रह्म को) ही हम मनुष्य देख रहे हैं. वस्तुतः तुम मनुष्य नहीं हो—वही परब्रह्म हो।' श्रीरामचन्द्र ने कहा, 'नारद तुम पर मैं प्रसन्न हुआ हूँ; तुम वर माँगो।' नारद ने कहा, 'राम, और क्या वर माँगूँ; अपने पादपद्मों में मुझे शुद्धा भक्ति दो। और अपनी भुवन-मोहिनी माया में कभी फँसा न देना।' इस तरह अध्यात्म-रामायण में केवल ज्ञान और भक्ति की ही बातें हैं।

फिर केशव के शिष्य अमृत की बात चली।

राम—अमृत बाबू कैसे हो गये हैं।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, उस दिन मैंने बड़ा दुबला देखा।

राम—महाराज, अब लेक्चर की भी बात सुन लीजिये। जब खोल में पहला धावा मारा गया तब साथ ही कहा गया—

'केशव की जय।' आपने कहा था—बँधी तलैया में ही दल* होता है। इसी पर एक दिन लेक्चर में अमृत बाबू ने कहा, साधु ने कहा है सही कि बँधी तलैया में दल होता है, परन्तु भाइयो, दल चाहिए—संगठन चाहिए—सच कहता हूँ—सच कहता हूँ—दल चाहिये। (सब हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण–यह क्या है ! राम-राम यह भी लेक्चर है !

फिर यह बात उठी कि कोई कोई जरा अपनी तारीफ चाहते हैं।

श्रीरामकृष्ण–निमाई-सन्यास का नाटक हो रहा था। केशव के यहाँ मुझे ले गये थे। वहाँ सुना, न जाने किसने कहा, ये दोनों केशव और प्रताप गौराग और नित्यानन्द हैं। प्रसन्न ने तब मुझसे पूछा, तो फिर आप कौन हैं ? देखा, केशव एकटक मेरी ओर देख रहा था, मैं क्या कहता हूँ यह सुनने के लिए। मैंने कहा, मैं तुम्हारे दासों का दास, रेणु की रेणु हूँ। केशव ने हँसकर कहा ये पकड़ में नहीं आना चाहते।

राम–केशव कभी कभी आपको जान दि वैपटिस्ट बतलाते थे।

एक भक्त–और कभी कभी आपको उन्नीसवी सदी के चैतन्य बतलाते थे।

श्रीरामकृष्ण–इसके क्या माने ?

भक्त–अर्थात् अंग्रेजी की इस शताब्दी में चैतन्यदेव फिर आये हैं और वे आप हैं।

श्रीरामकृष्ण–(अन्यमनस्क होकर)—खैर, वह तो जैसे

* यहाँ 'दल' शब्द पर श्लेष है। 'दल' शब्द के दो अर्थ हैं—काई तथा सम्प्रदाय।

हुआ। अब यह बतलाओ कि हाथ* कैसे अच्छा हो। अब बस यही सोचता हूँ कि हाथ कैसे अच्छा हो।

त्रैलोक्य के गाने की बात चली। त्रैलोक्य केशव के समाज में भगवद्-गुणानुवाद-कीर्तन करते हैं।

श्रीरामकृष्ण–अहा! त्रैलोक्य का क्या ही सुन्दर गाना है!

राम–क्या सब बिलकुल ठीक होता है?

श्रीरामकृष्ण–हाँ, बिलकुल ठीक। अगर वैसा न होता तो मन को इतना क्यों खींचता?

राम–आप ही के सब भाव लेकर गीतों की रचना की गयी है। केशव सेन उपासना के समय उन्हीं सब भावों का वर्णन करते थे और त्रैलोक्य बाबू उसी तरह के पद जोड़ते थे। देखिये, एक गाना है—

(भावार्थ) 'प्रेम के बाजार में आनन्द का मेला लगा हुआ है। भक्तों के संग हरि अपनी मौज में तिलते ही खेल खेल रहे हैं।'

"आप भक्तों के साथ आनन्द करते हैं, यह देखकर इस गाने की रचना हुई है।"

श्रीरामकृष्ण–(हँसते हुए)–तुम अब जलाओ मत। मुझे भला क्यों लपेटते हो? (सब हँसते हैं।)

गिरीन्द्र–ब्राह्मगण कहते हैं, परमहंसदेव में Faculty of organisation नहीं है।

श्रीरामकृष्ण–इसका क्या मतलब?

मास्टर–आप संगठन करना नहीं जानते, आप में बुद्धि कम है, यह कहते हैं।

श्रीरामकृष्ण–(राम से)–अब यह बतलाओ, मेरा हाथ

* उनके टूटे हाथ से मतलब है।

क्यों टूटा ? तुम इसी विषय पर एक लेक्चर दो ।

(सब हँसते हैं ।)

"ब्राह्मसमाजी निराकार-निराकार कहा करते हैं । खैर, कहें । उन्हें अन्दर से पुकारने ही से हुआ । अगर अन्तर की बात हो तो वे तो अन्तर्यामी हैं, वे अवश्य समझा देंगे, उनका स्वरूप क्या है ।

"परन्तु यह अच्छा नहीं—यह कहना कि हम लोगों ने जो कुछ समझा है, वही ठीक है, और दूसरे जो कुछ करते हैं, सब गलत । हम लोग निराकार कह रहे हैं, अतएव वे साकार नहीं, निराकार हैं; हम लोग साकार कह रहे हैं अतएव वे साकार हैं, निराकार नहीं ! मनुष्य क्या कभी उनकी इति कर सकता है ?

"इसी तरह वैष्णवों और शाक्तों में भी विरोध है । वैष्णव कहता है 'हमारे केशव ही एकमात्र उद्धारकर्ता हैं' और शाक्त कहता है, 'बस हमारी भगवती एकमात्र उद्धार करनेवाली है ।'

"मैं वैष्णवचरण को सेजो बाबू* के पास ले गया था । वैष्णवचरण वैरागी है, बड़ा पण्डित है, परन्तु कट्टर वैष्णव है । इधर सेजो बाबू भगवती के भक्त हैं । अच्छी बातें हो रही थीं, इसी समय वैष्णवचरण ने कह डाला, 'मुक्ति देनेवाले तो एक केशव ही हैं ।' केशव का नाम लेते ही सेजो बाबू का मुँह लाल हो गया और वे बोले, 'तू साला ।' (सब हँस पड़े ।) मथुर बाबू शाक्त जो थे ! उनके लिए यह कहना स्वाभाविक ही था । मैंने इधर वैष्णवचरण को खींच लिया ।

"जितने आदमियों को देखता हूँ, धर्म-धर्म करके एक दूसरे से झगड़ा किया करते हैं । हिन्दू, मुसलमान, ब्राह्मसमाजी,

* रानी रासमणि के दामाद श्रीयुत मथुरानाथ विश्वास ।

शाक्त, वैष्णव, शैव, सब एक दूसरे से लड़ाई-झगड़ा करते हैं। यह बुद्धिमानी नहीं है। जिन्हें कृष्ण कहते हो, वे ही शिव, वे ही आद्याशक्ति हैं, वे ही ईसा हैं और वे ही अल्लाह हैं। एक राम उनके हजार नाम।

"वस्तु एक ही है, केवल उसके नाम अलग अलग हैं। सब लोग एक ही वस्तु की चाह कर रहे हैं। अन्तर इतना ही है कि देश अलग है, पात्र अलग और नाम अलग। एक तालाब में बहुत से घाट हैं। हिन्दू एक घाट से पानी ले रहे हैं, घड़े में भरकर कहते हैं, 'जल'। मुसलमान एक दूसरे घाट से पानी भर रहे हैं, चमड़े के बैग में—कहते हैं, 'पानी'। क्रिस्तान तीसरे घाट से पानी ले रहे हैं—वे कहते हैं 'वाटर' (Water)।

(सब हँसते हैं।)

"अगर कोई कहे, नहीं यह चीज जल नहीं है, यह पानी है या वाटर नहीं जल है, तो यह हँसी की ही बात होगी। इसीलिए दल, मतान्तर और झगड़े होते हैं। धर्म के नाम पर लट्ठम-लट्ठा, मार-काट ? यह सब अच्छा नहीं है। सब उन्हींके पथ पर जा रहे हैं। आन्तरिकता होने पर, व्याकुलता आने पर—उन्हें मनुष्य प्राप्त करेगा ही। (मणि से) तुम यह सुनते जाओ—वेद, पुराण, तन्त्र-शास्त्र उन्हींको चाहते हैं; वे किसी दूसरे को नहीं चाहते। सच्चिदानन्द बस एक ही हैं। जिन्हें वेदों में 'सच्चिदानन्द ब्रह्म' कहा है, तन्त्र में उन्हींको 'सच्चिदानन्द शिव' कहा है, उन्हीको उधर पुराणों में 'सच्चिदानन्द कृष्ण' कहा है।"

श्रीरामकृष्ण ने सुना, राम घर में कभी कभी स्वयं भोजन पकाते हैं।

श्रीरामकृष्ण—(मणि से)—क्या तुम भी अपने हाथ से

भोजन पकाते हो ?

मणि—जी नहीं।

श्रीरामकृष्ण—कोशिश करके देखो न जरा, थोड़ा सा गो-घृत छोड़ कर भोजन किया करो। शरीर और मन शुद्ध जान पड़ने लगेंगे।

राम की घर-गृहस्थी की बहुत सी बातें हो रही हैं। राम के पिता परम वैष्णव हैं। घर में श्रीधर की सेवा होती है। राम के पिता ने अपना दूसरा विवाह किया था उस समय राम की उम्र बहुत कम थी। पिता और विमाता राम के घर में ही थे, परन्तु विमाता के साथ रहकर राम सुखी नहीं रह सके। इस समय विमाता की उम्र चालीस साल की है। विमाता के कारण राम और उनके पिता में कभी-कभी अनबन हो जाती थी। आज वे ही सब बातें हो रही हैं।

राम—बाबूजी की बुद्धि मारी गयी है।

श्रीरामकृष्ण—(भक्तों से)—सुना ? बाबूजी की बुद्धि मारी गयी है और आपकी बहुत अच्छी है।

राम—उनके (विमाता के) मकान में आने ही से अशान्ति होती है। एक न एक झंझट पैदा होती है। हमारा परिवार नष्ट होने पर आ गया। इसीलिए मैं कहता हूँ, वे अपने मायके में क्यों नहीं जाकर रहती ?

गिरीन्द्र—(राम से)—अपनी स्त्री को उसी तरह मायके में क्यों नहीं रखते ? (सब हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—यह क्या कुछ हण्डी और घड़ा है ? हण्डी एक जगह रही और उसका ढक्कन दूसरी जगह ! शिव एक ओर तथा शक्ति दूसरी ओर !

राम-महाराज, हम लोग सुख से हैं, वे आयी नहीं कि तोड़-फोड़ मचाया। ऐसी दशा में—

श्रीरामकृष्ण-हाँ, अलग एक मकान कर दो, यह एक बात हो सकती है। महीने-महीने सब खर्च देते जाना। पिता कितने बड़े गुरु हैं! राखाल मुझसे पूछता था, क्या मैं बाबूजी की थाली में खा लूँ? मैंने कहा, 'अरे, यह क्या? तुझे हो क्या गया है जो तू अपने बाप की थाली में न खायेगा?'

"परन्तु एक बात है। जो लोग सन्मार्ग में हैं, वे अपना जूठा किसी को खाने के लिए नहीं देते। यहाँ तक कि कुत्ते को भी जूठन नहीं दी जाती।"

गिरीन्द्र-महाराज, माँ-बाप ने अगर कोई घोर अपराध किया हो, कोई घोर पाप किया हो तो?

श्रीरामकृष्ण-तो वह भी सही। माता यदि व्यभिचारिणी हो तो भी उसका त्याग न करना चाहिए। अमुक बाबुओं की गुरुपत्नी का चरित्र नष्ट हो गया। तब उन्होंने कहा, उनका लड़का गुरु बनाया जाय। मैंने कहा, 'यह तुम क्या कहते हो? तुम सूरन को छोड़कर सूरन की आँख लोगे? नष्ट हो गयी तो क्या हुआ? तुम उसे ही अपना इष्ट समझो।' एक गाने में है—'मेरे गुरु यद्यपि कलवार की दूकान पर जाया करते हैं, तथापि मेरे गुरु नित्यानन्द राय हैं।'

चैतन्यदेव और माँ। मनुष्य के ऋण

"माँ-बाप क्या कुछ साधारण मनुष्य हैं? बिना उनके प्रसन्न हुए धर्म-कर्म कुछ भी नहीं होता। चैतन्यदेव प्रेम से पागल थे, परन्तु फिर भी संन्यास से पहले कुछ दिन लगातार उन्होंने अपनी माता को समझाया था। कहा था—'माँ! मैं कभी कभी आकर

तुम्हें देख-दिखा जाया करूँगा।' (मास्टर से तिरस्कार करते हुए) और तुम्हारे लिए कहता हूँ, माँ-बाप ने तुम्हें आदमी बना दिया, अब कई लड़के-बच्चे भी हो गये हैं, इस पर बीबी को साथ लेकर निकल आना ! माता-पिता को धोखा देकर बीबी-बच्चों को लेकर, वैष्णव-वैष्णवी बनकर निकलता है ! तुम्हारे बाप को कोई कमी नहीं है, नहीं तो मैं कहता, धिक्कार है तुमको !

(सब के सब स्तब्ध हैं।)

"कुछ ऋण हैं। देवऋण, ऋषिऋण; उधर मातृऋण, पितृऋण, स्त्री-ऋण। माता-पिता के ऋण का शोध किये बिना कोई काम नहीं होता। फिर पत्नी का भी ऋण है। हरीश पत्नी का त्याग करके यहाँ आकर रहता है। यदि उसकी स्त्री के भोजन की सुविधा न होती तो मैं कहता, साला बेईमान है।

"ज्ञान के पश्चात् उसी पत्नी को तुम साक्षात् भगवती देखोगे ! सप्तशती में है 'या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता।' वे ही माँ हुई हैं।

"जितनी स्त्रियाँ देखते हो, सब वे ही हैं, इसीलिए मैं वृन्दा (नौकरानी) को कुछ कह नहीं सकता। कोई-कोई लोग श्लोक झाड़ते हैं—लम्बी-लम्बी बातें बघारते हैं, परन्तु उनका व्यवहार कुछ और ही होता है। इस-हठयोगी के लिए किसी तरह अफीम और दूध इकट्ठा हो, रामप्रसन्न बस इसी चिन्ता में मारा-मारा घूमता है। और वह यह भी कहता है कि मनु में साधु-सेवा का उल्लेख है। इधर बूढ़ी माँ खाने को नहीं पाती, सौदा खरीदने के लिए हाट-बाजार खुद जाया करती है। क्या कहूँ ऐसा क्रोध आता है !

"परन्तु एक बात और है। अगर प्रेमोन्मत्त अवस्था हो तो

फिर कौन है बाप, कौन है माँ और कौन है स्त्री ? ईश्वर पर इतना प्यार हो कि पागल हो जाय। फिर उसके लिए कुछ भी कर्तव्य नहीं रह जाता। सब ऋणों से वह मुक्त हो जाता है। प्रेमोन्माद कैसा है, जानते हो ? उस अवस्था के आने पर संसार भूल जाता है। अपनी देह जो इतनी प्यारी चीज है, वह भी भूल जाता है। यह अवस्था चैतन्यदेव की हुई थी। समुद्र में कूद पड़े, समुद्र का बोध ही नहीं। मिट्टी में बार-बार पछाड़ खा-खाकर गिरते हैं, न भूख है, न नींद; शरीर का बोध भी नहीं है !"

श्रीरामकृष्ण 'हा चैतन्य' कह उठे।

(भक्तों के प्रति) "चैतन्य के माने अखण्ड चैतन्य। वैष्णवचरण कहता था, गौरांग अखण्ड चैतन्य की ही एक छटा है।

"तुम्हारी क्या इस समय तीर्थ जाने की इच्छा है ?"

बूढ़े गोपाल–जी हाँ, जरा देखभाल आयें।

राम–(बूढ़े गोपाल से)–ये कहते हैं, बहूदक के बाद कुटीचक की अवस्था होती है। जो साधु अनेक तीर्थों का भ्रमण करते हैं, उनका नाम है बहूदक, और जो एक जगह डटकर आसन जमा देते हैं उन्हें कुटीचक कहते हैं।

"एक बात और ये कहते हैं। एक पक्षी जहाज के मस्तूल पर बैठा था। जहाज गंगा से होकर काले पानी में (समुद्र में) चला गया। पक्षी को इसका होश न था। जब वह होश में आया, तब किनारे का पता लगाने के लिए उत्तर की ओर उड़ गया। परन्तु उसने किनारा कहीं न देखा, तब लौट आया। फिर जरा देर विश्राम करके दक्षिण की ओर गया। उधर भी किनारा न दीख पड़ा। इसी तरह कुछ-कुछ विश्राम करके पूर्व और पश्चिम में भी गया। जब उसने देखा, कहीं किनारा नहीं है, तब मस्तूल

पर आकर चुपचाप बैठ गया ।"

श्रीरामकृष्ण-(बूढ़े गोपाल और भक्तों से)-जब तक यह बोध है कि ईश्वर वहाँ है—वहाँ है, तब तक अज्ञान है। जब यहाँ है, यह बोध हो जाता है, तब ज्ञान।

"एक आदमी तम्बाकू पीना चाहता था। वह अपने पड़ोसी के घर गया—टिकिया सुलगाने के लिए। घर के सब लोग सो गये थे। बड़ी देर तक दरवाजा खटखटाने पर एक आदमी खोलने के लिए नीचे उतर आया। उस आदमी को देखकर घरवाले ने पूछा, कहो, कैसे आये? उसने कहा, क्या कहूँ कैसे आया। जानते तो हो कि तम्बाकू पीने का चस्का है, टिकिया सुलगाने आया था। तब घरवाले ने कहा, अजी वाह, तुम तो बड़े भलेमानस निकले, इतनी मेहनत करके आये और दरवाजा खटखटाया, तुम्हारे हाथ में लालटेन जो है! (सब हँसते हैं।)

"जो कुछ चाहता है, वही उसके पास है, फिर भी आदमी अनेक स्थानों में चक्कर लगाया करता है।"

राम-महाराज, अब इसका मतलब समझ में आ गया। समझा कि गुरु क्यों कहते हैं कि चारों धाम करके आ जाओ। जब एक बार चक्कर मारकर देखता है कि जो कुछ यहाँ है, वही सब वहाँ भी है, तब फिर वह गुरु के पास लौटकर आता है। यह सब केवल गुरु की बात पर विश्वास होने के लिए है।

बात कुछ रुक गयी। श्रीरामकृष्ण राम की तारीफ कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण-(भक्तों से)-अहा! राम में कितने गुण हैं। कितने भक्तों की सेवा और उनका पालन-पोषण करता है। (राम से) अधर कहता था, तुमने उसकी बड़ी खातिरदारी

की—क्यों, ठीक है न ?

अधर शोभाबाजार में रहते हैं। श्रीरामकृष्ण के परमभक्त हैं। उनके यहाँ चण्डी के गीत हुए थे। श्रीरामकृष्ण और भक्तों में से कितने ही वहाँ गये थे। परन्तु अधर राम को न्योता देना भूल गये थे। राम बड़े अभिमानी हैं—उन्होंने लोगों से उसके लिए दुःख प्रकट किया था। इसीलिए अधर राम के घर गये थे। उनसे भूल हुई थी, इसके लिए दुःख प्रकट करने गये थे।

राम-यह अधर का दोष नहीं है। न्योता देने का भार राखाल पर था।

श्रीरामकृष्ण-राखाल का दोष लेना ही नहीं चाहिए। गला दबाओ तो अब भी दूध निकल आये।

राम—महाराज, कहते क्या हैं, चण्डी के गीत हुए—?

श्रीरामकृष्ण-अधर यह नहीं जानता था। देखो न, उस दिन यदु मल्लिक के यहाँ मेरे साथ गया था। मैंने लौटते समय पूछा, तुमने सिंहवाहिनी को प्रणामी दी ? उसने कहा, महाराज, मैं नहीं जानता था कि प्रणामी देनी पड़ती है।

"अच्छा, अगर न भी कहा हो, तो राम-नाम में दोष क्या है ? जहाँ राम-नाम होता हो वहाँ बिना बुलाये भी जाया जाता है। न्योते की आवश्यकता नहीं होती।"

परिच्छेद ८

आत्मदर्शन के उपाय

(१)

फलहारिणी पूजा तथा विद्यासुन्दर कृत नाटक का अभिनय

श्रीरामकृष्ण उसी पूर्वपरिचित कमरे में बैठे हैं; दिन के ११ बजे का समय हुआ। राखाल, मास्टर आदि भक्तगण उसी कमरे में उपस्थित हैं। गत रात्रि में फलहारिणी काली की पूजा हो गयी। उस उत्सव के उपलक्ष्य में सभा-मण्डप में रात्रि के तीसरे पहर से नाटक का अभिनय शुरू हुआ है—विद्यासुन्दर कृत नाटक।

श्रीरामकृष्ण ने प्रातःकाल काली माता के दर्शन को जाते समय थोड़ा अभिनय भी देखा है। नाटकवाले लोग स्नान आदि कर चुकने के बाद श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने आये हैं।

शनिवार, २४ मई १८८४ ई०, अमावस्या।

गोरे रंग का जो लड़का 'विद्या' बना था उसने अच्छा अभिनय किया था। श्रीरामकृष्ण आनन्द से उसके साथ ईश्वर सम्बन्धी अनेक बातें कर रहे हैं। भक्तगण उत्सुक होकर सब सुन रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण-(विद्या के अभिनेता के प्रति)-तुम्हारा अभिनय बहुत अच्छा हुआ। यदि कोई गाने में, बजाने में, नाचने में या किसी भी एक विद्या में प्रवीण हो, तो वह चेष्टा करने पर शीघ्र ही ईश्वर को प्राप्त कर सकता है।

'मृत्यु की याद करो ।' 'अभ्यासयोग'

"और तुम लोग जिस प्रकार देर तक अभ्यास करके गाना, बजाना या नाचना सीखते हो, उसी प्रकार ईश्वर में मन लगाने का अभ्यास करना होता है। पूजा, जप, ध्यान, इन सब का नियमित रूप से अभ्यास करना पड़ता है।

"क्या तुम्हारा विवाह हो गया है ? कोई बाल-बच्चे हैं ?"

विद्या–जी, एक लड़की का देहान्त हो गया है, फिर एक सन्तान हुई है।

श्रीरामकृष्ण–इसी बीच में हुआ और मर भी गया। तुम्हारी यह कम उम्र ! कहते हैं—'सन्ध्या के समय पति मरा, कितनी रात तक रोऊँगी !' (सभी हँस पड़े।)

"संसार में सुख तो देख रहे हो ? मानो आमड़ाफल, केवल गुठली और छिलका है। और फिर खाने से अम्लशूल हो जाता है !

"नाटक कम्पनी में नट का काम कर रहे हो, ठीक है, परन्तु बड़ा कष्ट होता है ! अभी कम उम्र है इसीलिए गोल-माल चेहरा है। इसके बाद सब बिगड़ जायगा। नट प्रायः उसी प्रकार के होते हैं। मुँह सूखा, पेट मोटा, बाँह पर ताबीज।

(सभी हँसे।)

"मैंने क्यों विद्यासुन्दर का गाना सुना ? देखा—ताल, मान, गाना सब अच्छे हैं। बाद में माँ ने दिखा दिया कि नारायण ही इन नटों का रूप धारण कर नाटक कर रहे हैं।"

विद्या–जी, काम और कामना में क्या भेद है ?

श्रीरामकृष्ण–काम मानो वृक्ष का मूल है और कामना मानो शाखा-प्रशाखाएँ।

"ये काम, क्रोध, लोभ आदि छः रिपु एकदम तो जायेंगे नहीं, इसीलिए ईश्वर की ओर उनका मुंह फेर देना होगा। यदि कामना करनी हो, लोभ करना हो तो ईश्वर की भक्ति की कामना करनी चाहिए और उन्हें पाने के लिए लोभ करना चाहिए; यदि मद अर्थात् मत्तता करनी है, अहंकार करना है, तो 'मैं ईश्वर का दास हूँ, ईश्वर की सन्तान हूँ' यह कहकर मत्तता, अहंकार करना चाहिए। सम्पूर्ण मन उन्हें दिये बिना उनका दर्शन नहीं होता।

"कामिनी और कांचन में मन का व्यर्थ में व्यय होता है। यह देखो न, बाल-बच्चे हुए हैं, नाटक में काम करना पड़ रहा है—इन सब अनेक कर्मों के कारण ईश्वर में मन का योग नहीं हो पाता।

"भोग रहने से ही योग घट जाता है। भोग रहने से ही कष्ट होता है। श्रीमद्भागवत में कहा है—अवधूत ने अपने चौबीस गुरुओं में चील को भी एक गुरु बनाया था। चील के मुंह में मछली थी, इसीलिए हजार कौओं ने उसे घेर लिया। मछली को मुंह में लेकर वह जिधर जाती थी उधर ही सब कौए कांव कांव करके उसके पीछे भागते थे। पर जब चील के मुंह से अपने आप मछली गिर गयी, तो सब कौए मछली की ओर दौड़े, चील की ओर फिर न गये।

"मछली अर्थात् भोग की चीज। कौए हैं चिन्ताएँ। जहाँ भोग है, वहीं चिन्ता है। भोगों का त्याग होने से ही शान्ति होती है।

"फिर देखो, अर्थ ही अनर्थ हो जाता है। तुम भाई भाई अच्छे हो, परन्तु भाई भाई में बटवारे के प्रश्न पर झगड़ा होता

है। कुत्ते आपस में एक दूसरे को चाटते हैं, खूब प्रेम भाव रहता है। परन्तु उन्हें यदि कोई भात, रोटी आदि कुछ फेंक दे, तो आपस में वे एक दूसरे को काटने लगेंगे।

"बीच-बीच में यहाँ पर आते जाना। (मास्टर आदि को दिखाकर) ये लोग आते हैं, रविवार या किसी दूसरे अवकाश के दिन आते हैं।"

विद्या--हमारा रविवार तीन मास का होता है। श्रावण, भाद्रपद और पौष--वर्षाकाल और धान काटने का समय। जी, आपके पास आयें, यह तो हमारा अहोभाग्य है!

"दक्षिणेश्वर में आते समय दो व्यक्तियों का नाम सुना था--आपका और ज्ञानार्णव का।"

श्रीरामकृष्ण--भाइयों के साथ मेल रखकर रहना। मेल रहने से ही देखने सुनने में सब भला होता है। नाटक में नहीं देखा? चार व्यक्ति गाना गा रहे हैं, परन्तु यदि प्रत्येक व्यक्ति अलग अलग तान छेड़ दे तो नाटक पर ही पानी फिर जायगा!

विद्या--जाल में अनेक पक्षी फँसे पड़े हैं। यदि एक साथ चेष्टा करके जाल लेकर एक ही दिशा में उड़ जायँ तो बहुत कुछ बचाव हो सकता है। परन्तु यदि प्रत्येक पक्षी अलग अलग दिशा में उड़ने की चेष्टा करे, तो कुछ नहीं होता। नाटक में भी देखने में आता है, सिर पर घड़ा, और नाच रहा है।

श्रीरामकृष्ण--गृहस्थी करो, परन्तु सिर पर घड़े को ठीक रखो अर्थात् ईश्वर की ओर मन को स्थिर रखो।

"मैंने पल्टन के सिपाहियों से कहा था, तुम लोग संसार का कामकाज करोगे, परन्तु कालरूपी (मृत्युरूपी) मूसल हाथ पर पड़ेगा, इसका ख्याल रखना।

"उस देश में बढ़ई लोगों की औरतें ओखली में चिउड़ा कूटती हैं। एक औरत मूसल को उठाती और गिराती है, और दूसरी चिउड़ा उलट देती है—यह ध्यान रखती है कि कहीं मूसल हाथ पर न पड़ जाय। इधर बच्चे को स्तन-पान भी कराती है और एक हाथ से भीगे धान को चूल्हे पर रखकर पतीले में भून लेती है। फिर ग्राहक के साथ बातचीत भी करती है, कहती है, तुम्हारे ऊपर इतने पैसे पहले के उधार हैं, दे जाना।

"ईश्वर में मन रखकर इसी प्रकार संसार में अनेकानेक कामकाज कर सकते हो परन्तु अभ्यास चाहिए और होशियार रहना चाहिए, तब दोनों ओर की रक्षा होती है।"

आत्मदर्शन या ईश्वरदर्शन का उपाय-साधुसंग या विज्ञान (साइन्स) ?

विद्या—जी, इसका क्या प्रमाण है कि आत्मा शरीर से पृथक् है ?

श्रीरामकृष्ण—प्रमाण ? ईश्वर को देखा जा सकता है। तपस्या करने पर उनकी कृपा से ईश्वर का दर्शन होता है। ऋषियों ने आत्मा का साक्षात्कार किया था। साइन्स से ईश्वर-तत्त्व जाना नहीं जाता, उसके द्वारा केवल इन इन्द्रियग्राह्य बातों का पता लगता है कि इसके साथ उसे मिलाने पर यह होता है और उसके साथ इसे मिलाने पर यह होता है, इसीलिए इस बुद्धि के द्वारा यह सब समझा नहीं जाता। साधुसंग करना होता है। वैद्य के साथ रहते रहते नाड़ी परखना आ जाता है।

विद्या—जी, अब समझा।

श्रीरामकृष्ण—तपस्या चाहिए, तब वस्तु की प्राप्ति होगी।

शास्त्र के श्लोकों को रट लेने से भी कुछ न होगा। 'गांजा गांजा' मुँह से कहने से नशा नहीं होता। गांजा पीना पड़ता है।

"ईश्वर-दर्शन की बात लोगों को समझायी नहीं जा सकती। पाँच वर्ष के बालक को पति-पत्नी के मिलने के आनन्द की बातें समझायी नहीं जा सकतीं।"

विद्या-जी, आत्मदर्शन किस उपाय से हो सकता है?

इसी समय राखाल कमरे में भोजन करने बैठ रहे थे। परन्तु यहाँ अनेक लोग हैं, इसलिए सोच-विचार कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण आजकल राखाल का गोपाल-भाव से पालन कर रहे हैं।—ठीक मानो माँ यशोदा का वात्सल्य-भाव।

श्रीरामकृष्ण-(राखाल के प्रति)-खा न रे! ये लोग नहीं तो उठकर एक ओर खड़े हो जायँ। (एक भक्त के प्रति) राखाल के लिए बर्फ रखो। (राखाल के प्रति) तू फिर वन-हुगली जायगा? धूप में न जाना।

राखाल भोजन करने बैठे। श्रीरामकृष्ण फिर विद्या का अभिनय करनेवाले लड़के के साथ वार्तालाप कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण-(विद्या के प्रति)-तुम सब ने मन्दिर में प्रसाद क्यों नहीं लिया? यहीं पर भोजन करते।

विद्या-जी, सभी की राय तो एक-सी नहीं है, इसीलिए अलग रसोई बन रही है। सभी लोग अतिथिशाला में भोजन करना नहीं चाहते।

राखाल भोजन करने बैठे हैं; श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ बरामदे में बैठकर फिर बातचीत कर रहे हैं।

(२)

आत्मदर्शन का उपाय

श्रीरामकृष्ण–(विद्या अभिनेता के प्रति)–आत्मदर्शन का उपाय है व्याकुलता। मन, वचन और कर्म से उन्हें पाने की चेष्टा। जब देह में काफी पित्त जम जाता है, तो सभी चीजें पीली दिखती हैं, पीले के अतिरिक्त दूसरा कोई रंग नही दिखता।

"तुम नाटकवालों में जो लोग केवल औरतों का काम करते हैं, उनका प्रकृतिभाव हो जाता है। औरतों का चिन्तन करके औरतों की तरह चलना-फिरना, सभी कुछ उनके समान हो जाता है। इसी प्रकार रात-दिन ईश्वर का चिन्तन करने पर उन्हीं का स्वभाव प्राप्त हो जाता है।

"मन को जिस रंग में रँगवाओगे उसका वही रंग हो जाता है। मन मानो धोबी के घर का धुला हुआ कपड़ा है।"

विद्या–तो इसे एक बार पहले धोबी के घर भेजना होगा।

श्रीरामकृष्ण–हाँ, पहले चित्तशुद्धि, उसके बाद मन को यदि ईश्वर-चिन्तन में छोड़ दो, तो उसी रंग का बन जायगा। फिर यदि संसार करो, नाटकवाले का काम करो या जो कुछ भी करो, उसी प्रकार का बन जायगा।

(३)

श्रीरामकृष्ण ने थोड़ा सा ही विश्राम किया था कि कलकत्ते से हरि, नारायण, नरेन्द्र बन्द्योपाध्याय आदि ने आकर भूमिष्ठ हो उन्हें प्रणाम किया। नरेन्द्र बन्द्योपाध्याय प्रेसीडेन्सी कॉलेज के संस्कृत अध्यापक राजकृष्ण बन्द्योपाध्याय के पुत्र हैं। घर में मेल न होने के कारण श्यामपुकुर में अलग मकान लेकर स्त्री-पुत्र

के साथ रहते हैं। बहुत ही सरलचित्त व्यक्ति हैं; २९-३० साल की उम्र होगी। जीवन के शेष भाग में उन्होंने प्रयाग में निवास किया था। ५८ वर्ष में उनका देहान्त हुआ था।

ध्यान के समय वे घण्टा-ध्वनि आदि नाना प्रकार के शब्द सुनते थे। भूटान, उत्तर पश्चिम तथा अन्य अनेक प्रदेशों में उन्होंने भ्रमण किया था, बीच-बीच में श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने आते थे।

हरि (स्वामी तुरीयानन्द) उन दिनों अपने बागबाजार के मकान में भाइयों के साथ रहते थे। जनरल असेम्ब्ली में प्रवेशिका (मैट्रिक) तक पढ़कर उस समय घर पर ईश्वर-चिन्तन, शास्त्र-पाठ तथा योग का अभ्यास किया करते थे। कभी कभी दक्षिणेश्वर में जाकर श्रीरामकृष्ण का दर्शन करते थे। श्रीरामकृष्ण बाग-बाजार में बलराम के घर जाने पर उन्हें कभी कभी बुला लेते थे।

बौद्धधर्म की बात; ब्रह्म ज्ञानस्वरूप है

श्रीरामकृष्ण—(भक्तों के प्रति)—बुद्धदेव की बात हमने अनेक बार सुनी है। वे दस अवतारों में से एक हैं। ब्रह्म अचल, अटल है, निष्क्रिय है और ज्ञानस्वरूप है। जब बुद्धि उस ज्ञानस्वरूप में लीन हो जाती है, उस समय ब्रह्मज्ञान होता है, उस समय मनुष्य बुद्ध बन जाता है।

"न्यांगटा (तोतापुरी) कहा करता था, मन का लय बुद्धि में, और बुद्धि का लय ज्ञानस्वरूप में हो जाता है।

"जब तक 'अहं' भाव रहता है, तब तक ब्रह्मज्ञान नहीं होता। ब्रह्मज्ञान होने पर, ईश्वर का दर्शन होने पर 'अहं' अपने वश में आ जाता है। ऐसा न होने पर 'अहं' को वशीभूत नहीं

किया जा सकता। अपनी परछाई को पकड़ना कठिन है परन्तु सूर्य जब सिर पर आ जाता है तो परछाई आधे हाथ के भीतर रहती है।"

भक्त—ईश्वर-दर्शन का स्वरूप कैसा है?

श्रीरामकृष्ण—नाटक का अभिनय नहीं देखा है? लोग सब आपस में बातचीत कर रहे हैं; ऐसे समय परदा उठ गया तब सब लोगों का सारा मन अभिनय में लग जाता है। फिर बाहर की ओर दृष्टि नहीं रहती। इसी का नाम है समाधिस्थ होना।

"फिर परदा गिरने पर पुनः बाहर की ओर दृष्टि। मायारूपी परदा गिरने पर फिर मनुष्य बहिर्मुख हो जाता है। (नरेन्द्र बन्द्योपाध्याय के प्रति) तुमने अनेक देशों में भ्रमण किया है। कुछ साधुओं की कहानी सुनाओ।"

बन्द्योपाध्याय ने भूटान में दो योगियों को देखा था, वे आधा सेर नीम का रस पी जाते थे, ये ही सब कहानियाँ कह रहे हैं। फिर नर्मदा के तट पर साधु के आश्रम में गये थे। उस आश्रम के साधु ने पैण्ट पहने बंगाली बाबू को देखकर कहा था, 'इसके पेट में छुरी है।'

श्रीरामकृष्ण—देखो, साधुओं के चित्र घर में रखने चाहिए, इससे सदा ईश्वर का उद्दीपन होता है।

बन्द्योपाध्याय—मैंने आपका चित्र कमरे में रखा है और साथ ही एक पहाड़ी साधु का चित्र भी रखा है—हाथ में गाँजा की चिलम में आग जल रही है।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, साधुओं का चित्र देखने से उद्दीपन होता है। जैसे मिट्टी का बना हुआ आम देखने से वास्तविक आम

का उद्दीपन होता है, युवती स्त्री देखने से लोगों के मन में जिस प्रकार भोग का उद्दीपन होता है।

"इसीलिए तुम लोगों से कहता हूँ कि सदैव ही साधु-संग आवश्यक है। (बन्द्योपाध्याय के प्रति) संसार की ज्वाला तो देखी है। भोग लेने में ही ज्वाला है। चील के मुँह में जब तक मछली थी, तब तक झुण्ड के झुण्ड कौए आकर उसे तंग कर रहे थे।

"साधु-संगति में शान्ति होती है। जल के भीतर मगर बहुत देर तक रहता है, साँस लेने के लिए एक एक बार जल के ऊपर चला आता है। उस समय साँस लेकर शान्त हो जाता है।"

नाटकवाला—जी आपने भोग की बातें कहीं सो ठीक हैं। ईश्वर से भोग माँगने पर अन्त में विपत्ति होती है। मन में कितने प्रकार की कामनाएँ उठ रही हैं, सभी कामनाओं से तो मंगल नहीं होता। ईश्वर कल्पतरु हैं। मनुष्य उनसे जो भी कुछ माँगता है, वही उसे प्राप्त होता है। अब उसके मन में यदि ऐसी भावना हो कि 'ये तो कल्पतरु हैं अच्छा, देखें, यदि शेर यहाँ पर आ जाय तो जानें।' बस शेर की याद करते ही शेर आ खड़ा होता है और उसे खा जाता है।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, यह ध्यान में रखना कि शेर आता है। अधिक और क्या कहूँ, इधर मन रखो, ईश्वर को न भूलो—सरल भाव से उन्हें पुकारने पर वे दर्शन देंगे।

"एक और बात—नाटक के अन्त में कुछ हरिनाम करके समाप्त किया करो। इससे जो लोग गाते हैं और जो लोग सुनते हैं वे सभी ईश्वर का चिन्तन करते करते अपने अपने स्थानों

में जायेंगे ।"

नाटकवाले प्रणाम करके विदा हुए ।

गृही भक्तों की स्त्रियों को उपदेश

दो भक्तों की स्त्रियों ने आकर श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया । वे श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने आयी हैं, इसलिए उपवास किये हुई हैं । दोनों ही घूंघटवाली, दो भाइयों की पत्नियाँ हैं । उम्र यही २२–२३ वर्ष के भीतर ही होगी । दोनों ही पुत्रों की माताएं हैं ।

श्रीरामकृष्ण–(स्त्रियों के प्रति)–देखो, तुम शिवपूजा किया करो । कैसे पूजा करनी होती है, 'नित्यकर्म' नाम की पुस्तक है, उसे पढ़कर देख लेना । देवपूजा करने से बहुत देर तक देवता का काम कर सकोगी । फूल चुनना, चन्दन घिसना, देवता के बर्तनों को मलना, देवता के लिए जलपान की सामग्री को सजाना —ये सब काम करने से उधर ही मन लगा रहेगा । नीच बुद्धि, हिंसा, क्रोध ये सब भाग जायेंगे । तुम दोनों—देवरानी जेठानी जब आपस में बातचीत किया करो, तो देवताओं की ही बातें किया करो ।

"किसी प्रकार से ईश्वर में मन को लगा देना । एक बार भी उनकी विस्मृति न हो । जैसे तेल की धार—उसके बीच कुछ और नहीं है । एक ईंट या पत्थर को भी यदि ईश्वर मानकर भक्ति के साथ उसकी पूजा करो, तो उससे भी उनकी कृपा से ईश्वर-दर्शन हो सकता है ।

"पहले जो कहा, शिवपूजा—यह सब पूजा करनी चाहिए । उसके बाद मन पक्का हो जाने पर अधिक दिन पूजा नहीं करनी

पड़ती। उस समय सदा ही मन का योग बना रहता है—सदा ही स्मरण-मनन होता रहता है।"

बड़ी बहू–(श्रीरामकृष्ण के प्रति)–हमें क्या कृपा कर कुछ मन्त्र दे देंगे?

श्रीरामकृष्ण–(स्नेह के साथ)–मैं तो मन्त्र नहीं देता? मन्त्र देने से शिष्य का पाप-ताप लेना पड़ता है। माँ ने मुझे बच्चे की स्थिति में रखा है। अब तुम्हें जो शिवपूजा के लिए कह दिया है वही करो। बीच-बीच में आती रहना, बाद में ईश्वर की इच्छा से जो होने का है, होगा। स्नान-यात्रा के दिन फिर आने की चेष्टा करना।

"घर पर हरिनाम करने के लिए मैंने जो कहा था, क्या वह हो रहा है?"

बहू–जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण–तुम लोग उपवास करके क्यों आयी हो? खाकर आना चाहिए।

"स्त्रियाँ मेरी माँ का एक-एक रूप हैं न; इसीलिए मैं उनका कष्ट नहीं देख सकता। जगन्माता का एक-एक रूप। खाकर आओगी, आनन्द में रहोगी।"

यह कहकर श्री रामलाल को आदेश दिया कि वह उन बहुओं को जलपान करायें। फलहारिणी पूजा का प्रसाद—लूची, तरह-तरह के फल, ग्लास ग्लास भर शरबत और मिठाई आदि उन्होंने ग्रहण किया।

श्रीरामकृष्ण ने कहा, "तुम लोगों ने कुछ खा लिया तो अब मेरा मन शान्त हुआ। मैं स्त्रियों को उपवासी नहीं देख सकता।"

श्रीरामकृष्ण शिवमन्दिर की सीढ़ी पर बैठे हैं। दिन के पाँच

बजे का समय होगा। पास ही अधर, डाक्टर, निताई, मास्टर आदि दो-एक भक्त बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण—(भक्तों के प्रति)—देखो, मेरा स्वभाव बदलता जा रहा है।

अब कुछ गुह्य बातें कहने के उद्देश्य से एक सीढ़ी नीचे उतरकर भक्तों के पास जा बैठे।

मनुष्य में ईश्वर का सब से अधिक प्रकाश; अवतारतत्त्व

श्रीरामकृष्ण—तुम लोग भक्त हो, तुमसे कहने में हानि नहीं—आजकल मुझे ईश्वर के चिन्मय रूप का दर्शन नहीं होता। साकार नर-रूप में उनका दर्शन करता हूँ। ईश्वर के रूप का दर्शन, स्पर्श तथा आलिंगन करना मेरा स्वभाव है। अब ईश्वर मुझसे कह रहे हैं, 'तुमने देह धारण की है, साकार नर-रूपों के साथ आनन्द करो।'

"वे तो सभी भूतों में विद्यमान हैं, परन्तु मनुष्य में अधिक प्रकट हैं।

"मनुष्य क्या कम है जी! ईश्वर का चिन्तन कर सकता है, अनन्त का चिन्तन कर सकता है; दूसरा कोई प्राणी ऐसा नहीं कर सकता।

"दूसरे प्राणियों में, वृक्षलताओं में तथा सर्व भूतों में वे हैं, परन्तु मनुष्य में उनका अधिक प्रकाश है।

"अग्नि-तत्त्व सर्व भूतों में है, सब चीजों में है, परन्तु लकड़ी में अधिक प्रकट है।

"राम ने लक्ष्मण से कहा था, 'भाई, देखो हाथी इतना बड़ा जानवर है, परन्तु ईश्वर का चिन्तन नहीं कर सकता।'

"फिर अवतार में अधिक प्रकट हैं। राम ने लक्ष्मण से कहा था, 'भाई, जिस मनुष्य में रागा-भक्ति देखो—भाव में हँसता है, रोता है, नाचता है—वहीं पर मैं हूँ।'"

श्रीरामकृष्ण चुपचाप बैठे है। थोड़ी देर बाद फिर बातचीत करने लगे।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, 'केशव सेन बहुत आता था। यहाँ पर आकर तो वह बहुत बदल गया। हाल में तो उसमें बहुत कुछ विशेषता आ गयी थी। यहाँ दलबल के साथ कई बार आया था। फिर अकेले आने की इच्छा थी। केशव का पहले वैसा साधुसंग नहीं हुआ था।

"कोलूटोला के मकान पर भेंट हुई। हृदय साथ था। केशव सेन जिस कमरे में था, उसी कमरे में हमें बैठाया। मेज पर शायद कुछ लिख रहा था, बहुत देर बाद कलम छोड़कर कुर्सी से नीचे उतरकर बैठा। हमें नमस्कार आदि कुछ नहीं किया।

"यहाँ पर कभी आता था। मैंने एक दिन भावविभोर स्थिति में कहा, 'साधु के सामने पैर पर पैर रखकर नहीं बैठना चाहिए; उससे रजोगुण की वृद्धि होती है।' वह जब भी आता, मैं स्वयं उसे नमस्कार करता था; तब उसने धीरे धीरे भूमिष्ठ होकर नमस्कार करना सीखा।

"फिर मैंने केशव से कहा, 'तुम लोग हरिनाम किया करो, कलियुग में उनके नाम-गुणों का कीर्तन करना चाहिए।' तब उन लोगों ने खोल-करताल लेकर हरिनाम करना आरम्भ किया।*

* श्री केशव सेन खोल-करताल लेकर कुछ वर्षों से ब्रह्मनाम कर रहे थे। श्रीरामकृष्ण के साथ १८७५ में साक्षात्कार होने के बाद से विशेष रूप से हरिनाम तथा माँ के नाम का 'खोल-करताल' लेकर कीर्तन करने लगे।

"हरिनाम में मेरा और भी विश्वास क्यों हुआ ? इसी देवमन्दिर में बीच बीच में सन्त लोग आया करते हैं। एक मुलतान का साधु आया था, गंगासागर के यात्रियों के लिए प्रतीक्षा कर रहा था। (मास्टर को दिखाकर) इन्हीं की उम्र का होगा वह साधु। उसीने कहा था, उपाय नारदीय भक्ति।

"केशव एक दिन आया था। रात के दस बजे तक रहा। प्रताप तथा अन्य किसी किसी ने कहा, 'आज यहीं रहेंगे।' हम सब लोग वटवृक्ष के नीचे (पंचवटी में) बैठे थे। केशव ने कहा, 'नहीं, काम है, जाना होगा।'

"उस समय मैंने हँसकर कहा, मछली की टोकरी की गन्ध न होने पर क्या नींद नहीं आयेगी ? एक मछली बेचनेवाली एक माली के घर अतिथि बनी थी। मछली बेचकर आ रही थी, साथ में मछली की टोकरी थी। उसे फूलवाले कमरे में सोने को दिया गया। फूलों की गन्ध से उसे अधिक रात तक नींद नहीं आयी। घरवाली ने उसकी यह दशा देखकर कहा, 'क्यों तुम छटपटा क्यों रही हो ?' उसने कहा, 'कौन जाने भाई! शायद इस फूल की गन्ध से ही नींद नहीं आ रही है। मेरी मछली की टोकरी जरा ला दो तो सम्भव है नींद आ जाय।' अन्त में मछली की टोकरी लायी। उस पर जल छिड़ककर उसने नाक के पास रख ली। फिर खर्राटे के साथ सो गयी।

"कहानी सुनकर केशव के दलवाले जोर से हँसने लगे।

"केशव ने सायंकाल के बाद गंगाघाट में उपासना की। उपासना के बाद मैंने केशव से कहा, 'देखो, भगवान ही एक रूप में भागवत बने हैं, इसीलिए वेद, पुराण, तन्त्र इन सब की पूजा करनी चाहिए। फिर एक रूप में वे भक्त बने हैं; भक्त का

हृदय उनका बैठकघर है। बैठकघर में जाने से अनायास ही बाबू का दर्शन होता है। इसीलिए भक्त की पूजा से भगवान की पूजा होती है।'

"केशव तथा उनके दलवालों ने इन बातों को बड़े ही ध्यान से सुना। पूर्णिमा की रात, चारों ओर चाँदनी फैली हुई थी। गंगातट पर सीढ़ी के ऊपर हम सब लोग बैठे हुए थे। मैंने कहा, सभी लोग कहो, 'भागवत भक्त भगवान।'

"उस समय सभी ने एक स्वर से कहा, 'भागवत भक्त भगवान।' फिर मैंने कहा, 'कहो ब्रह्म ही शक्ति, शक्ति ही ब्रह्म है।' उन्होंने फिर एक स्वर से कहा, 'ब्रह्म ही शक्ति, शक्ति ही ब्रह्म है।' मैंने उनसे कहा, 'जिसे तुम ब्रह्म कहते हो, उसी को मैं माँ कहता हूँ। माँ बहुत मीठा नाम है।'

"जब फिर उनसे कहा, 'फिर कहो, गुरु कृष्ण वैष्णव।' उस समय केशव बोला, 'महाराज, इतनी दूर नहीं। इससे तो सभी लोग हमें कट्टर वैष्णव समझेंगे।'

"केशव से बीच बीच में कहता था, जिसे तुम लोग ब्रह्म कहते हो, उसी को मैं शक्ति, आद्याशक्ति कहता हूँ। जिस समय वे वाणी एवं मन से परे, निर्गुण, निष्क्रिय हैं, उस समय वेद में उन्हें ब्रह्म कहा है। जब देखता हूँ कि वे सृष्टि, स्थिति, प्रलय कर रहे हैं, तब उन्हें शक्ति, आद्याशक्ति आदि सब कहता हूँ।

"केशव से कहा, 'गृहस्थी में रहकर साधना होना बड़ा कठिन है—जिस कमरे में अचार, इमली और जल का घड़ा हो उस कमरे में रहकर सन्निपात का रोगी कैसे अच्छा हो सकता है? इसीलिए बीच बीच में साधन-भजन करने के लिए निर्जन स्थान में चले जाना चाहिए। वृक्ष का तना मोटा होने पर उसमें

हाथी बाँध दिया जा सकता है, परन्तु पौधों को गाय-बछिया-बकरे चर जाते हैं।' इसीलिए केशव ने व्याख्यान में कहा, 'तुम लोग पक्के बनकर संसार में रहो।'

(भक्तों के प्रति) "देखो, केशव इतना बड़ा पण्डित, अंग्रेजी में लेक्चर देता था, कितने लोग उसे मानते थे, स्वयं सम्राज्ञी विक्टोरिया ने उसके साथ बैठकर बातचीत की है। परन्तु वह जब यहाँ आता था, तो नंगे बदन; साधुओं का दर्शन करना हो तो हाथ में कुछ लाना चाहिए, इसीलिए फल हाथ में लेकर आता था। बिलकुल अभिमानशून्य।

(अधर के प्रति) "देखो तुम इतने बड़े विद्वान, फिर डेपुटी हो, फिर भी स्त्री के ऐसे वश में हो। आगे बढ़ो। चन्दन की लकड़ी के बाद भी और अच्छी अच्छी चीजें हैं; चाँदी की खान, उसके बाद सोने की खान, उसके बाद हीरा, जवाहिरात। लकड़हारा वन में लकड़ी काट रहा था, इसीलिए ब्रह्मचारी ने उससे कहा, 'आगे बढ़ो।'"

शिवमन्दिर से उतरकर श्रीरामकृष्ण आँगन में से होकर अपने कमरे की ओर आ रहे हैं। साथ हैं अधर, मास्टर आदि भक्तगण। इसी समय विष्णुघर के सेवक पुजारी श्री राम चॅटर्जी ने आकर समाचार दिया—श्री श्रीमाँ की नौकरानी को हैजा हुआ है।

राम चॅटर्जी—(श्रीरामकृष्ण के प्रति)—मैंने तो दस बजे ही कहा था, आप लोगों ने नहीं सुना।

श्रीरामकृष्ण—मैं क्या करूँ?

राम चॅटर्जी—आप क्या करेंगे? राखाल, रामलाल ये सब थे, उनमें से किसी ने कुछ न किया।

मास्टर—किशोरी (गुप्त) दवा लाने गया है, आलमबाजार से।

श्रीरामकृष्ण—क्या अकेला ही ? कहाँ से लायगा ?

मास्टर—और कोई साथ नहीं है। आलमबाजार से लायगा।

श्रीरामकृष्ण—(मास्टर के प्रति)—जो लोग रोगी की देखभाल कर रहे हैं उन्हें समझा दो कि रोग बढ़ने पर क्या करना होगा। और रोग कम होने पर क्या खायेंगी यह भी बता दो।

मास्टर—जी, अच्छा।

अब भक्त स्त्रियों ने आकर प्रणाम किया। उन्होंने बिदा ली।

श्रीरामकृष्ण उनसे फिर बोले, "शिवपूजा जैसे कहा वैसे किया करो; और खा-पीकर आया करो। नहीं तो मुझे कष्ट होता है। स्नान-यात्रा के दिन फिर आने की चेष्टा करना।"

अब श्रीरामकृष्ण पश्चिम के गोल बरामदे में आकर बैठे हैं। बन्द्योपाध्याय, हरि, मास्टर आदि पास बैठे हैं। बन्द्योपाध्याय के सब पारिवारिक कष्ट श्रीरामकृष्ण जानते हैं।

श्रीरामकृष्ण—देखो, 'एक कौपीन' के लिए सब कष्ट हैं। विवाह करके बालबच्चे हुए हैं, इसीलिए नौकरी करनी पड़ती है। साधु कौपीन लेकर परेशान है। संसारी परेशान है भार्या लेकर। फिर घरवालों के साथ बनाव नहीं है, इसीलिए अलग मकान करना पड़ा। (हँसकर) चैतन्यदेव ने नित्यानन्द से कहा था, 'सुनो सुनो, नित्यानन्दभाई, संसारी जीव की कभी गति नहीं है।'

मास्टर—(मन ही मन)—सम्भव है, श्रीरामकृष्ण अविद्या के संसार की बात कर रहे हैं। सम्भव है, अविद्या के संसार में 'संसारी जीव' रहते हैं।

श्रीरामकृष्ण—(मास्टर को दिखाकर बन्द्योपाध्याय के प्रति)

—वे भी अलग मकान लेकर रहते हैं। एक समय दो मनुष्यों की भेंट हुई। एक ने दूसरे से पूछा, 'तुम कौन हो ?' दूसरे ने कहा, 'मैं हूँ विदेशी।' फिर उसने पहले से पूछा, 'और तुम कौन हो ?' —'मैं हूँ विरही।' (सभी हँसे।) दोनों में अच्छा मेल होगा!

"परन्तु शरणागत होने पर फिर भय नहीं रहता, वे ही रक्षा करेंगे।"

हरि–अच्छा, कुछ लोगों को उन्हें प्राप्त करने में उतना विलम्ब क्यों होता है ?

श्रीरामकृष्ण–बात क्या है, जानते हो ?—भोग और कर्म समाप्त हुए बिना व्याकुलता नहीं आती। वैद्य कहता है, 'दिन बीतने दो, उसके बाद साधारण औषधि से ही लाभ होगा।'

"नारद ने राम से कहा, 'राम! तुम अयोध्या में बैठे हो, रावण का वध कैसे होगा ? तुम तो उसी के लिए अवतीर्ण हुए हो।' राम ने कहा, 'नारद! समय होने दो, रावण का कर्मक्षय होने दो, तब उसके वध की तैयारी होगी।' "

श्रीरामकृष्ण की विज्ञानी स्थिति

हरि–अच्छा, संसार में इतने दुःख क्यों हैं ?

श्रीरामकृष्ण–यह संसार उनकी लीला है, खेल की तरह। इस लीला में सुख-दुःख, पाप-पुण्य, ज्ञान-अज्ञान, भला-बुरा सब कुछ है; दुःख, पाप ये सब न रहने से लीला नहीं चलती।

"लुका-छुकौवल खेल में खूंटी छूना पड़ता है। खेल के प्रारम्भ में ही दाई छूने पर वह सन्तुष्ट नहीं होती। ईश्वर (दाई) की इच्छा है कि खेल कुछ देर तक चलता रहे। उसके बाद— 'लाखों पतंगों में से दो एक कटते हैं, माँ, तब तुम हँसती हुई

हथेली बजाती हो !'

"अर्थात् ईश्वर का दर्शन करके एक-दो व्यक्ति मुक्त हो जाते हैं—बहुत तपस्या के बाद, उनकी कृपा से। तब माँ आनन्द से हथेली बजाती है—'ओहो ! कट गया' यह कहकर।"

हरि—परन्तु इसी खेल में तो हमारे प्राण जो निकलते हैं !

श्रीरामकृष्ण—(हँसकर) तुम कौन हो कहो न ! ईश्वर ही सब कुछ बने हुए हैं—माया, जीव, जगत्, चौबीस तत्त्व।

"साँप बनकर काटता हूँ, और ओझा बनकर झाड़-फूंक करता हूँ। वे विद्या, अविद्या दोनों ही बने हुए हैं। अविद्या-माया द्वारा अज्ञानी जीव बने हुए हैं, विद्या-माया द्वारा तथा गुरु के रूप में, ओझा बनकर झाड़-फूंक कर रहे हैं।

"अज्ञान, ज्ञान, विज्ञान। ज्ञानी देखते हैं, वे ही कर्ता हैं। सृष्टि, स्थिति तथा संहार कर रहे हैं। विज्ञानी देखता है कि वे ही यह सब बने हुए हैं।

"महाभाव, प्रेम होने पर देखता है, उनके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है।

"भाव के सामने भक्ति फीकी है। भाव पकने पर महाभाव, प्रेम !

(बन्द्योपाध्याय के प्रति) "क्या तुम अभी भी ध्यान के समय घण्टे का शब्द सुनते हो ?"

बन्द्यो०—रोज उसी शब्द को सुनता हूँ। फिर रूप का दर्शन ! एक बार मन द्वारा अनुभव कर लेने पर क्या वह फिर रुकता है ?

श्रीरामकृष्ण—(हँसकर)—हाँ; लकड़ी में एक बार आग लग जाने पर फिर बुझती नहीं। (भक्तों के प्रति) ये विश्वास की

अनेक बातें जानते हैं।

वन्द्यो०—मेरा विश्वास बहुत अधिक है!

श्रीरामकृष्ण—अपने घर की औरतों को बलराम की लड़कियों के साथ लाना।

वन्द्यो०—बलराम कौन हैं?

श्रीरामकृष्ण—बलराम को नहीं जानते? बोसपाड़ा में घर है।

किसी सरलचित्त व्यक्ति को देखकर श्रीरामकृष्ण आनन्द में विभोर हो जाते हैं। वन्द्योपाध्याय बहुत सरल हैं। निरंजन भी सरल है। इसीलिए उन्हें भी बहुत चाहते हैं।

श्रीरामकृष्ण—(मास्टर के प्रति)—तुम्हें निरंजन से मिलने के लिए क्यों कह रहा हूँ? यह देखने के लिए कि वह वास्तव में सरल है या नहीं।

परिच्छेद ९

संसार में किस प्रकार रहना चाहिए

(१)

जन्मोत्सव दिन । भक्तों के संग में

श्रीरामकृष्ण पंचवटी के नीचे पुराने वटवृक्ष के चबूतरे पर विजय, केदार, सुरेन्द्र, भवनाथ, राखाल आदि बहुत से भक्तों के साथ दक्षिण की ओर मुँह किये बैठे हैं। कुछ भक्त चबूतरे पर बैठे हैं। अधिकांश चबूतरे के नीचे, चारों ओर खड़े हुए हैं। दिन के एक बजे का समय होगा। रविवार २५ मई १८८४।

श्रीरामकृष्ण का जन्म-दिन फाल्गुन शुक्ला द्वितीया है। परन्तु उनका हाथ अभी अच्छा नहीं हुआ, इसलिए अब तक जन्मोत्सव नहीं मनाया गया। अब हाथ बहुत कुछ अच्छा है। इसलिए भक्तगण आनन्द मनाना चाहते हैं। सहचरी का गाना होगा। सहचरी की उम्र ज्यादा हो गयी है, परन्तु कीर्तन करने में उसकी प्रसिद्धि है।

मास्टर श्रीरामकृष्ण को कमरे में न देख पंचवटी की ओर चले आये। देखा, सब के मुख पर प्रसन्नता झलक रही है। उन्होंने यह नहीं देखा कि श्रीरामकृष्ण भी पेड़ के नीचे चबूतरे पर बैठे हैं। मास्टर खड़े थे—श्रीरामकृष्ण के बिलकुल सामने। उन्होंने व्यग्रतापूर्वक पूछा, वे कहाँ हैं ? उनकी यह बात सुनकर सब के सब बड़े जोर से हँस पड़े। एकाएक सामने श्रीरामकृष्ण को देखकर वे लज्जित हो गये, उन्हें साष्टांग प्रणाम किया। देखा श्रीरामकृष्ण के बाई ओर केदार (चटर्जी) और विजय

(गोस्वामी) चबूतरे पर बैठे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण दक्षिण की ओर मुँह किये बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण–(सहास्य, मास्टर से)–देखो, हमने दोनों को–केदार और विजय को कैसा मिला दिया है!

श्रीवृन्दावन से श्रीरामकृष्ण माधवी-लता ले आये थे। उसे पंचवटी में १८६८ ई० में लगाया था। अब वह लता खूब बड़ी हो गयी है। छोटे-छोटे लड़के उस पर बैठकर झूल रहे हैं, नाच रहे हैं, श्रीरामकृष्ण आनन्दपूर्वक देखते हुए कह रहे हैं–'बन्दर के बच्चों का सा भाव है, गिर जाने पर भी नहीं छोड़ते!'

सुरेन्द्र चबूतरे के नीचे खड़े हैं। श्रीरामकृष्ण स्नेहपूर्वक कह रहे हैं–तुम ऊपर चले आओ, इस तरह पैर भी मजे में झूला सकोगे!

सुरेन्द्र ऊपर चले गये। भवनाथ कुर्ता पहने हुए बैठे हैं, यह देखकर सुरेन्द्र ने कहा, 'क्यों जी, आप विलायत जा रहे हैं क्या?'

श्रीरामकृष्ण हँसते हुए कहते हैं, हमारा विलायत ईश्वर के पास है।

श्रीरामकृष्ण भक्तों से अनेक विषयों पर बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण–मैं कभी कभी धोती-कपड़ा फेंककर आनन्दमय होकर घूमता था। शम्भू ने एक दिन कहा, 'क्यों जी, तुम इसीलिए कपड़े फेंककर घूमते हो! –बड़ा आराम मिलता है! –मैंने एक दिन ऐसा करके देखा था।'

सुरेन्द्र–आफिस से लौटकर कपड़े उतारता हुआ कहता हूँ, माँ, तुमने कितने बन्धनों से जकड़ रखा है।

श्रीरामकृष्ण--अष्टपाशों से बाँध रखा है। लज्जा, घृणा, भय, जाति-अभिमान, संकोच, छिपाने की इच्छा आदि सब।

श्रीरामकृष्ण गाने लगे। पहले गाने का भाव है--'माँ, मुझे यही खेद है कि तुम्हारे जैसी माता के रहते भी मेरे जागते हुए घर में चोरी हो।' दूसरे गाने का अर्थ है--'माँ, तुम इस संसार में खूब पतंग उड़ा रही हो। आशा की वायु पर पतंग उड़ रही है, उसमें माया की डोर लगी हुई है।'

श्रीरामकृष्ण--माया की डोर स्त्री-पुत्र है। विषय से वह डोर माँजी गयी है, इसीलिए उसमें इतनी तेजी आ गयी है। विषय अर्थात् कामिनी-कांचन।

श्रीरामकृष्ण फिर गाने लगे। गीत का भाव--"संसार में पासा खेलने के लिए आना है। यहाँ आकर मैंने बड़ी-बड़ी आशाएँ की थीं। आशा की आशा भग्न दशा ही है। पहले मेरे हक में पंजा आया। पौबारह, अठारह, सोलह, जिस तरह फिर फिरकर आया करते हैं, उसी तरह मैं भी युग और युगान्तरों में आता गया। कच्चे बारह के पड़ने पर, माँ, पंजे और छक्के में मुझे बँध जाना पड़ा। छः दो आठ, छः चार दस, माँ, ये कोई मेरे वश में नहीं हैं। इस खेल में मुझे कोई यश न मिला। अब तो बाजी भी खतम होनी चाहती है।"

श्रीरामकृष्ण--पंजा अर्थात् पञ्चभूत। पंजे और छक्के में बँध जाना, अर्थात् पञ्चभूतों और षड्‌रिपुओं के वश में आना। छः तीन नौ को अंगूठा दिखाना, अर्थात् छः रिपुओं के वश में न आना और तीनों गुणों के पार हो जाना।

"सत्त्व, रज और तम, इन तीनों गुणों ने आदमी को अपने वश में कर रखा है। तीनों भाई-भाई हैं। सत्त्व के रहने पर वह

रज को बुला सकता है और रज के रहने पर वह तम को बुला सकता है। तीनों गुण चोर हैं। तमोगुण विनाश करता है, रजोगुण बद्ध करता है, सतोगुण बन्धन तो जरूर खोलता है, परन्तु वह ईश्वर के पास तक नहीं ले जा सकता।"

विजय–(सहास्य)–सत् भी चोर है न ?

श्रीरामकृष्ण–(सहास्य)–वह ईश्वर के पास नहीं ले जा सकता, परन्तु रास्ता दिखा देता है।

भवनाथ–वाह! कैसी सुन्दर बात है!

श्रीरामकृष्ण–हाँ, यह बड़ी ऊँची बात है।

भक्तगण ये सब बातें सुनकर आनन्द मना रहे हैं।

(२)

कामिनी-कांचन के सम्बन्ध में उपदेश

श्रीरामकृष्ण–बन्धन का कारण कामिनी-कांचन है। कामिनी-कांचन ही संसार है। कामिनी-कांचन ही हमें ईश्वर को देखने नहीं देता।

यह कहकर श्रीरामकृष्ण ने अंगोछे से मुख छिपा लिया। फिर कहा, "क्या अब तुम लोग मुझे देख रहे हो? यही आवरण है। यह कामिनी-कांचन का आवरण दूर हुआ नहीं कि चिदानन्द मिले।

"देखो न, जिसने स्त्री का सुख छोड़ा उसने संसार का सुख छोड़ा, ईश्वर उसके बहुत निकट हैं।"

कोई सटत बैठे, कोई खड़े ये सब बातें सुन रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण–(केदार, विजय आदि से)–स्त्री का सुख जिसने छोड़ा, उसने संसार का सुख छोड़ा। यह कामिनी-कांचन

ही आवरण है। तुम्हारे इतनी बड़ी बड़ी मूछें हैं, तो भी तुम लोग उसी में हो! कहो, मन ही मन विचार करके देखो।

विजय—जी हाँ, यह सच है।

केदार चुप हैं। श्रीरामकृष्ण फिर कहने लगे—"सभी को देखता हूँ, स्त्रियों के वशीभूत हैं। मैं कप्तान के घर गया था। वहाँ से होकर राम के घर जाना था। इसलिए कप्तान से कहा—'गाड़ी का किराया दे दो।' कप्तान ने अपनी स्त्री से कहा। वह स्त्री भी वैसी ही थी—'क्या हुआ' 'क्या हुआ' करने लगी! अन्त में कप्तान ने कहा, 'खैर वे ही लोग (राम आदि) दे देंगे।' गीता-भागवत-वेदान्त सब स्त्री के सामने झुकते हैं।

(सब हँसते हैं।)

"रुपया-पैसा और सर्वस्व बीवी के हाथ में! और फिर कहा जाता है—'मैं दो रुपये भी अपने पास नहीं रख सकता—न जाने मेरा स्वभाव कैसा है!'

"बड़े बाबू के हाथ में बहुत से काम हैं, परन्तु वे किसी को देते नहीं। एक ने कहा गुलाब-जान के पास जाकर सिफारिश कराओ तो काम हो जायगा। गुलाब-जान बड़े बाबू की रखैली है।

"पुरुषों में यह समझ नहीं रह गयी कि देखें कि वे स्त्रियों के कारण कितना उतर गये हैं।

"किले में जब गाड़ी पर सवार होकर पहुँचा, तब जान पड़ा कि मैं साधारण रास्ते से होकर आया। वहाँ पहुँचने पर देखा तो चार मंजिल नीचे चला गया था। रास्ता ढालू था। जिसे भूत पकड़ता है, वह नहीं समझ सकता है कि उसे भूत लगा है। वह सोचता है, मैं बिलकुल ठीक हूँ।"

विजय-(सहास्य)-कोई ओझा मिल गया तो वह उतार देता है।

श्रीरामकृष्ण ने इसका विशेष उत्तर नहीं दिया, केवल कहा, वह ईश्वर की इच्छा है। वे फिर स्त्रियों के सम्बन्ध में कहने लगे।

श्रीरामकृष्ण-जिससे पूछता हूँ, वही कहता है, जी हाँ, मेरी स्त्री अच्छी है। किसी की स्त्री खराब नहीं निकली!

(सब हँसते हैं।)

"जो लोग कामिनी-कांचन लेकर रहते हैं, वे नशे में कुछ समझ नहीं पाते। जो लोग शतरञ्ज खेलते हैं, वे बहुत समय तक नहीं समझते कि कौनसी चाल ठीक होगी; परन्तु जो लोग अलग से देखते हैं वे बहुत कुछ समझते हैं।

"स्त्री मायारूपिणी है। नारद राम की स्तुति करते हुए कहने लगे—हे राम, जितने पुरुष हैं, सब तुम्हारे ही अंश से हुए हैं और जितनी स्त्रियाँ हैं, वे सब मायारूपिणी सीता के अंश से हुई हैं। मैं और कोई वरदान नहीं चाहता। यही करो जिससे तुम्हारे पादपद्मों में शुद्धा भक्ति हो। फिर तुम्हारे मोहिनी-माया में मुग्ध न होऊँ।'"

सुरेन्द्र के छोटे भाई गिरीन्द्र और उनके भतीजे नगेन्द्र आदि आये हुए हैं। नगेन्द्र वकालत के लिए तैयारी कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण-(गिरीन्द्र आदि से)-तुम लोगों से कहता हूँ, तुम लोग संसार में न फँस जाना। देखो, राखाल को ज्ञान और अज्ञान का बोध हो गया है—सत् असत् का विचार पैदा हो गया है—अब मैं उससे कहता हूँ तू घर जा, कभी कभी यहाँ आना, दो एक रोज रह जाया करना।

"और तुम लोग आपस में मिलकर रहोगे, तभी तुम्हारा कल्याण होगा, और आनन्दपूर्वक रहोगे। नाटकवाले अगर एक स्वर से गाते हैं तो नाटक अच्छा होता है, और जो लोग सुनते हैं, उन्हें भी आनन्द मिलता है।

"ईश्वर पर अधिक मन रखकर और संसार में थोड़ा मन लगाकर संसार का काम करना।

"साधुओं का बारह आने मन ईश्वर पर रहता है, चार आने दूसरे कामों में लगाते हैं। साधु ईश्वर की ही कथा पर अधिक ध्यान रखते हैं। साँप की पूँछ पर पैर रखने से फिर रक्षा नहीं। शायद पूँछ में उसे अधिक चोट लगती है।"

श्रीरामकृष्ण झाऊतल्ले की ओर जाते समय सींती के गोपाल से छाते के बारे में कह गये हैं। गोपाल ने मास्टर से कहा, 'वे कह गये हैं, अपना छाता कमरे में रख देना।' पंचवटी में कीर्तन का आयोजन होने लगा। श्रीरामकृष्ण आकर बैठे। सहचरी गा रही है। भक्तगण चारों ओर बैठे हैं, कोई कोई खड़े भी हैं।

कल शनिवार अमावस्या थी। जेठ का महीना है। आज ही से मेघ दिखलायी देने लगे। एकाएक आँधी भी चल पड़ी। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ अपने कमरे में चले आये। निश्चय हुआ कि कीर्तन उसी कमरे में होगा।

श्रीरामकृष्ण–(सींती के गोपाल से)–क्यों जी छाता ले आये हो?

गोपाल–जी नहीं, गाना सुनते ही सुनते भूल गया।

छाता पंचवटी में पड़ा हुआ है, गोपाल जल्दी से लेने के लिए चले गये।

श्रीरामकृष्ण—मैं इतना लापरवाह तो हूँ, फिर भी इस दरजे को अभी नहीं पहुँचा।

"राखाल ने एक जगह निमन्त्रण की बात पर १३ तारीख को कह दिया ११ तारीख!

"और गोपाल आखिर गौओं के पाल (समूह) ही तो हैं!
(सब हँसते हैं।)

"वही, जो एक सुनारों की कहानी है—एक कहता है 'केशव', दूसरा कहता है 'गोपाल', तीसरा कहता है 'हरि', चौथा कहता है 'हर'! उसमें, उस गोपाल का अर्थ है, गौओं का पाल (समूह)!" (सब हँसते हैं।)

सुरेन्द्र गोपाल को लक्ष्य करके हँसते हुए कह रहे हैं—'कान्हा कहाँ है?'

(३)

कीर्तन करनेवाली गौरांग के संन्यास का कीर्तन गा रही है। श्रीरामकृष्ण गौरांग-संन्यास का कीर्तन सुनते सुनते खड़े होकर समाधिमग्न हो गये। उसी समय भक्तों ने उनके गले में फूलों की माला डाल दी। भवनाथ और राखाल श्रीरामकृष्ण को पकड़े हुए हैं कि कहीं गिर न जायँ। श्रीरामकृष्ण उत्तर की ओर मुँह किये हुए हैं। विजय, केदार, राम, मास्टर, मनमोहन, लाटू आदि भक्तगण मण्डलाकार उन्हें घेरकर खड़े हैं।

कृष्ण ही अखण्ड सच्चिदानन्द हैं ये ही जीव-जगत् हैं

धीरे धीरे समाधि छूट रही है। श्रीरामकृष्ण सच्चिदानन्द श्रीकृष्ण से बातचीत कर रहे हैं। 'कृष्ण' इस नाम का एक एक बार उच्चारण कर रहे हैं। कभी कभी साफ उच्चारण भी नहीं

होता। कह रहे हैं—"कृष्ण! कृष्ण! सच्चिदानन्द!—कहाँ हो, आजकल तुम्हारा रूप देखने को नहीं मिलता! अब तुम्हें भीतर भी देख रहा हूँ और बाहर भी। जीव, जगत, चौबीस तत्त्व सब तुम्हीं हो। मन, बुद्धि सब तुम्हीं हो। गुरु के प्रणाम में है—

अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥

तुम्हीं अखण्ड हो, चराचर को व्याप्त किये हुए भी तुम्हीं हो। तुम्हीं आधार हो, तुम्हीं आधेय हो। प्राण-कृष्ण! मन-कृष्ण! बुद्धि-कृष्ण! आत्मा-कृष्ण! प्राण हे गोविन्द! मेरे जीवन हो!"

विजय को भी आवेश हो गया है। श्रीरामकृष्ण कहते हैं, बाबू क्या तुम भी बेहोश हो गये हो?

विजय—(विनीत भाव से)—जी नहीं।

कीर्तन करनेवाली ने गाया—'सदा ही हृदय में रखती, ऐ प्राण प्यारे!' श्रीरामकृष्ण फिर समाधिमग्न हो गये।—टूटा हाथ भवनाथ के कन्धे पर है।

श्रीरामकृष्ण का मन जब कुछ बहिर्मुख हुआ, तब गानेवाली ने गाया—तुम्हारे लिए जिसने सर्वस्व का त्याग किया, उसे भी इतना दुःख!

श्रीरामकृष्ण ने गानेवाली को प्रणाम किया। बैठकर गाना सुन रहे हैं।—कभी कभी भावाविष्ट हो रहे हैं। गानेवाली ने गाना बन्द कर दिया। श्रीरामकृष्ण बातचीत करने लगे।

श्रीरामकृष्ण—(विजय आदि भक्तों के प्रति)—प्रेम किसे कहते हैं? ईश्वर पर जिसका प्रेम होता है—जैसे चैतन्यदेव का—वह संसार को तो भूल जायगा ही, किन्तु इतनी प्रिय वस्तु

श्रीरामकृष्ण एक एक बार कह रहे हैं, हा कृष्ण चैतन्य !

श्रीरामकृष्ण—(विजय आदि भक्तों से)—घर में खूब राम नाम किया गया है, कोई कहता था, इसीलिए खूब रंग जमा !

भवनाथ—तिस पर संन्यास की बात !

श्रीरामकृष्ण—अहा ! क्या भाव है !

यह कहकर श्रीरामकृष्ण ने गौरांग पर एक गाना गाया। गीत के समाप्त होने पर आपने विजय आदि भक्तों से कहा—"कीर्तन में बहुत ही अच्छा कहा है !—संन्यासी को नारी की ओर नजर भी उठाकर न देखना चाहिए, संन्यासी का धर्म यही है।"

विजय—जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण—संन्यासी को देखकर लोग शिक्षा लेंगे न, इसीलिए इतना कठोर नियम है। संन्यासी को स्त्रियों का चित्र भी न देखना चाहिए। उसके लिए ऐसा कठोर नियम है। काला बकरा माता की बलि पर चढ़ाया जाता है, परन्तु जरा भी कहीं घाव हुआ तो फिर उसकी बलि नहीं दी जाती। स्त्रियों का संग तो करना ही नहीं चाहिए। इतना ही नहीं, वरन् उनसे बातचीत करना भी संन्यासी के लिए निषिद्ध है।

विजय—छोटे हरिदास ने एक भक्त स्त्री के साथ बातचीत की थी, चैतन्यदेव ने हरिदास का त्याग कर दिया था।

श्रीरामकृष्ण—संन्यासी के लिए कामिनी-कांचन, जैसे सुन्दरी स्त्री के लिए उसके देह की एक खास बदबू। वह बदबू रही तो सब सौन्दर्य ही वृथा है।

"मारवाड़ी ने मेरे नाम से रुपये लिख देना चाहा—मथुर ने जमीन लिख देना चाहा, परन्तु मैं यह कुछ न ले सका।

"संन्यासी के लिए बड़े कठिन नियम हैं। जब साधु-संन्यासी का भेष लिया, तब उसे ठीक-ठीक साधुओं और संन्यासियों का काम करना चाहिए। थिएटर में देखा नहीं ? जो राजा बनता है, वह राजा की ही तरह रहता है, जो मन्त्री बनता है, वह ठीक उसी तरह के आचरण करता है।

"किसी बहुरूपिये ने त्यागी साधु का स्वाँग दिखाया, बिलकुल साधु बन गया। दर्शकों ने उसे एक तोड़ा रुपया देना चाहा। वह 'उँह' कहकर चला गया। तोड़ा छुआ तक नहीं। परन्तु थोड़ी देर बाद, देह और हाथ-पैर धोकर अपने कपड़े पहनकर वह आया। कहा, 'रुपया दे रहे थे अब दीजिये।' जब साधु बना था तब रुपये नहीं छू सकता, अब चार आने भी मिल जायँ तो न छोड़ूँ।'

"परन्तु मनुष्य परमहंस की अवस्था में बालक हो जाता है। पाँच वर्ष के बालक को स्त्री-पुरुष का ज्ञान नहीं होता। फिर भी लोक-शिक्षा के लिए परमहंस को सावधान रहना पड़ता है।"

श्रीयुत केशव सेन कामिनी-कांचन के भीतर थे, इसीलिए लोक-शिक्षा में बाधा पड़ी थी। श्रीरामकृष्ण यही बात कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—वे—(केशव)—समझे ?

विजय—जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण—इधर-उधर दोनों की रक्षा के लिए बढ़े, इसीलिए विशेष कुछ न कर सके।

विजय—चैतन्यदेव ने नित्यानन्द से कहा, 'नित्यानन्द, अगर मैं संसार का त्याग न करूँगा, तो लोगों का कल्याण न होगा। मुझे

देखकर सब लोग संसार में रहना ही पसन्द करेंगे। कामिनी-कांचन का त्याग करके श्रीभगवान के पादपद्मों में सम्पूर्ण मन समर्पित कर देने की चेष्टा फिर कोई न करेगा।'

श्रीरामकृष्ण-चैतन्यदेव ने लोक-शिक्षा के लिए ही संसार का त्याग किया था।

"साधु-संन्यासी को अपने कल्याण के लिए भी कामिनी-कांचन का त्याग करना चाहिए। और निर्लिप्त होने पर भी लोक-शिक्षा के लिए उसे अपने पास कामिनी-कांचन न रखना चाहिए। सन्यासी—जगद्गुरु! उसे देखकर लोगों में चेतना आती है।"

सन्ध्या होने को है। भक्तगण क्रमश: प्रणाम करके विदा हो रहे हैं। विजय केदार से कह रहे हैं—आज सुबह मैंने आपको देखा था (ध्यान में); देह में हाथ लगाना चाहा, पर फिर कहीं कोई नहीं!

परिच्छेद १०

सुरेन्द्र के घर में महोत्सव

(१)

श्रीयुत सुरेन्द्र के बगीचे में

आज श्रीरामकृष्ण सुरेन्द्र के बगीचे में आये हैं। रविवार, ज्येष्ठ कृष्ण ६, १५ जून १८८४। श्रीरामकृष्ण आज सुबह नौ बजे से भक्तों के साथ आनन्द मना रहे हैं।

सुरेन्द्र का बगीचा कलकत्ते के पास काकुड़गाछी गाँव में है। उसके पास ही राम का बगीचा भी है जिसमें करीब छः महीने पहले श्रीरामकृष्ण पधारे थे। आज सुरेन्द्र के बगीचे में महोत्सव है।

सुबह से ही संकीर्तन होने लगा है। कीर्तनिये कृष्ण और गोपियों के सम्बन्ध में कीर्तन गा रहे हैं। गोपियों का प्रेम, कृष्ण के विरह से राधिका की अवस्था—यही सब गाया जा रहा है। श्रीरामकृष्ण को क्षण क्षण में भावावेश हो रहा है। भक्तगण उद्यानगृह के भीतर चारों ओर कतार बाँधे खड़े हैं।

उद्यानगृह में जो कमरा सब से बड़ा है, उसी में कीर्तन हो रहा है। जमीन पर सफेद चद्दर बिछी हुई है। जगह-जगह पर तकिये भी लगे हैं। इस कमरे के पूर्व और पश्चिम ओर एक एक कमरा और उत्तर और दक्षिण ओर बरामदे हैं। उद्यानगृह के सामने अर्थात् दक्षिण की ओर एक तालाब है, पक्का घाट भी बँधा हुआ है। गृह और तालाब के बीच से पूर्व-पश्चिम को

ओर रास्ता है। रास्ते के दोनों तरफ फूल और क्रोटन आदि के पेड़ लगे हैं। उद्यानगृह के पूर्व तरफ से उत्तर के फाटक तक एक और रास्ता गया है। उसके भी दोनों ओर अनेक प्रकार की फूल-पत्तियों के पेड़ लगे हैं। फाटक के पास और रास्ते के पूर्व ओर एक और तालाब है—उसमें भी पक्का घाट है। यहाँ गाँव के साधारण आदमी नहाया करते हैं और पीने के लिए पानी भी इसीसे ले जाते हैं। उद्यानगृह के पश्चिम की ओर भी रास्ता है, उसके दक्षिण-पश्चिम में रन्धनागार है। आज यहाँ खूब धूम है, यहाँ श्रीरामकृष्ण और भक्तों की सेवा होगी। सुरेश और राम प्रत्येक समय सब तरह की देखभाल कर रहे हैं।

उद्यान-गृह के बरामदे में भी भक्तों का समावेश हुआ है। कोई-कोई अकेले, कोई मित्रों के साथ, उपर्युक्त तालाब के किनारे टहल रहे हैं। कोई कोई पक्के घाट पर आकर थोड़ी देर के लिए विश्राम कर रहे हैं।

संकीर्तन हो रहा है। संकीर्तनवाले कमरे में बहुत से भक्त एकत्र हुए हैं। भवनाथ, निरंजन, राखाल, सुरेन्द्र, राम, मास्टर, महिमाचरण और मणि मल्लिक आदि कितने ही भक्त आये हैं। बहुत से ब्राह्मभक्त भी उपस्थित हैं।

कृष्णलीला गायी जा रही है। कीर्तनिया पहले गौर-चन्द्रिका गा रहा है। गौरांग ने संन्यास धारण किया है—वे कृष्ण के प्रेम में पागल हो गये हैं। उन्हें न देखकर नवद्वीप की भक्तमण्डली विलाप कर रही है। यही गीत कीर्तनिया गा रहा है।

श्रीरामकृष्ण को भावावेश है। एकाएक खड़े होकर बड़े ही करुणापूर्ण स्वरों में एक 'पद' गाने लगे—"सखि! तू मेरे प्राणवल्लभ को मेरे पास ले आ या मुझे ही वहीं छोड़ आ।"

श्रीरामकृष्ण को राधिका का भाव हो गया है। ये बातें कहते ही उनकी जबान रुक गयी। देह निःस्पन्द हो गयी और आँखें अर्धनिमीलित रह गयीं। उनका बाह्य-ज्ञान बिलकुल जाता रहा। वे समाधिमग्न हो गये।

बड़ी देर बाद श्रीरामकृष्ण अपनी साधारण दशा में आये। फिर वही करुण-स्वर! कहते हैं—"सखि! उसके पास ले जाकर तू मुझे खरीद ले, मैं तेरी दासी हो जाऊँगी। कृष्ण का प्रेम मुझे तू ही ने तो सिखाया था।—*प्राणवल्लभ!*"

कीर्तनियों का गाना होने लगा। श्रीमती कह रही हैं—'सखि! मैं यमुना में पानी भरने न जाऊँगी। कदम्ब के नीचे प्रिय सखा को मैंने देखा था। उसे देखते ही मैं विह्वल हो जाती हूँ।'

श्रीरामकृष्ण को फिर आवेश हो रहा है। दीर्घ श्वास छोड़कर कातर भाव से कह रहे हैं—'आहा! आहा!'

कीर्तन हो रहा है। श्रीराधा की उक्ति—(कीर्तन का भाव)—

"संग-सुख की लालसा से मैं उनके शीतल अंग का निरीक्षण किया करती हूँ। माना कि वह तुम लोगों का है, परन्तु मुझे उसके दर्शन भी तो एक बार करा दो। वह भूषणों का आभूषण जब चला गया, तब ये भूषण किस काम के रहे? मेरे सुदिन चले गये हैं, ये दुर्दिन आये हैं। दुर्दशा के दिनों के आते कुछ देर भी न लगी।"

"सखि! मैं डूब मरूँगी, भला कह तो सही, कन्हैया जैसे गुणागार को मैं किसे दे जाऊँ? परन्तु देख, राधा की देह को जला न देना, पानी में भी उसे प्रवाहित न करना, वह कृष्ण के

विलास की देह है, उसे तमाल की ही डाल पर रखना; क्योंकि कृष्ण भी काले हैं और तमाल की डाल भी काली है!"

श्रीराधा की मूर्छित दशा का वर्णन

"श्रीराधा मूर्छित हो गयीं, ज्ञान जाता रहा, जीवन की संगिनी ने आँखें भी मूंद लीं। कोई सखी उनकी देह में चन्दन लगाती है और कोई दुःख के आँसू बहा रही है। कोई उसके मुँह पर जल-सिंचन भी करती है।

"उन्हें मूर्छित देख सखियाँ कृष्ण का नाम ले रही हैं। कृष्ण का नाम सुन उन्हें चेतना हो आयी! तमाल देखकर वे सोचती हैं कि कहीं कृष्ण तो सामने आकर नहीं खड़े हो गये।

"सखियों ने सलाह करके मथुरा में कृष्ण के पास एक दूती को भेजा। समवयस्क किसी मथुरानिवासिनी से उसका परिचय हो गया। गोपियों की दूती ने कहा, मुझे बुलाना न होगा, वह आप ही आ जायेंगे। जहाँ पर कृष्ण हैं, वहीं मथुरानिवासिनी के साथ वह दूती जा रही है। वह रास्ते में विकल हो, रोकर कृष्ण को पुकार रही है—

'हे गोपियों के जीवनाधार! तुम कहाँ हो?—प्राणवल्लभ! राधावल्लभ! लज्जानिवारण हरि! एक बार तो दर्शन दे दो। मैंने बड़ा गर्व करके इन लोगों से कहा है कि तुम आप ही मिलोगे।'

गाना—"मधुपुर की नागरी हँसकर कहती है, 'ऐ गोकुल की गोपकुमारी, सातवें द्वार के उस पार राजा रहते हैं, क्या तू वहाँ तक जायगी? और तू जायगी भी कैसे? तेरी हिम्मत देखकर तो मुझे लाज आती है।' उसकी ये बातें सुनकर दूती दुःखित हो कृष्ण को पुकारने लगी—'हे गोपियों के जीवन! हे नागर! हाय, तुम कहाँ हो? दर्शन दे दासी के प्राणों की रक्षा करो।'"

"हे गोपियों के जीवन ! तुम कहाँ हो ?" इतना सुनते ही श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये। अन्त में कीर्तनिये ऊँचे स्वर से कीर्तन गाने लगे। श्रीरामकृष्ण फिर खड़े हो गये। समाधिमग्न। कुछ होश आने पर अस्पष्ट स्वरों में कह रहे हैं—'किट्न-किट्न' (कृष्ण-कृष्ण), भाव में भरपूर मग्न हैं। पूरा नाम उच्चारण नहीं कर सकते।

राधा कृष्ण का मिलनगीत कीर्तनिये गा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण भी गाते हैं :—"राधा खड़ी है, अंग झुकाये हुए, श्याम के बाईं ओर मानो तमाल को घेरकर।"

अब नामकीर्तन होने लगा। खोल-करताल लेकर अब कीर्तनिये एक साथ गाने लगे। भक्तगण पागल-से हो गये। श्रीरामकृष्ण नृत्य कर रहे हैं। उन्हें घेरकर भक्तगण भी आनन्द से नाच रहे हैं। सब लोग 'जय राधे गोविन्द जय राधे गोविन्द' कह रहे हैं।

कीर्तन हो जाने पर श्रीरामकृष्ण ने जरा देर के लिए आसन ग्रहण किया। इसी समय निरंजन आये और श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण उन्हें देखकर ही खड़े हो गये। आनन्द से श्रीरामकृष्ण की आँखें उज्ज्वल हो गयी, कहा, "तू आ गया ! (मास्टर से) देखो, यह लड़का बड़ा सरल है। सरलता पूर्वजन्मार्जित बहुत बड़ी तपस्या का फल है। कपटाचार, पटवारी बुद्धि, इन सब के रहते ईश्वर-प्राप्ति नहीं होती।

"देखो नहीं, ईश्वर उसी वंश में अवतार लेते हैं जहाँ सरलता पायी जाती है। दशरथ कितने सरल थे ! नन्द—श्रीकृष्ण के पिता—कितने सरल थे ! अब भी आदमी कहते हैं, अहा ! कैसा सरल है—मानो नन्द घोष हो।

(निरंजन से) "देख, तेरे मुँह पर स्याही आ गयी है, तू आफिस का काम करता है न ? इसीलिए आफिस में हिसाब-किताब करना पड़ता होगा, और भी कितने ही तरह के काम होंगे ! सब समय सोचना पड़ता होगा ।

"संसारी आदमी जिस तरह नौकरी करते हैं, तू भी वैसे ही करता है, परन्तु कुछ भेद है। तूने अपनी माँ के लिए नौकरी की है। माँ गुरु है, ब्रह्ममयी की मूर्ति हैं। अगर बीबी और बच्चों के लिए तू नौकरी करता तो मैं कहता 'तुझे धिक्कार है, सौ बार धिक्कार है।'

(मणि मल्लिक से) "देखो, यह लड़का बड़ा सरल है, परन्तु आजकल कुछ झूठ बोलने लगा है। यही इतना दोष है। उस दिन कह गया, आऊँगा, परन्तु फिर नहीं आया। (निरंजन से) इसी पर राखाल कहता था, एँड़ेदाह में आकर तूने क्यों नहीं भेंट की ?"

निरंजन--मैं एँड़ेदाह में बस दो दिनों के लिए आया था।

श्रीरामकृष्ण--(निरंजन से)--ये हेडमास्टर हैं। तुमसे मिलने गये थे। मैंने भेजा था। (मास्टर से) क्या उस दिन बाबूराम को मेरे पास तुमने भेजा था ?

श्रीरामकृष्ण पश्चिमवाले कमरे में दो-चार भक्तों के साथ बातचीत कर रहे हैं। उसी कमरे में कुछ टेबिल और कुर्सियाँ इकट्ठी की हुई रखी थीं। श्रीरामकृष्ण टेबिल के सहारे खड़े हैं।

श्रीरामकृष्ण--(मास्टर से)--अहा ! गोपियों का कैसा अनुराग है ! तमाल देखकर प्रेम से विह्वल हो गयीं--एकदम प्रेमोन्माद ! श्रीराधा की विरहाग्नि इतनी प्रचण्ड थी कि आँख के आँसू भी उसके ताप में सूख जाते थे।--पानी बनने से पहले ही बाष्प

होकर उड़ जाते थे। कभी कभी दूसरे को उनके भाव का कुछ पता ही नहीं चलता था। बड़े तालाब में हाथी के पैठने पर भी दूसरों को पता नहीं चलता।

मास्टर–जी हाँ। गौराग का भी यही हाल था। वन देखकर उन्होंने उसे वृन्दावन सोचा था और समुद्र देखकर यमुना।

श्रीरामकृष्ण–अहा! उस प्रेम का एक बूँद भी अगर किसी को हो—कैसा अनुराग! कैसा प्यार! सिर्फ सोलह आने अनुराग नहीं, पाँच सवाऐ और पाँच आने। प्रेमोन्माद इसी का नाम है। बात यह है कि उन्हें प्यार करना चाहिए। तो फिर तुम चाहे जिस मार्ग पर रहो, आकार पर ही विश्वास करो या निराकार पर—ईश्वर मनुष्य के रूप में अवतार लेते हैं इस बात पर चाहे विश्वास करो या न करो—उन पर अनुराग रहने से ही काफी है। तब वे खुद समझा देंगे कि वे कैसे हैं।

"अगर पागल ही होना है, तो संसार की चीज लेकर क्यों पागल होते हो? पागल होना है, तो ईश्वर के लिए पागल बनो!"

(४)

भवनाथ, महिमा आदि भक्तों के साथ हरिकथा-प्रसंग

श्रीरामकृष्ण हॉलवाले कमरे में आये। उनके बैठने के आसन के पास एक तकिया रख दिया गया। श्रीरामकृष्ण ने बैठते समय 'ॐ तत् सत्' इस मन्त्र का उच्चारण करके तकिये को स्पर्श किया। विषयी लोग इस बगीचे में आया जाया करते हैं और वे सब तकिये के अपने काम में लाते हैं, इसीलिए शायद श्रीरामकृष्ण ने उस मन्त्र का उच्चारण कर तकिये को शुद्ध कर लिया। भवनाथ, मास्टर आदि उनके पास बैठे हैं। समय बहुत हो गया है, परन्तु भोजन आदि का बन्दोबस्त अभी तक नहीं हुआ।

श्रीरामकृष्ण बालकस्वभाव हैं। कहा, 'क्यों जी, अभी तक कुछ देता क्यों नहीं ? नरेन्द्र कहाँ है ?'

एक भक्त-(श्रीरामकृष्ण के प्रति, सहास्य)-महाराज, अध्यक्ष रामबाबू हैं, वे ही सब देखभाल करते हैं। (सब हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण-(हँसते हुए)-राम अध्यक्ष हैं, तब तो हो चुका!

एक भक्त-जी रामबाबू जहाँ अध्यक्ष होते हैं, वहाँ प्रायः यही हाल हुआ करता है। (सब हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण-(भक्तों से)-सुरेन्द्र कहाँ है, अहा, सुरेन्द्र का स्वभाव बहुत ही अच्छा हो गया है। बड़ा स्पष्टवक्ता है, बोलते समय किसी से दबता नहीं। और देखो, मुक्तहस्त भी है। कोई उसके पास सहायता के लिए जाता है, तो उसे खाली हाथ नहीं लौटाता। (मास्टर से) तुम भगवानदास के पास गये थे, उनके बारे में क्या राय है ?

मास्टर-जी, मैं कालना गया था। भगवानदास बहुत वृद्ध हो गये हैं, रात में भेंट हुई थी। जाजम पर लेटे हुए थे। एक आदमी प्रसाद ले आया और खिलाने लगा। जोर से बोलने पर सुनते हैं। आपका नाम सुनकर कहने लगे, तुम लोगों को अब क्या चिन्ता है ?

"उस घर में नाम-ब्रह्म की पूजा होती है।"

भवनाथ-(मास्टर से)-आप बहुत दिनों से दक्षिणेश्वर नहीं गये। वे दक्षिणेश्वर में मुझसे आपके सम्बन्ध में पूछताछ किया करते थे और कहा था, मास्टर को अरुचि हो गयी क्या ?

यह कहकर भवनाथ हँसने लगे। श्रीरामकृष्ण दोनों की बातचीत सुन रहे थे, फिर मास्टर की ओर स्नेहपूर्ण दृष्टि से

देखकर बोले, "क्यों जी, बहुत दिन तक तुम वहाँ गये क्यों नहीं ?"

मास्टर इसका कुछ जवाब न दे सके। इसी समय महिमाचरण आ पहुँचे। महिमाचरण काशीपुर में रहते हैं। श्रीरामकृष्ण पर इनकी बड़ी भक्ति है और सर्वदा ये दक्षिणेश्वर आया-जाया करते हैं। ब्राह्मण के लड़के हैं, कुछ पैतृक सम्पत्ति भी है। स्वाधीन रहते हैं, किसी की नौकरी नहीं करते। सारे समय शास्त्राध्ययन और ईश्वरचिन्तन किया करते हैं। कुछ पाण्डित्य भी है, अंग्रेजी और संस्कृत के बहुत से ग्रन्थों का अध्ययन किया है।

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य, महिमाचरण से)—यह क्या ! यहाँ तो जहाज आ गया ! (सब हँसते हैं।) इन सब स्थानों में तो डोंगे ही आ सकते हैं, यह तो एकदम जहाज आ गया। (सब हँसे।) परन्तु एक बात है। यह आषाढ़ का महीना है। (सब हँसते हैं।)

महिमाचरण के साथ कितनी ही तरह की बातें हो रही हैं।

श्रीरामकृष्ण—(महिमा के प्रति)—अच्छा, बताओ, लोगों को खिलाना एक तरह से उन्हीं की सेवा नहीं है ?—सब जीवों के भीतर वे अग्नि के रूप से विराजमान हैं। खिलाना अर्थात् उनमें आहुति देना।

"परन्तु इसलिए बुरे आदमी को न खिलाना चाहिए—ऐसे आदमी जिन्होंने व्यभिचार आदि महापातक किया हो। घोर विषयासक्त आदमी जहाँ बैठकर भोजन करते हैं, वहाँ सात हाथ तक की मिट्टी अपवित्र हो जाती है।

"हृदय ने सिऊड़ में एक बार कुछ आदमियों को भोजन कराया था। उनमें अधिकांश मनुष्य बुरे थे। मैंने कहा, 'देख हृदय, उन्हें अगर तू खिलायेगा तो मैं तेरे घर एक क्षण भी न ठहरूँगा।'

(महिमा से)—अच्छा, मैंने सुना है, पहले लोगों को तुम बहुत खिलाते-पिलाते थे। अब शायद खर्च बढ़ गया है !"

(सब हँसते हैं।)

(५)

ब्राह्मभक्तों के संग में। अहंकार। दर्शन का लक्षण

अब पत्तल पड़ रहे हैं—दक्षिणवाले बरामदे में। श्रीरामकृष्ण महिमाचरण से कह रहे हैं, "तुम एक बार जाओ, देखो वे सब क्या कर रहे हैं। और तुमसे मैं कह नहीं सकता, परन्तु जी में आ जाय तो परोस भी देना।" "सामान ले आया जाय, परोसने की बात तो तब है!"—यह कहकर महिमाचरण लम्बे डग से दालान की ओर चले गये, फिर कुछ देर बाद लौटकर आगये।

श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ आनन्दपूर्वक भोजन कर रहे हैं।

भोजन के पश्चात् घर में आकर विश्राम करने लगे। भक्तगण भी दक्षिणवाले तालाब में हाथ-मुँह धोकर पान खाते हुए फिर श्रीरामकृष्ण के पास आ गये। सब ने आसन ग्रहण किया।

दो बजे के बाद प्रताप आये। ये एक ब्राह्म भक्त हैं। आकर श्रीरामकृष्ण को नमस्कार किया। श्रीरामकृष्ण ने भी सिर झुकाकर नमस्कार किया। प्रताप के साथ बहुतसी बातें हो रही हैं।

प्रताप—मैं दार्जिलिंग गया था।

श्रीरामकृष्ण—परन्तु तुम्हारा शरीर उतना सुधर नहीं पाया। जान पड़ता है, कोई बीमारी हो गयी है।

प्रताप—जी, केशव को जो बीमारी थी, वही मुझे भी है। उन्हें भी यही बीमारी थी।

केशव की दूसरी बातें होने लगीं। प्रताप कहने लगे, केशव

का वैराग्य उनके बचपन से ही जाहिर हो रहा था। उन्हें खेलते-कूदते हुए लोगों ने बहुत कम देखा है। हिन्दू कॉलेज में पढ़ते थे। उसी समय सत्येन्द्र के साथ उनकी बड़ी मित्रता हो गयी और उसी कारण श्रीयुत देवेन्द्रनाथ ठाकुर से उनकी मुलाकात हुई। केशव में दोनों बातें थीं, योग भी और भक्ति भी। कभी कभी उनमें भक्ति का इतना उद्रेक होता था कि वे मूर्छित हो जाते थे। गृहस्थों में धर्म लाना उनके जीवन का प्रधान उद्देश्य था।

महाराष्ट्र देश की एक स्त्री के सम्बन्ध में बातचीत होने लगी।

प्रताप–हमारे देश की कुछ महिलाएँ विलायत गयी थीं। महाराष्ट्र देश की एक महिला विलायत गयी थी। वे खूब पण्डिता हैं; परन्तु ईसाई हो गयी हैं। आपने क्या उनका नाम सुना है?

श्रीरामकृष्ण–नहीं, परन्तु तुम्हारे मुख से जैसा सुन रहा हूँ, इससे जान पड़ता है, उसे प्रसिद्धि तथा सम्मान-प्राप्ति की इच्छा है। इस तरह का अहंकार अच्छा नहीं। 'मैंने किया' यह अज्ञान से होता है। 'हे ईश्वर तुम्हीं ने ऐसा किया', यही ज्ञान है। ईश्वर ही कर्ता हैं, और सब अकर्ता।

"मैं-मैं करने से कितनी दुर्गति होती है, इसका ज्ञान बछड़े की अवस्था सोचने पर हो जाता है। बछड़ा 'हम्मा हम्मा' (मैं, मैं) किया करता है। उसकी दुर्गति देखो। बड़ा होने पर उसे सुबह से शाम तक हल जोतना पड़ता है—चाहे धूप हो, चाहे वृष्टि। कभी कसाई के हाथ गया कि उसने उसकी बिलकुल ही सफाई कर दी। मांस लोगों के पेट में चला गया और चमड़े के जूते बने। आदमी उन पर पैर रखकर चलता है। इतने पर भी दुर्गति की इति नहीं होती। चमड़े से जगी ढोल मढ़े गये और लकड़ी से लगातार वह पीटा जाने लगा। अन्त में अँतड़ियों को

लेकर सौंत बनायी गयी। जब धुनिये के धनुए में वह लगा दी जाती है और वह रुई धुनता है तब वह 'तूँ-ऊं—तूँ-ऊं' कहने लगता है। तब 'हम्मा-हम्मा' नहीं कहता। जब 'तूं-ऊं—तूं-ऊं' कहता है, तब कहीं निस्तार पाता है। तब मुक्ति होती है। कर्म-क्षेत्र में फिर नहीं आना पड़ता।

"जीव भी जब कहता है, हे ईश्वर, मैं कर्ता नहीं हूँ, कर्ता तुम हो—मैं यन्त्र मात्र हूँ, यन्त्री तुम हो, तब जीव संसार-यन्त्रणाओं से मुक्ति पाता है। तभी उसकी मुक्ति होती है, फिर इस कर्म-क्षेत्र में उसे नहीं आना पड़ता।"

एक भक्त—जीव का अहंकार कैसे दूर हो ?

श्रीरामकृष्ण—ईश्वर के दर्शन के बिना अहंकार दूर नहीं होता। यदि किसी का अहंकार मिट गया हो, तो उसे अवश्य ही ईश्वर के दर्शन हुए होंगे।

भक्त—महाराज, किस तरह समझ में आये कि ईश्वर के दर्शन हो चुके हैं ?

श्रीरामकृष्ण—ईश्वर-दर्शन के कुछ लक्षण हैं। श्रीमद्भागवत में कहा है, जिस आदमी को ईश्वर के दर्शन हुए हैं उसके चार लक्षण हैं—बालवत्, पिशाचवत्, जड़वत् तथा उन्मत्तवत्।

"जिसे ईश्वर के दर्शन हुए होंगे, उसका स्वभाव बालक की तरह का हो जायेगा। वह त्रिगुणातीत हो जाता है। किसी गुण को गाँठ नहीं बाँधता, शुचि और अशुचि भी उसके पास बराबर हैं। इसीलिए वह पिशाचवत् है, और पागल की तरह कभी हँसता है, कभी रोता है। देखते ही देखते बाबुओं की तरह सजावट कर लेता है और फिर सब कपड़े बगल में दबाकर बिल-कुल नंगा होकर घूमता है, इस तरह वह उन्मत्तवत् हो जाता है।

और कभी यही है कि जड़ की तरह कहीं चुपचाप बैठा हुआ है, इसलिए जड़वत् ।"

भक्त-ईश्वर-दर्शन के बाद क्या अहंकार बिलकुल चला जाता है ?

श्रीरामकृष्ण-कभी कभी वे अहंकार बिलकुल पोंछ डालते हैं, जैसे समाधि की अवस्था में । कभी अहंकार कुछ रख भी देते हैं; परन्तु उस अहंकार में दोष नहीं । जैसे बालक का अहंकार । पांच वर्ष का बच्चा मैं-मैं करता है, परन्तु किसी का अनिष्ट करना वह नहीं जानता ।

"पारस पत्थर के छू जाने पर लोहा भी सोना हो जाता है । लोहे की तलवार सोने की तलवार हो जाती है । परन्तु तलवार का आकार मात्र रह जाता है, वह किसी का अनिष्ट नहीं कर सकती ।"

(६)

जीवन का उद्देश्य—कर्म अथवा ईश्वरलाभ ?

श्रीरामकृष्ण-(प्रताप से)-तुम विलायत गये थे, वहाँ क्या क्या देखा ?

प्रताप-आप जिसे कांचन कहते हैं, विलायत के आदमी उसी की पूजा करते हैं; परन्तु कोई कोई अच्छे, अनासक्त मनुष्य भी हैं । यों तो आदि से अन्त तक सब रजोगुण की ही महिमा है । अमेरिका में भी मैंने यही देखा ।

श्रीरामकृष्ण-(प्रताप से)-विषयकार्यों में केवल विलायत-वालों को ही आसक्ति नहीं है, सभी जगह यही हाल है । परन्तु, बात यह है कि कर्मकाण्ड को आदिकाण्ड कहा है । सतोगुण (भक्ति, विवेक, वैराग्य, दया आदि सब) के बिना ईश्वर नहीं

मिल सकते । रजोगुण में कर्म का आडम्बर होता है, इसीलिए रजोगुण से तमोगुण आ जाता है । ज्यादा कर्म में फँसने पर ही ईश्वर को मनुष्य भूल जाता है । तब कामिनी-कांचन में भी आसक्ति बढ़ जाती है ।

"परन्तु कर्मों का बिलकुल त्याग कोई नहीं कर सकता । तुम्हारी प्रकृति खुद तुमसे कर्म करा लेगी, तुम अपनी मर्जी से करो या न करो । इसीलिए कहा है, अनासक्त होकर कर्म करो, अर्थात् कर्म-फल की आकांक्षा न करो; जैसे, पूजा, जप, तप, यह सब कर रहे हो, परन्तु सम्मान या पुण्य के लिए नहीं ।

"इस तरह अनासक्त होकर कर्म करने का ही नाम कर्मयोग है । यह बड़ा कठिन है । एक तो कलिकाल है, सहज ही आसक्ति आ जाती है । सोच रहा हूँ, अनासक्त होकर काम कर रहा हूँ, परन्तु न जाने किधर से आसक्ति आ जाती है, समझ में नहीं आता । कभी पूजा और महोत्सव किया या बहुत से कंगालों को खिलाया, सोचा, अनासक्त होकर मैं यह सब कर रहा हूँ, परन्तु फिर भी न जाने किधर से लोक-सम्मान की इच्छा आ जाती है, पता नहीं । बिलकुल अनासक्त होना उसके लिए सम्भव है जिसे ईश्वर के दर्शन हो चुके हैं ।"

एक भक्त—जिन्होंने ईश्वर को प्राप्त नहीं किया, उनके लिए क्या उपाय है ? क्या वे विषय-कर्म छोड़ दें ?

श्रीरामकृष्ण—कलिकाल के लिए भक्तियोग है, नारदीय भक्ति । ईश्वर का नाम-गुणगान और व्याकुल होकर प्रार्थना करना—'हे ईश्वर, मुझे ज्ञान दो, भक्ति दो, मुझे दर्शन दो ।' कर्मयोग बड़ा कठिन है । इसीलिए प्रार्थना करनी चाहिए, 'हे ईश्वर, मेरे कर्म घटा दो और जितने कर्म तुमने रखे हैं, उन्हें

तुम्हारी कृपा से अनासक्त होकर कर सकूँ और अधिक कर्म लपेटने की मेरी इच्छा न हो !'

"कर्म कोई छोड़ नहीं सकता । 'मैं सोच रहा हूँ,' 'मैं ध्यान कर रहा हूँ'—ये भी कर्म है । भक्ति पा लेने पर विषयकर्म आप ही आप घट जाते हैं । तब वे अच्छे नहीं लगते । मिश्री का शरबत मिल जाय, तो फिर सीरा कौन पीता है ?"

एक भक्त—विलायत के आदमी 'कर्म करो—कर्म करो' कहा करते हैं, तो क्या कर्म जीवन का उद्देश्य नहीं है ?

श्रीरामकृष्ण—जीवन का उद्देश्य है ईश्वर-लाभ । कर्म तो आदिकाण्ड है, वह जीवन का उद्देश्य नहीं हो सकता । निष्काम कर्म एक उपाय हो सकता है, परन्तु वह भी उद्देश्य नहीं है ।

"शम्भु कहता था, अब ऐसा आशीर्वाद दीजिये कि जो रुपये हैं, उनका सद्व्यय कर सकूँ । अस्पताल, दवाखाना, रास्ताघाट, कुआँ इनके तैयार करने में लग जाय । मैंने कहा, यह सब काम अनासक्त होकर कर सको तो अच्छा है, परन्तु है यह बड़ा कठिन । और चाहे जो हो, कम से कम इतना याद रहे कि तुम्हारे मनुष्य-जीवन का उद्देश्य है ईश्वर-लाभ—अस्पताल और दवाखाना बनाना नहीं । सोचो कि ईश्वर तुम्हारे सामने आये, आकर तुमसे कहा, कोई वर माँगो । तो क्या तुम उनसे कहोगे, मेरे लिए कुछ अस्पताल और दवाखाने बनवा दो या यह कहोगे, 'हे भगवन्, तुम्हारे पादपद्मों में मेरी शुद्धा भक्ति हो—मैं तुम्हें सब समय देख सकूँ ।' अस्पताल, दवाखाना ये सब अनित्य वस्तुएँ हैं । एकमात्र ईश्वर वस्तु है, और सब अवस्तु । उन्हें प्राप्त कर लेने पर जान पड़ता है, कर्ता वे ही हैं, हम लोग अकर्ता हैं । तो फिर क्यों उन्हें छोड़कर इतने काम इकट्ठे कर हम अपनी जान दें ?

उन्हें पा लेने पर उनकी इच्छा से कितने ही अस्पताल और दवाखाने हो जायँगे।

"इसीलिए कहता हूँ, कर्म आदिकाण्ड है, कर्म जीवन का उद्देश्य नहीं, साधना करके और भी आगे बढ़ जाओ। साधना करते हुए जब और आगे बढ़ जाओगे, तब अन्त में समझोगे, ईश्वर ही एकमात्र वस्तु है, और सब अवस्तु, ईश्वरलाभ ही जीवन का उद्देश्य है। एक लकड़हारा जंगल में लकड़ी काटने गया था। एकाएक किसी ब्रह्मचारी से उसकी भेंट हो गयी। ब्रह्मचारी ने कहा, 'सुनो जी, बढ़ते जाओ।' लकड़हारा घर लौटकर सोचने लगा, ब्रह्मचारी ने आगे बढ़ने के लिए क्यों कहा।

"इसी तरह कुछ दिन बीत गये। एक दिन वह बैठा हुआ था, एकाएक ब्रह्मचारी की बात याद आ गयी। तब उसने मन ही मन कहा, मैं आज और भी आगे बढ़ जाऊँगा। वन में और भी आगे चलकर उसने देखा, चन्दन के हजारों पेड़ थे। तब मारे आनन्द के लोटपोट हो गया। चन्दन की लकड़ी उस दिन घर ले आया। बाजार में बेचकर खूब धनी हो गया।

"और भी बढ़ने पर ईश्वर की प्राप्ति होगी, उनके दर्शन होंगे। क्रमशः उनके साथ मुलाकात और बातचीत होगी।"

केशव के स्वर्गलाभ के पश्चात् मन्दिर की वेदी को लेकर जो विवाद हुआ था, अब उसकी बात होने लगी।

श्रीरामकृष्ण–(प्रताप से)–सुना है, तुम्हारे साथ वेदी के सम्बन्ध में कोई झगड़ा हुआ है। जिन लोगों ने झगड़ा किया है, वे तो सब ऐसे ही हैं!—मानो कीड़े-मकोड़े। (सब हँसते हैं।)

(भक्तों को) "देखो, प्रताप और अमृत ये सब शंख की तरह बजते हैं। और दूसरे आदमियों को देखो, उनमें कोई आवाज

ही नहीं है।' (सब हँसते हैं।)

प्रताप–महाराज, बजने की बात अगर आपने चलायी तो आम की गुठली भी तो बजती है!

(७)

श्रीरामकृष्ण–(प्रताप से)–देखो, तुम्हारे ब्राह्मसमाज का लेक्चर सुनकर आदमी का भाव आसानी से ताड़ लिया जाता है। मुझे एक हरिसभा में ले गये थे। आचार्य थे एक पण्डित, नाम समाध्यायी था। कहा, ईश्वर नीरस है, हमें अपने प्रेम और भक्ति से उन्हें सरस कर लेना चाहिए। यह बात सुनकर मैं तो दंग रह गया। तब एक कहानी याद आ गयी। एक लड़के ने कहा था, मेरे मामा के यहाँ बहुत से घोड़े हैं—गोशाले भर। अब सोचो, *अगर गोशाला है, तो वहाँ गौओं का रहना ही सम्भव है, घोड़ों* का नहीं। इस तरह की असम्बद्ध बातें सुनकर आदमी क्या सोचता है? यही कि घोड़े-घोड़े कहीं कुछ नहीं है!

(सब हँसते हैं।)

एक भक्त–घोड़े तो हैं ही नहीं, गौएँ भी नहीं हैं!

((सब हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण–देखो न, जो रस-स्वरूप हैं, उन्हें कहता है 'नीरस'; इससे यही समझ में आता है कि ईश्वर क्या चीज हैं, उसने कभी अनुभव भी नहीं किया।

'मैं कर्ता, मेरा घर' अज्ञान। जीवन का उद्देश्य 'डुबकी लगाना'

श्रीरामकृष्ण–(प्रताप से)–देखो, तुमसे कहता हूँ। तुम पढ़े-लिखे बुद्धिमान और गम्भीर हो। केशव और तुम मानो गौरांग और नित्यानन्द; दोनों भाई थे। लेक्चर देना, तर्क झाड़ना,

वादविवाद यह सब तो खूब हुआ। क्या तुम्हें ये सब अब भी अच्छे लगते हैं? अब सब मन समेटकर ईश्वर पर लगाओ। अपने को अब ईश्वर में उत्सर्ग कर दो।

प्रताप–जी हाँ, इसमें क्या सन्देह है, यही करना चाहिए; परन्तु यह सब जो मैं कर रहा हूँ, उनके (केशव के) नाम की रक्षा के लिए ही कर रहा हूँ।

श्रीरामकृष्ण–(हँसकर)–तुमने कहा तो है कि उनके नाम की रक्षा के लिए सब कुछ कर रहे हो; परन्तु कुछ दिन बाद यह भाव भी न रह जायगा। एक कहानी सुनो। किसी आदमी का घर पहाड़ पर था, घर क्या, कुटिया थी। बड़ी मेहनत करके उसने बनाया था। कुछ दिन बाद एक बहुत बड़ा तूफान आया। कुटिया हिलने लगी। तब उसे बचाने के लिए उस आदमी को बड़ी चिन्ता हुई। उसने कहा, हे पवन देव, देखो महाराज, घर न तोड़ियेगा। पवन देव क्यों सुनने लगे? कुटिया चरचराने लगी। तब उस आदमी ने एक उपाय सोच निकाला। उसे याद आ गया कि हनुमानजी पवन देव के लड़के हैं। बस, घबराया हुआ वह कहने लगा—दोहाई है, घर न तोड़ियेगा, दोहाई है, हनुमानजी का घर है। कितनी ही बार उसने कहा, 'हनुमानजी का घर है,' 'हनुमानजी का घर है,' पर इससे कोई लाभ न हुआ। तब कहने लगा, 'महाराज, लक्ष्मणजी का घर है—लक्ष्मणजी का।' इससे भी कुछ हल न हुआ तब कहा, 'सुनो, यह श्रीरामचन्द्रजी का घर है, देखो महाराज, इसे अब न तोड़िये। दोहाई है, जय रामजी की।' इससे भी कुछ न हुआ। घर चरचराता हुआ टूटने लगा। तब जान बचाने की फिक्र हुई। वह घर से निकल आया। निकलते समय कहा—'धत्तेरे घर की!'

(प्रताप से) "केशव के नाम की रक्षा तुम्हें न करनी होगी। जो कुछ हुआ है, समझना, उन्हीं की इच्छा से हुआ है। उनकी इच्छा से हुआ और उन्हीं की इच्छा से जा रहा है; तुम क्या कर सकते हो? तुम्हारा इस समय कर्तव्य है कि ईश्वर पर सब मन लगाओ—उनके प्रेम के समुद्र में कूद पड़ो।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण अपने मधुर कण्ठ से गाने लगे—

"ऐ मन, रूप के समुद्र में तू डूब जा, तलातल और पाताल तक में जब खोज करेगा, तब वह प्रेम रत्न तेरे हाथ लगेगा।"

(प्रताप से) "गाना सुना? लेक्चर और झगड़ा यह सब तो बहुत हो चुका, अब डुबकी लगाओ। और इस समुद्र में डूबने से फिर मरने का भय न रह जायगा, यह तो अमृत का समुद्र है! यह न सोचना कि इससे आदमी का दिमाग बिगड़ जाता है। यह न सोचना कि ज्यादा ईश्वर ईश्वर करने से आदमी पागल हो जाता है। मैंने नरेन्द्र से कहा था—

प्रताप—महाराज, नरेन्द्र कौन?

श्रीरामकृष्ण—है एक लड़का। मैंने नरेन्द्र से कहा था, ईश्वर रस का समुद्र है। क्या तेरी इच्छा इस रस के समुद्र में डुबकी लगाने की नहीं होती? अच्छा, सोच, एक नाँद में रस है और तू मक्खी हो गया है, तो कहाँ बैठकर रस पीयेगा? नरेन्द्र ने कहा, मैं नाँद के किनारे पर बैठकर रस पीऊँगा। मैंने पूछा, क्यों? किनारे पर क्यों बैठेगा? उसने कहा, ज्यादा बढ़ जाऊँगा तो डूब जाऊँगा और जान से भी हाथ धोना होगा। तब मैंने कहा, बेटा, सच्चिदानन्द-समुद्र में वह भय नहीं है। वह तो अमृत का समुद्र है, उसमें डुबकी लगाने से मृत्यु का भय नहीं है। आदमी अमर हो जाता है। ईश्वर के लिए पागल होने में

आदमी का सिर बिगड़ नहीं जाता।

(भक्तों से) "मैं और मेरा, इसे अज्ञान कहते हैं। रासमणि ने कालीमन्दिर की प्रतिष्ठा की है, यही बात लोग कहते हैं। कोई यह नहीं कहता कि ईश्वर ने किया है। ब्राह्म समाज अमुक आदमी ने तैयार किया, यही लोग कहेंगे; कोई यह न कहेगा कि ईश्वर की इच्छा से यह हुआ है। मैंने किया, यह अज्ञान है। हे ईश्वर तुम कर्ता हो, मैं अकर्ता; तुम यन्त्री हो, मैं यन्त्र; यह ज्ञान है। हे ईश्वर, मेरा कुछ भी नहीं है—न यह मन्दिर मेरा है, न यह कालीवाड़ी, न यह समाज, ये सब तुम्हारी चीजें हैं। यह स्त्री, पुत्र, परिवार, कुछ भी मेरा नहीं। सब तुम्हारी चीजें हैं; इसी का नाम ज्ञान है।

"मेरी वस्तु, मेरी वस्तु कहकर, उन सब चीजों को प्यार करना ही माया है। सब को प्यार करने का नाम दया है। मैं केवल ब्राह्म समाज के आदमियों को प्यार करता हूँ या अपने परिवार के मनुष्यों को, यह माया है। केवल देश के आदमियों को प्यार करता हूँ, यह माया है। सब देशों के मनुष्यों को प्यार करना, सब धर्मों के लोगों को प्यार करना, यह दया से होता है, भक्ति से होता है।

"माया से आदमी बँध जाता है, ईश्वर से विमुख हो जाता है। दया से ईश्वर की प्राप्ति होती है। शुकदेव, नारद, इनमें दया थी।"

(८)

ब्राह्म समाज और कामिनी-कांचन

प्रताप—महाराज, जो लोग आपके पास आते हैं, क्या क्रमशः उनकी उन्नति हो रही है?

श्रीरामकृष्ण–मैं कहता हूँ, संसार करने में दोष क्या है ? परन्तु संसार में दासी की तरह रहो ।

"दासी अपने मालिक के मकान को कहती है, 'हमारा मकान', परन्तु उसका अपना मकान कहीं किसी गाँव में होता है। मुख से तो वह मालिक के मकान को कहती है 'हमारा घर', परन्तु मन ही मन जानती है कि वह उसका घर नहीं, उसका घर एक दूसरे गाँव में है। और मालिक के लड़के को गोदी में लिये कहती है, मेरा हरि बड़ा बदमाश हो गया, मेरे हरि को मिठाई पसन्द नहीं आती ! 'मेरा हरि' वह मुख ही से कहती है, मन ही मन जानती है, हरि मेरा लड़का नहीं, मालिक का लड़का है ।

"इसीलिए तो, जो लोग आते हैं, उनसे कहता हूँ संसार में रहो, इसमें दोष नहीं, परन्तु मन ईश्वर पर रखो । समझना कि घर-द्वार, समार-परिवार तुम्हारे नहीं हैं, ये सब ईश्वर के हैं । समझना कि तुम्हारा घर ईश्वर के यहाँ है । मैं उनसे यह भी कहता हूँ कि व्याकुल होकर उनकी भक्ति के लिए उनके पाद-पद्मों में प्रार्थना करो ।"

विलायत की बात फिर होने लगी । एक भक्त ने कहा, महाराज, आजकल विलायत के विद्वान लोग, सुना है, ईश्वर का अस्तित्व नहीं मानते !

प्रताप–मुँह से चाहे वे कुछ भी कहें, पर यह मुझे विश्वास नहीं होता कि उनमें कोई सच्चा नास्तिक है । इस संसार की घटनाओं के पीछे एक कोई महान् शक्ति है, यह बात बहुतों को माननी पड़ी है ।

श्रीरामकृष्ण–तो बस हो गया । शक्ति तो मानते हैं न ?

तो नास्तिक फिर क्यों हैं ?

प्रताप—इसके अतिरिक्त यूरोप के पण्डित, Moral Government (सत्कर्मों का पुरस्कार और पाप का दण्ड इस संसार में होता है)—यह बात भी मानते हैं।

बड़ी देर तक बातचीत होने के बाद प्रताप चलने के लिए उठे।

श्रीरामकृष्ण—(प्रताप से)—तुम्हें और क्या कहूँ ? केवल इतना कहता हूँ कि अब वाद-विवाद के बीच में न रहो।

"एक बात और। कामिनी-कांचन ही मनुष्य को ईश्वर से विमुख करते हैं, उस ओर नहीं जाने देते। देखो न, अपनी स्त्री की सब लोग बड़ाई करते हैं। (सब हँसते हैं।) चाहे वह अच्छी हो या खराब। अगर पूछो, क्यों जी, तुम्हारी स्त्री कैसी है, तो उसी समय जवाब मिलता है, जी बहुत अच्छी है।"

प्रताप—तो मैं अब चलता हूँ।

प्रताप चले गये। श्रीरामकृष्ण की अमृतमयी, कामिनी और कांचन के त्याग की बात समाप्त नहीं हुई। सुरेन्द्र के बगीचे के पेड़ और उनकी पत्तियाँ दक्षिणी हवा के झोंकों में झूम रही थीं तथा मृदुल मर्मर शब्द सुना रही थीं। बातें उसी मर्मर शब्द के साथ मिल गयीं, भक्तों के हृदय में एक बार धक्का लगाकर अनन्त आकाश में विलीन हो गयीं।

कुछ देर बाद श्रीयुत मणिलाल मल्लिक ने श्रीरामकृष्ण से कहा, 'महाराज, अब दक्षिणेश्वर चलिये। आज वहाँ केशव सेन की माँ और उनके घर की स्त्रियाँ आपके दर्शनों के लिए आयेंगी। आपको वहाँ न पाकर सम्भव है, वे दुःखित हो वहाँ से लौट जायँ।'

केशव का शरीर छोड़े कई महीने हो गये हैं। उनकी वृद्धा माता और घर की स्त्रियाँ, श्रीरामकृष्ण को बहुत दिनों से न देखने के कारण, आज दक्षिणेश्वर में उनके दर्शन करने जायेंगी।

श्रीरामकृष्ण-(मणि मल्लिक से)-ठहरो बाबू, एक तो मेरी आँख नहीं लगी, जल्दबाजी इतनी न कर सकूँगा। वे गयी हैं, तो क्या किया जाय? वहाँ वे लोग बगीचे में टहलेंगी, आनन्द मनायेंगी।

कुछ देर विश्राम करके श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर चले। जाते समय मुगेन्द्र की कल्याण-कामना करते हैं। सब कमरों में एक-एक बार जाते हैं और मृदु स्वर से नामोच्चार कर रहे हैं। कुछ अधूरा न रखेंगे, इसीलिए खड़े हुए कह रहे हैं—'मैंने उस समय पूड़ी नहीं खायी, थोड़ी सी ले आओ।'

बिल्कुल जरा ही लेकर खा रहे हैं और कह रहे हैं—'इसके बहुत से अर्थ हैं। पूड़ी नहीं खायी, यह याद आयेगा तो फिर आने की इच्छा होगी।' (सब हँसते हैं।)

मणि मल्लिक-(सहास्य)-अच्छा तो था, हम लोग भी आते। (भक्तमण्डली हँस रही है।)

परिच्छेद ११

निष्काम भक्ति

दक्षिणेश्वर मन्दिर में भक्तों के संग में

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर में भक्तों के साथ अपने कमरे में बैठे हुए हैं। शाम हो गयी है, श्रीरामकृष्ण जगन्माता का स्मरण कर रहे हैं। कमरे में राखाल, अधर, मास्टर तथा और भी दो-एक भक्त हैं।

आज शुक्रवार है, ज्येष्ठ की कृष्णा द्वादशी, २० जून १८८४। पाँच दिन बाद रथयात्रा होगी। कुछ देर बाद ठाकुरबाड़ी में आरती होने लगी। अधर आरती देखने चले गये। श्रीरामकृष्ण मणि के साथ बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण–अच्छा, बाबूराम की क्या पढ़ने की इच्छा है?

"बाबूराम से मैंने कहा, तू लोक-शिक्षण के लिए पढ़। सीता का उद्धार हो जाने पर विभीषण को राज्य करना पसन्द न आया। राम ने कहा, मूर्खों को शिक्षा देने के लिए तुम राज्य करो। नहीं तो वे कहेंगे, विभीषण ने राम की सेवा की, परन्तु क्या पाया?—राज्य देखकर उन्हें भी सन्तोष होगा।

"तुमसे कहता हूँ, उस दिन मैंने देखा, बाबूराम, भवनाथ और हरीश, ये प्रकृतिभाववाले हैं।

"बाबूराम को देखा कि वह देवीमूर्ति है। गले में माला, सखियाँ साथ हैं। उसने स्वप्न में कुछ पाया है, वह शुद्धसत्त्व है, थोड़े से यत्न से ही उसकी आध्यात्मिक जागृति हो जायेगी।

"बात यह है कि देह-रक्षा के लिए बड़ी असुविधा हो रही है। वह अगर आकर रहे तो अच्छा है। इन लड़कों का स्वभाव एक खास तरह का हो रहा है। नोटो (लाटू) ईश्वरी भाव में ही रहता है—वह तो शीघ्र ही ईश्वर में लीन हो जायेगा।

"राखाल का स्वभाव ऐसा हो रहा है कि मुझे ही उसे पानी देना पड़ता है। (मेरी) सेवा वह विशेष नहीं कर सकता।

"बाबूराम और निरंजन, इन्हें छोड़कर और लड़के कौन हैं? अगर कोई आता है, तो मालूम होता है कि उपदेश लेकर चला जायेगा।

"परन्तु मैं खींच-खाँचकर बाबूराम को भी नहीं लाना चाहता। घर में झगड़ा-फसाद मच सकता है। (सहास्य) मैं जब कहता हूँ, चला क्यों नहीं आता, तब बार बार कहता है, आप कुछ ऐसा ही कर दीजिये जिससे मैं आ सकूँ। राखाल को देखकर रोता है, कहता है, वह मजे में है।

"राखाल अब घर के बच्चे की तरह रहता है। जानता हूँ, अब वह आसक्ति में पड़ नहीं सकता। कहता है, 'वह सब फीका लगता है।' उसकी स्त्री यहाँ आयी थी। उम्र १४ साल की है। यहाँ होकर कोन्नगर गयी थी। उन लोगों ने उससे (राखाल से) कोन्नगर जाने को कहा, पर वह न गया। कहता है—आमोद-प्रमोद अब अच्छा नहीं लगता। अच्छा, निरंजन को तुम क्या समझते हो?"

मास्टर—जी, बड़े अच्छे चेहरे-मोहरे का है।

श्रीरामकृष्ण—नहीं, सिर्फ चेहरा-मोहरा नहीं। सरल है। सरल होने पर सहज ही ईश्वर को लोग पा जाते हैं। सरल

होने पर उपदेश भी शीघ्र सफल हो जाता है। जोती हुई जमीन, कंकड़ का नाम नहीं, बीज पड़ते ही पेड़ उग जाता है। फल भी शीघ्र आ जाते हैं।

"निरंजन विवाह न करेगा। तुम क्या कहते हो? कामिनी और कांचन, ये ही बाँधते हैं न?"

मास्टर—जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण—पान-तम्बाकू के छोड़ने से क्या होगा? कामिनी और कांचन का त्याग ही त्याग है।

"भाव में मैंने देखा, यद्यपि वह नौकरी करता है, फिर भी उसे दोष स्पर्श नहीं कर सका। माँ के लिए नौकरी करता है, इसमें दोष नहीं है।

"तुम जो काम करते हो, इसमें दोष नहीं है। यह अच्छा काम है।

"नौकरी करके जेल गया, बद्ध हुआ, बेड़ियाँ पहनीं, फिर मुक्त हुआ। मुक्त होने के बाद क्या वह नाचने-कूदने लगता है? नहीं, वह फिर नौकरी करता है। इसी प्रकार तुम्हारी भी इच्छा स्वयं के लिए कोई धन-संचय करने की नहीं है—ठीक है—तुम्हें तो केवल अपने कुटुम्ब के निर्वाह के लिए ही चिन्ता है—नहीं तो सचमुच वे और कहाँ जायें?"

मणि—यदि कोई उनकी जिम्मेदारी ले ले तो मैं निश्चिन्त हो जाऊँ।

श्रीरामकृष्ण—ठीक है, परन्तु अभी यह भी करो और वह भी करो—अर्थात् संसार के कर्तव्य भी करो और आध्यात्मिक साधना भी।

मणि—सब कुछ त्याग सकना बड़े भाग्य की बात है।

श्रीरामकृष्ण—ठीक है। परन्तु जैसे जिसके संस्कार। तुम्हारा कुछ कर्म अभी बाकी है। उतना हो जाने पर शान्ति होगी, तब तुम्हें वह छोड़ देगा। अस्पताल में नाम लिखाने पर फिर सहज ही नहीं छोड़ते। बिलकुल अच्छे हो जाने पर छोड़ते हैं।

"यहाँ जो भक्त आते हैं, उनके दो दर्जे हैं। जो एक दर्जे के हैं वे कहते हैं, 'हे ईश्वर, हमारा उद्धार करो।' दूसरे दर्जे-वाले अन्तरंग हैं, वे यह बात नहीं कहते। दो बातें जानने से ही उनकी बन जाती है। एक तो यह कि मैं (श्रीरामकृष्ण) कौन हूँ, दूसरी यह कि वे कौन हैं—मुझसे उनका क्या सम्बन्ध है।

"तुम इस श्रेणी के हो। नहीं तो और कोई क्या इतना कर सकता था!

"भवनाथ, बाबूराम का प्रकृतिभाव है। हरीश स्त्रियों का कपड़ा पहनकर सोता है। बाबूराम ने भी कहा है, मुझे यही भाव अच्छा लगता है। बस मिल गया। यही भाव भवनाथ का भी है। नरेन्द्र, राखाल, निरंजन, इन लोगों का पुरुष-भाव है।

"अच्छा, हाथ टूटने का क्या अर्थ है? पहले एक बार भावावस्था में दाँत टूट गया था। अबकी बार भावावस्था में हाथ टूट गया।"

मणि को चुपचाप बैठे देखकर श्रीरामकृष्ण आप ही आप कह रहे हैं—

"हाथ टूटा सब अहंकार निर्मूल करने के लिए। अब भीतर 'मैं' नहीं खोजने पर भी नहीं मिलता। खोजने को जब जाता हूँ तो देखता हूँ वे हैं। पूर्ण रूप से अहंकार नष्ट हुए बिना उन्हें कोई पा नहीं सकता।

"चातक को देखो, मिट्टी में रहता है, पर कितने ऊँचे पर चढ़ता है।

"कभी-कभी देह काँपने लगती है कि कहीं विभूतियाँ न आ जायँ। इस समय अगर विभूतियों का आना हुआ तो यहाँ अस्पताल-दवाखाने खुल जायेंगे। लोग आकर कहेंगे, मेरी बीमारी अच्छी कर दो। क्या विभूतियाँ अच्छी होती हैं?"

मास्टर–जी नहीं, आपने तो कहा है, आठ विभूतियों में से एक के भी रहने पर ईश्वर नहीं मिल सकते।

श्रीरामकृष्ण–बिलकुल ठीक, जो हीनबुद्धि हैं वे ही विभूतियाँ चाहते हैं।

"जो आदमी बड़े आदमी के पास कुछ प्रार्थना कर बैठता है, उसकी फिर खातिरदारी नहीं होती, उसे फिर एक ही गाड़ी पर, बड़े आदमी के साथ चढ़ने का सौभाग्य नहीं होता; यदि उसे वह चढ़ाता भी है, तो पास बैठने नहीं देता। इसीलिए निष्काम भक्ति, अहैतुकी भक्ति सब से अच्छी होती है।

साकार निराकार दोनों ही सत्य हैं

"अच्छा, साकार और निराकार दोनों सत्य हैं—क्यों? निराकार में मन अधिक देर तक नहीं रहता, इसीलिए भक्त साकार को लेकर रहते हैं।

"कप्तान ठीक कहता है, चिड़िया ऊपर उड़ती हुई जब थक जाती है, तब फिर डाल पर आकर विश्राम करती है। निराकार के बाद साकार।

"तुम्हारे अड्डे में एक बार जाना होगा। भावावस्था में देखा—अधर का घर, सुरेन्द्र का घर, बलराम का घर—ये सब मेरे अड्डे हैं।

"वे यहाँ आयें या न आयें, मुझे इसका हर्ष-दुःख नहीं।"

मास्टर—जी, ऐसा क्यों होगा? गुण का बोध होने से ही तो दुःख होता है। आप गुण और दुःख के अतीत हैं।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, और मैं देख रहा हूँ, बाजीगर और उसका खेल। बाजीगर ही नित्य है और उसका खेल अनित्य—स्वप्नवत्।

"जब चण्डी सुनता था तब यह बोध हुआ था। शुम्भ और निशुम्भ का जन्म हुआ, थोड़ी ही देर में सुना, उनका विनाश हो गया।"

मास्टर—जी, मैं कालना से गदाधर के साथ जहाज पर जा रहा था। जहाज के धक्के से एक नाव उलट गयी, उस पर २०-२५ आदमी सवार थे। सब डूब गये। जहाज के पीछे उठनेवाली तरंगों के फेन की तरह सब लोग पानी में विलय मिल गये।

"अच्छा, जो मनुष्य बाजीगरी देखता है, क्या उसमें दया होती है? क्या उसे अपने उत्तरदायित्व का बोध रहता है, उत्तरदायित्व का बोध रहने पर ही तो मनुष्य में दया होगी न?"

श्रीरामकृष्ण—वह (ज्ञानी) सब देखता है—ईश्वर, माया, जीवजगत्। वह देखता है, माया (विद्या-माया और अविद्या-माया), जीव और जगत्—ये हैं भी और नहीं भी हैं। जब तक अपना 'मैं' रहता है, तब तक वे भी रहते हैं। ज्ञानरूपी खड्ग के द्वारा उन्हें काट डालने पर फिर कुछ नहीं रह जाता। तब अपना 'मैं' भी बाजीगर का तमाशा हो जाता है।

मणि विचार कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण ने कहा—"किस तरह, जानते हो? जैसे पच्चीस दलवाले फूल को एक ही वार से काटना।

"कर्तृत्व ! राम राम ! शुकदेव, शंकराचार्य, इन लोगों ने विद्या का 'मैं' रखा था । दया मनुष्य की नहीं, दया ईश्वर की है । विद्या के 'मैं' के भीतर ही दया है । विद्या का 'मैं' वे ही हुए हैं ।

"तुम चाहे लाख बार यह अनुभव करो कि यह सब 'तमाशा' है, पर हो तुम उन्हीं के 'अण्डर' (Under अधीन) । उनसे तुम बच नहीं सकते । तुम स्वाधीन नहीं हो । वे जैसा करायें, वैसा ही करना होगा । वह आद्याशक्ति जब ब्रह्मज्ञान देंगी तब ब्रह्मज्ञान होगा—तभी तमाशा देखा जाता है, नहीं तो नहीं ।

"जब तक थोड़ासा भी 'मैं' है, तब तक उस आद्याशक्ति का ही इलाका है; उन्हीं के अण्डर हो—उन्हें छोड़कर जाने की गुंजाइश नहीं है ।

"आद्याशक्ति की सहायता से ही अवतारलीला होती है । उन्हीं की शक्ति से अवतार, अवतार कहलाते हैं । तभी अवतार कार्य कर सकते हैं । सब माँ की शक्ति है ।

"कालीबाड़ी के पहलेवाले खजांची से जब कोई कुछ ज्यादा चाहता था, तब वह कहता था, दो तीन दिन बाद आना, मालिक से पूछ लूँ ।

"कलि के अन्त में कल्कि-अवतार होगा । वे ब्राह्मण बालक के रूप में जन्म लेंगे । एकाएक उनके पास एक घोड़ा और तलवार आ जायेगी ......।"

अधर आरती देखकर आये; आसन ग्रहण किया । भुवनमोहिनी नाम की धाई कभी-कभी श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने के लिए आया करती है । श्रीरामकृष्ण सब की चीजें नहीं ग्रहण कर सकते—विशेषकर, डाक्टरों, कविराजों और दाइयों की,

नहीं ले सकते। घोर कष्ट देखकर भी वे लोग रुपया लेते हैं, इसीलिए श्रीरामकृष्ण उनकी चीजें नहीं ले सकते।

श्रीरामकृष्ण–(अधर से)–भुवनमोहिनी आयी थी। पच्चीस बम्बई आम और सन्देश-रसगुल्ले लायी थी। मुझसे कहा, एक आम आप भी लीजिये। मैंने कहा, नहीं पेट भरा हुआ है। और सचमुच, देखो न, जरा सा सन्देश और कचौड़ी खायी, इतने ही से पेट कैसा हो गया।

"केशव सेन की माँ बहिन आदि सब आयी थीं। इसलिए उनका दिल बहलाने के लिए मुझे कुछ नाचना पड़ा था। और मैं क्या करूँ, उन्हें कितनी गहरी चोट पहुँची है!"

परिच्छेद १२

कलि में भक्तियोग

(१)

श्रीरामकृष्ण और शशधर पण्डित

आज रथयात्रा है; बुधवार, २५ जून १८८४; आषाढ़ की शुक्ला द्वितीया। आज सुबह श्रीरामकृष्ण ईशान के घर निमन्त्रित होकर आये हैं। ईशान का घर ठनठनिया में है। यहाँ पहुँचकर श्रीरामकृष्ण ने सुना, शशधर पण्डितजी पास ही कालेज स्ट्रीट में चटर्जियों के यहाँ हैं। पण्डितजी को देखने की उनकी बड़ी इच्छा है। पिछले पहर पण्डितजी के यहाँ जाना निश्चित हुआ। दिन के दस बजे का समय होगा।

श्रीरामकृष्ण ईशान के नीचेवाले बैठकखाने में भक्तों के साथ बैठे हैं। ईशान के मुलाकाती भाटपाड़ा के दो-एक ब्राह्मण थे जिनमें एक भागवत के पण्डित भी थे। श्रीरामकृष्ण के साथ हाजरा तथा और भी दो-एक भक्त आये हैं। श्रीश आदि ईशान के लड़के भी हैं। एक भक्त और आये हैं, ये शक्ति के उपासक हैं। मत्थे पर सिन्दूर का बुन्दा लगाये हैं। श्रीरामकृष्ण आनन्द में हैं। सिन्दूर का बुन्दा देखकर हँसते हुए कहा, इन पर तो मार्का लगा हुआ है!

कुछ देर बाद नरेन्द्र और मास्टर अपने अपने मकान से आये। दोनों ने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके उनके पास ही आसन ग्रहण किया। श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से कहा था, अमुक

दिन में ईशान के घर जाऊँगा, तुम वहीं नरेन्द्र को साथ लेकर मिलना।

श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से कहा, उस दिन मैं तुम्हारे यहाँ आ रहा था, तुम कहाँ रहते हो ?

मास्टर--जी, अब श्यामपुकुर तेलीपाड़ा में स्कूल के पास रहता हूँ।

श्रीरामकृष्ण--आज स्कूल नहीं गये ?

मास्टर--जी, आज रथ की छुट्टी है।

नरेन्द्र के पितृवियोग के बाद से घर में बड़ी तकलीफ है। वे ही अपने पिता के सब से बड़े लड़के हैं। उनके छोटे छोटे कई भाई और बहिनें हैं। पिता वकील थे, परन्तु कुछ छोड़कर नहीं जा सके। परिवार के भोजन-वस्त्र के लिए नरेन्द्र नौकरी तलाश रहे हैं। श्रीरामकृष्ण ने नरेन्द्र को किसी काम में लगा देने के लिए ईशान आदि भक्तों से कह रखा है। ईशान Controller General (कण्ट्रोलर जनरल) के आफिस में कर्मचारियों के एक अध्यक्ष थे। नरेन्द्र के घर की तकलीफ सुनकर श्रीरामकृष्ण सदा ही चिन्तित रहते हैं।

श्रीरामकृष्ण--(नरेन्द्र से)--मैंने ईशान से तेरे लिए कहा है। ईशान एक दिन वहाँ (दक्षिणेश्वर में) रहा था, तभी मैंने उससे तेरी बात कही थी। बहुतों के साथ उसका परिचय है।

ईशान ने श्रीरामकृष्ण को निमन्त्रण देकर बुलाया है। इस उपलक्ष्य में अपने कई दूसरे मित्रों को भी न्योता भेजा है। गाना होगा; पखावज, तबला और तानपूरे का इन्तजाम किया जा रहा है। घर से एक आदमी थोड़ा सा मैदा दे गया। (पखावज में लगाने के लिए।) ग्यारह बजे का समय होगा। ईशान की इच्छा

है कि नरेन्द्र गावें ।

श्रीरामकृष्ण-(ईशान से)-इस समय मैदा ! तो अभी भोजन को बड़ी देर होगी ?

ईशान-(सहास्य)-जी नहीं, ऐसी कुछ देर नहीं है ।

भक्तों में कोई-कोई हँस रहे हैं, भागवत के पण्डित भी हँसकर एक संस्कृत श्लोक कह रहे हैं । श्लोक की आवृत्ति हो जाने पर पण्डितजी उसकी व्याख्या कर रहे हैं । कहते हैं, दर्शन आदि शास्त्रों से काव्य मनोहर है । जब काव्य का पाठ होता है, लोग इसे सुनते हैं, तब वेदान्त, सांख्य, न्याय, पातंजलि, ये सब रूखे जान पड़ते हैं । काव्य की अपेक्षा गीत मनोहर है । संगीत को सुनकर पाषाण-हृदयों का भी हृदय द्रवित हो जाता है । यद्यपि गीतों में इतना आकर्षण होता है, तथापि सुन्दरी स्त्री की तुलना में वह कम है । यदि एक सुन्दरी स्त्री यहाँ से निकल जाय तो न किसी का मन काव्य में लगेगा, न कोई गीत ही सुनेगा । सब के सब उसी स्त्री को देखने लगेंगे । और जब भूख लगती है, तब काव्य, गीत, नारी, कुछ भी अच्छा नहीं लगता ! अन्नचिन्ता चमत्कारा !

श्रीरामकृष्ण-(सहास्य)-ये रसिक हैं ।

पखावज बँध गया, नरेन्द्र गा रहे हैं । गाना शुरू होने से कुछ पहले ही श्रीरामकृष्ण ऊपर के बैठकखाने में विश्राम करने के लिए चले गये । साथ मास्टर और श्रीश भी गये । यह बैठकखाना रास्ते के ऊपर है । मास्टर ने श्रीरामकृष्ण से श्रीश का परिचय कराया । कहा, ये पण्डित हैं और प्रकृति के बड़े शान्त हैं । बचपन से ही ये मेरे साथ पढ़ते थे । अब ये वकालत करते हैं ।

श्रीरामकृष्ण-इस तरह के आदमी भी वकालत करें !

मास्टर–भूलकर उस रास्ते में चले गये हैं।

श्रीरामकृष्ण–मैंने गणेश वकील को देखा है। वहाँ (दक्षिणेश्वर में) बाबुओं के साथ कभी-कभी जाता है। पन्ना (वकील) भी जाता है—सुन्दर तो नहीं है, पर गाता अच्छा है। मुझे मानता भी खूब है, बड़ा सरल है। (ईशान से) आपने किसे सार-वस्तु सोचा ?

ईशान–ईश्वर हैं और वे ही सब कर रहे हैं। परन्तु उनके गुणों के सम्बन्ध में हमारी जो धारणा है, वह ठीक नहीं। आदमी उनके सम्बन्ध में क्या धारणा कर सकता है ? अनन्त खेल हैं उनके !

श्रीरामकृष्ण–बगीचे में कितने पेड़ हैं, पेड़ों में कितनी डालियाँ हैं, इन सब का हिसाब लगाने से तुम्हारा क्या काम ? तुम बगीचे में आम खाने के लिए आये हो, आम खाकर चले जाओ। उनमें भक्ति और प्रेम करने के लिए आदमी मनुष्य जन्म पाता है। तुम आम खाकर चले जाओ।

"तुम शराब पीने के लिए आये, तो शराबवाले की दूकान में कितने मन शराब है, इन सब का हिसाब करने से क्या प्रयोजन? तुम्हारे लिए तो एक गिलास ही काफी है। अनन्त लीलाओं के जानने से तुम्हें मतलब ?

"कोटि कोटि वर्ष तक उनके गुणों का विचार करने पर उनके गुणों का अल्पांश भी न समझ पाओगे।"

श्रीरामकृष्ण कुछ देर चुप रहकर फिर बातचीत करने लगे। भाटपाड़ा के एक ब्राह्मण भी बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण–(मास्टर से)–संसार में कुछ नहीं। इनका (ईशान का) संसार अच्छा है, यही खैर है, नहीं तो अगर लड़के वेश्यागामी, गंजेड़ी, शराबी और उद्दण्ड होते, तो तकलीफ

की हद हो जाती। सब का मन ईश्वर पर—विद्या का संसार—ऐसा अवसर नहीं दीख पड़ता। ऐसे दो ही चार घर देखे। नहीं तो बस झगड़ा, 'तू-तू–मैं-मैं', हिंसा, और फिर रोग, शोक, दारिद्रय। यही देखकर कहा—माँ, इसी समय मोड़ घुमा दो। देख न, नरेन्द्र कैसी विपत्ति में पड़ गया, बाप मर गया, घरवाले खाने को नहीं पाते, नौकरी की इतनी चेष्टा हो रही है, फिर भी कोई प्रबन्ध नहीं होता। अब देखो क्या करें? मास्टर! पहले तुम यहाँ इतना आते थे, अब उतना क्यों नहीं आते? जान पड़ता है, बीबी से प्रेम इस समय बढ़ा हुआ है।

"अच्छा है, दोष क्या है! चारों ओर कामिनी-कांचन है। इसीलिए कहता हूँ, माँ, अगर कभी शरीर ग्रहण करना पड़े तो संसारी न बना देना।"

भाटपाड़ा के ब्राह्मण–यह आपने कैसे कहा? गृहस्थ धर्म की तो बड़ी प्रशंसा है।

श्रीरामकृष्ण–हाँ, परन्तु बड़ा कठिन है।

श्रीरामकृष्ण दूसरी बात करने लगे।

श्रीरामकृष्ण–(मास्टर से)–हम लोगों ने कैसा अन्याय किया, वे लोग गा रहे हैं, नरेन्द्र गा रहा है, और हम लोग चले आये।

(२)

कलि में भक्तियोग

दोपहर चार बजे के करीब, श्रीरामकृष्ण गाड़ी पर चढ़े। बड़े ही कोमलांग हैं, बड़ी सावधानी से देह की रक्षा होती है। इसीलिए रास्ता चलते तकलीफ होती है। गाड़ी न होने

पर थोड़ी दूर भी चलते हैं, तो बड़ा कष्ट होता है। गाड़ी पर चढ़कर भावसमाधि में मग्न हो गये। उस समय नन्ही-नन्ही बूंदों की वर्षा हो रही थी। आकाश में बादल छाये हैं, रास्ते में कीचड़ है। भक्तगण गाड़ी के पीछे-पीछे पैदल चल रहे हैं। उन्होंने देखा, रथयात्रा का स्वागत लड़के ताड़ के पत्ते की बाँसुरी बजाकर कर रहे थे।

गाड़ी मकान के सामने पहुँची। द्वार पर घर के मालिक और उनके आत्मीयों ने आकर स्वागत किया।

ऊपर जाने की सीढ़ी के बगल में बैठकखाना है। ऊपर पहुँचकर श्रीरामकृष्ण ने देखा, शशधर उनकी अभ्यर्थना के लिए आ रहे हैं। पण्डितजी को देखकर मालूम हुआ कि वे यौवन पार कर चुके हैं, प्रौढ़ावस्था को प्राप्त हैं। रंग साफ गोरा है— गले में रुद्राक्ष की माला पड़ी है। उन्होंने बड़े विनय-भाव से श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। फिर साथ ही उन्हें घर ले गये।

श्रीरामकृष्ण के पास बैठे हुए लोग उनकी बातचीत सुनने के लिए बड़े उत्सुक हो रहे हैं। नरेन्द्र, राखाल, राम, मास्टर और दूसरे भी बहुत से भक्त उपस्थित हैं। हाजरा भी श्रीरामकृष्ण के साथ दक्षिणेश्वर-कालीमन्दिर से आये हुए हैं।

पण्डितजी के देखते ही देखते श्रीरामकृष्ण को भावावेश होने लगा। कुछ देर बाद उसी अवस्था में हँसते हुए पण्डितजी की ओर देखकर कह रहे हैं—'बहुत अच्छा, बहुत अच्छा।' फिर उनसे कहा, 'तुम कैसे लेक्चर देते हो?'

शशधर—महाराज, मैं शास्त्रों के उपदेश समझाने की चेष्टा करता हूँ।

श्रीरामकृष्ण—कलिकाल के लिए नारदीय भक्ति है। शास्त्रों

में जिन सब कर्मों की बात है, उनके साधन के लिए अब समय कहाँ है ? आजकल के बुखार में दशमूल पाचन की व्यवस्था ठीक नहीं। दशमूल पाचन देने से इधर रोग ऐंठ जाता है। आजकल बस 'फीवर-मिक्श्चर' ! कर्म करने के लिए अगर कहते हो, तो केवल सार की बात कह दिया करो। मैं आदमियों से कहता हूँ, तुम्हें 'आपोधन्यन्या' इतना यह सब न कहना होगा। गायत्री के जप से ही तुम्हारी बन जायगी। अगर कर्म की बात कहनी ही हो, तो ईशान की तरह के दो-एक कर्मियों से कह सकते हो।

"लाख लेक्चर दो, परन्तु विषयी मनुष्यों का कुछ कर न सकोगे। पत्थर की दीवार में क्या कभी कीला गाड़ सकते हो ? कीला खुद चाहे टूट जाय—मुड़ जाय, पर पत्थर का कुछ नहीं हो सकता। तलवार की चोट से घड़ियाल का क्या बिगड़ सकता है ? साधु का कमण्डल चारों धाम हो आता है, पर ज्यों का त्यों कड़ुआ बना रहता है। तुम्हारे लेक्चर से विषयी आदमियों का विशेष कुछ होता नहीं, यह बात तुम खुद धीरे धीरे समझ जाओगे। बछड़ा एक साथ ही खड़ा नहीं हो जाता। कभी-कभी गिर जाता है और फिर उठने की कोशिश करता है। तब खड़ा होना और चलना भी सीखता है।

"कौन भक्त है और कौन विषयी, यह बात तुम समझते नहीं, यह तुम्हारा दोष भी नहीं है। पहले जब आँधी आती है, तब कोई यह नहीं पहचान पाता, कौन आम है और कौन इमली।

"ईश्वर-लाभ जब तक नहीं होता, तब तक कोई कर्मों को बिलकुल छोड़ नहीं सकता। सन्ध्या-वन्दनादि कर्म कितने दिनों के लिए हैं ?—जब तक ईश्वर के नाम पर अश्रु और पुलक न हो।

'हे राम' ऐसा एक बार कहते ही अगर आँखों में आँसू आ जायँ, देह पुलकित होने लगे, तो निश्चय समझना कि उसके कर्मों का अन्त हो गया। फिर उसे सन्ध्यादि कर्म न करने पड़ेंगे।

"फल के होने पर ही फूल गिर जाता है; भक्ति फल है, कर्म फूल। गृहस्थ की बहू के लड़का होनेवाला हुआ, तो वह अधिक काम नहीं कर सकती। उसकी सास दिनोदिन उसका काम घटाती जाती है। दसवें महीने के आने पर फिर उसे बिलकुल काम नहीं छूने देती। लड़का होने पर फिर वह उसी को लेकर रहती है, दूसरे काम नहीं करने पड़ते। सन्ध्या गायत्री में लीन हो जाती है, गायत्री प्रणव में, प्रणव समाधि में। जैसे घण्टे का शब्द—टं-ट-अ-म्। योगी नाद-भेद करके परब्रह्म में लीन होते हैं। समाधि में सन्ध्यादि कर्मों का लय हो जाता है। इसी तरह ज्ञानियों के कर्म छूट जाते हैं।"

(३)

केवल पाण्डित्य व्यर्थ है। साधना तथा विवेक-वैराग्य

समाधि की बात कहते ही कहते श्रीरामकृष्ण का भाव बदलने लगा। उनके श्रीमुख से स्वर्गीय ज्योति निकलने लगी। देखते-देखते बाह्य-ज्ञान जाता रहा, शब्दरहित हो गये, और स्थिर हो गये। वे इस समय परमात्मा के दर्शन कर रहे हैं। बड़ी देर बाद प्राकृत अवस्था आयी। बालक की तरह कह रहे हैं, मैं पानी पीऊँगा। समाधि के बाद जब पानी पीना चाहते थे, तब भक्तों को मालूम हो जाता था कि अब ये क्रमशः बाह्य भूमि पर आ रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण भावावेश में कहने लगे, 'माँ, उस दिन ईश्वरचन्द्र विद्यासागर को तूने दिखलाया। इसके बाद मैंने फिर कहा था, माँ, मैं एक दूसरे पण्डित को देखूँगा, इसीलिए मुझे यहाँ लायी।'

फिर शशधर की ओर देखकर कहने लगे—"भैया, कुछ और बल बढ़ाओ, कुछ दिन और साधन-भजन करो। पेड़ पर अभी चढ़े नहीं और अभी से फल की आकांक्षा! परन्तु लोगों के भले के लिए तुम यह सब कर रहे हो।"

इतना कहकर श्रीरामकृष्ण शशधर को सिर झुकाकर नमस्कार कर रहे हैं। फिर कहने लगे—

"जब पहले-पहल मैंने तुम्हारी बात सुनी, तो लोगों से पूछा, सिर्फ पण्डित है या कुछ विवेक-वैराग्य भी है?

"जिस पण्डित के विवेक नहीं, वह पण्डित ही नहीं।

"अगर आदेश मिला हो तो लोक-शिक्षा में दोष नहीं। आदेश पाने पर अगर कोई लोक-शिक्षा देता है, तो फिर उसे कोई पराजित नहीं कर सकता।

"सरस्वती के पास से अगर एक भी किरण आ जाय तो ऐसी शक्ति हो जाती है कि बड़े-बड़े पण्डित भी सिर झुका लेते हैं।

"दिया जलाने पर, झुण्ड के झुण्ड कीड़े इकट्ठे हो जाते हैं, उन्हें बुलाना नहीं पड़ता। उसी तरह जिसे आदेश मिला है, उसे आदमियों को बुलाना नहीं पड़ता। अमुक समय में लेक्चर होगा, यह कहकर खबर नहीं भेजनी पड़ती; उसी में आकर्षण होता है और इतना कि आदमी आप खिंचकर आ जाते हैं। तब राजा, बाबू, सभी स्वयं ही दल बाँध-बाँधकर उसके पास आते हैं और कहते रहते हैं, 'आपको क्या चाहिए? आम, सन्देश, रुपया, पैसा, दुशाले, यह सब ले आया हूँ, आप क्या लीजियेगा?' मैं उन आदमियों से कहता हूँ, 'दूर करो, यह कुछ मुझे अच्छा नहीं लगता, मैं कुछ नहीं चाहता।'

"चुम्बक-पत्थर क्या लोहे से कहेगा कि मेरे पास आओ?

पड़ना नहीं होता। लोहा आप ही चुम्बक-पत्थर के आकर्षण से आ जाता है।

"सच है कि इस तरह का आदमी पण्डित नहीं होता; परन्तु इसलिए यह न सोच लेना कि उसके ज्ञान में कहीं कुछ कमी है। कहीं किताबें पढ़कर भी ज्ञान होता है? जिसे आदेश मिला है उसके ज्ञान का अन्त नहीं है। वह ज्ञान ईश्वर के पास से आता है। वह कभी चुकता नहीं। उस देश में धान नापते समय एक आदमी नापता है और दूसरा राशि ठेलता जाता है। उसी तरह जो आदेश पाता है, वह जितनी ही लोक-शिक्षा देता रहता है, माँ उसकी ज्ञान की राशि पूरी करती जाती है; उस ज्ञान का अन्त नहीं होता। मेरी अवस्था इसी प्रकार की है।

"माँ यदि एक बार भी कृपा की दृष्टि फेर दें तो क्या फिर ज्ञान का अभाव रह सकता है? इसीलिए पूछ रहा हूँ, तुम्हें कोई आदेश मिला है या नहीं।"

हाजरा—हाँ, आदेश अवश्य मिला होगा। क्यों महाशय?

पण्डितजी—नहीं, आदेश तो विशेष कुछ नहीं मिला।

गृहस्वामी—आदेश तो जरूर नहीं मिला, परन्तु कर्तव्य के विचार से लेक्चर देते हैं।

श्रीरामकृष्ण—जिसने आदेश नहीं पाया, उसके लेक्चर से क्या होगा?

"एक (ब्राह्म) ने लेक्चर देते हुए कहा था, 'मैं पहले खूब शराब पीता था, ऐसा करता था, वैसा करता था।' यह बात सुनकर लोग आपस में कहने लगे—'साला कहता क्या है, शराब पीता था!' इस तरह कहने से उसे विपरीत फल मिला। इसीलिए अच्छा आदमी बिना हुए लेक्चर से कोई उपकार नहीं होता।

"बरीसालनिवासी किसी सरकारी अफसर ने कहा था, 'महाराज, आप प्रचार करना शुरु कर दीजिये, तो मैं भी कमर कसूं।' मैंने कहा, 'अजी, एक कहानी सुनो। उस देश में हालदारपुकुर नाम का एक तालाब है। जितने आदमी थे, सब उसके किनारे पर दिशा-फरागत को जाते थे। सुबह को जो लोग तालाब पर जाते वे गाली-गलौज की बौछारों से उनके भूत उतार देते थे। परन्तु गालियों से कुछ फल न होता था। उसके दूसरे ही दिन सुबह फिर वही घटना होती; लोग फिर दिशा-फरागत को आते। कुछ दिनों बाद कम्पनी से एक चपरासी आया। वह तालाब के पास नोटिस चिपका गया। बस वहाँ टट्टी जाना बिलकुल बन्द हो गया!'

"इसीलिए कहता हूँ, ऐरे-गैरे के लेक्चर से कुछ फल नहीं होता। चपरास के रहने पर ही लोग बात सुनेंगे। ईश्वर का आदेश न रहा, तो लोक-शिक्षा नहीं होती। जो लोक-शिक्षा देगा, उसमें बड़ी शक्ति चाहिए। कलकत्ते में बहुत से हनुमानपुरी* हैं, उनके साथ तुम्हें लड़ना होगा।

"ये लोग (श्रीरामकृष्ण के चारों ओर जो सब भक्त बैठे हुए थे) तो अभी पट्ठे हैं।

"चैतन्यदेव अवतार थे। वे जो कुछ कर गये, कहो भला उसका अब कितना बचा हुआ है? और जिसने आदेश नहीं पाया, उसके लेक्चर से क्या उपकार होगा?

"इसीलिए कहता हूँ, ईश्वर के पादपद्मों में मग्न हो जाओ।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण प्रेम से मतवाले होकर गा रहे हैं—

"ऐ मेरे मन, तू रूप के सागर में डूब जा। जब तू तलातल

---

*एक विख्यात पहलवान।

और पाताल खोजेगा, तभी तुझे प्रेम-रत्न-धन प्राप्त होगा।

"इस समुद्र में डूबने से वह मरता नहीं, यह अमृत का समुद्र है।

"मैंने नरेन्द्र से कहा था, 'ईश्वर रस के समुद्र हैं, तू इस समुद्र में डुबकी लगायेगा या नहीं, बोल? अच्छा सोच, एक खप्पर में रस है, और तू मक्खी बन गया है। तो तू कहाँ बैठकर रस पीयेगा?—बोल।' नरेन्द्र ने कहा, 'मैं खप्पर के किनारे बैठकर मुँह बढ़ाकर पीऊँगा, क्योंकि अधिक बढ़ने से डूब जाऊँगा।' तब मैंने कहा, 'भैया, यह सच्चिदानन्दसागर है, इसमें मृत्यु का भय नहीं है। यह सागर अमृत का सागर है। जिन्हें ज्ञान नहीं, वे ही ऐसा कहते हैं कि भक्ति और प्रेम की बढ़ाचढ़ी अच्छी नहीं। परन्तु ईश्वर-प्रेम की क्या कहीं बढ़ाचढ़ी होती है?' इसीलिए तुमसे कहता हूँ, सच्चिदानन्द-सागर में मग्न हो जाओ।

"ईश्वर-लाभ हो जाने पर फिर क्या चिन्ता है? तब आदेश भी होगा और लोक-शिक्षा भी होगी।"

(४)

ईश्वर-लाभ के अनन्त मार्ग। भक्तियोग ही युगधर्म है

श्रीरामकृष्ण—देखो, अमृत-समुद्र में जाने के अनन्त मार्ग हैं। किसी त[illegible] इस सागर में पड़े कि बस, हुआ। सोचो, अमृत का एक कुण्[illegible] किसी तरह मुँह में उस अमृत के पड़ने से ही अमर होते हो, [illegible] चाहे तुम खुद कूदकर उसमें गिरो या सीढ़ियों से धीरे-धीरे उत[illegible] कुछ पियो, या कोई दूसरा धक्का मारकर तुम्हें कुण्ड में डाल दे, फल एक ही है। अमृत का कुछ स्वाद लेने से ही अमर हो जाओगे।

"मार्ग अनन्त हैं। ज्ञान, कर्म, भक्ति, चाहे जिस मार्ग से जाओ, आन्तरिक होने पर ईश्वर को अवश्य प्राप्त करोगे। संक्षेप में योग तीन प्रकार के हैं। ज्ञानयोग, कर्मयोग और भक्तियोग।

"ज्ञानयोग में ज्ञानी ब्रह्म को जानना चाहता है। नेति-नेति विचार करता है। ब्रह्म सत्य और संसार मिथ्या है, यह विचार करता है। विचार की समाप्ति जहाँ है, वहाँ समाधि होती है, ब्रह्मज्ञान प्राप्त होता है।

"कर्मयोग है, कर्म करके ईश्वर पर मन लगाये रहना। अनासक्त होकर प्राणायाम, ध्यान-धारणादि कर्मयोग है। संसारी अगर अनासक्त होकर ईश्वर को फल समर्पित कर दे, उस पर भक्ति रखकर संसार का कर्म करे तो वह भी कर्मयोग है। ईश्वर को फल का समर्पण करके पूजा, जप आदि कर्म करना, यह भी कर्मयोग है। ईश्वर-लाभ करना ही कर्मयोग का उद्देश्य है।

"भक्तियोग है ईश्वर के नाम-गुणों का कीर्तन करके उन पर पूरा मन लगाना। कलिकाल के लिए भक्तियोग का मार्ग सीधा है। युगधर्म भी यही है।

"कर्मयोग बड़ा कठिन है। पहले ही कहा जा चुका है कि समय कहाँ है? शास्त्रों में जो सब कर्म करने के लिए कहा है, उसका समय कहाँ है? कलिकाल में इधर आयु कम है। उस पर अनासक्त होकर फल की कामना न करके कर्म करना बड़ा कठिन है। ईश्वर को बिना पाये कोई अनासक्त नहीं हो सकता। तुम नहीं जानते, परन्तु कहीं न कहीं से आसक्ति आ ही जाती है।

"ज्ञानयोग भी इस युग के लिए बड़ा कठिन है। एक तो जीवों के प्राण अन्नगत हो रहे हैं, तिस पर आयु भी कम है; उधर देहबुद्धि किसी तरह जाती नहीं और देहबुद्धि के गये बिना ज्ञान

होने का नहीं। ज्ञानी कहता है, मैं ही वह ब्रह्म हूँ। न मैं शरीर हूँ, न भूख हूँ, न तृष्णा हूँ, न रोग हूँ, न शोक हूँ; जन्म, मृत्यु, सुख, दुःख, इन सब से परे हूँ। यदि रोग, शोक, सुख, दुःख, इन सब का बोध रहा, तो तुम ज्ञानी फिर कैसे हो सकोगे? इधर हाथ काँटों से छिद रहे हैं, धर धर खून बह रहा है, खूब पीड़ा होती है, फिर भी कहता है, 'कहाँ? हाथ तो कटा ही नहीं! मेरा क्या हुआ है?'

"इसीलिए इस युग में भक्तियोग है। इससे दूसरे मार्गों की अपेक्षा ईश्वर के पास पहुँचने में सुगमता है। ज्ञानयोग या कर्मयोग अथवा दूसरे मार्गों से भी लोग ईश्वर के पास पहुँच सकते हैं, परन्तु इन सब रास्तों से मंजिल पूरी करना बड़ा कठिन है।

"इस युग के लिए भक्तियोग है। इसका यह अर्थ नहीं है कि भक्त एक जगह जायगा, ज्ञानी या कर्मी दूसरी जगह। इसका तात्पर्य यह है कि जो ब्रह्मज्ञान चाहते हैं, वे अगर भक्ति के मार्ग से चलें तो भी वही ज्ञान उन्हें होगा। भक्तवत्सल अगर चाहेंगे तो वह भी दे सकते हैं।

"भक्त ईश्वर का साकार-रूप देखना चाहता है, उनके साथ बातचीत करना चाहता है—वह बहुधा ब्रह्मज्ञान नहीं चाहता। परन्तु ईश्वर इच्छामय हैं। उनकी अगर इच्छा हो तो वे भक्त को सब ऐश्वर्यों का अधिकारी कर सकते हैं। भक्ति भी देते हैं और ज्ञान भी। अगर कोई एक बार कलकत्ता आ जाय, तो किले का मैदान, सोसायटी (Asiatic Society's Museum), सब उसे देखने को मिल जायगा।

"पर बात तो यह है कि कलकत्ता किस तरह आया जाय?

"संसार की माँ को पा जाने पर ज्ञान भी पाता है और

भक्ति भी। भाव-समाधि के होने पर रूप-दर्शन होता है और निर्विकल्प समाधि के होने पर अखण्ड सच्चिदानन्द-दर्शन। तब अहं, नाम और रूप नहीं रह जाते।

"भक्त कहता है, 'माँ, सकाम कर्मों से मुझे बड़ा भय लगता है। उस कर्म में कामना है। उस कर्म के करने से फल भोगना ही पड़ेगा। तिस पर अनासक्त कर्म करना बड़ा कठिन है। उधर सकाम कर्म करूँगा, तो तुम्हें भूल जाऊँगा। चलो, ऐसे कर्म से मुझे अत्यन्त घृणा है। जब तक तुम्हें न पाऊँ तब तक कर्म घटते जायँ। जितना रह जायगा, उतने को अनासक्त होकर कर सकूँ। उसके साथ तुम पर मेरी भक्ति भी बढ़ती जाय। और जब तक तुम्हें न पाऊँ तब तक किसी नये कर्म में न फँसूँ। जब तुम स्वयं कोई आज्ञा दोगी तब काम करूँगा, अन्यथा नहीं।' "

(५)

तीर्थयात्रा और श्रीरामकृष्ण। आचार्यों की तीन श्रेणियाँ

पण्डितजी—तीर्थाटन के लिए महाराज कहाँ तक गये हैं?

श्रीरामकृष्ण—हाँ, कई स्थान देखे हैं! (सहास्य) हाजरा बहुत दूर तक गया है और बहुत ऊँचे चढ़ गया था, हृषीकेश तक हो आया है। (सब का हँसना।) मैं इतनी दूर नहीं जा सका, इतने ऊँचे नहीं चढ़ा।

"गीध भी बहुत ऊँचे चढ़ जाता है। परन्तु उसकी दृष्टि मरघट पर ही रहती है। (सब हँसते हैं।) मरघट का क्या अर्थ है जानते हो? मरघट अर्थात् कामिनी-कांचन।

"अगर यहाँ बैठकर भक्तिलाभ कर सको, तो तीर्थ जाने की क्या जरूरत है? काशी जाकर मैंने देखा, वहाँ भी वही पेड़

है और वही इमली के पत्ते।

"तीर्थ जाने पर भी अगर भक्ति न हुई तो तीर्थ जाने से फिर कुछ फल ही नहीं हुआ। और भक्ति ही सार है तथा एकमात्र उसी की आवश्यकता है। चीले और गीध कैसे होते हैं, जानते हो? बहुत से आदमी ऐसे होते हैं जो लम्बी लम्बी बातें करते हैं। कहते हैं, शास्त्रों में जिन सब कर्मों की बातें लिखी हैं, उनमें से अधिकांश को हमने साधना की है। वे कहते तो यह हैं, पर उनका मन घोर विषय में पड़ा रहता है। रुपया-पैसा, मान-मर्यादा, देह-सुख, इन्हीं सब विषयों के फेर में वे पड़े रहते हैं।"

पण्डितजी--जी हाँ, तीर्थ जाना तो अपने पास की मणि को छोड़कर काँच के पीछे दौड़ना है।

श्रीरामकृष्ण--और तुम यह समझ लेना कि चाहे लाख शिक्षा दो, पर उपयुक्त समय के आये बिना कोई फल न होगा। बिस्तरे पर सोते समय किसी लड़के ने अपनी माँ से कहा, 'माँ, मुझे टट्टी लगे तो जगा देना।' उसकी माँ ने कहा, 'बेटा, टट्टी की हाजत तुम्हें खुद ही उठा देगी, इसके लिए तुम कोई चिन्ता न करो।' (हास्य।) इसी प्रकार भगवान के लिए व्याकुलता ठीक समय आने पर ही होती है।

"वैद्य तीन तरह के होते हैं।

"जो वैद्य केवल नाड़ी देखकर दवा की व्यवस्था करके चला जाता है, रोगी से सिर्फ इतना ही कह जाता है कि दवा खाते रहना, वह अधम श्रेणी का वैद्य है।

"उसी तरह कुछ आचार्य केवल उपदेश दे जाते हैं, परन्तु उस उपदेश से अनुयायी को अच्छा फल प्राप्त हुआ या बुरा

इसका फिर पता नहीं लेते।

"दूसरी श्रेणी के वैद्य ऐसे होते हैं, जो दवा की व्यवस्था करके रोगी से दवा खाने के लिए कहते हैं। अगर रोगी नहीं खाना चाहता, तो उसे तरह तरह से समझाते हैं। ये मध्यम श्रेणी के वैद्य हुए। इसी तरह मध्यम श्रेणी के आचार्य भी हैं। वे उपदेश देते हैं और तरह तरह से आदमियों को समझाते भी हैं जिससे उपदेश के अनुसार वे चल सकें।

"अन्तिम श्रेणी के और उत्तम वैद्य वे हैं जो अगर मीठी बातों से रोगी नहीं मानता, तो बल का प्रयोग भी करते हैं। जरूरत होती है तो रोगी की छाती पर घुटना रखकर जबरन दवा पिला देते हैं। उसी प्रकार उत्तम श्रेणीवाले आचार्य भी हैं। ईश्वर के मार्ग पर लाने के लिए वे शिष्यों पर बल तक का प्रयोग करते हैं।"

पण्डितजी--महाराज, अगर उत्तम श्रेणी के आचार्य हों, तो क्यों फिर आपने ऐसा कहा कि समय के आये बिना ज्ञान नहीं होता?

श्रीरामकृष्ण--सच है। परन्तु सोचो कि दवा अगर पेट में न जाय--अगर मुँह से ही निकल जाय, तो बेचारा वैद्य भी क्या कर सकता है? उत्तम वैद्य भी कुछ नहीं कर सकता।

"पात्र देखकर उपदेश दिया जाता है। तुम लोग पात्र देखकर उपदेश नहीं देते। मेरे पास अगर कोई लड़का आता है तो मैं उससे पूछता हूँ--तेरे कौन कौन हैं! सोचो उसके बाप नहीं है, परन्तु बाप का ऋण है, तो वह कैसे ईश्वर की ओर मन लगा सकता है?--सुना?"

पण्डितजी--जी हाँ, मैं सब सुन रहा हूँ।

श्रीरामकृष्ण--एक दिन काली-मन्दिर में कुछ सिक्ख सिपाही आये थे। काली माता के मन्दिर के सामने उनसे मेरी मुलाकात हुई। एक ने कहा--'ईश्वर दयामय हैं।' मैंने कहा--'अच्छा? सच कहते हो? कैसे तुम्हें मालूम हुआ?' उन लोगों ने कहा,--'क्यों जनाब, ईश्वर हमें खिलाते हैं--हमारी इतनी देखभाल करते हैं।' मैंने कहा--'यह कौन आश्चर्य की बात है? ईश्वर सब के पिता हैं। अपने पुत्रों की देखभाल पिता नहीं करेगा तो और कौन करेगा? क्या पड़ोसवाले उनकी खबर लेंगे?'

नरेन्द्र--तो फिर दयामय न कहें?

श्रीरामकृष्ण--क्या मैं मना करता हूँ? मेरे कहने का मतलब यह है कि ईश्वर अपने आदमी हैं, कोई दूसरे नहीं।

पण्डितजी--बात अनमोल है।

श्रीरामकृष्ण--(नरेन्द्र से)--तेरा गाना मैं सुन रहा था, पर अच्छा न लगा। इसलिए चला आया। कहा, अभी उम्मेदवार है, गाना फीका जान पड़ने लगा।

नरेन्द्र लज्जित हो गये। मुँह लाल हो गया। वे चुप हो रहे।

(६)

श्रीरामकृष्ण ने पीने के लिए पानी माँगा। उनके पास एक ग्लास पानी रखा गया था, परन्तु वह जल वे पी नहीं सके। एक ग्लास जल और लाने के लिए कहा। पीछे से मालूम पड़ा कि किसी घोर इन्द्रियलोलुप मनुष्य ने उस ग्लास को छू लिया था।

पण्डितजी--(हाजरा से)--आप लोग इनके साथ दिनरात रहते हैं, आप लोग बड़े आनन्द में हैं।

श्रीरामकृष्ण--(हँसते हुए)--आज मेरा बड़ा अच्छा दिन

था ? मैंने दूज का चाँद देखा। (सब हँसते हैं।) दूज का चाँद क्यों कहा, जानते हो? सीता ने रावण से कहा था, रावण, तू पूर्ण चन्द्र है और मेरे राम दूज के चाँद हैं। रावण ने इसका अर्थ नहीं समझा, उसे बड़ा आनन्द हुआ था। सीता के इस कथन का अर्थ यह है कि रावण की सम्पदा जहाँ तक बढ़ने को थी, बढ़ चुकी थी। अब दिनोंदिन पूर्ण चन्द्र की तरह उसका ह्रास ही होगा। श्रीरामचन्द्र दूज के चाँद हैं, उनकी दिनोदिन वृद्धि होगी!

श्रीरामकृष्ण उठे। अपने बन्धु और बान्धवों के साथ पण्डितजी ने भक्तिपूर्वक उन्हें प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ बिदा हुए।

(७)

संसार में किस प्रकार रहना चाहिए

श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ ईशान के घर लौटे। अभी सन्ध्या नहीं हुई। ईशान के नीचेवाले बैठकखाने में आकर बैठे। कोई-कोई भक्त भी उपस्थित हैं। भागवती पण्डित, ईशान तथा उनके लड़के भी हैं।

श्रीरामकृष्ण-(सहास्य)-शशधर से मैंने कहा, पेड़ पर चढ़ने के पहले ही फल की आकांक्षा करने लगे?--कुछ भजन साधन और करो, तब लोक-शिक्षा देना।

ईशान-सभी लोग सोचते हैं, मैं लोकशिक्षा दूँ। जुगनू सोचता है, संसार को प्रकाशित मैं कर रहा हूँ। इस पर किसी ने कहा भी था--'ऐ जुगनू, क्या तुम भी संसार को प्रकाश दे सकते हो? तुम तो अँधेरे को और भी प्रकट करते हो!'

श्रीरामकृष्ण--(जरा मुस्कराकर)--परन्तु निरे पण्डित ही नहीं हैं, कुछ विवेक और वैराग्य भी है।

भाटपाड़ा के भागवती पण्डित भी अब तक बैठे हुए हैं। उम्र ७०-७५ होगी। वे टकटकी लगाये श्रीरामकृष्ण को देख रहे हैं।

भागवती पण्डित--(श्रीरामकृष्ण से)--आप महात्मा हैं।

श्रीरामकृष्ण--यह बात आप नारद, शुकदेव, प्रह्लाद, इन सब के लिए कह सकते हैं। मैं तो आपके पुत्र के समान हूँ।

"परन्तु एक दृष्टि से कह सकते हैं। यह लिखा है कि भगवान से भक्त बड़ा है, क्योंकि भक्त भगवान को हृदय में लिये हुए घूमता है। भक्त के लिए भगवान ने कहा है, 'भक्त मुझे छोटा देखता है और अपने को बड़ा।' यशोदा कृष्ण को बाँधने चली थी। यशोदा को विश्वास था, मैं अगर कृष्ण की देख-रेख न करूँगी, तो और कौन करेगा? कभी तो भगवान चुम्बक हैं और भक्त सुई--भगवान भक्त को खींच लेते हैं; और कभी भक्त चुम्बक और भगवान सुई, भक्त का इतना आकर्षण होता है कि उसके प्रेम को देख, मुग्ध होकर भगवान उसके पास खिंचे चले जाते हैं।"

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर लौटनेवाले हैं। नीचे के बैठकखाने के दक्षिण ओर वाले बरामदे में आकर खड़े हुए हैं। ईशान आदि भक्तगण भी खड़े हैं। बातों ही बातों में श्रीरामकृष्ण ईशान को बहुत से उपदेश दे रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण--(ईशान से)--संसार में रहकर जो उन्हें पुकारता है, वह वीर भक्त है। भगवान कहते हैं, जिसने संसार छोड़ दिया है, वह मुझे पुकारेगा ही, मेरी सेवा करेगा ही, उसकी इसमें बड़ाई क्या है? वह अगर मुझे न पुकारे तो लोग उसे

धिक्कारेंगे, पर जो संसार में रहकर भी मुझे पुकारता है, बीस मन का पत्थर हटाकर मुझे देखता है, वही धन्य है, वही बहादुर है, वही वीर है।

भागवती पण्डित—शास्त्रों में तो यही बात है—धर्मव्याध और पतिव्रता की कथा में। तपस्वी ने सोचा था, मैंने कौए और बगुले को भस्म कर डाला है—मेरा स्थान बड़ा ऊँचा है। वह पतिव्रता के घर गया था। पति पर उसकी इतनी भक्ति थी कि वह दिनरात उसी की सेवा किया करती थी। पति के घर आने पर पैर धोने के लिए उसे पानी देती, यहाँ तक कि अपने बालों से उसके पैर पोंछती थी। तपस्वी अतिथि होकर गये थे। भिक्षा मिलने में देर हो रही थी, इस पर चिल्लाकर कह उठे, तुम्हारा भला न होगा। पतिव्रता ने उसी समय भीतर से कहा, 'यह कौए और बगुले को भस्म करना थोड़े ही है। महाराज, जरा ठहरो, मैं स्वामी की सेवा कर लूँ, तब तुम्हारी भी पूजा करूँगी।'

"धर्मव्याध के पास कोई ब्रह्मज्ञान के लिए गया था। व्याध पशुओं का मांस बेचता था, परन्तु पिता-माता को ईश्वर समझकर दिनरात उनकी सेवा करता था। जो मनुष्य ब्रह्मज्ञान के लिए उसके पास गया था, वह तो उसे देखकर दंग रह गया—सोचने लगा, यह व्याध मांस बेचता है और संसारी मनुष्य है, यह भला मुझे क्या ब्रह्मज्ञान दे सकता है? परन्तु वह व्याध पूर्ण ज्ञानी था।"

श्रीरामकृष्ण अब गाड़ी पर चढ़ेंगे। ईशान तथा अन्य भक्तगण पास ही खड़े हैं, उन्हें गाड़ी पर चढ़ा देने के लिए। श्रीरामकृष्ण फिर बातों में ईशान को उपदेश देने लगे—

"चींटी की तरह संसार में रहो। इस संसार में नित्य और अनित्य दोनों मिले हुए हैं। बालू के साथ शक्कर मिली हुई है।

चीटी बनकर चीनी का भाग ले लेना।

"जल और दूध एक साथ मिले हुए हैं। चिदानन्द-रस और विषय-रस। हंस की तरह दूध का अंश लेकर जल का भाग छोड़ देना।

"पनडुब्बी चिड़िया की तरह रहो—परों में पानी लग जाय तो झाड़कर निकाल देना। इसी प्रकार 'पाकाल' मछली की तरह रहना। यह रहती है कीच में, परन्तु उसकी देह बिल्कुल साफ रहती है।

"गोलमाल में 'माल' है, 'गोल' निकालकर 'माल' ले लेना।"

श्रीरामकृष्ण गाड़ी पर बैठे। गाड़ी दक्षिणेश्वर की ओर चल दी।

पण्डित शशधर को उपदेश

(१)

काली ही ब्रह्म हैं। ब्रह्म और शक्ति अभेद

श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ अपने कमरे में जमीन पर बैठे हैं। पास ही शशधर पण्डित हैं। जमीन पर चटाई बिछी है, उस पर श्रीरामकृष्ण, पण्डित शशधर तथा कई भक्त बैठे हैं। कुछ लोग खाली जमीन पर ही बैठे हैं। सुरेन्द्र, बाबूराम, मास्टर, हरीश, लाटू, हाजरा, मणि मल्लिक आदि भक्त भी हैं। श्रीरामकृष्ण पण्डित पद्मलोचन की बात कह रहे हैं। पद्मलोचन बर्दवान महाराज के सभापण्डित थे। दिन का तीसरा पहर है, चार बजे का समय होगा।

आज सोमवार है, ३० जून, १८८४। छः दिन हो गये, जिस दिन रथयात्रा थी, उस दिन कलकत्ते में पण्डित शशधर के साथ श्रीरामकृष्ण की बातचीत हुई थी। आज पण्डितजी खुद आये हैं। साथ में श्रीयुत भूधर चट्टोपाध्याय और उनके बड़े भाई हैं। कलकत्ते में इन्हीं के मकान पर पण्डित शशधरजी रहते हैं।

पण्डितजी ज्ञानमार्गी हैं। श्रीरामकृष्ण उन्हें समझा रहे हैं— "नित्यता जिनकी है, लीला भी उन्हीं की है—जो अखण्ड सच्चिदानन्द हैं, उन्होंने लीला के लिए अनेक रूपों को धारण किया है।" भगवत्प्रसंग करते करते श्रीरामकृष्ण बेहोश होते जा रहे हैं। पण्डितजी से कह रहे हैं—"भैया, ब्रह्म सुमेरुवत् अटल

और अचल है, परन्तु जिसमें न हिलने का भाव है उसमें हिलने का भाव भी है।"

श्रीरामकृष्ण प्रेम और आनन्द से मस्त हो गये हैं। सुन्दर कण्ठ से गाने लगे। एक के बाद दूसरा, इस तरह कई गाने गाये।

(गीतों का भाव)—

(१) कौन जानता है कि काली कैसी है? षड्दर्शन भी उनके दर्शन नहीं पाते . . .।

(२) मेरी माँ किसी ऐसी-वैसी स्त्री की लड़की नहीं है। उसका नाम लेकर महेश्वर हलाहल पीकर भी बच गये। उसके कटाक्षमात्र से सृष्टि, स्थिति और प्रलय होते हैं। अनन्त ब्रह्माण्डों को वह अपने पेट में डाली हुई है। उसके चरणों की शरण लेकर देवता सकट से उद्धार पाते हैं। देवों के देव महादेव उसके पैरों के नीचे लोटते हैं।

(३) मेरी माँ में यह इतना ही गुण नहीं है कि वह शिव की सती है, नहीं, काल के काल भी उसे हाथ जोड़कर प्रणाम करते हैं। नग्न होकर वह शत्रुओं का सहार करती है। महाकाल के हृदय में उसका वास है। अच्छा मन! कहो तो सही, भला वह कैसी है जो अपने पति के हृदय में भी पाद-प्रहार करती है! रामप्रसाद कहते हैं, माता की लीलायें समस्त बन्धनों से परे हैं। मन! सावधानी के साथ प्रयत्न करते रहो, इससे तुम्हारी मति शुद्ध हो जायगी।

(४) यह मैं सुरापान नहीं कर रहा हूँ, काली का नाम लेकर मैं सुधापान करता हूँ। वह सुधा मुझे ऐसी मस्त कर देती है कि लोग मुझे मतवाला कहते हैं। गुरु के दिये हुए बीज को लेकर, उसमें प्रवृत्ति का मसाला डाल, ज्ञानरूपी कलवार जब

शराब खींचता है, तब मेरा मतवाला मन उसका पान करता है। यन्त्रों से भरे हुए मूल मन्त्र का शोधन करके वह 'तारा-तारा' कहा करता है। रामप्रसाद कहता है, ऐसी सुरा के पीने से चतुर्वर्गों की प्राप्ति होती है।

(५) श्यामा-धन क्या कभी सब को थोड़े ही मिलता है? बड़ी आफत है—यह नादान मन समझाने पर भी नहीं समझता। उन सुरंजित चरणों में प्राणों को सौंप देना शिव के लिए भी असाध्य है, तो साधारण जनों की बात ही क्या!

श्रीरामकृष्ण का भावावेश घट रहा है। गाना बन्द हो गया। वे थोड़ी देर चुपचाप बैठे रहे। फिर अपनी छोटी खाट पर जाकर बैठे।

पण्डितजी गाना सुनकर मुग्ध हो गये। बड़े ही विनय-स्वर में श्रीरामकृष्ण से कहा—क्या और गाना न होगा?

श्रीरामकृष्ण कुछ देर बाद फिर गाने लगे—

(१) श्यामा के चरणरूपी आकाश में मेरे मन की पतंग उड़ रही थी। पाप की हवा के झोंके से वह चक्कर खाकर गिर गयी...।

(२) अब मुझे एक अच्छा भाव मिल गया है। यह भाव मैंने एक अच्छे भावुक से सीखा है। जिस देश में रात नहीं है, उसी देश का एक आदमी मुझे मिला है। मैं दिन और रात को कुछ नहीं समझता, सन्ध्या को तो मैंने वन्ध्या बना डाला है।

(३) तुम्हारे अभय चरणों में मैंने प्राणों को समर्पण कर दिया है। अब मैंने यम की चिन्ता नहीं रखी, न मुझे अब उसका कोई भय ही है। अपनी शिर-शिखा में मैंने काली-नाम के महा-मन्त्र की ग्रन्थि लगा ली है। भव की हाट में देह बेचकर मैं श्रीदुर्गा-

नाम खरीद लाया हूँ।

'श्रीदुर्गा-नाम खरीद लाया हूँ,' इस वाक्य को सुनकर पण्डितजी की आँखों से आँसुओं की झड़ी लग गयी। श्रीरामकृष्ण फिर गा रहे हैं—

(१) मैंने अपने हृदय में काली-नाम के कल्पतरु को रोपित कर लिया है। अब की बार जब यमराज आयेंगे, तब उन्हें हृदय खोलकर दिखाऊँगा, इसीलिए बैठा हुआ हूँ। देह के भीतर छः दुर्जन हैं, उन्हें मैंने घर से निकाल दिया है। रामप्रसाद कहते हैं, श्रीदुर्गा का नाम लेकर मैंने पहले ही से यात्रारम्भ कर दिया है।

(२) मन! अपने में ही रहना, किसी दूसरे के घर न जाना। जो कुछ तू चाहेगा, वह तुझे बैठे ही बैठे मिल जायगा। तू अपने अन्तःपुर में ही उसकी तलाश कर।

श्रीरामकृष्ण गाकर बतला रहे हैं कि मुक्ति की अपेक्षा भक्ति बड़ी है।

(गाना) "मुझे मुक्ति देते हुए कष्ट नहीं होता, परन्तु भक्ति देते बड़ी तकलीफ होती है। जिसे मेरी भक्ति मिलती है, वह सेवा का अधिकारी हो जाता है। फिर उसे कौन पा सकता है! वह त्रिलोकजयी हो जाता है। शुद्धा भक्ति एकमात्र वृन्दावन में है, गोपियों के सिवा किसी दूसरे को उसका ज्ञान नहीं। भक्ति ही के कारण, नन्द के यहाँ, उन्हें पिता मानकर, मैं उनकी बाधाओं को अपने सिर लेता हूँ।"

(२)

ज्ञानी और विज्ञानी। विचार कब तक?

पण्डितजी ने वेद और शास्त्रों का अध्ययन किया है। सदा

ज्ञान की चर्चा में रहते हैं। श्रीरामकृष्ण छोटी खाट पर बैठे हुए उन्हें देख रहे हैं और कहानियों के रूप में अनेक प्रकार के उपदेश दे रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण--(पण्डितजी से)--वेदादि बहुत से शास्त्र हैं, परन्तु साधना किये बिना--तपस्या किये बिना--कोई ईश्वर को पा नहीं सकता। उनके दर्शन न तो षड्दर्शनों में होते हैं और न आगम, निगम और न तन्त्रसार में ही।

"शास्त्रों में जो कुछ लिखा है, उसे समझकर उसी के अनुसार काम करना चाहिए। किसी ने एक चिट्ठी खो दी थी। उसने चिट्ठी कहाँ रख दी यह उसे याद न रही। तब वह दिया लेकर खोजने लगा। दो तीन लोगों ने मिलकर खोजा, तब वह चिट्ठी मिली। उसमें लिखा था, पाँच सेर सन्देश और एक धोती भेजना। पढ़कर उसने फिर उस चिट्ठी को फेंक दिया। तब फिर चिट्ठी की कोई जरूरत न थी। पाँच सेर सन्देश और एक धोती के भेजने ही से मतलब था।

"पढ़ने की अपेक्षा सुनना अच्छा है, सुनने से देखना अच्छा है। श्रीगुरु-मुख से या साधु के मुख से सुनने पर धारणा अच्छी होती है, क्योंकि फिर शास्त्रों के असार-भाग के सोचने की आवश्यकता नहीं रहती। हनुमान ने कहा था, 'भाई, मैं तिथि और नक्षत्र यह सब कुछ नहीं जानता, मैं तो बस श्रीरामचन्द्रजी का स्मरण करता रहता हूँ।'

"सुनने की अपेक्षा देखना और अच्छा है। देखने पर सब सन्देह मिट जाते हैं। शास्त्रों में तो बहुत सी बातें हैं, परन्तु यदि ईश्वर के दर्शन न हुए--उनके चरणकमलों में भक्ति न हुई--चित्त शुद्ध न हुआ तो सब वृथा है। पंचांग में लिखा है,

वर्षा बीस बिस्वे की होगी, परन्तु पंचांग दबाने से कहीं एक बूंद भी पानी नहीं गिरता। एक बूंद गिरे, सो भी नहीं।

"शास्त्रादि लेकर विचार कब तक के लिए है?—जब तक ईश्वर के दर्शन न हों। भौंरा कब तक गुंजार करता है?—जब तक वह फूल पर बैठता नहीं। फूल पर बैठकर जब वह मधु पीने लगता है, तब फिर गुनगुनाता नहीं।

"परन्तु एक बात है, ईश्वर के दर्शनों के बाद भी बातचीत हो सकती है, वह बात ईश्वर के ही आनन्द की बात होगी—जैसे मतवाले का 'जय देवी' बोलना, और भौंरा फूल पर बैठकर जैसे अर्धस्फुट शब्दों में गुंजार करता है।

"ज्ञानी 'नेति-नेति' विचार करता है। इस तरह विचार करते हुए जहाँ उसे आनन्द की प्राप्ति होती है, वही ब्रह्म है।

"ज्ञानी का स्वभाव कैसा है, जानते हो? ज्ञानी कानून के अनुसार चलता है।

"मुझे चानक ले गये थे। वहाँ मैंने कई साधुओं को देखा। उनमें कोई कोई कपड़ा सी रहे थे। (सब हँसते हैं।) मेरे जाने पर वह सब अलग रख दिया। फिर पैर पर पैर चढ़ाकर मुझसे बातचीत करने लगे। (सब हँसते हैं।)

"परन्तु ईश्वर की बात बिना पूछे ज्ञानी उस सम्बन्ध में खुद कुछ नहीं बोलते। पहले वे पूछेंगे, इस समय कैसे हो?—घरवाले सब कैसे हैं?

"परन्तु विज्ञानी का स्वभाव और ही है। उसके स्वभाव में ढिलाई रहती है। कभी देखा, धोती कहीं खुली हुई है। कभी बगल में दबी है—बच्चे की तरह।

"ईश्वर है, यह जिसने जान लिया है, वह ज्ञानी है।

लकड़ी में अवश्य ही आग है, यह जिसने जाना है, वह ज्ञानी है; परन्तु लकड़ी जलाकर भोजन पकाना, भरपेट खाना, यह जिसे आता है वह विज्ञानी है।

"विज्ञानी के आठों पाश खुल जाते हैं। उनमें कामक्रोधादि का आकार मात्र रह जाता है।"

पण्डितजी–"भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वे संशयाः।"

श्रीरामकृष्ण–हाँ, एक जहाज समुद्र में जा रहा था। एकाएक उसके कल-पुर्जे, लोहा-लक्कड़ खुलने लगे। पास ही एक चुम्बक का पहाड़ था। इसीलिए लोहा सब अलग होकर निकला जा रहा था। मैं कृष्णकिशोर के घर जाता था। एक दिन गया तो उसने कहा, तुम पान क्यों खाते हो? मैंने कहा, 'मेरी इच्छा। मैं पान खाऊँगा, शीशे में मुँह देखूँगा, हजार औरतों के बीच में नंगा होकर नाचूँगा।' कृष्णकिशोर की स्त्री उसे डाँटने लगी। कहा, 'तुम किसे यह सब कह रहे हो?—रामकृष्ण को?'

"इस अवस्था के आने पर कामक्रोधादि दग्ध हो जाते हैं। शरीर में कुछ फर्क नहीं होता, वह दूसरे आदमियों के जैसा दिखायी देता है; पर भीतर पोल और निर्मल हो जाता है।"

भक्त–ईश्वर-दर्शन के बाद भी क्या शरीर रहता है?

श्रीरामकृष्ण–किसी किसी का कुछ कर्मों के लिए रह जाता है—लोक-शिक्षा के लिए। गंगा नहाने से पाप धुल जाता है और मुक्ति हो जाती है, परन्तु आँख का अन्धापन नहीं जाता; परन्तु इतना होता है कि पापों के लिए जिन कुछ जन्मों तक कर्मफल का भोग करना होता है, वे जन्म फिर नहीं होते। जिस चक्कर को वह लगा चुका है, बस उसे ही वह पूरा कर जायगा। बचे हुए के लिए फिर उसे चक्कर न लगाना होगा।

कामक्रोधादि सब दग्ध हो जाते हैं; शरीर सिर्फ कुछ कर्मों के लिए रह जाता है।

पण्डितजी–उसे ही संस्कार कहते हैं।

श्रीरामकृष्ण–विज्ञानी सदा ही ईश्वर के दर्शन किया करता है। इसीलिए तो उसका इतना ढीला स्वभाव होता है। वह आँखें खोलकर भी ईश्वर के दर्शन करता है। कभी वह नित्य से लीला में आ जाता है और कभी लीला से नित्य में चला जाता है।

पण्डितजी–यह मैं नहीं समझा।

श्रीरामकृष्ण–'नेति नेति' का विचार करके वह उसी नित्य और अखण्ड सच्चिदानन्द में पहुँच जाता है। वह इस तरह विचार करता है—वे न जीव हैं, न संसार हैं, न चौबीसों तत्त्व हैं। नित्य में पहुँचकर फिर वह देखता है, यह सब वे ही हुए हैं—जीव, जगत् और चौबीसों तत्त्व—यह सब।

"दूध का दही जमाकर, फिर उसे मथकर मक्खन निकाला जाता है। परन्तु मक्खन के निकल आने पर वह देखता है, जिस मट्ठे का मक्खन है, उसी मक्खन का मट्ठा भी है। छाल का ही गूदा है और गूदे की ही छाल।"

पण्डितजी–(भूधर से सहास्य)–समझे? समझना बहुत मुश्किल है।

श्रीरामकृष्ण–मक्खन हुआ, तो मट्ठा भी हुआ है। मक्खन की सोचने लगे, तो साथ साथ मट्ठे की भी सोचना पड़ता है, क्योंकि मट्ठा न रहा तो मक्खन हो नहीं सकता। अतएव, नित्य को मानो तो लीला भी माननी होगी। अनुलोम और विलोम। साकार और निराकार के दर्शन कर लेने के बाद यह अवस्था

है। साकार चिन्मय रूप है और निराकार अखण्ड सच्चिदानन्द।

"वे ही सब कुछ हुए हैं। इसीलिए विज्ञानी इस संसार को 'आनन्द की कुटिया' देखता है। और ज्ञानी के लिए यह संसार 'धोखे की टट्टी' है। रामप्रसाद ने 'धोखे की टट्टी' कहा है, इसीलिए किसी ने उत्तर दिया—'यह संसार आनन्द की कुटिया है। मैं दही खाता हूँ और मजा लूटता हूँ। अरे वैद्य, तुझे बुद्धि भी नहीं है? तू इतने उथले में है? जरा जनक राजा को तो देख, वे कितने तेजस्वी थे, दोनों ओर वे संभालकर चलते थे, तभी तो दूध का कटोरा साफ कर देते थे!' (सब हँसते हैं।)

"विज्ञानी को विशेष रूप से ईश्वर का आनन्द मिला है। किसी ने दूध की बात-ही-बात सुनी है, किसी ने दूध देखा भर है और किसी ने दूध पिया है। विज्ञानी ने दूध पिया है, पीकर स्वाद लिया है और हृष्ट-पुष्ट भी हुआ है।"

श्रीरामकृष्ण कुछ देर के लिए चुप हो गये। पण्डितजी से उन्होंने तम्बाकू पीने के लिए कहा। पण्डितजी दक्षिण-पूर्ववाले लम्बे बरामदे में तम्बाकू पीने चले गये।

(३)

ज्ञान और विज्ञान। गोपीप्रेम

पण्डितजी लौटकर फिर से भक्तों के साथ जमीन पर बैठ गये। श्रीरामकृष्ण छोटी खटिया पर बैठकर फिर वार्तालाप करने लगे।

श्रीरामकृष्ण—(पण्डितजी से)—यह बात तुमसे कहता हूँ। आनन्द तीन प्रकार के होते हैं—विषयानन्द, भजनानन्द और ब्रह्मानन्द। जिसमें लोग सदा ही लिप्त रहते हैं—जो कामिनी

और कांचन का आनन्द है, उसे विषयानन्द कहते हैं। ईश्वर के नाम और गुणों का गान करने से जो आनन्द मिलता है, उसका नाम है भजनानन्द और ईश्वर के दर्शन में जो आनन्द है, उसका नाम है ब्रह्मानन्द। ब्रह्मानन्द को प्राप्त करके ऋषि स्वेच्छा-विहारी हो जाते थे।

"चैतन्यदेव की तीन तरह की अवस्थाएँ होती थी— अन्तर्दशा, अर्धबाह्यदशा और बाह्यदशा। अन्तर्दशा में वे ईश्वर का दर्शन करके समाधिस्थ हो जाया करते थे—जड़-समाधि की अवस्था हो जाती थी। अर्धबाह्यदशा में बाहर का कुछ होश रहता था। बाह्यदशा में नाम और गुणों का कीर्तन करते थे।"

हाजरा—(पण्डितजी से)—अब तो आपके सब सन्देह मिट गये न ?

श्रीरामकृष्ण (पण्डितजी से)—समाधि किसे कहते हैं ?—जहाँ मन का लय हो जाता है। ज्ञानी की जड़-समाधि होती है—फिर 'अहं' नहीं रह जाता। भक्तियोग की समाधि को चेतन-समाधि कहते हैं। इसमें सेव्य और सेवक का 'मैं' रहता है—रस-रसिक का 'मैं'—स्वाद के विषय और स्वाद लेनेवाले का 'मैं'। ईश्वर सेव्य हैं और भक्त सेवक; ईश्वर रस-स्वरूप हैं और भक्त रसिक। ईश्वर स्वाद के विषय हैं और भक्त स्वाद लेनेवाले। मैं चीनी नहीं बन जाता, चीनी खाना पसन्द करता हूँ।

पण्डितजी—वे अगर सम्पूर्ण 'मैं' का लय कर दें तो क्या हो ? अगर चीनी बना लें तो ?

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—तुम अपने मन की बात खोलकर कहो। 'माँ कौशल्ये, एक बार खोलकर कहो !' (सब हँसते हैं।) तो क्या नारद, सनक, सनातन, सनन्द, सनत्कुमार शास्त्रों

में नहीं है ?

पण्डितजी–जी हाँ, शास्त्रों में है।

श्रीरामकृष्ण–उन लोगों ने ज्ञानी होकर भक्त का 'मैं' रख छोड़ा था। तुमने भागवत नहीं पढ़ा ?

पण्डितजी–कुछ पढ़ा है, सब नहीं।

श्रीरामकृष्ण–प्रार्थना करो। वे दयामय हैं। क्या वे भक्त की बात न सुनेंगे ? वे कल्पतरु हैं। उनके पास पहुँचकर जो जो प्रार्थना करेगा, वह वही पायेगा।

पण्डितजी–मैंने यह सब इतना नहीं सोचा। अब सब समझ रहा हूँ।

श्रीरामकृष्ण–ब्रह्मज्ञान के बाद भी ईश्वर कुछ 'मैं' रख देते हैं। वह 'मैं' भक्त का 'मैं' है—विद्या का 'मैं'। उससे इस अनन्त लीला का स्वाद मिलता है। मूसल सब घिस गया था, थोड़ा-सा रह गया था। बेत के वन में गिरकर उसने कुल का कुल नष्ट कर दिया—यदुवंश का इसी तरह ध्वंस हुआ। उसी तरह विज्ञानी भक्त का 'मैं'—विद्या का 'मैं' रखते हैं—लोक-शिक्षण के लिए।

"ऋषि डरपोक थे। उनका यह भाव था कि किसी तरह पार हो जायँ, फिर कौन आता है ? सड़ी लकड़ी किसी तरह खुद तो बह जाती है, परन्तु उसपर अगर एक पक्षी भी बैठ जाय तो वह डूब जाती है। नारदादि बहादुर लकड़ी हैं, खुद भी बहते जाते हैं और कितने ही जीवों को भी साथ ले जाते हैं। स्टीम बोट (जहाज) खुद भी पार हो जाता है और दूसरों को भी पार कर देता है।

"नारदादि आचार्य विज्ञानी हैं—दूसरे ऋषियों की अपेक्षा

साहसी है। जैसे पक्का खिलाड़ी, जैसा चाहता है, वैसे ही पासे पड़ते हैं—प्रत्येक बार बिलकुल ठीक ! पाँच कहो, पाँच पड़े, छः कहो छः—नारदादि ऐसे खिलाड़ी हैं। वह अपनी शान में, रह रहकर, मूछों पर ताव देता रहता है।

"जो सिर्फ ज्ञानी है, उन्हें डर लगा रहता है। जैसे शतरंज खेलते समय कच्चे खिलाड़ी सोचते हैं, किसी तरह गोटी उठ जाय तो जी बचे। विज्ञानी को किसी बात का डर नहीं है। उसने साकार और निराकार दोनों को देखा है। ईश्वर के साथ उसने बातचीत की है—ईश्वर का आनन्द पाया है—उनका स्मरण करते हुए अगर उसका मन अखण्ड सच्चिदानन्द में लीन हो जाता है, तो भी उसे आनन्द है, और अगर मन लीन न हो तो लीला में रहकर भी आनन्द पाता है।

"जो केवल ज्ञानी है, वह एक ही प्रकार के बहाव में पड़ा रहता है। बस यही सोचता रहता है कि यह नहीं, यह नहीं—यह सब स्वप्नवत् है ! मैंने दोनों हाथ ऊपर उठा दिये हैं, इसलिए मैं सब कुछ लेता हूँ। सुनो, मैं तुम्हें एक कहानी सुनाता हूँ।

"एक स्त्री अपनी एक पहचानवाली स्त्री से मिलने गयी जो जुलाहिन थी। यह जुलाहिन उस समय सूत कात रही थी—कितने ही तरह के रेशम के सूत। अपनी साथिन को देखकर उसे बड़ी खुशी हुई। उसने कहा आओ तुम्हारा स्वागत है, मुझे बड़ा आनन्द हुआ है, तुम जरा बैठो, मैं जाकर तुम्हारे लिए कुछ मिठाई ले आऊँ। और यह कहकर वह बाहर चली गयी। इधर तरह तरह के रंगीन रेशम के सूत देखकर उस स्त्री को लालच हो आया और उसने झट कुछ सूत बगल में छिपा लिया। कुछ समय बाद जुलाहिन मिठाई लेकर वापस आयी और बड़े उत्साह

से उस स्त्री को खिलाने लगी, परन्तु थोड़ी ही देर में जब उसकी नजर अपने सूत पर पड़ी तो वह समझ गयी कि इस स्त्री ने मेरा कुछ सूत दबा लिया है। निदान उसने सूत वसूल करने का एक उपाय सोच निकाला।

"उसने कहा, 'सखी ! आज तो बहुत दिनों के बाद तुमसे मुलाकात हुई है। आज बड़े आनन्द का दिन है। मेरी बड़ी इच्छा है, आओ हम दोनों आज नाचें।' दूसरी स्त्री ने कहा, 'आनन्द की बात तो कुछ न पूछो। तुम्हारी इच्छा है, तो ठीक ही है।' खैर दोनों स्त्रियाँ नाचने लगीं। पर जुलाहिन ने देखा कि वह स्त्री दोनों हाथ ऊपर उठाकर नहीं नाच रही है। तब उसने कहा, आओ हम लोग दोनों हाथ उठाकर नाचें—आज तो बड़े आनन्द का दिन है, परन्तु दूसरी स्त्री ने एक हाथ ज्यों का त्यों दबाये ही रखा, केवल एक हाथ उठाकर नाची ! तब जुलाहिन ने कहा, 'अरे यह क्या, आओ मैं दोनों हाथ उठाये हूँ।' पर दूसरी स्त्री एक बगल दबाकर ही नाचती रही और कहा, भाई जिसे जैसा आता है !"

फिर श्रीरामकृष्ण कहने लगे, "मैं बगल में कुछ दबाता नहीं, मैंने दोनों हाथ उठा दिये हैं, इसलिए मैं नित्य और लीला दोनों को स्वीकार करता हूँ।

"केशव सेन से मैंने कहा, 'मैं' का त्याग बिना किये कुछ होने का नहीं। उसने कहा, तब तो महाराज, दल-बल कुछ रह नहीं जाता। तब मैंने कहा, कच्चे 'मैं', दुष्ट 'मैं' को छोड़ने के लिए कहता हूँ। परन्तु पक्के 'मैं' में, ईश्वर के दास 'मैं' में, बालक के 'मैं' में, विद्या के 'मैं' में दोष नहीं। संसारियों का 'मैं'—अविद्या का 'मैं', कच्चा 'मैं' है; यह मोटी लाठी की तरह

है। सच्चिदानन्द-सागर के पानी को वही लाठी दो भागों में बाँट रही है। परन्तु ईश्वर का दास 'मैं', बालक का 'मैं' या विद्या का 'मैं' पानी के ऊपर की पानी की रेखा की तरह है। पानी एक है; साफ नजर आ रहा है, केवल बीच में एक रेखा खिंची हुई, मानो पानी के दो भाग कर रही है। वस्तुतः पानी एक है—साफ़ दीख पड़ रहा है। शंकराचार्य ने विद्या का 'मैं' रखा था—लोकशिक्षा के लिए।

"ब्रह्मज्ञान के हो जाने पर भी वे अनेकों में विद्या का 'मैं'—भक्त का 'मैं' रख देते हैं। हनुमान साकार और निराकार के दर्शन करने के बाद सेव्य-सेवक का भाव लेकर, भक्त का भाव लेकर रहते थे। उन्होंने श्रीरामचन्द्र से कहा था, 'राम, कभी सोचता हूँ तुम पूर्ण हो और मैं अंश हूँ; कभी सोचता हूँ, तुम सेव्य हो और मैं सेवक हूँ; और राम! जब तत्त्वज्ञान होता है तब देखता हूँ, तुम्हीं 'मैं' हो, मैं ही 'तुम' हूँ।'

"कृष्ण के विरह से विकल होकर यशोदा राधिका के पास गयी। उनका कष्ट देखकर राधिका उनसे अपने स्वरूप में मिलीं और कहा, 'श्रीकृष्ण चिदात्मा हैं और मैं चित्‌शक्ति। माँ, तुम मेरे पास वर माँगो।' यशोदा ने कहा, 'माँ! मुझे ब्रह्मज्ञान नहीं चाहिए, बस यही वरदान दो कि गोपाल के रूप के सदा दर्शन होते रहें, कृष्ण-भक्तों का सदा संग मिलता रहे। भक्तों की मैं सेवा करूँ और उनके नाम-गुणों का कीर्तन करूँ।'

"गोपियों की इच्छा हुई थी कि भगवान के ईश्वरी रूप का दर्शन करें। कृष्ण ने उन्हें यमुना में डुबकी लगाने के लिए कहा। डुबकी लगाते ही सब वैकुण्ठ जा पहुँचीं। वहाँ भगवान के उस षडैश्वर्यपूर्ण रूप के दर्शन तो हुए, परन्तु वह उन्हें अच्छा न लगा।

'तब कृष्ण से उन लोगों ने कहा, 'हमारे लिए गोपाल के दर्शन, गोपाल की सेवा, बस यही रहे; हम और कुछ नहीं चाहतीं।'

"मथुरा जाने से पहले कृष्ण ने उन्हें ब्रह्मज्ञान देने का प्रयत्न किया था। कहला भेजा था, 'मैं सर्व भूतों के अन्दर में भी हूँ और बाहर भी। तुम लोग क्या एक ही रूप में देख रही हो?' गोपियों ने कहा, 'कृष्ण हम लोगों को छोड़ जायेंगे, इसलिए ब्रह्मज्ञान का उपदेश भेजा है?'

"जानते हो गोपियों का भाव कैसा है? 'हम राधा की—राधा हमारी।'"

एक भक्त—यह भक्त का 'मैं' क्या कभी नहीं जाता?

श्रीरामकृष्ण—वह 'मैं' कभी कभी चला जाता है। तब ब्रह्मज्ञान होता है, समाधि होती है। मेरा भी चला जाता है, परन्तु सब समय नहीं। सा, रे, ग, म, प, ध, नि; परन्तु 'नि' में अधिक देर तक नहीं रहा जाता। फिर नीचे के पदों में उतर आना पड़ता है। मैं कहता हूँ, माँ, मुझे ब्रह्मज्ञान न देना। पहले-पहल साकार-वादी खूब आते थे। इसके बाद आजकल के निराकारवादी ब्राह्म समाजियों का धावा होने लगा। तब प्रायः उसी तरह मैं बेहोश होकर समाधिमग्न हो जाया करता था। और होश में आने पर कहता था, माँ, मुझे ब्रह्मज्ञान न देना।

पण्डितजी—हमारे कहने से क्या वे सुनेंगे?

श्रीरामकृष्ण—ईश्वर कल्पतरु हैं। भक्त जो कुछ चाहेगा, वही पायेगा। परन्तु कल्पतरु के पास पहुँचकर माँगना पड़ता है, तब कामना पूरी होती है।

"परन्तु एक बात है। वे भावग्राही हैं। जो जो कुछ सोचता है, साधना करने पर वह वैसा ही पाता है। जैसा भाव होता है,

वैसा ही साथ भी होता है। कोई बाजीगर राजा के सामने तमाशा दिखा रहा था। कहता था, 'महाराज, रुपया दीजो—कपड़े दीजो' यही सब। इसी समय उसकी जीभ ऊपर तालू में चढ़ गयी। साथ ही कुंभक हो गया। बस जबान बन्द हो गयी, शरीर बिलकुल स्थिर हो गया। तब लोगों ने ईंट की कब्र बनाकर उसी में उसे गाड़ रखा। किसी ने हजार साल बाद उस कब्र को खोदा। तब लोगों ने देखा, एक आदमी समाधिमग्न बैठा हुआ था। उसे साधु समझकर वे लोग उसकी पूजा करने लगे, इतने में ही हिलाने-डुलाने के कारण उसकी जीभ तालू से हट गयी। तब उसे होश हुआ और वह चिल्लाता हुआ कहने लगा, 'देखो मेरी कलाबाजी, महाराज, रुपया दीजो—कपड़े दीजो!'

"मैं रोता था और कहता था, माँ, मेरी विचार-बुद्धि पर वज्रपात हो।"

पण्डितजी-तो कहिये आप में भी विचार-बुद्धि थी?

श्रीरामकृष्ण-हाँ, एक समय थी।

पण्डितजी-तो बतलाइये जिस तरह हम लोगों की भी दूर हो जाय। आपकी किस तरह गयी?

श्रीरामकृष्ण-ऐसे ही एक तरह चली गयी।

(४)

ईश्वर-दर्शन जीवन का उद्देश्य है—उपाय व्याकुलता

श्रीरामकृष्ण कुछ देर चुपचाप बैठे रहकर फिर बातचीत करने लगे।

श्रीरामकृष्ण-ईश्वर कल्पतरु हैं। उनके पास पहुँचकर माँगना चाहिए। तब जो जो कुछ चाहता है, वही पाता है।

"ईश्वर ने न जाने क्या क्या बनाये हैं। उनके असंख्य ब्रह्माण्ड हैं, उनके अनन्त ऐश्वर्य के ज्ञान से हमें क्या जरूरत है? और अगर जानने की इच्छा हो, तो पहले उन्हें प्राप्त करना चाहिए, फिर वे स्वयं ही समझा देंगे। यदु मल्लिक के कितने मकान हैं, कम्पनी के कितने कागज हैं, इन सब बातों के जानने से हमें क्या मतलब? हमारा काम है किसी तरह बाबू से मुलाकात करना। इसके लिए खाई पर से कूदकर जाना हो या प्रार्थना करके अथवा दरवान के धक्के सहकर, हमें उन तक पहुँचना ही चाहिए। मुलाकात हो जाने पर उनके क्या क्या हैं, एक बार पूछने से बाबू खुद ही सब बतला देंगे और बाबू से मुलाकात हो जाने पर उनके कर्मचारी भी मानने लगते हैं। (सब हँसते हैं।)

"कोई कोई ऐश्वर्य को जानना नहीं चाहते। वे कहते हैं, कलवार की दूकान में कितने मन शराब है, इसे जानकर हम क्या करेंगे? हमारा काम तो बस एक ही बोतल से निकल जाता है। ऐश्वर्य का ज्ञान क्या करेगा लेकर? जितनी शराब पी है, उतनी ही में होश दुरुस्त नहीं है।

"भक्तियोग, ज्ञानयोग—ये ही सब मार्ग हैं, चाहे जिस रास्ते से होकर जाओ, उन्हें पाओगे। भक्ति का मार्ग सीधा है। ज्ञान और विचार का मार्ग विपत्तियों से भरा हुआ है।

"कौनसा रास्ता अच्छा है, इसके अधिक विचार की क्या आवश्यकता है? विजय के साथ बहुत दिनों तक बातचीत हुई थी। विजय से मैंने कहा, एक आदमी प्रार्थना करता था, 'हे ईश्वर, तुम क्या हो, कैसे हो, मुझे बता दो, मुझे दर्शन दो।'

"ज्ञान-विचार का मार्ग पार करना कठिन है। पार्वतीजी

ने पर्वतराज को अपने अनेक ईश्वरी रूप दिखाकर कहा, 'पिताजी, अगर ब्रह्मज्ञान चाहते हो तो साधुओं का संग करो।'

"शब्दों द्वारा ब्रह्म की व्याख्या नहीं की जा सकती। रामगीता में इस बात का निर्देश है कि शास्त्रों में ब्रह्म का केवल संकेत किया गया है—केवल उनके लक्षणों की ओर इशारा किया गया है; उदाहरणार्थ, यदि कोई यह कहे कि 'गंगा पर का ग्वालों का गाँव' तो उसका संकेत यही होता है कि यह गाँव गंगा के 'तट' पर स्थित है।

"निराकार ब्रह्मसाक्षात्कार क्यों नहीं होगा ? पथ बड़ा कठिन है अवश्य। विषय-बुद्धि का लेशमात्र रहते नहीं होता। इन्द्रियों के जितने विषय हैं, रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, शब्द इन सब का त्याग हो जाने पर, मन का लय हो जाने पर फिर कहीं उसका हृदय में प्रत्यक्ष अनुभव होता है, और फिर भी इससे इतना ही समझ में आता है कि ब्रह्म है—केवल 'अस्ति' का ज्ञान।"

पण्डितजी—'अस्तीत्येवोपलब्धव्यः' इत्यादि।

श्रीरामकृष्ण—उन्हें पाने की अगर किसी को इच्छा हो तो किसी एक भाव का आश्रय लेना पड़ता है, वीरभाव, सखीभाव, दासीभाव या सन्तानभाव।

मणिमल्लिक—हाँ, तभी दृढ़ता होगी।

श्रीरामकृष्ण—मैं सखीभाव में बहुत दिन था। कहता था, 'मैं आनन्दमयी, ब्रह्ममयी की दासी हूँ।'

" 'हे दासियो, मुझे भी दासी बना लो, मैं गर्वपूर्वक कहता जाऊँगा कि मैं ब्रह्ममयी की दासी हूँ।'

"किसी किसी को बिना साधना के ही ईश्वर मिल जाते

। उन्हें नित्यसिद्ध कहते हैं । जिन लोगों ने जप-तपादि साधनों द्वारा ईश्वर को प्राप्त किया है, उन्हें साधनसिद्ध कहते हैं—और कोई कोई कृपासिद्ध भी होते हैं । जैसे हजार साल का अँधेरा घर, दिया ले जाओ तो उसी क्षण वहाँ उजाला हो जाता है ।

"एक हैं वे, जो एकाएक सिद्ध हो जाते हैं, जैसे किसी गरीब का लड़का बड़े आदमी की दृष्टि में पड़ जाय । बाबू ने उसके साथ अपनी लड़की ब्याह दी, साथ ही उसे घर-द्वार, घोड़ेगाड़ी, दास-दासियाँ, सब कुछ मिल गया ।

"एक और हैं स्वप्नसिद्ध । वे स्वप्न में दर्शन पाकर सिद्ध हो जाते हैं ।"

सुरेन्द्र-(सहास्य)-तो हम लोग अभी खरीदे लें, बाद में बाबू हो जायेंगे ।

श्रीरामकृष्ण-(सस्नेह)-तुम बाबू तो हो ही । 'क' में आकार लगाने से 'का' होता है, उस पर एक और आकार लगाना वृथा है । 'का' का 'का' ही रहेगा । (सब हँसते हैं ।)

"नित्यसिद्ध की एक अलग ही श्रेणी है, जैसे 'अरणि' काठ, जरासा रगड़ने से ही आग पैदा हो जाती है, और न रगड़ने से भी होती है । नित्यसिद्ध थोड़ीसी साधना करने पर ही ईश्वर को पा जाता है और साधना न करने पर भी पाता है ।

"हाँ, नित्यसिद्ध ईश्वर को पा लेने पर साधना करते हैं । जैसे कुम्हड़े का पौधा, पहले उसमें फल लगता है, तब ऊपर फूल होता है ।"

कुम्हड़े के पौधे में फल पहले होते हैं, फिर फूल, यह सुनकर पण्डितजी हँस रहे हैं ।

श्रीरामकृष्ण-और नित्यसिद्ध होमा पक्षी की तरह है । उसकी

माँ आकाश में बहुत ऊँचे पर रहती है। अण्डे देने पर गिरते हुए अण्डे फूट जाते हैं और फिर बच्चे भी गिरते रहते हैं। गिरते गिरते ही उनके पर निकल आते और आँखें खुल जाती हैं; परन्तु जमीन पर गिरकर कहीं चोट न लग जाय, इस ख्याल से वे फिर सीधे ऊँचे की ओर अपनी माँ के पास उड़ने लगते हैं। माँ कहाँ है, बस यही धुन रहती है। देखो न, 'क' लिखते हुए प्रह्लाद की आँखों से अश्रुधारा बह चली थी।

पण्डितजी का विनयभाव देखकर श्रीरामकृष्ण बड़े सन्तुष्ट हुए हैं। वे पण्डितजी के स्वभाव के सम्बन्ध में भक्तों से कह रहे हैं—

"इनका स्वभाव बड़ा अच्छा है। मिट्टी की दीवार में कीला गाड़ते हुए कोई तकलीफ नहीं होती। पत्थर में कील की नोंक चाहे टूट जाय पर पत्थर का कुछ नहीं होता। ऐसे भी आदमी हैं, जो लाख ईश्वर की चर्चा सुनें, पर उन्हें चेतना किसी तरह नहीं होती। जैसे घड़ियाल, देह पर तलवार भी चोट नहीं कर सकती।"

पण्डितजी—घड़ियाल के पेट में बरछी मारने से मतलब सिद्ध हो जाता है। (सब हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण—सब शास्त्रों के पाठ से क्या होगा—फिलॉसफी (Philosophy) पढ़कर क्या होगा? लम्बी लम्बी बातों से क्या होता है? धनुर्वेद की शिक्षा प्राप्त करनी हो तो पहले केले के पेड़ पर निशाना साधना चाहिए, फिर नरईत के पौधे पर, फिर जलती हुई दीपक की बत्ती पर—फिर उड़ती हुई चिड़िया पर।

"इसीलिए पहले साकार में मन स्थिर करना चाहिए।

"और त्रिगुणातीत भक्त भी हैं—नित्यभक्त जैसे नारदादि। उस भक्ति में श्याम भी चिन्मय है, धाम भी चिन्मय है,

और भक्त भी चिन्मय है। ईश्वर, उनका धाम तथा भक्त, सभी नित्य हैं।

"जो लोग 'नेति-नेति' के द्वारा ज्ञानपूर्वक विचार कर रहे हैं, वे अवतार नहीं मानते। हाजरा सच कहता है, भक्तों के लिए ही अवतार है, वह ज्ञानियों के लिए नहीं—वे सोऽहं जो बने हैं!"

श्रीरामकृष्ण और सारी भक्तमण्डली चुपचाप बैठी है। पण्डितजी बातचीत करने लगे।

पण्डितजी–अच्छा, यह निष्ठुर भाव किस तरह दूर हो? हास्य देखता हूँ तो मांसपेशियों (Muscles) की, स्नायुओं (Nerves) की याद आती है। शोक देखता हूँ तो एक स्नायविक क्रिया (Nervous System) की उत्तेजना जान पड़ती है।

श्रीरामकृष्ण–(सहास्य)–यही बात नारायण शास्त्री भी कहता था, शास्त्र पढ़ने का यह दोष है कि वह तर्क और विचार में डाल देता है।

पण्डितजी–क्या कोई उपाय नहीं है?

श्रीरामकृष्ण–है, विवेक। एक गाना है, उसमें कहा है कि उसके विवेक नाम के लड़के से तत्त्व की बातें पूछना।

"विवेक, वैराग्य, ईश्वर पर अनुराग, ये ही सब उपाय हैं। विवेक के हुए बिना बात कभी पूरी नहीं उतरती। पण्डित सामाध्यायी ने बहुत कुछ व्याख्या के बाद कहा, ईश्वर नीरस है। एक ने कहा था, मेरे मामा के यहाँ एक गोशाले भर घोड़े हैं। गोशाले में भी कहीं घोड़े रहते हैं!

(सहास्य) "तुम तो गुलाबजामुन बन रहे हो। अभी कुछ दिन रस में पड़े रहो, इससे तुम्हारे लिए भी अच्छा है और दूसरों के लिए भी। बस दो-चार दिन के लिए रहो।"

पण्डितजी—(मुस्कराकर)—गुलाबजामुन जलकर अंगार हो गया है।

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—नहीं नहीं, अच्छा पका है, उसी की लाली है।

हाजरा—अच्छा भूना गया है, अभी रस और खींचेगा।

श्रीरामकृष्ण—बात यह है कि अधिक शास्त्र पढ़ने की जरूरत नहीं है। ज्यादा पढ़ने पर तर्क और विचार आ जाते हैं। न्यांगटा मुझे सिखलाता था—उपदेश देता था—गीता का दस बार उच्चारण करने से जो फल होता है, वही गीता का सार है।—अर्थात् दस बार 'गीता-गीता' कहने से तागी-तागी (त्यागी-त्यागी) निकलता है।

"उपाय विवेक और वैराग्य है, और ईश्वर पर अनुराग। पर कैसा अनुराग? ईश्वर के लिए जो व्याकुल हो रहा है—जैसी व्याकुलता के साथ बछड़े के पीछे गौ दौड़ती है।"

पण्डितजी—वेदों में बिल्कुल ऐसा ही है। गौ जैसे बछड़े को पुकारती है, तुम्हें हम उसी तरह पुकारते हैं।

श्रीरामकृष्ण—व्याकुलता के साथ रोओ। और विवेक-वैराग्य प्राप्त करके अगर कोई सर्वस्व का त्याग कर सके तो उनका साक्षात्कार हो सकता है।

"उस व्याकुलता के आने पर उन्माद की अवस्था हो जाती है, ज्ञानमार्ग में रहो चाहे भक्तिमार्ग में। दुर्वासा को ज्ञानोन्माद हो गया था।

"संसारियों के ज्ञान और सर्वत्यागियों के ज्ञान में बड़ा अन्तर है। संसारियों का ज्ञान दीपक के प्रकाश के समान है, उससे घर के भीतर के अंश में ही उजाला होता है, उसके द्वारा अपनी देह,

घर के काम, इनके अतिरिक्त और कुछ नहीं समझा जा सकता। सर्वत्यागी का ज्ञान सूर्य के प्रकाश की भाँति है। उस प्रकाश से घर का भीतर और बाहर सब प्रकाशित हो जाता है, सब देख लिया जाता है। चैतन्य देव का ज्ञान सौर-ज्ञान था—ज्ञानसूर्य का प्रकाश था। और उनके भीतर भक्ति-चन्द्र की ठण्डी किरणें भी थीं। ब्रह्मज्ञान और भक्ति-प्रेम, दोनों थे।

"अभावमुख चैतन्य और भावमुख चैतन्य। भाव-भक्ति का एक मार्ग है और अभाव (नेति नेति ज्ञान-विचार) का भी एक दूसरा। तुम अभाव की बात कह रहे हो, परन्तु वह बड़ा कठिन है। कहा है, वह जगह ऐसी है कि वहाँ गुरु और शिष्य में भी मुलाकात नहीं होती। जनक के पास शुकदेव ब्रह्मज्ञान के उपदेश के लिए गये। जनक ने कहा, पहले दक्षिणा दे दो, तुम्हें ब्रह्मज्ञान हो जाने पर फिर तुम दक्षिणा थोड़े ही दोगे, क्योंकि तब गुरु और शिष्य में भेद ही नहीं रह जाता।

"भाव और अभाव सभी रास्ते हैं। मत जैसे अनन्त हैं वैसे ही पथ अनन्त हैं। परन्तु एक बात है। कलिकाल के लिए नारदीय भक्ति का ही विधान माना जाता है। इस मार्ग में पहले है भक्ति, भक्ति के पक जाने पर है भाव, भाव से उच्च है महाभाव। और प्रेम सभी जीवों को नहीं होता। यह जिसे हुआ है वह वस्तुलाभ कर चुका है।"

पण्डितजी—धर्म की व्याख्या करनी है, तो बहुतसी बातें कहकर समझाना पड़ता है।

श्रीरामकृष्ण—तुम अनावश्यक बातें छोड़कर कहा करो।

(९)

ब्रह्म शक्ति अभेद । सर्वधर्मसमन्वय

श्रीयुत मणि मल्लिक के साथ पण्डितजी बातचीत कर रहे हैं। मणि मल्लिक ब्राह्मसमाजी हैं। ब्राह्मसमाज के दोषों और गुणों पर घोर तर्क कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण अपनी छोटी खाट पर बैठे हुए सब सुन रहे हैं और फिर हँस रहे हैं। कभी कभी कह रहे हैं—यह सत्त्व का तम है, वीरों का भाव है, यह सब चाहिए, अन्याय और असत्य देखकर चुप न रहना चाहिए। सोचो कि व्यभिचारिणी स्त्री परमार्थ बिगाड़ने के लिए आ रही है, उस समय ऐसा ही वीरभाव चाहिए। तब कहना चाहिए, 'क्यों री, मेरा परलोक बरबाद करने चली है? अभी तुझे गाड़ डालूँगा।'

फिर हँसकर कह रहे हैं—"मणि मल्लिक का ब्राह्मसमाजी मत बहुत दिनों से है। उसके भीतर तुम अपना मत घुसेड़ने की कोशिश न करो। पुराने संस्कार कभी एकाएक छूट सकते हैं? एक हिन्दू बड़ा भक्त था। सदा जगदम्बा की पूजा करता और उनका नाम लेता था। जब मुसलमानों का राज्य हुआ, तब उसे पकड़कर मुसलमानों ने मुसलमान बना लिया और कहा, अब तू मुसलमान हो गया। अब अल्ला का नाम ले, अल्ला का नाम जपा कर। वह आदमी बड़े कष्ट से 'अल्ला-अल्ला' कहने लगा; परन्तु फिर भी कभी-कभी 'जगदम्बा' का नाम निकल ही पड़ता था। तब मुसलमान उसे मारने दौड़ते। वह कहता था, 'दोहाई—सेरजी, मुझे मारना नहीं, मैं तुम्हारे अल्ला का नाम लेने की बड़ी कोशिश कर रहा हूँ, परन्तु करूँ क्या, भीतर जगदम्बा जो समायी हुई हैं, तुम्हारे अल्ला को धक्के मारकर निकाल देती हैं।' (सब हँसते हैं।)

(पण्डितजी से हँसते हुए) "मणि मल्लिक से कुछ कहना मत।

"बात यह है कि रुचि-भेद है, जिसके पेट में जो कुछ फायदा पहुँचाये। अनेक धर्म और अनेक मतों की सृष्टि उन्होंने अधिकारी-विशेष के लिए की है। सभी आदमी ब्रह्मज्ञान के अधिकारी नहीं होते। और यही सोचकर उन्होंने साकार-पूजन की व्यवस्था की है। प्रकृति सबकी अलग अलग होती है और फिर अधिकार-भेद भी है।"

सब लोग चुप हैं। श्रीरामकृष्ण पण्डितजी से कह रहे हैं, अब जाओ, देवताओं के दर्शन करो और बगीचा घूमकर देख लो।

दिन के पाँच बजे होंगे। पण्डितजी और उनके मित्र उठे। ठाकुरबाड़ी देखने जायेंगे। उनके साथ कोई-कोई भक्त भी गये। कुछ देर बाद मास्टर के साथ टहलते हुए श्रीरामकृष्ण भी गंगाजी के किनारे नहाने के घाट की ओर जा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण मास्टर से कह रहे हैं, बाबूराम अब कहता है, लिख-पढ़कर क्या होगा?

गंगा के तट पर पण्डितजी के साथ श्रीरामकृष्ण की फिर भेंट हुई। श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, 'काली के दर्शन करने नहीं गये? —मैं तो इसीलिए आया हूँ।' पण्डितजी ने कहा, जी हाँ, चलिये, दर्शन करें।

श्रीरामकृष्ण के चेहरे पर प्रसन्नता की झलक है। आँगन के भीतर से काली-मन्दिर जाते हुए कह रहे हैं, एक गाना है। यह कहकर मधुर कण्ठ से गा रहे हैं—

"मेरी माँ काली थोड़े ही है? वह दिगम्बरा मूर्ति काले रूप से ही हृदयपद्म को प्रकाशित कर देती है.....।"

चाँदनी से आँगन में आकर फिर कह रहे हैं—घर में ज्ञानाग्नि

प्रज्वलित करके ब्रह्ममयी का स्वरूप देखो ।

मन्दिर में आकर श्रीरामकृष्ण ने काली को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया । माता के श्रीचरणों पर जवापुष्प तथा बिल्वदल शोभा दे रहे थे । त्रिनेत्रा भक्तों की स्नेह की दृष्टि से देख रही हैं । हाथों में वर और अभय है । माता बनारसी साड़ी और भाँति-भाँति के अलंकार पहने हुए हैं । श्रीमूर्ति के दर्शन कर भूधर के बड़े भाई ने कहा, 'मैं वह कुछ नहीं जानता । इतना ही जानता हूँ कि यह तो चिन्मयी है ।'

ईश्वरलाभ और कर्मत्याग । नयी हण्डी

श्रीरामकृष्ण अब लौट रहे हैं । बाबूराम को उन्होंने बुलाया । मास्टर भी साथ हो लिये ।

शाम हो गयी है । घर के पश्चिमवाले गोल बरामदे में आकर श्रीरामकृष्ण बैठ गये । भावमग्न हैं, अवस्था अर्धबाह्य है । पास ही बाबूराम और मास्टर हैं ।

आजकल श्रीरामकृष्ण की सेवा ठीक से नहीं होती । उन्हें तकलीफ रहती है । आजकल राखाल नहीं रहते । कोई कोई हैं, परन्तु वे, श्रीरामकृष्ण की उनकी सभी अवस्थाओं में छू नहीं सकते । श्रीरामकृष्ण भावावस्था में कह रहे हैं—'छू—ना—रा—छू—' अर्थात् 'इस अवस्था में और किसी को छूने नहीं दे सकता । तू रहे तो अच्छा हो ।'

पण्डितजी देवताओं के दर्शन करके श्रीरामकृष्ण के कमरे में आये । श्रीरामकृष्ण पश्चिम के गोल बरामदे से कह रहे हैं, तुम कुछ जलपान कर लो । पण्डितजी ने कहा, अभी मुझे सन्ध्या करनी है । श्रीरामकृष्ण भावावेश में मस्त होकर गाने लगे और

उठकर खड़े हो गये।

"गया, गंगा, प्रभास, काशी, कांची, यह सब कौन चाहता है—अगर काली का स्मरण करता हुआ वह अपनी देह त्याग सके? त्रिसन्ध्या की बात लोग कहते हैं, परन्तु वह यह कुछ नहीं चाहता। सन्ध्या खुद उसकी खोज में फिरती रहती है, परन्तु सन्धि कभी नहीं पाती। पूजा, होम, जप और यज्ञ, किसी पर उसका मन लगता ही नहीं।"

श्रीरामकृष्ण प्रेमोन्मत्त होकर कह रहे हैं, सन्ध्या कितने दिन के लिए है?—जब तक ॐ कहते हुए मन लीन न हो जाय।

पण्डितजी–तो जलपान कर लेता हूँ, उसके बाद सन्ध्या करूँगा।

श्रीरामकृष्ण–मैं तुम्हारे बहाव को न रोकूँगा। समय के बिना आये त्याग अच्छा नहीं है। फल बड़ा हो जाता है, तब फूल आप झर जाता है। कच्ची अवस्था में नारियल का पत्ता खींचना न चाहिए। इस तरह तोड़ने से पेड़ खराब हो जाता है।

सुरेन्द्र घर जाने के लिए तैयार हैं। मित्रों को अपनी गाड़ी पर ले जाने के लिए बुला रहे हैं।

सुरेन्द्र–महेन्द्र बाबू, चलियेगा?

श्रीरामकृष्ण की अब भी भावावस्था है। अभी तक पूरी प्राकृत अवस्था नहीं आयी। वे इसी अवस्था में सुरेन्द्र से कह रहे हैं—'तुम्हारा घोड़ा जितना खींच सके, उससे अधिक लोगों को न बैठाना।' सुरेन्द्र प्रणाम करके चले गये।

पण्डितजी सन्ध्या करने गये। मास्टर और बाबूराम कलकत्ता जायेंगे, श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण अब भी भावावेश में हैं।

श्रीरामकृष्ण-(मास्टर से)-बात नहीं निकलती, जरा ठहरो अभी।

मास्टर बैठे। श्रीरामकृष्ण की क्या आज्ञा होती है, इसकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण ने इशारे से बाबूराम से बैठने के लिए कहा। बाबूराम ने मास्टर से कहा, जरा देर और बैठिये। श्रीरामकृष्ण ने बाबूराम से हवा करने के लिए कहा। बाबूराम पंखा झल रहे हैं, और मास्टर भी।

श्रीरामकृष्ण-(मास्टर से, सस्नेह)-तुम अब उतना नहीं आते, क्यों?

मास्टर-जी, कोई खास कारण नहीं है। घर में काम था।

श्रीरामकृष्ण-बाबूराम का घर कहाँ है, यह मैं कल समझा। इसीलिए तो इसे रखने की इतनी कोशिश कर रहा हूँ। चिड़िया समय समझकर अण्डे फोड़ती है। बात यह है कि ये सब शुद्धात्मा लड़के हैं, कभी कामिनी और कांचन में नहीं पड़े। है न?

मास्टर-जी हाँ। अभी तक कोई धब्बा नहीं लगा।

/श्रीरामकृष्ण-नयी हण्डी है, दूध रखा जाय तो बिगड़ नहीं सकता।

मास्टर-जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण-बाबूराम के यहाँ रहने की जरूरत भी है। कभी कभी मेरी अवस्था ऐसी हो जाती है कि उस समय ऐसे आदमियों का रहना जरूरी हो जाता है। उसने कहा है, धीरे धीरे रहूँगा, नहीं तो घरवाले शोरगुल मचायेंगे। मैंने कहा है, शनिवार और रविवार को आ जाया कर।

इधर पण्डितजी सन्ध्या करके आ गये। उनके साथ भूधर

और बड़े भाई भी थे। पण्डितजी अब जलपान करेंगे।

भूधर के बड़े भाई कह रहे हैं, हम लोगों का क्या होगा, जरा कुछ आज्ञा कर दीजिये।

श्रीरामकृष्ण–तुम लोग मुमुक्षु हो। व्याकुलता के होने से ईश्वर मिलते हैं। श्राद्ध का अन्न न खाया करो। संसार में व्यभिचारिणी स्त्री की तरह होकर रहो। व्यभिचारिणी स्त्री घर का सब काम बड़ी प्रसन्नता से करती है, परन्तु उसका मन दिन-रात उसके यार के साथ रहता है। संसार का काम करो, परन्तु मन ईश्वर पर रखो।

पण्डितजी जलपान कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण कहते हैं, आसन पर बैठकर खाओ।

उन्होंने पण्डितजी से फिर कहा, 'तुमने गीता पढ़ी होगी। जिसे सब लोग मानें उसमें ईश्वर की विशेष शक्ति है।'

पण्डितजी–'यद्यत् विभूतिमत् सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा।"

श्रीरामकृष्ण–तुम्हारे भीतर अवश्य ही उनकी शक्ति है।

पण्डितजी–जो व्रत मैंने लिया है, क्या इसे अध्यवसाय के साथ पूरा करने की कोशिश करूँ?

श्रीरामकृष्ण ने जैसे अनुरोध की रक्षा के लिए कहा, 'हाँ होगा,' परन्तु इस बात को दबाने के लिए दूसरा प्रसंग उठा दिया।

श्रीरामकृष्ण–शक्ति को मानना चाहिए। विद्यासागर ने कहा, क्या उन्होंने किसी को ज्यादा शक्ति भी दी है? मैंने कहा, नहीं तो फिर एक आदमी सौ आदमियों को कैसे मार डालता है? क्वीन विक्टोरिया का इतना नाम—इतना नाम क्यों है अगर उनमें शक्ति न होती? मैंने पूछा, तुम यह मानते हो

या नहीं ? तब उसने कहा, हाँ, मानता हूँ ।

पण्डितजी उठे और श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया । साथवाले उनके मित्रों ने भी प्रणाम किया ।

श्रीरामकृष्ण कहते हैं—"फिर आना । गँजेड़ी गँजेड़ी को देखता है, तो खुश होता है; कभी तो उसे गले से लगा लेता है । दूसरे आदमी देखकर मुँह छिपाते हैं । गाय अपने साथ की गायों को देखती है तो उनकी देह चाटती है, पर दूसरी गायों को सिर से ठोकर मारती है ।" (सब हँसते हैं ।)

पण्डितजी के चले जाने पर श्रीरामकृष्ण हँस हँसकर कह रहे हैं—"डाइल्यूट (Dilute = मृदु) हो गया है, एक ही दिन में । देखा, कैसा विनय-भाव है, और सब बातें समझकर ग्रहण कर लेता है ।"

आषाढ़ की शुक्ला सप्तमी है । पश्चिमवाले बरामदे में चाँदनी छिटक रही है । श्रीरामकृष्ण अब भी वहीं बैठे हैं । मास्टर प्रणाम कर रहे हैं । श्रीरामकृष्ण स्नेहपूर्वक पूछ रहे हैं, क्या जाओगे ?

मास्टर—जी हाँ, अब चलता हूँ ।

श्रीरामकृष्ण—एक दिन मैंने सोचा कि सब के यहाँ एक-एक बार जाऊँगा—क्यों ?

मास्टर—जी हाँ, बड़ी कृपा होगी ।

परिच्छेद १४

साधना की आवश्यकता

(१)

पुनर्यात्रा दिन

श्रीरामकृष्ण बलराम बाबू के बैठकखाने में भक्तों के साथ बैठे हुए हैं। श्रीमुख पर प्रसन्नता झलक रही है, भक्तों से बातचीत कर रहे हैं।

आज रथ की पुनर्यात्रा है, दिन बृहस्पति है, ३ जुलाई १८८४, आषाढ़ की शुक्ला दशमी। श्रीयुत बलराम के यहाँ जगन्नाथजी की सेवा होती है, एक छोटा सा रथ भी है। उन्होंने पुनर्यात्रा के उपलक्ष्य में श्रीरामकृष्ण को निमन्त्रण भेजा था। यहाँ छोटा रथ, घर के बाहरवाले दुमंजले बरामदे में चलाया जाता है।

गत २५ जून बुधवार को रथयात्रा का प्रथम दिन था। श्रीरामकृष्ण ने श्रीयुत ईशान मुखोपाध्याय के यहाँ आकर निमन्त्रण स्वीकार किया था। उसी दिन पिछले पहर कालेज स्ट्रीट में भूधर के यहाँ पण्डित शशधर के साथ उनकी पहली मुलाकात हुई थी। तीन दिन की बात है, दक्षिणेश्वर में शशधर श्रीरामकृष्ण से मिले थे।

श्रीरामकृष्ण की आज्ञा पाकर बलराम ने आज शशधर को न्योता भेजा है। पण्डितजी हिन्दूधर्म की व्याख्या करके लोगों को शिक्षा देते हैं।

श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ बातचीत कर रहे हैं। पास

ही राम, मास्टर, बलराम, मनोमोहन, कई बालक भक्त, बलराम के पिता आदि बैठे हैं। बलराम के पिता वैष्णव हैं, बड़े निष्ठावान हैं। वे प्रायः वृन्दावन में अपने ही प्रतिष्ठित कुंज में अकेले रहते हैं और श्रीश्यामसुन्दर विग्रह की सेवा करते हैं। वृन्दावन में वे अपना सारा समय देवसेवा में ही लगाते हैं। कभी कभी चैतन्य-चरितामृत आदि भक्तिग्रन्थों का पाठ करते हैं। कभी किसी भक्तिग्रन्थ की दूसरी लिपि उतारते हैं। कभी बैठे हुए स्वयं ही फूलों की माला तैयार करते हैं। कभी वैष्णवों का निमन्त्रण करके उनकी सेवा करते हैं। श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने के लिए बलराम ने उन्हें पत्र पर पत्र भेजकर कलकत्ता बुलाया है। 'सभी धर्मों में साम्प्रदायिक भाव है, खासकर वैष्णवों में। दूसरे मत वाले एक दूसरे से विरोध करते हैं, वे समन्वय करना नहीं जानते।'—यही बात श्रीरामकृष्ण भक्तों से कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—(बलराम के पिता और दूसरे भक्तों से)—वैष्णवों का एक ग्रन्थ है भक्तमाल, बड़ी अच्छी पुस्तक है। भक्तों की सब बातें उसमें हैं। परन्तु एक ही ढर्रे की है। एक जगह भगवती को विष्णुमन्त्र दिलाया है, तब पिण्ड छोड़ा है!

"मैंने वैष्णवचरण की बड़ी तारीफ करके सेजो बाबू के पास बुलवाया था। सेजो बाबू ने खूब खातिर की। चाँदी के बर्तन निकालकर उन्हीं में उनको जलपान कराया। फिर जब बातें होने लगीं, तब उसने सेजो बाबू के सामने कह डाला—'हमारे केशव-मन्त्र के बिना कुछ होने-जाने का नहीं।' सेजो बाबू देवी के उपासक थे। इतना सुनते ही उनका मुँह लाल हो गया। मैंने वैष्णव चरण का हाथ दबा दिया।

"सुना है कि श्रीमद्भागवत जैसे ग्रन्थ में भी इस तरह की

बातें हैं। 'केशव का मन्त्र बिना लिये भवसागर के पार जाना कुत्ते की पूंछ पकड़कर महासमुद्र पार करना है।' भिन्न-भिन्न मतवालों ने अपने ही मत को प्रधान बतलाया है।

"शाक्त भी वैष्णवों को छोटा सिद्ध करने की चेष्टा करते हैं। श्रीकृष्ण भव-नदी के नाविक हैं, पार कर देते हैं, इस पर शाक्त लोग कहते है—'हाँ, यह बिलकुल ठीक है, क्योंकि हमारी माँ राजराजेश्वरी है, भला वे कभी खुद आकर पार कर सकती हैं?—कृष्ण को पार करने के लिए नौकर रख लिया है।'

(सब हँसते हैं।)

"अपने मत पर लोग अहंकार भी कितना करते हैं! उस देश (कामारपुकुर), श्यामबाजार आदि स्थानों में कोरी बहुत हैं। उनमें बहुत से वैष्णव हैं। वे बड़ी लम्बी लम्बी बातें मारते हैं। कहते हैं, 'अरे ये किस विष्णु को मानते हैं—पाता (पालन-कर्ता) विष्णु को?—उसे तो हम लोग छुयें भी नहीं! कौन शिव?—हम लोग तो आत्माराम शिव—आत्मारामेश्वर शिव को मानते हैं।' कोई दूसरा बोल उठा, 'तुम लोग समझाओ भी तो, किस हरि को मानते हो?' इधर कपड़े बुनते हैं और उधर इतनी लम्बी लम्बी बातें!

"रति की माँ, रानी कात्यायनी की सहचरी है;—वैष्णवचरण के दल की है, कट्टर वैष्णवी। यहाँ बहुत आया-जाया करती थी। भक्ति का खूब दिखलावा था, ज्योंही मुझे उसने काली का प्रसाद पाते हुए देखा कि भागी।

"जिसने समन्वय किया है, वही मनुष्य है। अधिकतर आदमी एक खास ढर्रे के होते हैं। परन्तु मैं देखता हूँ, सब एक हैं। शाक्त, वैष्णव, वेदान्त मत, सब उसी एक को लेकर हैं; जो

साकार हैं वे ही निराकार हैं, उन्हीं के अनेक रूप हैं। 'निर्गुण मेरे पिता हैं, सगुण मेरी माँ; मैं किसकी निन्दा करूँ और किसकी वन्दना, दोनों ही पलड़े भारी हैं।' वेदों में जिनकी बात है उन्हीं की बात तन्त्रों में है और पुराणों में भी उसी एक सच्चिदानन्द की बातें हैं। जो नित्य है, लीला भी उन्हीं की है।

"वेदों में है—ॐ सच्चिदानन्द ब्रह्म। तन्त्रों में है—ॐ सच्चिदानन्दः शिवः—शिवः केवलः—केवलः शिवः। पुराणों में है—ॐ सच्चिदानन्दः कृष्णः। उसी एक सच्चिदानन्द की बात वेदों, पुराणों और तन्त्रों में है। और वैष्णव-शास्त्र में भी है कि कृष्ण स्वयं काली हुए थे।"

(२)

श्रीरामकृष्ण की परमहंस अवस्था—बालकवत् और उन्मादवत्

श्रीरामकृष्ण जरा बरामदे की ओर जाकर फिर कमरे की ओर चले आये। बाहर जाते समय विश्वम्भर की लड़की ने उन्हें नमस्कार किया था, उसकी उम्र छः-सात साल की होगी। कमरे में उनके चले आने पर लड़की उनसे बातचीत कर रही है। उसके साथ और भी दो-तीन उसी की उम्र के लड़के-लड़कियाँ हैं।

विश्वम्भर की लड़की—(श्रीरामकृष्ण से)—मैंने तुम्हें नमस्कार किया, तुमने देखा भी नहीं!

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—कहाँ, मैंने नहीं देखा।

कन्या—तो खड़े हो जाओ, फिर नमस्कार करूँ। खड़े हो जाओ, इधर से भी करूँ।

श्रीरामकृष्ण हँसते हुए बैठ गये और जमीन तक सिर झुकाकर कुमारी को प्रतिनमस्कार किया। श्रीरामकृष्ण ने लड़की को

गाने के लिए कहा। लड़की ने कहा—भाई-कसम, मैं गाना नहीं जानती।

उससे अनुरोध करने पर उसने कहा, भाई-कसम कहने पर फिर कभी कहा जाता है? श्रीरामकृष्ण उनके साथ आनन्द कर रहे हैं और गाना सुना रहे हैं, बच्चों के गीत।

बच्चे और भक्त गाना सुनकर हँस रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण-(भक्तों से)-परमहंस का स्वभाव बिलकुल पाँच साल के बच्चे का-सा होता है। वह सब चेतन देखता है।

"मैं जब उस देश में (कामारपुकुर में) रहता था तब रामलाल का भाई (शिवराम) ४-५ साल का था; तालाब के किनारे पतिंगे पकड़ने जा रहा था। एक पत्ता हिल रहा था। पत्ते की खड़खड़ाहट से शिकार कहीं भाग न जाय, इस विचार से वह पत्ते से कहने लगा—'अरे चुप! मैं पतिंगा पकड़ूँगा।' पानी बरस रहा था और आँधी भी चल रही थी। रह रहकर बिजली चमकती थी, फिर भी द्वार खोलकर वह बाहर जाना चाहता था। डाँटने पर फिर बाहर न गया, झाँक-झाँककर देखने लगा, बिजली चमक रही थी, तो कहा—चाचा, फिर चकमकी घिस रहा है!

"परमहंस बालक की तरह होते हैं—उनके लिए न कोई अपना है, न कोई पराया। सांसारिक सम्बन्ध की कोई परवाह नहीं है। रामलाल के भाई ने एक दिन कहा, तुम चाचा हो या मौसा?

"परमहंसों का चाल-चलन भी बालकों का-सा होता है; कोई हिसाब नहीं रहता कि कहाँ जायँ। सब ब्रह्ममय देखते हैं। कहाँ जा रहे हैं, कहाँ चल रहे हैं, कुछ हिसाब नहीं। रामलाल का भाई हृदय के यहाँ दुर्गापूजा देखने गया था। हृदय के यहाँ से आप

ही आप किसी तरफ चला गया। किसी को दिखाकर पता भी न चला। चार वर्ष के लड़के को देखकर लोग पूछने लगे, तू कहाँ से आ रहा है? वह कुछ न कह सकता था। उसने सिर्फ कहा—चाला* अर्थात् जिस आठ चाले में पूजा हो रही है। जब लोगों ने पूछा, तू किसके यहाँ से आ रहा है? तब उसने कहा—दादा।

"परमहंसों की पागलों की-सी अवस्था भी होती है। दक्षिणेश्वर की मन्दिर-प्रतिष्ठा के कुछ दिन बाद एक पागल आया था। वह पूर्ण ज्ञानी था—फटे जूते पहने था, एक हाथ में बाँस की एक कमची लिये था और दूसरे में गमले में लगा हुआ एक आम का पौधा। गंगा में डुबकी मारकर उठा, न सन्ध्या, न पूजन; कपड़े में कुछ लिये हुए था, वही खाने लगा। फिर कालीमन्दिर में जाकर स्तव करने लगा। मन्दिर काँप उठा था! हलधारी उस समय मन्दिर में था। अतिथिशाला में लोगों ने उसे खाने को नहीं दिया था, परन्तु उसने जरा भी परवाह नहीं की। जूठी पत्तलें खींच खींचकर उनमें जो कुछ लगा था, वही खाने लगा; जहाँ कुत्ते खा रहे थे वहीं कभी-कभी कुत्तों को हटाकर खाता था। कुत्तों ने उसका कुछ नहीं किया। हलधारी उसके पीछे-पीछे गया था। पूछा—'तुम कौन हो? क्या तुम पूर्ण ज्ञानी हो?' तब उसने कहा था—'मैं पूर्ण ज्ञानी हूँ! चुप!'

"मैंने हलधारी से जब ये सब बातें सुनीं, मेरा कलेजा दहलने लगा, मैं हृदय से लिपट गया। माँ से कहा—'माँ, तो क्या यही अवस्था मेरी भी होगी?' हम लोग उसे देखने गये। हम लोगों से खूब ज्ञान की बातें करता था, दूसरे आदमी आते

* बड़े बड़े छप्परों से छाये हुए मकान को बंगाल में 'आठ चाला' अर्थात् आठ चालियों या छप्परोंवाला मकान कहते हैं।

तो वही पागलपन शुरू कर देता था। जब वह गया, तब हलधारी बहुत दूर तक उसके साथ गया था। फाटक पार करते समय उसने हलधारी से कहा था, 'तुझे मैं क्या कहूँ ? जब तलैया और गंगाजी के पानी में भेद-बुद्धि न रह जाय, तब समझना कि पूर्ण ज्ञान हुआ।' इतना कहकर उसने अपना सीधा रास्ता पकड़ा।"

पाण्डित्य की अपेक्षा तपस्या का प्रयोजन। साधना

श्रीरामकृष्ण मास्टर से बातचीत कर रहे हैं। पास ही भक्तगण भी बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण–(मास्टर से)–शशधर को तुम क्या समझते हो ?

मास्टर–जी, बहुत अच्छा।

श्रीरामकृष्ण–बड़ा बुद्धिमान है न ?

मास्टर–जी हाँ, उसमें खूब पाण्डित्य है।

श्रीरामकृष्ण–गीता का मत है, जिसे बहुत से लोग मानते, जानते हैं, उसके भीतर ईश्वर की शक्ति है। परन्तु शशधर के कुछ काम बाकी हैं।

"सूखे पाण्डित्य से क्या होगा ? कुछ तपस्या चाहिए– कुछ साधना चाहिए।

"गौरी पण्डित ने साधना की थी। जब वह स्तुतियाँ पढ़ता था–'ॐ निरालम्बो लम्बोदर'–तब अन्य पण्डित केंचुए हो जाते थे।

"नारायण शास्त्री भी केवल पण्डित नहीं, उसने भी साधना की है।

"नारायण शास्त्री पचीस साल तक एक ही बहाव में

पढ़ा था। सात साल तक सिर्फ न्याय पढ़ा था। फिर भी 'हर हर' कहते ही भावमग्न हो जाता था। जयपुर के महाराजा ने उसे अपना सभापण्डित बनाना चाहा था। उसने वह काम मंजूर नहीं किया। दक्षिणेश्वर में प्रायः आकर रहता था। वशिष्ठाश्रम जाने की उसकी बड़ी इच्छा थी। तपस्या करने के लिए जाने की बात प्रायः मुझसे कहा करता था। मैंने उसे वहाँ जाने के लिए मना किया, तब उसने कहा, किसी दिन दम सतम हो जायेगा, फिर साधना कब करूँगा ? जब उसने हठ पकड़ा, तब मैंने कह दिया—अच्छा जाओ।

"सुनता हूँ, कोई कोई कहते हैं, नारायण शास्त्री का देहान्त हो गया है। तपस्या करते समय किसी भैरव ने चपत मारी थी। कोई कोई कहते हैं, वे बचे हुए हैं, अभी उनको रेल पर सवार कराके हम आ रहे हैं।

"केशव सेन को देखने से पहले नारायण शास्त्री से मैंने कहा, तुम एक बार जाकर उन्हें देख आओ और मुझे बताओ कि वे कैसे आदमी है। वह देखकर जब आया, तब कहा, वह जप करके सिद्ध हो गया है। नारायण ज्योतिष जानता था। उसने कहा, 'केशव सेन भाग्य का बड़ा जबरदस्त है'। मैंने उससे संस्कृत में बातचीत की थी। वह भाषा (बंगाली) बोलता था।

"तब मैं हृदय को साथ लेकर बेलघर के बगीचे में केशव से मिला। उसे देखते ही मैंने कहा था, 'इन्हीं की पूँछ गिर गयी है—ये पानी में भी रह सकते है और जमीन पर भी।'"

श्रीरामकृष्ण पूँछ गिरने की लोकोक्ति के द्वारा कह रहे हैं कि यही केशव है जो संसार में भी रहते हैं और ईश्वर में भी।

"मेरी परीक्षा लेने के लिए तीन ब्राह्मसमाजियों को केशव

ने काली-मन्दिर भेजा। उनमें प्रसन्न भी था। बात यह थी कि वे रात-दिन मुझे देखेंगे और केशव के पास खबर भेजते रहेंगे। मेरे घर में रात को सोये। बस 'दयामय' 'दयामय' करते थे और मुझसे कहते थे, 'तुम केशव बाबू की पैरवी करो तो तुम्हारे लिए अच्छा होगा।' मैंने कहा, 'मैं साकार जो मानता हूँ।' उन्होंने 'दयामय, दयामय' कहना न छोड़ा, तब मेरी एक दूसरी अवस्था हो गयी। उस अवस्था में मैंने कहा—'हटो यहाँ से।' घर के भीतर मैंने उन्हें किसी तरह न रहने दिया। वे सब बरामदे में पड़े रहे।

"कप्तान ने भी जिस दिन मुझे पहले-पहल देखा, उस दिन रात को यहीं रह गया।

"नारायण जब था तब एक दिन माइकेल आया था। मथुर बाबू का बड़ा लड़का द्वारका बाबू उसे अपने साथ ले आया था। मैगजीन के साहबों के साथ मुकदमा होनेवाला था। इस पर सलाह लेने के लिए बाबुओं ने माइकेल को बुलाया था।

"दफ्तर के साथ ही बड़ा कमरा है। वहीं माइकेल से मुलाकात हुई थी। मैंने नारायणशास्त्री को बातचीत करने के लिए कहा। संस्कृत में माइकेल अच्छी तरह बातचीत न कर सका। तब भाषा (बँगला) में बातचीत हुई।

"नारायण शास्त्री ने पूछा, तुमने अपना धर्म क्यों छोड़ा? माइकेल ने पेट दिखाकर कहा, पेट के लिए छोड़ना पड़ा।

"नारायण शास्त्री ने कहा, 'जो पेट के लिए धर्म छोड़ता है, उससे क्या बातचीत करूँ।' तब माइकेल ने मुझसे कहा, आप कुछ कहिये।

"मैंने कहा, न जाने क्यों मेरी कुछ बोलने की इच्छा नहीं

होती। किसी ने मेरा मुंह जैसे दबा रखा हो।"

श्रीरामकृष्ण के दर्शनों के लिए चौधरी बाबू के आने की बात थी।

मनोमोहन-चौधरी नहीं आयेंगे; उन्होंने कहा है, फरीदपुर का वह शराबर जायेगा, अतएव मैं न आऊँगा।

श्रीरामकृष्ण-कैसा नीचप्रकृति है!—विद्या का अहंकार दिखलाता है! उधर दूसरा विवाह किया है—संसार को तिनके बराबर समझने लगा है।

चौधरी ने एम. ए. पास किया है। पहली स्त्री की मृत्यु होने पर बड़ा वैराग्य था। श्रीरामकृष्ण के पास दक्षिणेश्वर प्रायः जाता था। उसने दूसरा विवाह किया है। तीन-चार सौ रुपया महीना पाता है।

श्रीरामकृष्ण-(भक्तों से)-इस कामिनी-कांचन की आसक्ति ने आदमी को नीच बना डाला है। हरमोहन जब पहले आया था तब उसके लक्षण बड़े अच्छे थे। उसे देखने के लिए मेरा जी व्याकुल हो जाता था। तब उसकी उम्र १७-१८ की रही होगी। मैं अक्सर उसे बुला भेजता था, पर वह न आता था। अब बीवी को लेकर अलग मकान में रहता है! जब अपने मामा के यहाँ रहता था, तब बड़ा अच्छा था। संसार की कोई झंझट न थी। अब अलग मकान लेकर रोज बीवी के लिए बाजार करता है। (सब हँसते हैं।) उस रोज वहाँ गया था। मैंने कहा, जा, यहाँ से चला जा, तुझे छूते मेरी देह किस तरह की हो जाती है।

कर्तामजा चन्द्र चैटर्जी आये हैं। उम्र साठ-पैंसठ की होगी। मुख पर कर्तामजावालों के श्लोक रहते हैं। श्रीरामकृष्ण के पैर

दबाने के लिए जा रहे थे, उन्होंने पैर छूने ही न दिये, हँसकर कहा, इस समय तो खूब हिसाबी बातें कर रहा है। भक्तगण हँसने लगे।

अब श्रीरामकृष्ण बलराम के अन्तःपुर में श्रीजगन्नाथ-दर्शन करने के लिए जा रहे हैं। वहाँ की स्त्रियाँ उनके दर्शनों के लिए व्याकुल हो रही हैं।

श्रीरामकृष्ण फिर बैठकखाने में आये। हँस रहे हैं, कहा, "मैं शौच को गया था, कपड़े बदलकर श्रीजगन्नाथ के दर्शन किये और कुछ फूल-दल चढ़ाये।

"विषयी लोगों की पूजा, जप, तप, सब सामयिक हैं। जो लोग ईश्वर के सिवा और कुछ नहीं जानते, वे साँस के साथ-साथ उनका नाम लेते हैं। कोई मन ही मन सदा 'राम ॐ राम' जपता रहता है। ज्ञानमार्गी 'सोऽहम् सोऽहम्' जपते हैं। किसी-किसी की जीभ सदा हिलती रहती है।

"सदा ही स्मरण-मनन रहना चाहिए।"

(४)

शशधर आदि भक्तगण। समाधि में श्रीरामकृष्ण

पण्डित शशधर दो-एक मित्रों के साथ कमरे में आये और श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके आसन ग्रहण किया।

श्रीरामकृष्ण--(सहास्य)--हम लोग वधू-सखियों के समान शय्या के पास बैठे हुए जाग रहे हैं कि कब वर आयें।

पण्डित शशधर हँस रहे हैं। अनेक भक्त उपस्थित हैं। बलराम के पिता भी उपस्थित हैं। डाक्टर प्रताप भी आये हुए हैं। श्रीरामकृष्ण फिर बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण–(शशधर से)–ज्ञान का पहला लक्षण है, स्वभाव शान्त हो; दूसरा, अभिमान न रहे। तुममें दोनों लक्षण हैं।

"ज्ञानी के और भी कुछ लक्षण हैं। साधु के पास वह त्यागी है, कार्य करते समय—जैसे लेक्चर देते हुए—वह सिंह के समान है, स्त्री के पास रसराज है, रसशास्त्र का पण्डित।

(पण्डितजी और दूसरे लोग हँसते हैं।)

"विज्ञानी का और स्वभाव है। जैसे चैतन्यदेव की अवस्था। बालकवत्, उन्मत्तवत्, जड़वत्, पिशाचवत्।

"बालक की अवस्था में कई अवस्थाएँ हैं—बाल्य, कैशोर्य, यौवन। किशोरावस्था में दिल्लगी सूझती है। उपदेश देते समय यौवनावस्था होती है।"

पण्डितजी–किस तरह की भक्ति से वे मिलते हैं?

श्रीरामकृष्ण–प्रकृति के अनुसार भक्ति तीन तरह की है। भक्ति का सत्त्व, भक्ति का रज और भक्ति का तम।

"भक्ति का सत्त्व ईश्वर ही समझ सकते हैं। उस तरह का भक्त भाव छिपाना पसन्द करता है। कभी वह मसहरी के भीतर बैठकर ध्यान करता है। कोई समझ नहीं सकता। सत्त्व का सत्त्व अर्थात् शुद्ध सत्त्व के बन जाने पर फिर ईश्वर-दर्शन में देर नहीं रहती, जैसे पूरब की ओर ललाई छा जाने पर यह समझने में देर नहीं होती कि अब शीघ्र ही सूरज निकलेंगे।

"जिसे भक्ति का रजोभाव होता है, उसकी इच्छा होती है है कि लोग देखें, जानें कि मैं भक्त हूँ। वह षोडशोपचार से उनकी पूजा करता है। रेशम की धोती पहनकर श्रीठाकुर-मन्दिर में जाता है, गले में रुद्राक्ष की माला धारण करता है जिसमें मुक्ता और कहीं कहीं सोने के दाने पड़े रहते हैं।

"भक्ति का तमोभाव वह है जिसमें डाके का मतलब दीख पड़े। डाकू बड़े बड़े हथियार लेकर डाका डालते हैं, आठ थानेदारों को भी नहीं डरते—मुख पर 'मारो—लूट लो' लगा रहता है; पागल की तरह 'बम शंकर' कहते जाते हैं; मन में पूरा भरोसा, पक्का बल और जीता-जागता विश्वास!

"शाक्तों का भी विश्वास ऐसा ही है।—क्या, एक बार मैं काली का नाम ले चुका, दुर्गा को पुकारा, राम-नाम जपा, इतने पर भी मुझे पाप छू ले?

"वैष्णवों के भाव में बड़ी दीनता है। वे लोग बस माला फेरते रहते हैं, रोते-कलपते हुए कहते हैं, हे कृष्ण! दया करो, मैं अधम हूँ, मैं पापी हूँ!

"ज्वलन्त विश्वास चाहिए। ऐसा विश्वास कि मैंने उनका नाम लिया है, मुझे फिर कैसा पाप?—पर कुछ लोग रात-दिन ईश्वर का नाम लेते हैं और कहते हैं—मैं पापी हूँ!"

यह कहते ही श्रीरामकृष्ण का प्रेम-पारावार उमड़ चला। वे गाने लगे। गाना सुनकर दाशरथ की आँखों में आँसू आ गये। गीतों का भाव यह है—

(१) यदि दुर्गा-दुर्गा कहते हुए मेरे प्राण निकलेंगे तो अन्त में इस दीन को तुम कैसे नहीं तारती हो, मैं देखूँगा। ब्राह्मणों का नाश करके, गर्भपात करके, मदिरा पीकर और स्त्री-हत्या करके भी मैं नहीं डरता। मुझे विश्वास है कि इतने पर भी मुझे ब्रह्मपद की प्राप्ति होगी।

(२) शिव के साथ सदा ही रंग करती हुई तू आनन्द में मग्न है। सुधापान करके, तेरे पैर तो लड़खड़ा रहे हैं, पर, माँ, तू गिर नहीं जाती।

अब अधर के गवैये वैष्णवचरण गा रहे हैं—भाव इस प्रकार है।

(१) ऐ मेरी रसने, सदा दुर्गा-नाम का जप कर। बिना दुर्गा के इस दुर्गम मार्ग में और कौन निस्तार करनेवाला है? तुम स्वर्ग हो, मर्त्य और पाताल हो। हरि, ब्रह्मा और द्वादश गोपाल भी तुम्हीं से हुए हैं; ऐ माँ, तुम दसों महाविद्याएँ हो, दस बार तुमने अवतार लिया है। अबकी बार किसी तरह मुझे पार करना ही होगा। माँ, तुम चल हो, अचल हो, तुम सूक्ष्म हो, तुम स्थूल हो, सृष्टि-स्थिति और प्रलय तुम हो, तुम इस विश्व की मूल हो। तुम तीनों लोक की जननी हो, तीनों लोक की त्राणकारिणी हो। तुम सब की शक्ति हो, तुम स्वयं अपनी शक्ति हो।

इस गाने को सुनकर श्रीरामकृष्ण को भावावेश हो गया। गाना समाप्त होने पर खुद गाने लगे। उनके बाद वैष्णवचरण ने फिर गाया। इस बार उन्होंने कीर्तन गाया। कीर्तन सुनते ही श्रीरामकृष्ण निर्वीज समाधि में लीन हो गये। शशधर की आँखों से आँसुओं की धारा बहने लगी।

श्रीरामकृष्ण समाधि से उतरे। गाना भी समाप्त हो गया। शशधर, प्रताप, रामदयाल, राम, मनमोहन आदि बालक भक्त तथा और भी बहुत से आदमी बैठे हैं। श्रीरामकृष्ण मास्टर से कह रहे हैं, तुम लोग कुछ छेड़ते क्यों नहीं? (शशधर से कुछ पूछते क्यों नहीं?)

रामदयाल—(शशधर से)—ब्रह्म की रूप-कल्पना शास्त्रों में है, परन्तु वह कल्पना करते कौन हैं?

शशधर—ब्रह्म स्वयं। वह मनुष्य की कल्पना नहीं।

प्रताप--क्यों, वे रूप की कल्पना क्यों करते हैं ?

श्रीरामकृष्ण--उनकी इच्छा, वे इच्छामय जो हैं। वे किसी से सलाह करके कुछ थोड़े ही करते हैं ? क्यों वे करते हैं, इस बात से हमें क्या मतलब ? बगीचे में आम खाने के लिए आये हो, आम खाओ--कितने पेड़ हैं, कितनी हजार डालियाँ हैं, कितने लाख पत्ते हैं, इस हिसाब से क्या काम ? वृथा तर्क और विचार करने से वस्तुलाभ नहीं होता।

प्रताप--तो अब विचार न करें ?

श्रीरामकृष्ण--वृथा तर्क और विचार न करो। हाँ, सदसत् का विचार करो कि क्या नित्य है और क्या अनित्य--काम, क्रोध और शोक आदि के समय में।

पण्डितजी--वह और चीज है, उसे विवेकात्मक विचार कहते हैं।

श्रीरामकृष्ण--हाँ, सदसत् विचार। (सब चुप हैं।)

श्रीरामकृष्ण--(पण्डितजी से)--पहले बड़े बड़े आदमी आते थे।

पण्डितजी--क्या धनी आदमी ?

श्रीरामकृष्ण--नहीं, बड़े बड़े पण्डित।

इतने में छोटा रथ बाहर के दुमंजले वाले बरामदे में लाया गया। श्रीजगन्नाथ, बलराम और सुभद्रादेवी पर अनेक प्रकार की फूल-मालाएँ पड़ी हुई उनकी शोभा बढ़ा रही हैं। सब नये नये अलंकार और नये नये वस्त्र धारण किये हुए हैं। बलराम की सात्त्विक पूजा होती है। उसमें कोई आडम्बर नहीं किया जाता। बाहर के आदमियों को जरा भी खबर नहीं कि भीतर रथ चल रहा है।

श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ रथ के सामने आये। उसी बरामदे में रथ खींचा जायगा। श्रीरामकृष्ण ने रथ की रस्सी पकड़ी और कुछ देर खींचा। फिर गाने लगे।

(भावार्थ)—"श्रीगौरांग के प्रेम की हिलोरों में नदिया डाँवाडोल हो रहा है।"

श्रीरामकृष्ण नृत्य कर रहे हैं। भक्तगण भी उनके साथ नाचते हुए गा रहे हैं। कीर्तनिया वैष्णवचरण भी सब में मिल गये।

देखते ही देखते सारा बरामदा भर गया। स्त्रियाँ भी पासवाले कमरे से यह सब आनन्द देख रही हैं। मालूम हो रहा था कि श्रीवास के घर में भगवत्प्रेम से विह्वल होकर श्रीगौरांग भक्तों के साथ नृत्य कर रहे हैं। मित्रों के साथ पण्डितजी भी रथ के सामने खड़े हुए इस नृत्य-गीत का दर्शन कर रहे हैं।

अभी शाम नहीं हुई है। श्रीरामकृष्ण बैठकखाने में चले आये। भक्तों के साथ आसन ग्रहण किया।

श्रीरामकृष्ण—(पण्डितजी से)—इसे भजनानन्द कहते हैं। संसारी लोग विषयानन्द में मग्न रहते हैं—वह कामिनी-कांचन का आनन्द है। भजन करते ही करते जब उनकी कृपा होती है, तब वे दर्शन देते हैं—तब उसे ब्रह्मानन्द कहते हैं। —

शशधर और भक्तमण्डली चुपचाप सुन रही है।

पण्डितजी—(विनयपूर्वक)—अच्छा जी, किस तरह व्याकुल होने पर मन की यह सरस अवस्था होती है?

श्रीरामकृष्ण—ईश्वर के दर्शन के लिए जब प्राण डूबते-उतराते रहते हैं, तब वह व्याकुलता होती है। गुरु ने शिष्य से कहा, आओ, तुम्हें दिखा दें, किस तरह व्याकुल होने पर वे

मिलते हैं। इतना कहकर वे शिष्य को एक तालाब के किनारे ले गये। वहाँ उसे पानी में डुबाकर ऊपर से दबा रखा। थोड़ी देर बाद शिष्य को निकालकर उन्होंने पूछा, कहो, तुम्हारा जी कैसा हो रहा था? उसने कहा, 'मुझे तो ऐसा मालूम हो रहा था कि मानो मेरे प्राण निकल रहे हों। एक बार साँस लेने के लिए मैं छटपटा रहा था।'

पण्डितजी—हाँ हाँ, ठीक है, अब मैं समझा।

श्रीरामकृष्ण—ईश्वर को प्यार करना, यही सार वस्तु है। भक्ति एकमात्र सार वस्तु है। नारद ने राम से कहा, 'ऐसा करो कि तुम्हारे पादपद्मों में मेरी सदा शुद्धा भक्ति रहे। और मैं तुम्हारे समान संसार को मुग्ध कर लेनेवाली तुम्हारी माया में न पड़ूँ।' श्रीरामचन्द्र ने कहा, कोई दूसरा वर लो। नारद ने कहा, 'मुझे और कुछ न चाहिए। तुम्हारे पादपद्मों में भक्ति रहे—इतना ही बहुत है।'

पण्डितजी जानेवाले हैं। श्रीरामकृष्ण ने कहा, इनके लिए गाड़ी मँगवा दो।

पण्डितजी—जी नहीं, हम लोग ऐसे ही चले जायेंगे।

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—कभी ऐसा भी हो सकता है?— 'ब्रह्मा भी तुम्हें ध्यान में नहीं पाते'—

पण्डितजी—अभी जाने की कोई जरूरत न थी, परन्तु सन्ध्या अभी करनी है।

श्रीरामकृष्ण—"माँ की इच्छा से मेरे सन्ध्यादि कर्म छूट गये हैं। सन्ध्यादि के द्वारा देह और मन की शुद्धि की जाती है। वह अवस्था अब नहीं।" यह कहकर श्रीरामकृष्ण ने गाने के एक चरण की आवृत्ति की।

(भावार्थ) "शुचिता और अशुचिता के साथ दिव्यभवन में तू कब सोयेगा ? उन दोनों सौतों में जब प्रीति होगी तभी तू श्यामा माँ को पा सकेगा ।"

पण्डित शशधर प्रणाम करके विदा हुए ।

राम-कल मैं शशधर के पास गया था, आपने कहा था ।

श्रीरामकृष्ण-कहाँ, मैंने तो नहीं कहा; परन्तु तुम गये सो अच्छा किया ।

राम-एक संवाद-पत्र (Indian Empire) का सम्पादक आपकी निन्दा कर रहा था ।

श्रीरामकृष्ण-तो इससे क्या हुआ, की होगी ।

राम-और भी तो सुनिये । मुझसे आपकी बात सुनकर मुझे छोड़ता ही न था, आपकी बात और सुनना चाहता था ।

प्रताप अब भी बैठे हुए हैं । श्रीरामकृष्ण ने उनसे कहा, वहाँ एक बार जाना, भुवन ने कहा है, भाड़ा दूँगा ।

शाम हो गयी है । श्रीरामकृष्ण जगज्जननी का नाम ले रहे हैं । कभी रामनाम करते हैं, कभी कृष्णनाम, कभी हरिनाम । भक्तगण चुपचाप सुन रहे हैं । इतने मधुर कण्ठ से नाम ले रहे हैं, जैसे मधु की वर्षा हो रही हो । आज बलराम का मकान नवद्वीप हो रहा है । बाहर नवद्वीप और भीतर वृन्दावन ।

आज रात को ही श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर जायेंगे । बलराम उन्हें अन्तःपुर में लिये जा रहे हैं, जलपान कराने के लिए । इस सुयोग में स्त्रियाँ भी उनके दर्शन कर लेंगी ।

इधर बाहर के बैठकखाने में भक्तगण उनकी प्रतीक्षा करते हुए एक साथ कीर्तन करने लगे । श्रीरामकृष्ण भी बाहर आकर उनके साथ मिल गये । खूब कीर्तन होने लगा ।

परिच्छेद १५

श्रीरामकृष्ण तथा समन्वय

(१)

कुण्डलिनी और षट्चक्र-भेद

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर में दोपहर के भोजन के बाद भक्तों के साथ बैठे हैं। दिन के दो बजे होंगे।

शिवपुर से बाउलों (एक तरह के गानेवालों) का दल और भवानीपुर से भक्तगण आये हुए हैं। श्रीयुत राखाल, लाटू और हरीश आजकल हमेशा यहीं रहते हैं। कमरे में बलराम और मास्टर हैं।

आज श्रावण की शुक्ला द्वादशी है, ३ अगस्त १८८४। झूलनयात्रा का दूसरा दिन है। कल श्रीरामकृष्ण सुरेन्द्र के घर गये थे। वहाँ शशधर आदि भक्त भी आपके दर्शन करने के लिए आये थे।

श्रीरामकृष्ण शिवपुर के भक्तों से बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—कामिनी और कांचन में मन पड़ा रहा तो योग नहीं होता। साधारण जीवों का मन लिंग, गुदा और नाभि में रहता है। बड़ी साधना करने के बाद कहीं कुण्डलिनी शक्ति जाग्रत होती है। नाड़ियां तीन हैं, इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना। सुषुम्ना के भीतर छः पद्म हैं। सब से नीचे वाले पद्म को मूलाधार कहते हैं। उसके ऊपर हैं स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्ध और आज्ञा। इन्हें षट्चक्र कहते हैं।

"कुण्डलिनी-शक्ति जब जागती है तब वह मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, इन सब पद्मों को क्रमशः पार करती हुई हृदय के अनाहत पद्म में आकर विश्राम करती है। जब लिंग, गुह्य और नाभि से मन हट जाता है, तब ज्योति के दर्शन होते हैं। साधक आश्चर्यचकित होकर ज्योति देखता है और कहता है, 'यह क्या, यह क्या!'

"छहो चक्रों का भेद हो जाने पर कुण्डलिनी सहस्रार पद्म में पहुँच जाती है; तब समाधि होती है।

"वेदों के मत से ये सब चक्र एक एक भूमि हैं। इस तरह सात भूमियाँ हैं। हृदय चौथी भूमि है। हृदयवाले अनाहत-पद्म के बारह दल हैं।

"विशुद्ध-चक्र पाँचवीं भूमि है। जब मन यहाँ आता है तब केवल ईश्वरी प्रसंग कहने और सुनने के लिए प्राण व्याकुल होते हैं। इस चक्र का स्थान कण्ठ है। यह पद्म सोलह दलों का है। जिसका मन इस चक्र पर आया है, उसके सामने अगर विषय की बातें—कामिनी और काचन की बातें होती हैं, तो उसे बड़ा कष्ट होता है। उस तरह की बातें सुनकर वह वहाँ से उठ जाता है।

"इसके बाद छठी भूमि है आज्ञाचक्र। यह दो दलों का है। कुण्डलिनी जब यहाँ पहुँचती है, तब ईश्वरी रूप के दर्शन होते हैं। परन्तु फिर भी कुछ ओट रह जाती है, जैसे लालटेन के भीतर की बत्ती, जान तो पड़ता है कि हम बत्ती पकड़ सकते हैं, परन्तु शीशे के भीतर है—एक पर्दा है, इसलिए छुई नहीं जाती।

"इससे आगे चलकर सातवीं भूमि है सहस्रार पद्म। कुण्डलिनी के वहाँ जाने पर समाधि होती है। सहस्रार में

सच्चिदानन्द शिव हैं, वे शक्ति के साथ मिलित हो जाते हैं। शिव और शक्ति का मेल।

"सहस्रार में मन के आने पर निर्बीज समाधि होती है। तब बाह्यज्ञान कुछ भी नहीं रह जाता। मुख में दूध डालने से दूध गिर जाता है। इस अवस्था में रहने पर इक्कीस दिन में मृत्यु हो जाती है। काले पानी में जाने पर जहाज फिर नहीं लौटता।'

"ईश्वरकोटि और अवतारी पुरुष ही इस अवस्था से उतर सकते हैं। वे भक्ति और भक्त लेकर रहते हैं, इसीलिए उतर सकते हैं। ईश्वर उनके भीतर 'विद्या का मैं'—'भक्त का मैं' केवल लोकशिक्षा के लिए रख देते हैं। उनकी अवस्था फिर ऐसी होती है कि छठी और सातवीं भूमि के भीतर ही वे चक्कर लगाया करते हैं।

"समाधि के बाद कोई कोई इच्छापूर्वक 'विद्या का मैं' रख छोड़ते हैं। उस 'मैं' में कोई मजबूत पकड़ नहीं है, वह 'मैं' की एक रेखा मात्र है।

"हनुमान ने साकार और निराकार के दर्शनों के बाद 'दास मैं' रखा था। नारद, सनक, सनन्द, सनातन, सनत्कुमार आदि लोगों ने भी ब्रह्म-साक्षात्कार के बाद 'दास मैं', 'भक्त मैं' रख छोड़ा था। ये सब जहाज की तरह हैं। स्वयं भी पार जाते हैं और साथ बहुत से आदमियों को भी पार ले जाते हैं।

"परमहंस निराकारवादी भी हैं और साकारवादी भी। निराकारवादी जैसे त्रैलिंगस्वामी। इनके जैसे परमहंस केवल अपने ही हित के लिए चिन्ता करते हैं। यदि उन्हें स्वयं को ब्रह्म-प्राप्ति हो जाती है तो वे उसी से सन्तुष्ट हो जाते हैं।

"ब्रह्मज्ञान के बाद भी जो लोग साकारवादी होते हैं, वे

लोकशिक्षा के लिए भक्ति लेकर रहते हैं। वे उस घड़े के सदृश हैं जो मुँह तक लबालब भरा है। उसमें से थोड़ा पानी किसी दूसरे बर्तन में भी डाला जा सकता है।

"इन लोगों ने जिन साधनाओं के द्वारा ईश्वर को प्राप्त किया है, उनकी बातें लोक-शिक्षा के लिए कही जाती हैं। इस तरह लोगों का कल्याण होता है। पानी पीने के लिए बड़ी मेहनत करके कुआँ खोदा गया, फावड़ा और कुदार लेकर। कुआँ खुद जाने पर कोई कोई कुदार आदि उसी में छोड़ देते हैं, क्योंकि फिर खोदने की कोई जरूरत नहीं रही। परन्तु कोई कोई कन्धे में डाले फिरते हैं, दूसरे के उपकार के लिए।

"कोई आम छिपाकर खाता है, फिर मुँह पोंछकर लोगों से मिलता है, और कोई कोई दूसरे को देकर खाते हैं, लोक-शिक्षा के लिए भी और लोगों को स्वाद चखाने के लिए भी। मैं चीनी खाना अधिक पसन्द करता हूँ, चीनी बन जाना नहीं।

"गोपियों को भी ब्रह्मज्ञान हुआ था, परन्तु वे ब्रह्मज्ञान नहीं चाहती थीं। वे ईश्वर का संभोग करना चाहती थीं, कोई वात्सल्यभाव से, कोई सख्यभाव से, कोई मधुरभाव से और कोई दासीभाव से।"

शिवपुर के भक्त गोपीयन्त्र बजाकर गा रहे हैं। पहले गाने में कह रहे हैं, "हम लोग पापी हैं, हमारा उद्धार करो।"

श्रीरामकृष्ण-(भक्तों से)-भय दिखाकर या भय खाकर ईश्वर की भक्ति करना प्रवर्तकों का भाव है। उन्हें पा जाने के गीत गाओ। आनन्द के गाने। (राखाल से) नवीन नियोगी के यहाँ उस दिन कैसा गाना हो रहा था?—'नाम की मदिरा पीकर मस्त हो जाओ।'

"केवल अशान्ति की बात भी नहीं सुहाती। ईश्वर को लेकर आनन्द करना, उन्हें लेकर मस्त हो रहना।"

शिवपुर के भक्त–क्या आपका एक-आध गाना न होगा ?

श्रीरामकृष्ण–मैं क्या गाऊँगा ? अच्छा, जब भाव आ जायगा तब मैं गाऊँगा।

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण गाने लगे। गाते हुए आप ऊर्ध्वदृष्टि हैं। आपने कई गाने गाये। एक का भाव नीचे दिया जाता है।

"श्यामा माँ ने कैसी कल बनायी है। वह साढ़े तीन हाथ की कल के भीतर कितने ही रंग दिखा रही है। वह स्वयं कल के भीतर रहती है और डोर पकड़कर अपनी इच्छा के अनुसार उसे घुमाती रहती है—परन्तु कल कहती है, मैं खुद घूम रही हूँ। वह नहीं जानती कि घुमानेवाली कोई दूसरी ही है। जिसने कल का हाल मालूम कर लिया है, उसे फिर कल नहीं बनना पड़ता। किसी किसी कल की भक्ति की डोर से तो श्यामा माँ स्वयं आकर बँध जाती है।"

(२)

समाधि में श्रीरामकृष्ण। प्रेमतत्त्व

यह गाना गाते हुए श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये। भक्तगण स्तब्ध भाव से निरीक्षण कर रहे हैं। कुछ देर बाद कुछ प्राकृत दशा के आने पर श्रीरामकृष्ण माता के साथ वार्तालाप करने लगे।

"माँ, ऊपर से (सहस्रार से) यहाँ उतर आओ!—क्यों जलाती हो!—चुपचाप बैठो।

"माँ, जिसके जो संस्कार हैं, वे तो होकर ही रहेंगे।—मैं और इससे क्या कहूँ? विवेक-वैराग्य के हुए बिना कुछ होता नहीं।

"वैराग्य कितने ही तरह के हैं। एक ऐसा है जिसे मर्कटवैराग्य कहते हैं, वह वैराग्य संसार की ज्वाला से जलकर होता है, वह अधिक दिन नहीं टिकता। और सच्चा वैराग्य भी है। एक व्यक्ति के पास सब कुछ है, किसी वस्तु का अभाव नहीं, फिर भी उसे सब कुछ मिथ्या जान पड़ता है।

"वैराग्य एकाएक नहीं होता। समय के आये बिना नहीं होता। परन्तु एक बात है, वैराग्य के सम्बन्ध में सुन लेना चाहिए। जब समय आयेगा, तब इसकी याद होगी कि हाँ, कभी सुना था।

"एक बात और है। इन सब बातों को सुनते सुनते विषय की इच्छा थोड़ी थोड़ी करके घटती जाती है। शराब के नशे को घटाने के लिए थोड़ा थोड़ा चावल का पानी पिया जाता है। इस तरह धीरे-धीरे नशा घटता रहता है।

"ज्ञानलाभ करने के अधिकारी बहुत ही कम हैं। गीता में कहा है—हजारों आदमियों में कहीं एक उनके जानने की इच्छा करता है। और ऐसी इच्छा करनेवाले हजारों में से कहीं एक ही उन्हें जान पाता है।"

तान्त्रिक भक्त—'मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद् यतति सिद्धये' आदि।

श्रीरामकृष्ण—संसार की आसक्ति जितनी ही घटती जायगी, ज्ञान भी उतना ही बढ़ता जायगा। आसक्ति अर्थात् कामिनी और कांचन की आसक्ति।

"प्रेम सभी को नहीं होता । गौरांग को हुआ था । जीवों को भाव हो सकता है । बस ईश्वरकोटि को—जैसे अवतारों को —प्रेम होता है । प्रेम के होने पर संसार तो मिथ्या जान पड़ेगा ही, किन्तु इतने प्यार की वस्तु जो यह शरीर है, यह भी भूल जायगा ।

"पारसियों के ग्रन्थ में लिखा है, चमड़े के भीतर मांस है, मांस के भीतर हड्डियाँ, हड्डियों के भीतर मज्जा, इसके बाद और भी न जाने क्या क्या; और सब के भीतर प्रेम !

"प्रेम से मनुष्य कोमल हो जाता है । प्रेम से कृष्ण त्रिभंग हो गये हैं ।

"प्रेम के होने पर सच्चिदानन्द को बाँधनेवाली रस्सी मिल जाती है । उसे पकड़कर खींचने ही से हुआ । जब बुलाओगे तभी पाओगे ।

"भक्ति के पकने पर भाव होता है । भाव के पकने पर सच्चिदानन्द को सोचकर वह निर्वाक् रह जाता है । जीवों के लिए बस यहीं तक है । और फिर भाव के पकने पर महाभाव या प्रेम होता है । जैसे कच्चा आम और पका हुआ आम ।

"शुद्धा भक्ति ही एकमात्र सार वस्तु है और सब मिथ्या है ।

"नारद के स्तुति करने पर श्रीरामचन्द्र ने कहा, तुम वरदान लो । नारद ने शुद्धा भक्ति माँगी और कहा, हे राम, अब ऐसा करो जिससे तुम्हारी भुवनमोहिनी माया से मुग्ध न हो जाऊँ । राम ने कहा, यह तो जैसे हुआ, दूसरा वर माँगो ।

"नारद ने कहा, और कुछ न चाहिए, केवल भक्ति की प्रार्थना है ।

"यह भक्ति भी कैसे हो ? पहले साधुओं का संग करना चाहिए । सत्संग करने पर ईश्वरी बातों पर श्रद्धा होती है ।

श्रद्धा के बाद निष्ठा है, तब ईश्वर की बातों को छोड़ और कुछ सुनने की इच्छा नहीं होती। उन्हीं के काम करने को जी चाहता है।

"निष्ठा के बाद भक्ति है, इसके बाद भाव, फिर महाभाव और वस्तुलाभ।

"महाभाव और प्रेम अवतारों को होता है। संसारी जीवों का ज्ञान, भक्तों का ज्ञान और अवतार-पुरुषों का ज्ञान बराबर नहीं। संसारी जीवों का ज्ञान जैसे दीपक का उजाला है। उससे घर के भीतर ही प्रकाश होता है और वहीं की चीजें देखी जा सकती हैं। उस ज्ञान से खाना-पीना, घर-गृहस्थी का काम सम्हालना, शरीर की रक्षा, सन्तान-पालन, बस यही सब होता है।

"भक्त का ज्ञान जैसे चाँदनी; भीतर भी दिखायी पड़ता है और बाहर भी; परन्तु बहुत दूर की चीज या बहुत छोटी चीज नहीं दिखायी देती। अवतार आदि का ज्ञान मानो सूर्य का प्रकाश है। भीतर-बाहर छोटी-बड़ी वस्तु, सभी दिखायी देती हैं।

"यह सच है कि संसारी जीवों का मन गदले पानी की तरह बना हुआ है। परन्तु फिटकरी छोड़ने पर वह साफ हो सकता है। विवेक और वैराग्य उनके लिए फिटकरी है।"

अब श्रीरामकृष्ण शिवपुर के भक्तों से बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण--आप लोगों को कुछ पूछना हो तो पूछिये।

भक्त--जी! सब तो सुन रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण--सुन रखना अच्छा है, परन्तु समय के बिना हुए होता नहीं।

"जब ज्वर बहुत रहता है, तब कुनैन देने से क्या होगा?

फीवर-मिक्श्चर देकर दस्त कराने पर जब बुखार कुछ उतर जाता है, तब कुनैन दी जा सकती है।

"और किसी किसी का बुखार ऐसे भी अच्छा हो जाता है। कुनैन नहीं देनी पड़ती।

"लड़के ने सोते समय अपनी माँ से कहा था, माँ, जब मुझे टट्टी की हाजत हो तब जगा देना। उसकी माँ ने कहा, बेटा, टट्टी की हाजत तुम्हें स्वयं उठा देगी।

"कोई कोई यहाँ आता है, देखता हूँ, वह किसी भक्त के साथ नाव पर चढ़कर आता है, परन्तु ईश्वर की बातें उसे नहीं सुहातीं। वह सदा अपने मित्र को कोंचता रहता है, कि कब उठे। जब उसका मित्र किसी तरह न उठा तब उसने कहा, अच्छा तो तुम यहाँ बैठो, मैं तब तक चलकर नाव पर बैठता हूँ।

"जिन्हें पहली ही बार आदमी का चोला मिला है, उन्हें भोग की आवश्यकता है। कुछ काम जब तक किये हुए नहीं होते तब तक चेतना नहीं आती।"

श्रीरामकृष्ण झाऊतल्ले की ओर जायेंगे। गोल बरामदे में मास्टर से कह रहे हैं—

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—अच्छा, यह मेरी कैसी अवस्था है?

मास्टर—(सहास्य)—जी, बाहर से देखने में तो आपकी सहज अवस्था है, परन्तु भीतर बड़ी गम्भीर है—आपकी अवस्था समझना बड़ा कठिन है।

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—हाँ, जैसे पक्की फर्श; लोग ऊपर तो देखते हैं, परन्तु भीतर क्या है, यह नहीं जानते।

चाँदनीवाले घाट में बलराम आदि कुछ भक्त कलकत्ता जाने

के लिए नाव पर चढ़ रहे हैं। दिन का तीसरा प्रहर है, चार बजे होंगे। गंगा में भाटा है, उस पर दक्षिणवाली हवा बह रही है। गंगा का वक्षस्थल तरंगों से शोभित हो रहा है।

बलराम की नौका बागबाजार की ओर जा रही है। मास्टर बड़ी देर से खड़े हुए देख रहे हैं।

नाव जब दृष्टि से ओझल हो गयी, तब वे श्रीरामकृष्ण के पास लौट आये।

श्रीरामकृष्ण पश्चिमवाले बरामदे से उतर रहे हैं। झाऊतल्ला जायेंगे। उत्तर-पश्चिम के कोने में बड़े ही सुहावने मेघ उमड़े हुए हैं। श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं—क्या वर्षा होगी? जरा छाता ले के जाओ। मास्टर छाता ले आये। लाटू भी साथ है।

श्रीरामकृष्ण पंचवटी में आये। लाटू से कह रहे हैं—तू दुबला क्यों हुआ जा रहा है?

लाटू—कुछ खाया नहीं जाता।

श्रीरामकृष्ण—क्या बस? [illegible] बड़ा खराब है—और शायद तू अधिक [illegible] सभी दिखाई.

(मास्टर से) "यह भार तुम [illegible] से कहना राखाल के चले जाने पर दो-एक दिन के लिए आकर रह जाया करे, नहीं तो मेरे मन में बड़ी अशान्ति रहेगी।"

मास्टर—जी हाँ, मैं कह दूँगा।

सरल होने पर ही ईश्वर मिलते हैं। श्रीरामकृष्ण पूछ रहे हैं, बाबूराम सरल है न?

श्रीरामकृष्ण झाऊतल्ले से दक्षिण ओर आ रहे हैं। मास्टर और लाटू पंचवटी के नीचे उत्तर दिशा की ओर मुँह किये खड़े हैं।

श्रीरामकृष्ण के पीछे नये नये बादलों की छाया गंगा के

विशाल वक्ष पर पड़ रही है, अपूर्व शोभा है ! गंगाजल काला-सा दिख रहा है ।

(३)
श्रीरामकृष्ण तथा विरोधी शास्त्रों का समन्वय

श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में आकर बैठे । बलराम आम ले आये थे । श्रीरामकृष्ण श्रीयुत राम चैटर्जी से कह रहे हैं, अपने लड़के के लिए कुछ आम लेते जाओ । कमरे में श्रीयुत नवाई चैतन्य बैठे हैं । ये लाल रंग की धोती पहनकर आये हैं ।

उत्तरवाले लम्बे बरामदे में श्रीरामकृष्ण हाजरा से वार्तालाप कर रहे हैं । ब्रह्मचारी ने श्रीरामकृष्ण को हरताल भस्म दिया है । वही बात हो रही है ।

श्रीरामकृष्ण—ब्रह्मचारी की दवा मुझ पर खूब असर करती है । आदमी सच्चा है ।

हाजरा—परन्तु बेचारा संसार में पड़ गया—क्या करे ! कोन्नगर से नवाई चैतन्य आये हुए हैं । परन्तु संसारी होकर लाल धोती पहनना !

श्रीरामकृष्ण—क्या कहूँ ! मैं देखता हूँ, ये सब मनुष्य-रूप ईश्वर ने स्वयं धारण किये हैं, इसी कारण किसी को कुछ कह नहीं सकता ।

श्रीरामकृष्ण फिर कमरे के भीतर आये । हाजरा से नरेन्द्र की बात कह रहे हैं ।

हाजरा—नरेन्द्र फिर मुकदमे में पड़ गया है ।

श्रीरामकृष्ण—शक्ति नहीं मानता । देह धारण करके शक्ति को मनाना चाहिए ।

हाजरा—नरेन्द्र कहता है, मैं मानूंगा तो फिर सभी लोग मानने लगेंगे, इसीलिए मैं नहीं मान सकता।

श्रीरामकृष्ण—इतना बढ़ना अच्छा नहीं। अब तो शक्ति के ही इलाके में आया है। जज साहब भी जब गवाही देते हैं, तब उन्हें गवाहियों के कटघरे पर उठकर खड़ा होना पड़ता है।

श्रीरामकृष्ण मास्टर से कह रहे हैं—"क्या तुमसे नरेन्द्र की भेंट नहीं हुई?"

मास्टर—जी नहीं, इधर नहीं हुई।

श्रीरामकृष्ण—एक बार मिलना और गाड़ी पर बिठाकर ले आना। (हाजरा से) "अच्छा यहाँ उसका क्या सम्बन्ध है?"

हाजरा—आपसे उसे सहायता मिलेगी।

श्रीरामकृष्ण—और भवनाथ? शुभ संस्कार के हुए बिना यहाँ कभी इतना आ सकता है?

"अच्छा, हरीश और लाटू सदा ही ध्यान किया करते हैं, यह कैसा?"

हाजरा—हाँ, ठीक तो है, सदा ध्यान करना कैसा? यहाँ रहकर आपकी सेवा करें, तो बात दूसरी है।

श्रीरामकृष्ण—शायद तुम ठीक कहते हो। लेकिन कोई बात नहीं। कोई उनकी जगह दूसरा आ जायगा।

हाजरा कमरे से चले गये। अभी सन्ध्या होने में देर है। श्रीरामकृष्ण कमरे में बैठे हुए भक्तों के साथ एकान्त में बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—(मणि से)—अच्छा, भाव की अवस्था में मैं जो कुछ कहता हूँ, क्या इससे लोग आकर्षित होते हैं?

मणि—जी हाँ, खूब होते हैं।

श्रीरामकृष्ण–आदमी क्या सोचते हैं ? भाववाली अवस्था दिखने पर क्या कुछ समझ में आता है ?

मणि–जान पड़ता है, एक ही आधार में ज्ञान, प्रेम, वैराग्य और सहज अवस्था विराजमान हैं। भीतर कितनी उथलपुथल मच गयी है, फिर भी बाहर से सहज भाव दीख पड़ता है। यह अवस्था बहुतेरे नहीं समझ सकते। परन्तु कुछ लोग उसी पर आकृष्ट होते हैं।

श्रीरामकृष्ण–घोषपाड़ा के मत में ईश्वर को सहज कहते हैं। और कहते हैं, सहज हुए बिना सहज को कोई पहचान नहीं सकता।

(मणि से) "अच्छा मुझमें अभिमान है ?"

मणि–जी हाँ, कुछ है, शरीर की रक्षा और भक्ति तथा भक्तों के लिए—ज्ञानोपदेश के लिए। यह भी तो आपने प्रार्थना करके रखा है।

श्रीरामकृष्ण–मैंने नहीं रखा, उन्होंने रख छोड़ा है। अच्छा भावावेश के समय क्या होता है ?

मणि–आपने उस समय कहा, मन के छठी भूमि पर जाने से ईश्वरी रूप के दर्शन होते हैं। फिर जब आप बातचीत करते हैं, तब मन पाँचवीं भूमि पर उतर आता है।

श्रीरामकृष्ण–वे ही सब कर रहे हैं। मैं कुछ नहीं जानता।

मणि–जी हाँ, इसीलिए तो इतना आकर्षण है।

"देखिये, शास्त्रों में दो तरह से कहा है। एक पुराण के मत में श्रीकृष्ण चिदात्मा हैं और श्रीराधा चित्‌शक्ति। एक दूसरे पुराण में श्रीकृष्ण को ही काली और आद्याशक्ति कहा है।"

श्रीरामकृष्ण–देवी पुराण के मत से काली ने ही कृष्ण का

स्वरूप धारण किया है ।

"तो इससे क्या हुआ ? वे अनन्त हैं और उनके मार्ग भी अनन्त हैं ।"

मणि–अब मैं समझा, आप जैसा कहते हैं, छत पर चढ़ना ही इष्ट है, चाहे जिस तरह चढ़ सको—जीने से या बाँस लगाकर अथवा रस्सी पकड़कर ।

श्रीरामकृष्ण–यह जिसने समझा है, उस पर ईश्वर की दया है । ईश्वर की कृपा हुए बिना कभी संशय दूर नहीं होता ।

"बात यह है कि किसी तरह उन पर भक्ति होनी चाहिए, प्यार होना चाहिए । अनेक खबरों से काम क्या है ? एक रास्ते से चलते चलते अगर उन पर प्यार हो जाय तो काम बन गया । प्यार के होने से ही उन्हें आदमी पाता है । इसके बाद अगर जरूरत होगी तो वे समझा देंगे—सब रास्तों की खबर बतला देंगे । ईश्वर पर प्यार होने ही से काम हुआ—तरह तरह के विचारों की क्या आवश्यकता है ? आम खाने के लिए आये हो आम खाओ, कितनी डालियाँ हैं, कितने पत्ते हैं, इन सब के हिसाब से क्या मतलब ? हनुमान का भाव चाहिए—'मैं वार, तिथि, नक्षत्र, यह सब कुछ नहीं जानता, मैं तो बस श्रीरामचन्द्रजी का स्मरण किया करता हूँ ।' "

मणि–इस समय ऐसी इच्छा होती है कि कर्म बिलकुल घट जायँ और ईश्वर की तरफ मन लगाऊँ ।

श्रीरामकृष्ण–अहा ! यह होगा क्यों नहीं ?

"परन्तु ज्ञानी निर्लिप्त होकर संसार में रह सकता है ।"

मणि–जी हाँ, परन्तु निर्लिप्त होकर रहने के लिए विशेष शक्ति चाहिए ।

श्रीरामकृष्ण–हाँ, यह ठीक है। परन्तु तुमने संसार चाहा होगा।

"श्रीकृष्ण राधिका के हृदय में ही थे, परन्तु राधा की इच्छा उनके साथ मनुष्य-रूप में लीला करने की हुई। इसीलिए वृन्दावन में इतनी लीलाएँ हुईं। अब प्रार्थना करो जिससे तुम्हारे सांसारिक कर्म सब घट जायँ।

"और मन से त्याग होने से तुम्हें अन्तिम ध्येय की प्राप्ति हो जायगी।"

मणि–यह तो उनके लिए है जो बाहर का त्याग नहीं कर सकते। ऊँचे दर्जेवालों के लिए तो एक साथ ही सब त्याग होना चाहिए—बाहर का भी और भीतर का भी।

श्रीरामकृष्ण चुप हैं। फिर बातचीत करने लगे।

श्रीरामकृष्ण–तुमने वैराग्य की बातें उस समय कैसी सुनीं?

मणि–जी हाँ, खूब।

श्रीरामकृष्ण–वैराग्य का अर्थ क्या है, जरा कहो तो—सुनूँ।

मणि–वैराग्य का अर्थ सिर्फ संसार से विराग नहीं, ईश्वर पर अनुराग और संसार से विराग है।

श्रीरामकृष्ण–हाँ, ठीक कहा।

"संसार में धन की जरूरत है अवश्य, परन्तु उसके लिए अधिक चिन्ता न करना। यदृच्छालाभ—यही अच्छा है। संचय के लिए इतना न सोचा करो। जो लोग उन्हें मन और अपने प्राण सौंप देते हैं, जो उनके भक्त हैं—शरणागत हैं, वे लोग यह सब इतना नहीं सोचते। जहाँ आय है वहाँ व्यय भी है। एक ओर से रुपया आता है, दूसरी ओर से खर्च हो जाता है। इसका नाम है यदृच्छालाभ।"

श्रीरामकृष्ण हरिपद की बातें कहने लगे—"उस दिन हरिपद आया था।"

मणि—(सहास्य)—हरिपद कथक है। प्रह्लाद-चरित्र, श्रीकृष्ण की जन्मकथा, यह सब मस्तर बहुत अच्छा कहता है।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, उस दिन मैंने उसकी आँखें देखी, जान पड़ता था, गुस्से में है। मैंने पूछा, क्या तू ध्यान ज्यादा करता है? वह सिर झुकाये बैठा रहा। तब मैंने कहा, अरे! इतना अच्छा नहीं।

शाम हो गयी है। श्रीरामकृष्ण माता का नाम ले रहे हैं—उनका स्मरण कर रहे हैं।

कुछ देर बाद श्रीठाकुर-मन्दिर में आरती होने लगी। आज सावन की शुक्ला द्वादशी है। झूलनोत्सव का दूसरा दिन है। आकाश में चन्द्रोदय हो गया। मन्दिर, मन्दिर का आँगन, बगीचा, सारे स्थान हँस रहे हैं। धीरे धीरे रात के आठ बजे। कमरे में श्रीरामकृष्ण बैठे हैं। राखाल और मास्टर भी हैं।

श्रीरामकृष्ण—(मास्टर से)—बाबूराम कहता है—'संसार! अरे बापरे!'

मास्टर—यह सुनी बात है। बाबूराम अभी संसार का हाल क्या जाने!

श्रीरामकृष्ण—हाँ यह ठीक है। निरंजन को देखा है तुमने?—बड़ा सरल है।

मास्टर—जी हाँ। उसके चेहरे में ही आकर्षण है—खींच लेता है। आँखों का भाव कैसा है!

श्रीरामकृष्ण—आँखों का ही भाव नहीं, सब कुछ। उसके विवाह की बात घरवालों ने की थी, उसने कहा, क्यों मुझे डुबाते

हो ? (हँसते हुए) क्यों जी, लोग कहते हैं, दिन भर मेहनत करके शाम को बीबी के पास जाकर बैठने से बड़ा आनन्द आता है—यह कैसा है ?

मास्टर-जी हाँ, जो लोग उसी भाव में हैं, उन्हें आनन्द आता क्यों नहीं ? (राखाल से) परीक्षा हो रही है—Leading Question.

श्रीरामकृष्ण-(सहास्य)-माँ कहती है, मैं अपने बच्चे को विवाह कर दूँ, तो जी ठिकाने हो। धूप में झुलसकर छाँह में थोड़ी देर बैठेगा, तो कुछ ठण्डा तो हो ही लेगा !

मास्टर-जी हाँ। माँ-बाप भी तरह-तरह के होते हैं। ज्ञानी पिता कभी अपने बच्चों को विवाह के बन्धन में नहीं डालता और अगर वह ऐसा करता है तब तो क्या कहना चाहिए उसके ज्ञान को ! (श्रीरामकृष्ण हँसते हैं।)

श्रीयुत अधर सेन कलकत्ते से आये हैं। श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया, जरा देर बैठकर काली के दर्शन करने चले गये।

मास्टर ने भी काली के दर्शन किये। फिर चाँदनी-घाट पर आकर गंगा के तट पर बैठे। गंगा का पानी ज्योत्स्ना में चमक रहा है। ज्वार का आना अभी शुरू हुआ है। मास्टर एकान्त में बैठे हुए श्रीरामकृष्ण के अद्भुत चरित्र की चिन्ता कर रहे हैं। उनकी अद्भुत समाधि, क्षण क्षण में भाव, प्रेम और आनन्द, विश्रामविहीन ईश्वरी कथाप्रसंग, भक्तों पर अकृत्रिम स्नेह, बालक का-सा स्वभाव, यही सब सोच रहे हैं।

अधर और मास्टर श्रीरामकृष्ण के कमरे में गये। अधर चिटगाँव में दफ्तर के काम से गये थे। वे चन्द्रनाथ तीर्थ और

सीताकुण्ड की बातें कह रहे हैं।

अधर-सीताकुण्ड के पानी में अग्नि की शिखाएँ उठती रहती हैं, जीभ के आकार की।

श्रीरामकृष्ण-यह किस तरह होता है?

अधर-पानी में फास्फोरस (Phosphorus) है।

श्रीयुत राम चैटर्जी भी कमरे में आये। श्रीरामकृष्ण अधर से उनकी तारीफ कर रहे हैं। और कह रहे हैं—"राम है, इसीलिए हम लोगों को अधिक चिन्ता नहीं करनी पड़ती। हरीश, लाटू इन्हें वह बुला बुलाकर खिलाया करता है। ये सब कहीं एकान्त में ध्यान करते रहते हैं और राम उन्हें बुला लाता है।"

परिच्छेद १६

कीर्तनानन्द में श्रीरामकृष्ण

(१)

अधर के घर में नरेन्द्रादि भक्तों के संग में

श्रीरामकृष्ण अधर के घर के बैठकखाने में भक्तों के साथ बैठे हुए हैं। बैठकखाना दुमंजले पर है। श्रीयुत नरेन्द्र, दोनों भाई मुखर्जी, भवनाथ, मास्टर, चुनीलाल, हाजरा आदि भक्त श्रीरामकृष्ण के पास बैठे हैं। दिन के तीन बजे होंगे। आज शनिवार है, ६ सितम्बर १८८४।

भक्तगण प्रणाम कर रहे हैं। मास्टर के प्रणाम करने के बाद श्रीरामकृष्ण अधर से पूछते हैं, क्या निताई डाक्टर न आयेगा?

श्रीयुत नरेन्द्र गायँगे, इसके लिए बन्दोवस्त हो रहा है। तानपूरा बाँधते समय तार टूट गया। श्रीरामकृष्ण ने कहा, अरे यह क्या किया! तब नरेन्द्र अपना तबला ठीक करने लगे। श्रीरामकृष्ण कहते हैं—अरे तुम तबला ठोंक रहे हो पर मुझे तो ऐसा मालूम होता है मानो कोई मेरे गाल पर थपत मार रहा हो।

कीर्तन के गीत के सम्बन्ध में बातचीत हो रही है। नरेन्द्र कह रहे हैं—कीर्तन में ताल-सम आदि कुछ नहीं हैं, इसीलिए इतना Popular (जनप्रिय) है और लोग उसे पसन्द करते हैं।

श्रीरामकृष्ण-यह तू क्या कह रहा है? गाना करुणापूर्ण होता है, इसीलिए लोग इतना चाहते हैं।

नरेन्द्र गा रहे हैं—

(१) हे दीनशरण ! तुम्हारा नाम बड़ा ही मधुर है।

(२) क्या मेरे दिन व्यर्थ ही चले जायेंगे ? हे नाथ ! सदा ही आशा-पथ पर मेरी दृष्टि लगी हुई है।

श्रीरामकृष्ण—(हाजरा से, सहास्य)—इसने पहली भेंट के समय यही गाना गाया था।

नरेन्द्र ने और भी दो-एक गाने गाये। फिर वैष्णवचरण ने एक गाना गाया।

श्रीरामकृष्ण—'ऐ वीणा ! तू ईश्वर का नाम ले,' यह गाना एक बार गाओ।

वैष्णवचरण गा रहे हैं—

"ऐ वीणा, तू ईश्वर का नाम ले। उनके श्रीचरणों को छोड़ तुझे परम-तत्त्व की प्राप्ति न होगी। उनके नाम से पाप और ताप दूर हो जाते हैं। तू 'हरे कृष्ण' 'हरे कृष्ण' कहती जा। उनकी कृपा होगी तो मैं भवसागर में फिर न रह जाऊँगा, न उसके लिए मुझे कोई चिन्ता होगी। वीणा, एक ही बार उनका नाम ले; नाम के सिवा और दूसरा अवलम्ब नहीं है। गोविन्ददास कहते हैं, दिन चले जा रहे हैं, सावधान रहना जिससे कि मैं अपार समुद्र में कहीं बह न जाऊँ।"

गाना सुनते ही श्रीरामकृष्ण को भावावेश हो गया है। वे उसी आवेश में कहते हैं—'अहा ! हरे कृष्ण कहो—हरे कृष्ण कहो।'

यह कहते हुए श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये। भक्तगण चारों ओर बैठे हुए श्रीरामकृष्ण को देख रहे हैं। कमरा आदमियों से भर गया है।

कीर्तनिया उस गाने को समाप्त कर एक दूसरा गाना गाने लगा—'श्रीगौरांग सुन्दर नव नटवर तप्तकांचनकाय' वह गा रहा था, श्रीरामकृष्ण उठकर खड़े हो गये और नृत्य करने लगे। फिर बैठकर बाँहें फैलाकर स्वयं उसके पद गा रहे हैं।

गाते ही गाते श्रीरामकृष्ण को फिर भावावेश हो गया। सिर झुकाये हुए समाधिलीन हो गये। सामने तकिया पड़ा हुआ है, उस पर सिर झुककर ढुलक गया है। कीर्तनिया फिर गा रहे हैं—

"हरिनाम के सिवा संसार में और कौनसा धन है? भाई, मधुर स्वर से तू उनके नाम का कीर्तन कर। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे, हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।"

कीर्तनिया ने एक गाना और गाया। श्रीरामकृष्ण प्रेमोन्मत्त हो गये, नृत्य कर रहे हैं। वह अपूर्व नृत्य देखकर नरेन्द्र आदि भक्तगण स्थिर न रह सके। सब श्रीरामकृष्ण के साथ नृत्य करने लगे।

नृत्य करते हुए श्रीरामकृष्ण को समाधि हो रही है। उस समय उनकी अन्तर्दशा हो गयी। जबान बन्द हो गयी। सर्वांग स्थिर हो गया। भक्तगण उन्हें घेरकर नाच रहे हैं—प्रेमोन्मत्त की तरह।

कुछ प्राकृत दशा में आते ही श्रीरामकृष्ण ने गाना शुरु किया।

आज अधर का बैठकखाना श्रीवास का आँगन हो रहा है। हरिनाम की ध्वनि सुनकर आम सड़क पर कितने ही आदमी एकत्र हो गये हैं।

भक्तों के साथ बड़ी देर तक नृत्य करके श्रीरामकृष्ण ने आसन ग्रहण किया। भावावेश अब भी है। उसी अवस्था में नरेन्द्र

श्रीरामकृष्ण–(सहास्य)–धीरे-धीरे ?

नरेन्द्र–(सहास्य)–उसकी तोंद भी नाचती थी !

(सब हँसते हैं।)

शशधर जिस मकान में हैं, उस मकान में श्रीरामकृष्ण के निमन्त्रण की बात हो रही है।

नरेन्द्र–मकानवाला खिलायेगा ?

श्रीरामकृष्ण–सुना है, उसका स्वभाव अच्छा नहीं है, लुच्चा है।

नरेन्द्र–इसीलिए जिस दिन शशधर से आपकी प्रथम भेंट हुई थी, उस दिन उसके छुये हुए गिलास से आपने पानी नहीं पिया। आपने कैसे पहचाना कि उसका स्वभाव अच्छा नहीं है ?

श्रीरामकृष्ण–(सहास्य)–हाजरा एक घटना और जानता है। उस देश में—सिहोड़ में—हृदय के घर में वह हुई थी।

हाजरा–वह एक वैष्णव है—मेरे साथ आपके दर्शन करने आया था। ज्योंही आकर बैठा कि आप उसकी ओर पीठ फेर-कर बैठ गये।

श्रीरामकृष्ण–सुना, अपनी मौसी से फँसा था—पीछे से पता चला। (नरेन्द्र से) पहले तू कहता था, ये सब मेरे मन के विकार हैं।

नरेन्द्र–मैं तब जानता थोड़े ही था। अब तो कई बार देखा—सब मिलते हैं।

नरेन्द्र के कहने का तात्पर्य यह है कि श्रीरामकृष्ण भावावस्था में लोगों का अन्तर भी देख लेते हैं। इसी की उन्होंने कितनी ही बार परीक्षा ली है।

श्रीरामकृष्ण और भक्तों की सेवा के लिए अधर ने बड़ा

इन्तजाम किया है। उन्होंने भोजन के लिए सब को बुलाया।

महेन्द्र और प्रियनाथ, दोनों मुखर्जी भाइयों से श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, क्यों जी, तुम भोजन करने न चलोगे?

उन्होंने विनयपूर्वक कहा—जी, हमें अब रहने दीजिये।

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—ये लोग सब कुछ करते हैं। बस इतने ही से इन्हें सकोच है।

"एक औरत के जेठों के नाम हरि और कृष्ण थे। उसे हरि-नाम तो कहना ही होगा। इधर 'हरे कृष्ण' कहने से जेठों के नाम आते थे। इसलिए वह जपती थी—

'फरे फृष्ट, फरे फृष्ट, फृष्ट फृष्ट फरे फरे
फरे राम, फरे राम, राम राम फरे फरे।'"

अधर जाति के स्वर्णवणिक थे। इसीलिए कोई-कोई ब्राह्मण भक्त उनके यहाँ भोजन करते हुए सकोच करते थे। कुछ दिन बाद जब उन्होंने देखा, श्रीरामकृष्ण स्वयं भोजन कर रहे हैं, तब उनका वह भाव दूर हो गया।

रात के ९ बजे नरेन्द्र, भवनाथ आदि भक्तों के साथ आनन्द-पूर्वक श्रीरामकृष्ण ने भोजन किया।

अब बैठकखाने में आकर विश्राम कर रहे हैं। फिर दक्षिणेश्वर लौटने का उद्योग होने लगा।

कल रविवार है। दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण के आनन्द के लिए मुखर्जी भ्राताओं ने कीर्तन का बन्दोबस्त किया है। श्याम-दास कीर्तनिये का गाना होगा। श्यामदास को अपने यहाँ बुलाकर राम ने कीर्तन सीखा था।

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र से कल दक्षिणेश्वर जाने के लिए कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण–(नरेन्द्र से)–कल जाना, अच्छा ?

नरेन्द्र–अच्छा, जाने की कोशिश करूँगा।

श्रीरामकृष्ण–स्नान-भोजन वहीं करना।

"ये (मास्टर) भी जायेंगे अगर कोई अड़चन न हो। (मास्टर से) तुम्हारी बीमारी तो अब अच्छी हो गयी है न ?—अब पथ्यवाली व्यवस्था तो नहीं है ?"

मास्टर–जी नहीं—मैं भी जाऊँगा।

नित्यगोपाल वृन्दावन में हैं। कई दिन हुए, चुनीलाल वृन्दावन से लौटे हैं। श्रीरामकृष्ण उनसे नित्यगोपाल का हाल पूछ रहे हैं। अब दक्षिणेश्वर चलने की तैयारी होने लगी। मास्टर ने भूमिष्ठ हो उनके पादपद्मों में माथा टेककर प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण ने स्नेहपूर्वक उनसे कहा, तो अब जाओ।

(नरेन्द्रादि भक्तों से सस्नेह)—

"नरेन्द्र, भवनाथ, तुम लोग जाना।"

नरेन्द्र, भवनाथ आदि भक्तों ने भूमिष्ठ हो उन्हें प्रणाम किया। उनके अपूर्व कीर्तनानन्द और भक्तों के साथ सुन्दर नृत्य की याद करते हुए भक्तगण घर लौटे।

आज भादों की कृष्णा प्रतिपदा, चाँदनी रात है। श्रीरामकृष्ण भवनाथ, हाजरा आदि भक्तों के साथ गाड़ी पर बैठकर दक्षिणेश्वर की ओर जा रहे हैं।

परिच्छेद १७

प्रवृत्ति या निवृत्ति ?

(१)

दक्षिणेश्वर में राम, बाबूराम आदि भक्तों के संग में

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर में, अपने उसी कमरे में छोटी खाट पर भक्तों के साथ बैठे हैं। दिन के ग्यारह बजे होंगे, अभी उन्होंने भोजन नहीं किया।

कल शनिवार को श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ श्रीयुत अघर सेन के यहाँ गये थे। नाम-संकीर्तन के महोत्सव द्वारा भक्तों का जीवन सफल कर आये थे। आज यहाँ श्यामदास का कीर्तन होगा। श्रीरामकृष्ण की कीर्तनानन्द में देखने के लिए बहुत से भक्तों का समागम हो रहा है।

पहले बाबूराम, मास्टर, श्रीरामपुर के ब्राह्मण, मनोमोहन भवनाथ, किशोरीलाल आये; फिर चुनीलाल, हरिपद, दोनों मुखर्जी भ्राता, राम, सुरेन्द्र, तारक, अघर और निरंजन आये। लाटू, हरीश और हाजरा आजकल दक्षिणेश्वर में ही रहते हैं। श्रीयुत रामलाल काली की पूजा करते हैं और श्रीरामकृष्ण की भी देखरेख रखते हैं। श्रीयुत राम चक्रवर्ती पर विष्णुमन्दिर की पूजा का भार है। लाटू और हरीश, दोनों श्रीरामकृष्ण की सेवा करते हैं। आज रविवार है, ७ सितम्बर १८८४।

मास्टर के आकर प्रणाम करने पर श्रीरामकृष्ण ने पूछा, नरेन्द्र नहीं आया?

"उस दिन नरेन्द्र नहीं आ सके। श्रीरामपुर के ब्राह्मण, रामप्रसाद के गाने की किताब लेते आये हैं और उसी पुस्तक से गाने पढ़-पढ़कर श्रीरामकृष्ण को सुना रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—हाँ पढ़ो।

ब्राह्मण एक गीत पढ़कर सुनाने लगे। उसमें लिखा था—माँ वस्त्र धारण करो।

श्रीरामकृष्ण—यह सब रहने दो, विकट गीत। ऐसा कोई गीत पढ़ो जिसमें भक्ति हो।

ब्राह्मण—कौन कहे कि काली कैसी है, षड्दर्शनों को भी जिसके दर्शन नहीं होते।

श्रीरामकृष्ण—(मास्टर से)—कल अधर सेन के यहाँ भावावस्था में एक ही तरह बैठे रहने के कारण पैरों में दर्द होने लगा था। इसीलिए बाबूराम को ले जाया करता हूँ। सहृदय है।

यह कहकर श्रीरामकृष्ण गाने लगे—

"ऐ सखि री, मैं अपना हृदय किसके पास खोलूँ—मुझे बोलना मना जो है। बिना किसी ऐसे को पाये जो मेरी व्यथा समझ सके, मैं तो मरी जा रही हूँ। केवल उसकी आँखों में आँखें डालकर मुझे अपने हृदय के प्रेमी का मिलन प्राप्त हो जायगा—परन्तु ऐसा तो कोई विरला ही होता है जो आनन्द-सागर में निरन्तर बहता रहे।

"ये सब बाउलों (एक सम्प्रदाय) के गीत हैं।

"शाक्त मत में सिद्ध को कौल कहते हैं, वेदान्त के मत से परमहंस कहते हैं। बाउल-वैष्णवों के मत में साईं कहते हैं—साईं अन्तिम सीमा है।

"बाउल जब सिद्ध हो जाता है तब साईं होता है। तब सब अभेद हो जाता है। आधी माला गो के हाड़ों की और आधी तुलसी की पहनता है। 'हिन्दुओं का नीर और मुसलमानों का पीर' बन जाता है।

"साईं जो होते हैं, वे अलख जगाया करते हैं। इसे वैदिक मत से ब्रह्म कहते हैं; वे लोग कहते हैं अलख। जीवों के सम्बन्ध में कहते हैं, अलख से आते हैं और अलख में जाते हैं। अर्थात् जीवात्मा अव्यक्त से आता है और अव्यक्त में ही लीन हो जाता है।

"वे लोग पूछते हैं, हवा की खबर जानते हो?

"अर्थात् कुण्डलिनी के जागने पर, इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना के भीतर से जो महावायु चढ़ती है उसकी खबर है?

"पूछते हैं, किस पैठ में हो?—छ: पैठ—छहों चक्र हैं।

"अगर कोई कहे कि पाचवें में है, तो समझना चाहिए कि विशुद्ध चक्र तक मन की पहुँच है।

(मास्टर से) "तब निराकार के दर्शन होते हैं, जैसा गीत में है।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण कुछ स्वर करके कह रहे हैं—"उसके ऊर्ध्व भाग में कमल आकाश है, उस आकाश के अवरुद्ध हो जाने पर सब कुछ आकाश हो जाता है।

"एक बाउल आया था। मैंने उससे पूछा, 'क्या तुम्हारा रस का काम हो गया?—कड़ाही उतर गयी?' रस को जितना ही जलाओगे, उतना ही Refine (साफ) होगा। पहले रहता है ईख का रस—फिर होती है राब—फिर उसे जलाओ—तो होती है चीनी—और फिर मिश्री। धीरे धीरे और भी साफ हो रहा है।

"कड़ाही कब उतरेगी, अर्थात् साधना की समाप्ति कब।

होगी ?—जब इन्द्रियाँ जीत ली जायेंगी। जैसे जोंक पर नमक छोड़ने से वे आप ही छूटकर गिर जाती हैं वैसे ही इन्द्रियाँ भी शिथिल हो जायेंगी। स्त्री के साथ रहता है, पर वह रमण नहीं करता।

"उनमें बहुत से लोग राधातन्त्र के मत से चलते हैं। पाँचों तत्त्व लेकर साधना करते हैं—पृथ्वीतत्त्व, जलतत्त्व, अग्नितत्त्व, वायुतत्त्व, आकाशतत्त्व—मूल, मूत्र, रज, वीर्य, ये सब तत्त्व ही हैं। ये साधनाएँ बड़ी घृणित हैं; जैसे पाखाने के भीतर से घर में प्रवेश करना।

"एक दिन मैं दालान में भोजन कर रहा था। घोषपाड़ा के मत का एक आदमी आया। आकर कहने लगा–'तुम स्वयं खाते हो या किसी को खिलाते हो?' इसका यह अर्थ है जो सिद्ध होता है, वह अन्तर में ईश्वर देखता है।

"जो लोग इस मत से सिद्ध होते हैं, वे दूसरे मत के लोगों को 'जीव' कहते हैं। विजातीय मनुष्यों के सामने बातचीत नहीं करते। कहते हैं, यहाँ 'जीव' है!

"उस देश में मैंने इस मत को माननेवाली एक स्त्री देखी है। उसका नाम सरी (सरस्वती) पाथर है। इस मत के लोग आपस में एक दूसरे के यहाँ तो भोजन करते हैं, परन्तु दूसरे मत वालों के यहाँ नहीं खाते। मल्लिक घरानेवालों ने सरी पाथर के यहाँ तो भोजन किया, परन्तु हृदय के यहाँ नहीं खाया। कहते हैं, ये सब 'जीव' हैं! (सब हँसते हैं।)

"मैं एक दिन उसके यहाँ हृदय के साथ घूमने गया था। तुलसी के पेड़ खूब लगाये हैं। उसने चना-चिउड़ा दिया, मैंने थोड़ा सा खाया, हृदय तो बहुत सा खा गया—फिर बीमार भी पड़ा।

"वे लोग सिद्धावस्था को सहज अवस्था कहते हैं। एक दर्जे के आदमी हैं। वे 'सहज सहज' चिल्लाते फिरते हैं। वे सहज अवस्था के दो लक्षण बतलाते हैं। एक यह कि देह में कृष्ण की गन्ध भी न रहेगी और दूसरा यह कि पद्म पर भौंरा बैठेगा, परन्तु मधुपान न करेगा। कृष्ण की गन्ध भी न रह जायगी, इसका अर्थ यह है कि ईश्वर के भाव सब अन्तर में ही रहेंगे, बाहर कोई लक्षण प्रकट न होगा—नाम का जप भी न करेगा। दूसरे का अर्थ है, कामिनी और कांचन की आसक्ति का त्याग—जितेन्द्रियता।

"वे लोग ठाकुर-पूजन, मूर्तिपूजन, यह सब पसन्द नहीं करते —जीता-जागता आदमी चाहते हैं। इसीलिए उनके दर्जे के आदमियों को कर्ताभजा कहते हैं। कर्ताभजा अर्थात् जो लोग कर्ता को—गुरु को ईश्वर समझते और इसी भाव से उनकी पूजा करते हैं।"

(२)

श्रीरामकृष्ण और सर्वधर्मसमन्वय

श्रीरामकृष्ण—देखा, कितने तरह के मत हैं। जितने मत उतने पथ। अनन्त मत है और अनन्त पथ है।

भवनाथ—अब उपाय क्या है ?

श्रीरामकृष्ण—एक को बलपूर्वक पकड़ना पड़ता है। छत पर जाने की चाह है, तो जीने से भी चढ़ सकते हो, बाँस की सीढ़ी लगाकर भी चढ़ सकते हो, रस्सी की सीढ़ी लगाकर, सिर्फ रस्सी पकड़कर या केवल एक बाँस के सहारे, किसी भी तरह से छत पर पहुँच सकते हो, परन्तु एक पैर इसमें और दूसरा उसमें रखने से नहीं होता। एक को दृढ़ भाव से पकड़े रहना चाहिए। ईश्वर-

लाभ करने की इच्छा हो तो एक ही रास्ते पर चलना चाहिए।

"और दूसरे मतों को भी एक एक मार्ग समझना। यह भाव न हो कि मेरा ही मार्ग ठीक है, और सब झूठ हैं; द्वेष न हो।

"अच्छा, मैं किस मार्ग का हूँ ? केशव सेन कहता था, आप हमारे मत के हैं—निराकार में आ रहे हैं। शशधर कहता है, ये हमारे हैं; विजय भी कहता है, ये हमारे मत के हैं।"

श्रीरामकृष्ण सभी मार्गों से साधना करके ईश्वर के निकट पहुँचे थे; इसलिए सब लोग उन्हें अपने ही मत का आदर्श मानते थे।

श्रीरामकृष्ण मास्टर आदि दो-एक भक्तों के साथ पंचवटी की ओर जा रहे हैं—हाथ मुँह धोयेंगे। दिन के बारह बजे का समय है। अब ज्वार आनेवाली है। देखने के लिए श्रीरामकृष्ण पंचवटी के रास्ते पर प्रतीक्षा कर रहे हैं।

भक्तों से कह रहे हैं—"ज्वार और भाटा कितने आश्चर्य के विषय हैं!

"परन्तु एक बात देखो, समुद्र के पास ही नदियों में ज्वार-भाटा होते हैं। परन्तु समुद्र से बहुत दूर होने पर उसी नदी में ज्वार-भाटा नहीं होता, बल्कि एक ही ओर बहाव रहता है। इसका क्या अर्थ ?—इस भाव का अपने आध्यात्मिक जीवन पर आरोप करो। जो लोग ईश्वर के बहुत पास पहुँच जाते हैं, उन्हीं में भक्ति और भाव होता है। और, किसी किसी को—ईश्वरकोटि को—महाभाव, प्रेम, यह सब होता है।

(मास्टर से) "अच्छा, ज्वार-भाटा क्यों होते हैं ?"

मास्टर—अंग्रेजी ज्योतिष-शास्त्र में लिखा है, सूर्य और चन्द्र के आकर्षण से ऐसा होता है।

यह कहकर मास्टर मिट्टी में रेखाएँ खींचकर सूर्य और चन्द्र

की गति बतलाने लगे। थोड़ी देर तक देखकर श्रीरामकृष्ण ने कहा—बस रहने दो, मेरा माथा घूमने लगा।

बात हो ही रही थी कि ज्वार आने की आवाज होने लगी। देखते ही देखते जलोच्छ्वास का घोर शब्द होने लगा। ठाकुर-मन्दिर की तटभूमि में टकराता हुआ बड़े वेग से पानी उत्तर की ओर चला गया। श्रीरामकृष्ण एक नजर से देख रहे हैं। दूर की नाव देखकर बालक की तरह कहने लगे, देखो देखो—अब उस नाव की क्या हालत होती है!

श्रीरामकृष्ण मास्टर से बातचीत करते हुए पंचवटी के बिलकुल नीचे पहुँच गये। उनके हाथ में एक छाता था, उसे पंचवटी के चबूतरे पर रख दिया। नारायण को वे साक्षात् नारायण देखते हैं इसीलिए बहुत प्यार करते हैं। नारायण स्कूल में पढ़ता है। इस समय श्रीरामकृष्ण उसी की बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—नारायण को देखा है तुमने? कैसा स्वभाव है! क्या लड़के, बच्चे, बूढ़े सब से मिलता है। विशेष शक्ति के बिना यह बात नहीं होती। और सब लोग उसे प्यार करते हैं। अच्छा, क्या वह यथार्थ ही सरल है।

मास्टर—जी हाँ, जान तो ऐसा ही पड़ता है।

श्रीरामकृष्ण—सुना, तुम्हारे यहाँ जाता है।

मास्टर—जी हाँ, दो-एक बार आया था।

श्रीरामकृष्ण—क्या एक रुपया तुम उसे दोगे या कालो से कहूँ?

मास्टर—अच्छा तो है, मैं ही दे दूँगा।

श्रीरामकृष्ण—बड़ा अच्छा है। जो ईश्वर के अनुरागी हैं उन्हें देना अच्छा है। इससे धन का सदुपयोग होता है। सब रुपये

संसार को सौंपने से क्या होगा ?

किशोरीलाल के लड़के-बच्चे हो गये हैं, रहे हैं।
इससे पूरा नहीं पड़ता। श्रीरामकृष्ण मास्टर से ... न करना।"
"नारायण कहता था, किशोरीलाल के लिए एक ... होता है। ... तो वह
कर दूंगा। नारायण को यह बात याद दिलाना।"

मास्टर पंचवटी में खड़े हुए हैं। श्रीरामकृष्ण कुछ देर बाद झाऊतल्ले से लौटे। मास्टर से कह रहे हैं—जरा बाहर एक चटाई बिछाने के लिए कहो, मैं थोड़ी देर बाद जाता हूँ, लेटूँगा।

श्रीरामकृष्ण कमरे में पहुँचकर कह रहे हैं—तुममें से किसी को छाता ले आने की बात याद नहीं रही। (सब हँसते हैं।) जल्दबाज आदमी पास की चीज भी नहीं देखते। एक आदमी एक दूसरे के यहाँ कोयले में आग सुलगाने के लिए गया था, और इधर उसके हाथ में लालटेन जल रही थी।

"एक आदमी अंगौछा खोज रहा था, अन्त में वह उसी के कन्धे पर पड़ा हुआ मिला!"

श्रीरामकृष्ण के लिए काली का अन्न-भोग लाया गया। श्रीरामकृष्ण प्रसाद पायेंगे। दिन के एक बजे का समय होगा। वे भोजन करके जरा विश्राम करेंगे। भक्तगण कमरे में बैठे ही रहे। समझाने पर वे बाहर जाकर बैठे। हरीश, निरंजन और हरिपद पाकशाला में प्रसाद पायेंगे। श्रीरामकृष्ण हरीश से कह रहे हैं, अपने लिए थोड़ा सा अमरस लेते जाना।

श्रीरामकृष्ण विश्राम करने लगे। बाबूराम से कहा, "बाबूराम, जरा मेरे पास आ।" बाबूराम पान लगा रहे थे, कहा, "मैं पान लगा रहा हूँ।"

श्रीरामकृष्ण—रख उधर, फिर पान लगाना।

की गति बतलाने लगे। कर रहे हैं। इधर पंचवटी में और बकुल
कहा—बस रहने दो भक्त बैठे हुए हैं—दोनों मुखर्जी भाई,
बात हो रही प्रसाद, भवनाथ और तारक। तारक वृन्दावन से
देखते ही भी लौटे हैं। भक्तगण उनसे वृन्दावन की बातें सुन रहे
मर्म। तारक नित्यगोपाल के साथ अब तक वृन्दावन में थे।

(३)

कीर्तनानन्द में

श्रीरामकृष्ण जरा विश्राम कर रहे हैं। श्यामदास माथुर अपने आदमियों को लेकर कीर्तन गा रहे हैं—'सुखमय सायर (सागर) मरुभूमि भइल, जलद निहारइ चातकि मरि गइल।' श्रीराधा का यह विरह-वर्णन हो रहा है। सुनकर श्रीरामकृष्ण को भावावेश हो रहा है। वे छोटी खाट पर बैठे हुए हैं। बाबूराम, निरञ्जन, राम, मनोमोहन, मास्टर, सुरेन्द्र, भवनाथ आदि भक्त जमीन पर बैठे हैं। गाना जम नहीं रहा है।

कोन्नगर के नवाई चैतन्य से श्रीरामकृष्ण कीर्तन करने के लिए कह रहे हैं। नवाई मनोमोहन के चाचा हैं। पेन्शन लेकर कोन्नगर में श्रीगंगाजी के तट पर भजन-साधन करते हैं। श्रीरामकृष्ण का प्रायः दर्शन करने आते हैं।

नवाई उच्च कण्ठ से संकीर्तन कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण आसन छोड़कर नृत्य करने लगे। साथ ही नवाई और भक्तगण उन्हें घेरकर नृत्य करने लगे। कीर्तन खूब जम गया। महिमाचरण भी श्रीरामकृष्ण के साथ नृत्य कर रहे हैं।

कीर्तन हो जाने पर श्रीरामकृष्ण अपने आसन पर बैठे। हरिनाम के बाद अब आनन्दमयी का नाम ले रहे हैं। श्रीरामकृष्ण

भावपूर्ण हैं। नाम लेते हुए ऊर्ध्वदृष्टि हो रहे हैं।

गाना–"माँ, आनन्दमयी होकर मुझे निरानन्द न करना।"

गाना–"उसका चिन्तन करने पर भाव का उदय होता है। जैसा भाव होता है, फल भी वैसा ही मिलता है। इसकी जड़ विश्वास है। जो काली का भक्त है, उसे तो जीवन्मुक्त कहना चाहिए। वह सदा ही आनन्द में रहता है। अगर उनके चरण-रूपी सुधा-सरोवर में चित्त लगा रहा तो समझना चाहिए, उसके लिए पूजा, जप, होम, बलि, ये सब कुछ भी नहीं हैं।"

श्रीरामकृष्ण ने तीन-चार गाने और गाये। अन्त में जो पद उन्होंने गाया, उसका भाव यह है—"मन! आदरणीया श्यामा माँ को यत्नपूर्वक हृदय में रखना। तू देख और मैं देखूँ, कोई दूसरा उन्हें न देखने पाये।"

यह गाना गाते हुए श्रीरामकृष्ण जैसे खड़े हो गये। माता के प्रेम में पागल हो गये। 'आदरणीया श्यामा माँ को हृदय में रखना' यह इतना अंश बार बार भक्तों को गाकर सुना रहे हैं। शराब पीकर मतवाले हुए की तरह सब को गाकर सुना रहे हैं। श्रीरामकृष्ण गाते हुए बहुत झूम रहे हैं। यह देख निरंजन उन्हें पकड़ने के लिए बढ़े। श्रीरामकृष्ण ने मधुर स्वरों में कहा–'मत छू।' श्रीरामकृष्ण को नाचते हुए देखकर भक्तगण उठकर खड़े हो गये। श्रीरामकृष्ण मास्टर का हाथ पकड़कर कहते हैं—'नाच।'

श्रीरामकृष्ण अपने आसन पर बैठे हुए हैं। भाव की पूर्ण मात्रा है—बिलकुल मतवाले हैं।

भाव का कुछ उपशम होने पर कह रहे हैं–ॐ ॐ ॐ काली! भक्तों में से कितने ही खड़े हैं। महिमाचरण खड़े हुए श्रीराम-कृष्ण को पंखा झल रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—(महिमाचरण से)—आप लोग बैठिये।

"आप वेद से जरा कुछ सुनाइये।"

महिमाचरण सुना रहे हैं—जय यज्ञमान आदि; फिर वे महानिर्वाण-तन्त्र की स्तुति का पाठ करने लगे—

"ॐ नमस्ते सते ते जगत्कारणाय
नमस्ते चिते सर्वलोकाश्रयाय ॥
नमोऽद्वैततत्त्वाय मुक्तिप्रदाय,
नमो ब्रह्मणे व्यापिने शाश्वताय ॥
त्वमेकं शरण्यं त्वमेकं वरेण्यम्
त्वमेकं जगत्पालकं स्वप्रकाशम् ॥
त्वमेकं जगत्कर्तृपातृप्रहर्तृ
त्वमेकं परं निश्चलं निर्विकल्पम् ॥
भयानां भयं भीषणं भीषणानाम्
गतिः प्राणिनां पावनं पावनानाम् ॥
महोच्चैः पदानां नियन्तृ त्वमेकम्
परेषां परं रक्षणं रक्षणानाम् ॥
वयं त्वां स्मरामो वयं त्वां भजामो
वयं त्वां जगत्साक्षिरूपं नमामः ॥
सदेकं निधानं निरालम्बमीशम्
भवाम्भोधिपोतं शरण्यं व्रजामः ॥"

श्रीरामकृष्ण ने हाथ जोड़कर स्तुति सुनी। पाठ हो जाने पर हाथ जोड़कर उन्होंने प्रणाम किया। भक्तों ने भी प्रणाम किया।

कलकत्ते से अधर आये। श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण—(मास्टर से)—आज खूब आनन्द रहा। महिम चक्रवर्ती भी इधर झुक रहा है। कीर्तन में खूब आनन्द रहा—क्यों?

मास्टर–जी हाँ।

महिमाचरण ज्ञानचर्चा करते हैं। आज उन्होंने कीर्तन किया है, और नाचे भी हैं। श्रीरामकृष्ण इस बात पर आनन्द प्रकट कर रहे हैं।

शाम हो रही है। भक्तों में से बहुतेरे श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर विदा हुए।

(४)

प्रवृत्ति या निवृत्ति ? अधर का कर्म

शाम हो गयी है। दक्षिणवाले लम्बे बरामदे में और पश्चिम के गोल बरामदे में बत्ती जला दी गयी। कुछ देर बाद चन्द्रोदय हुआ। मन्दिर का आँगन, बगीचे के रास्ते, गंगातट, पंचवटी, पेड़ों का ऊपरी हिस्सा, सब कुछ चांदनी में हँस रहे थे।

श्रीरामकृष्ण अपने आसन पर बैठे हुए भावावेश में माता का स्मरण कर रहे हैं।

अधर आकर बैठे। कमरे में मास्टर और निरंजन भी हैं। श्रीरामकृष्ण अधर के साथ बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण–अजी, तुम अब आये! कितना कीर्तन और नृत्य हो गया। श्यामदास का कीर्तन था—राम के उस्ताद का। परन्तु मुझे बहुत अच्छा न लगा। उठने की इच्छा भी नहीं हुई। उस आदमी की बात फिर पीछे से मालूम हुई। गोपीदास के साथवाले ने कहा, मेरे सिर पर जितने बाल हैं, उतनी उसकी रखेलियाँ हैं! (सब हँसते हैं।) क्या तुम्हारा काम हुआ?

अधर डिप्टी हैं। तीन सौ तनख्वाह पाते हैं। उन्होंने कलकत्ता म्यूनिसिपल्टी के वाइस चेअरमैन के लिए अर्जी दी थी। वहाँ हजार

रुपये महीने की तनख्वाह है। इसके लिए अधर कलकत्ते के बहुत बड़े-बड़े आदमियों से मिले थे।

श्रीरामकृष्ण—(मास्टर और निरंजन से)—हाजरा ने कहा था, अधर का काम हो जायगा, तुम जरा माँ से कहो। अधर ने भी कहा था। मैंने माँ से कहा था 'माँ, यह तुम्हारे यहाँ आया-जाया करता है, अगर उसे जगह मिलनी हो तो दे दो—' परन्तु इसके साथ ही माँ से मैंने यह भी कहा था कि माँ, इसकी बुद्धि कितनी हीन है ? ज्ञान और भक्ति की प्रार्थना न करके तुम्हारे पास यह सब चाहता है !

(अधर से) "क्यों नीच प्रकृति के आदमियों के यहाँ इतना चक्कर मारते फिरे ? इतना देखा और समझा, सातों काण्ड रामायण पढ़कर सीता किसकी भार्या थी, इतना भी नहीं समझे ?"

अधर—संसार में रहने पर इन सब के बिना किये काम भी नहीं चलता। आपने तो मना भी नहीं किया था।

श्रीरामकृष्ण—निवृत्ति ही अच्छी है, प्रवृत्ति अच्छी नहीं। इस अवस्था के बाद मुझे तनख्वाह के बिल पर दस्तखत करने के लिए कहा था ! मैंने कहा, 'यह मुझसे न होगा। मैं तो कुछ चाहता नहीं। तुम्हारी इच्छा हो तो किसी दूसरे को दे दो।'

"एकमात्र ईश्वर का दास हूँ—और किसका दास बनूँ ?

"मुझे खाने की देर होती थी, इसलिए मल्लिक ने भोजन पकाने के लिए एक ब्राह्मण नौकर रख दिया था। एक महीने में एक रुपया दिया था। तब मुझे लज्जा हुई, उनके बुलाने से ही दौड़ना पड़ता था !—खुद जाऊँ वह बात दूसरी है।

"सांसारिक जीवन व्यतीत करने में मनुष्य को न जाने कितने नीच आदमियों को खुश करना पड़ता है, और उसके अतिरिक्त

और भी न जाने क्या क्या करना पड़ता है।

"ऊँची अवस्था प्राप्त होने के पश्चात् तरह तरह के दृश्य मुझे दीख पड़ने लगे। तब माँ से कहा, माँ यहीं से मन को मोड़ दो जिससे मुझे धनी लोगों की खुशामद न करनी पड़े।

"जिसका काम कर रहे हो, उसी का करो। लोग सौ-पचास रुपये के लिए जी देते हैं, तुम तो तीन सौ महीना पाते हो। उस देश में मैंने डिप्टी देखा था, ईश्वर घोषाल को। सिर पर टोपी—गुस्सा नाक पर; मैंने लड़कपन में उसे देखा था; डिप्टी कुछ कम थोड़े ही होता है!

"जिसका काम कर रहे हो, उसी का करते रहो। एक ही आदमी की नौकरी से जी ऊब जाता है, फिर पाँच आदमियों की नौकरी?

✓"एक स्त्री किसी मुसलमान को देखकर मुग्ध हो गयी थी, उसने उसे मिलने के लिए बुलाया। मुसलमान आदमी अच्छा था, प्रकृति का साधु था। उसने कहा—'मैं पेशाव करूँगा, अपनी हण्डी ले आऊँ।' उस स्त्री ने कहा—'हण्डी तुम्हें यहीं मिल जायगी, मैं दूँगी तुम्हें हण्डी।' उसने कहा—'ना, सो बात नहीं होगी! जिस हण्डी के पास मैंने एक दफे शर्म खोई, इस्तेमाल तो मैं उसी का करूँगा—नयी हण्डी के पास दोबारा बेईमान न हो सकूँगा।' यह कहकर वह चला गया। औरत की भी अक्ल दुरुस्त हो गयी; हण्डी का मतलब वह समझ गयी।"

पिता का वियोग हो जाने पर नरेन्द्र को बड़ी तकलीफ हो रही है। माता और भाइयों के भोजन-वस्त्र के लिए वे नौकरी की तलाश कर रहे हैं। विद्यासागर के बहूबाजार वाले स्कूल में कुछ दिनों तक उन्होंने प्रधान शिक्षक का काम किया था।

अधर—अच्छा, नरेन्द्र कोई काम करेगा या नहीं ?

श्रीरामकृष्ण—हाँ, वह करेगा। माँ और भाई जो हैं।

अधर—अच्छा, नरेन्द्र की जरूरत पचास रुपये से भी पूरी हो सकती है और सौ रुपये से भी उसका काम चल सकता है। अब अगर उसे सौ रुपये मिले तो वह काम करेगा या नहीं ?

श्रीरामकृष्ण—विषयी लोग धन का आदर करते हैं। वे सोचते हैं, ऐसी चीज और दूसरी न होगी। शम्भू ने कहा—'यह सारी सम्पत्ति ईश्वर के श्रीचरणों में छोड़ जाऊँ, मेरी बड़ी इच्छा है।' वे विषय थोड़े ही चाहते हैं ? वे तो ज्ञान, भक्ति, विवेक, वैराग्य यह सब चाहते हैं।

"जब श्रीठाकुर-मन्दिर से गहने चोरी चले गये, तब सेजो बाबू ने कहा—'क्यों महाराज ! तुम अपने गहने न बचा सके ! हंसेश्वरी देवी को देखो, किस तरह अपने गहने बचा लिये थे !'

"सेजो बाबू ने मेरे नाम एक ताल्लुका लिख देने के लिए कहा था। मैंने काली-मन्दिर से उनकी बात सुनी। सेजो बाबू और हृदय एक साथ सलाह कर रहे थे। मैंने सेजो बाबू से जाकर कहा, 'देखो, ऐसा विचार मत करो। इसमें मेरा बड़ा नुकसान है।'

अधर—जैसी बात आप कह रहे हैं, सृष्टि के आरम्भ से अब तक ज्यादा से ज्यादा छः ही सात ऐसे हुए होंगे।

श्रीरामकृष्ण—क्यों, त्यागी हैं क्यों नहीं ? ऐश्वर्य का त्याग करने से ही लोग उन्हें समझ जाते हैं। फिर ऐसे भी त्यागी पुरुष हैं, जिन्हें लोग नहीं जानते। क्या उत्तर भारत में ऐसे पवित्र पुरुष नहीं हैं ?

अधर—कलकत्ते में एक को जानता हूँ, वे देवेन्द्र ठाकुर हैं।

श्रीरामकृष्ण—कहते क्या हो !—उनने जैसा भोग किया

वैसा बहुत कम आदमियों को नसीब हुआ होगा । जब सेजो बाबू के साथ में उसके यहाँ गया, तब देखा छोटे छोटे उसके कितने ही लड़के थे—डाक्टर आया हुआ था, नुस्खा लिख रहा था । जिसके आठ लड़के और ऊपर से लड़कियाँ हैं, वह ईश्वर की चिन्ता न करे तो और कौन करेगा ? इतने ऐश्वर्य का भोग करके भी अगर वह ईश्वर की चिन्ता न करता तो लोग कितना धिक्कारते !

निरंजन—द्वारकानाथ ठाकुर का सब कर्ज उन्होंने चुका दिया था ।

श्रीरामकृष्ण—चल, रख ये सब बातें । अब जला मत । शक्ति के रहते भी जो बाप का किया हुआ कर्ज नहीं चुकाता, वह भी कोई आदमी है ?

"हाँ, बात यह है कि संसारी लोग बिलकुल डूबे रहते हैं, उनकी तुलना में वह बहुत अच्छा था—उन्हें शिक्षा मिलेगी ।

"यथार्थ त्यागी भक्त और संसारी भक्त में बड़ा अन्तर है । यथार्थ संन्यासी—सच्चा त्यागी भक्त—मधुमक्खी की तरह है । मधुमक्खी फूल को छोड़ और किसी चीज पर नहीं बैठती । मधु को छोड़ और किसी चीज का ग्रहण नहीं करती । संसारी भक्त दूसरी मक्खियों के समान होते हैं जो बर्फियों पर भी बैठती हैं और सड़े घावों पर भी । अभी देखो तो वे ईश्वरी भावों में मग्न हैं, थोड़ी देर में देखो तो कामिनी और कांचन को लेकर मतवाले हो जाते हैं ।

"सच्चा त्यागी भक्त चातक के समान होता है । चातक स्वाति नक्षत्र के जल को छोड़ और पानी नहीं पीता, सात समुद्र और तेरह नदियाँ भले ही भरी रहें । वह दूसरा पानी हरगिज नहीं पी सकता । सच्चा भक्त कामिनी और कांचन को छू

नहीं सकता, पास भी नहीं रख सकता, क्योंकि कहीं आसक्ति न आ जाय।"

(५)

धर्मोपदेश, श्रीरामकृष्ण और लोकमान्यता

अधर—चैतन्य ने भी मान किया था।

श्रीरामकृष्ण—(चौंककर)—क्या मान किया था?

अधर—इतने बड़े पण्डित थे, कितना मान था!

श्रीरामकृष्ण—दूसरों की दृष्टि में वह मान था, उनकी दृष्टि में कुछ भी नहीं था।

"मुझे तुम चाहे डिप्टी मानो अथवा यह छोटा निरंजन, मेरे लिए दोनों एक हैं, सच कहता हूँ। एक धनी आदमी मेरे वश में रहे ऐसा भाव मेरे मन में नहीं पैदा होता। मनमोहन ने कहा है, सुरेन्द्र कहता था, राखाल इनके (श्रीरामकृष्ण के) पास रहता है, इधर बाबा हो सकता है' मैंने कहा, कौन है रे सुरेन्द्र? जिसकी दरी और तकिया यहाँ है, और जो दस रुपया महीना देता है, उसकी इतनी हिम्मत कि वह ऐसी बातें करे?"

अधर—क्या दस रुपये प्रति महीना देते हैं?

श्रीरामकृष्ण—दस रुपये में दो महीने का खर्च चलता है। कुछ भक्त यहाँ रहते हैं, वह भक्तों की सेवा के लिए रुपये देता है। वह उसी के लिए पुण्य है, इसमें मेरा क्या है? मैं राखाल और नरेन्द्र आदि को प्यार करता हूँ तो क्या किसी अपने काम के लिए?

मास्टर—वह प्यार माँ के प्यार की तरह है।

श्रीरामकृष्ण—माँ फिर भी इस आशा से बहुत कुछ करती है कि लड़का कमाके खिलायेगा। मैं तो इन्हें प्यार करता हूँ,

इसका कारण यह है कि मैं इन्हें साक्षात् नारायण देखता हूँ—यह बात की बात नहीं है।

(अधर से) "सुनो, दिया जलाने पर कीड़ों की कमी नहीं रहती। उन्हें पा लेने पर फिर वे सब बन्दोबस्त कर देते हैं, कोई कमी नहीं रह जाती। वे जब हृदय में आ जाते हैं, तब सेवा करनेवाले बहुत इकट्ठे हो जाते हैं।

"एक कम उम्र का संन्यासी किसी गृहस्थ के यहाँ भिक्षा के लिए गया। वह जन्म से ही संन्यासी था। संसार की बातें कुछ न जानता था। गृहस्थ की एक युवती लड़की ने आकर भिक्षा दी। संन्यासी ने कहा, 'माँ, इसकी छाती पर कितने बड़े-बड़े फोड़े हुए है?' उस लड़की की माँ ने कहा, 'नहीं महाराज, इसके पेट से बच्चा होगा, बच्चे को दूध पिलाने के लिए ईश्वर ने इसे स्तन दिये हैं—उन्हीं स्तनों का दूध बच्चा पीयेगा।' तब संन्यासी ने कहा, 'फिर सोच किस बात की है? मैं अब क्यों भिक्षा मांगूं? जिन्होंने मेरी सृष्टि की है, वे ही मुझे खाने को भी देंगे।'

"सुनो, जिस यार के लिए सब कुछ छोड़कर स्त्री चली आयी है, उससे मौका आने पर वह अवश्य कह सकती है कि तेरी छाती पर चढ़कर भोजन-वस्त्र लूंगी।

"न्यांगटा कहता था कि एक राजा ने सोने की थाली और सोने के गिलास में साधुओं को भोजन कराया था। काशी में मैंने देखा, बड़े-बड़े महन्तों का बड़ा मान है—कितने ही पश्चिम के अमीर हाथ जोड़े हुए उनके सामने खड़े थे और कह रहे थे—कुछ आज्ञा हो।

"परन्तु जो सच्चा साधु है—यथार्थ त्यागी है, वह न तो सोने की थाली चाहता है और न मान। परन्तु यह भी है कि ईश्वर

उनके लिए किसी बात की कमी नहीं रखते। उन्हें पाने के लिए प्रयत्न करते हुए जिसे जिस चीज की जरूरत होती है, वे पूरी कर देते हैं।

"आप हाकिम हैं—क्या कहूँ—जो कुछ अच्छा समझो, वही करो। मैं तो मूर्ख हूँ।"

अधर—(हँसते हुए, भक्तों से)—क्या ये मेरी परीक्षा ले रहे हैं?

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—निवृत्ति ही अच्छी है। देखो न, मैंने दस्तखत नहीं किये। ईश्वर ही वस्तु है और सब अवस्तु।

हाजरा भक्तों के पास जमीन पर आकर बैठे। हाजरा कभी कभी 'सोऽहम्-सोऽहम्' किया करते हैं। वे लाटू आदि भक्तों से कहते हैं—'उनकी पूजा करके क्या होता है? उन्हीं की वस्तु उन्हें दी जाती है।' एक दिन उन्होंने नरेन्द्र से भी यही बात कही थी। श्रीरामकृष्ण हाजरा से कह रहे हैं—

"लाटू से मैंने कहा था, कौन किसकी भक्ति करता है।"

हाजरा—भक्त आप ही अपने को पुकारता है।

श्रीरामकृष्ण—यह तो बड़ी ऊँची बात है। महाराज बलि से वृन्दावलि ने कहा था, तुम ब्रह्मण्य देव को क्या धन दोगे?

'तुम जो कुछ कहते हो, उसी के लिए साधन-भजन तथा उनके नाम और गुणों का कीर्तन है।

'अपने भीतर अगर अपने दर्शन हो जायँ तब तो सब हो गया। उसके देखने के लिए ही साधना की जाती है। और उसी साधना के लिए शरीर है। जब तक सोने की मूर्ति नहीं ढल जाती तब तक मिट्टी के साँचे की जरूरत रहती है। सोने की मूर्ति के बन जाने पर मिट्टी का साँचा फेंक दिया जाता है। ईश्वर के दर्शन

हो जाने पर शरीर का त्याग किया जा सकता है।

"वे केवल अन्तर में ही नहीं हैं, बाहर भी हैं। काली-मन्दिर में माँ ने मुझे दिखाया, सब कुछ चिन्मय है। माँ स्वयं सब कुछ बनी हैं—प्रतिमा, मैं, पूजा की चीजें, पत्थर—सब चिन्मय हैं।

"इसका साक्षात्कार करने के लिए ही साधन-भजन, नाम-गुण-कीर्तन आदि सब हैं। इसके लिए ही उनकी भक्ति करना है। ये लोग (लाटू आदि) अभी साधारण भावों को लेकर हैं—अभी उतनी ऊँची अवस्था नहीं हुई। ये लोग भक्ति लेकर हैं। और इनसे 'सोऽहम्' आदि बातें मत कहना।"

अधर और निरंजन जलपान करने के लिए बरामदे में गये। मास्टर श्रीरामकृष्ण के पास जमीन पर बैठे हुए हैं।

अधर–(सहास्य)–हम लोगों की इतनी बातें हो गयीं, ये (मास्टर) तो कुछ भी न बोले।

श्रीरामकृष्ण–केशव के दल का एक लड़का—वह चार परीक्षाएँ पास कर चुका था—सब को मेरे साथ तर्क करते हुए देखकर बस मुस्कराता था और कहता था, इनसे भी तर्क! मैंने केशव सेन के यहाँ एक बार और उसे देखा था, परन्तु तब उसका वह चेहरा न रह गया था।

विष्णुमन्दिर के पुजारी राम चक्रवर्ती श्रीरामकृष्ण के कमरे में आये। श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं—"देखो राम! तुमने क्या दयाल से मिश्री की बात कही है?—नहीं-नहीं, इसके कहने की जरूरत नहीं है। बड़ी बड़ी बातें हो गयी हैं।"

रात में श्रीरामकृष्ण काली के प्रसाद की दो-एक पूड़ियाँ तथा सूजी की खीर खाते हैं। श्रीरामकृष्ण जमीन पर, आसन पर प्रसाद पाने के लिए बैठे। पास ही मास्टर बैठे हुए हैं, लाटू भी

कमरे में हैं। भक्तगण सन्देश तथा कुछ मिठाइयाँ ले आये थे। एक सन्देश लेते ही श्रीरामकृष्ण ने कहा, यह किसका सन्देश है? इतना कहकर खोरवाले कटोरे से निकालकर उन्होंने वह नीचे डाल दिया। (मास्टर और लाटू से)—"यह मैं सब जानता हूँ। आनन्द चटर्जी का लड़का ले आया है जो घोषपाड़ा-वाली औरत के पास आता है।" लाटू ने एक दूसरी बर्फी देने के लिए पूछा।

श्रीरामकृष्ण—किशोरी लाया है।

लाटू—क्या इसे दूँ?

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—हाँ।

मास्टर अंग्रेजी पढ़े हुए हैं। श्रीरामकृष्ण उनसे कहने लगे—"सब लोगों की चीजें नहीं खा सकता। क्या यह सब तुम मानते हो?"

मास्टर—देखता हूँ, सब धीरे धीरे मानना पड़ेगा।

श्रीरामकृष्ण—हाँ।

श्रीरामकृष्ण पश्चिमवाले गोल बरामदे में हाथ धोने के लिए गये। मास्टर हाथ पर पानी छोड़ रहे हैं।

शरत्काल है। चाँद निकला हुआ है। आकाश निर्मल है। भागीरथी का हृदय स्वच्छ दर्पण के समान झलक रहा है; भाटे का समय है, भागीरथी दक्षिण की ओर बह रही हैं, मुँह धोते हुए श्रीरामकृष्ण मास्टर से कह रहे हैं—'तो नारायण को रुपया *दोगे न?' मास्टर—'जी हाँ, जैसी आज्ञा, जरूर दूँगा।'*

परिच्छेद १८

साधना तथा साधुसंग

(१)

'ज्ञान, अज्ञान के परे चले जाओ।' शशधर का शुष्क ज्ञान

श्रीरामकृष्ण दोपहर के भोजन के बाद अपने कमरे में विश्राम कर रहे हैं। कुछ भक्त भी बैठे हुए हैं। आज नरेन्द्र, भवनाथ आदि भक्त कलकत्ते से आये हैं। दोनों मुखर्जी भाई, ज्ञानबाबू, छोटे गोपाल, बड़े काली, ये भी आये हैं। तीन-चार भक्त कोन्नगर से आये हुए हैं। उन्हें बुखार आया था, सूचना आयी थी। आज रविवार है, १४ सितम्बर, १८८४।

पिता का स्वर्गवास हो जाने पर नरेन्द्र अपनी माँ और भाइयों की चिन्ता में पड़कर बड़े व्याकुल हैं। वे कानून की परीक्षा के लिए तैयारी कर रहे हैं।

ज्ञानबाबू चार परीक्षाएँ पास कर चुके हैं। वे सरकारी नौकरी करते हैं। दस-ग्यारह बजे के लगभग आये हैं।

श्रीरामकृष्ण--(ज्ञानबाबू को देखकर)--क्यों जी, एकाएक ज्ञानोदय, यह क्या ?

ज्ञान--(सहास्य)--जी, बड़े भाग्य से ज्ञानोदय होता है।

श्रीरामकृष्ण--(सहास्य)--तुम ज्ञानी होकर भी अज्ञानी क्यों हो ? हाँ, मैं समझा, जहाँ ज्ञान है, वहीं अज्ञान है ! वशिष्ठ देव इतने ज्ञानी थे, परन्तु लड़कों के शोक से वे भी रोये थे। अतएव तुम ज्ञान और अज्ञान के पार हो जाओ। पैरों में अज्ञान

का काँटा लग गया है, उसे निकालने के लिए ज्ञानरूपी काँटे की जरूरत है। निकल जाने पर दोनों काँटे फेंक देना चाहिए।

"ज्ञानी कहता है, यह संसार धोखे की टट्टी है, और जो ज्ञान और अज्ञान के पार चले गये हैं, वे कहते हैं, यह आनन्द की कुटिया है। वह देखता है, ईश्वर ही जीव-जगत् और चौबीसों तत्त्व हुए हैं।

"उन्हें पा लेने पर फिर संसार में रहा जा सकता है। तब आदमी निर्लिप्त हो सकता है। उस देश में बढ़ई की औरतों को मैंने देखा है, ढेंकी में चूड़ा कूटती हैं, एक हाथ से धान चलाती हैं, दूसरे से बच्चे को दूध पिलाती हैं, साथ ही खरीददारों से बात-चीत भी करती हैं, कहती हैं तुम्हारे ऊपर दो आने उधार हैं, दे जाना। परन्तु उनका बारह आना मन हाथ पर रहता है कि कहीं ढेंकी न गिर जाय।

"बारह आना मन ईश्वर पर रखकर चार आने से काम करना चाहिए।"

श्रीरामकृष्ण शशधर पण्डित की बात भक्तों से कह रहे हैं—"देखा, एकरुखा आदमी है। केवल सूखा ज्ञान और विचार लेकर है।

"जो नित्य में पहुँचकर लीला लेकर रहता है, उसका ज्ञान पक्का है, उसकी भक्ति भी पक्की है।

"नारदादि ने ब्रह्मज्ञान के पश्चात् भक्ति ली थी, इसी का नाम विज्ञान है।

"केवल ज्ञान शुष्क होता है—जैसे एकाएक फूट पड़नेवाले आतशबाजी के अनार—कुछ देर फूल छूटने पर तुरन्त फूट जाते हैं। नारद और शुकदेव आदि का ज्ञान, जैसे अच्छे अनार। थोड़ी देर एक तरह के फूल निकलते हैं, फिर बन्द होकर दूसरी तरह

के फूल निकलने लगते हैं। नारद और शुकदेव आदि का ईश्वर पर प्रेम हुआ था। प्रेम सच्चिदानन्द को पकड़ने की रस्सी है।"

दोपहर के भोजन के बाद श्रीरामकृष्ण जरा विश्राम कर रहे हैं।

बकुल के पेड़ के नीचे बैठने की जो जगह है, वहाँ दो-चार भक्त बैठे हुए गप्पें लड़ा रहे हैं। भवनाथ, दोनों मुखर्जी भाई, मास्टर, छोटे गोपाल, हाजरा आदि। श्रीरामकृष्ण झाऊतल्ले की ओर जा रहे हैं, वहाँ जाकर जरा बैठे।

मुखर्जी–(हाजरा से)–आपने इनके पास से बहुत कुछ सीखा है।

श्रीरामकृष्ण–(सहास्य)–नहीं बचपन से ही इनकी यह अवस्था है। (सब हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण झाऊतल्ले से लौट रहे हैं। भक्तों ने देखा, भावावेश में हैं। पागल की तरह चल रहे हैं। जब कमरे में आये तब प्रकृतिस्थ हो गये।

(२)

गुरुवाक्य पर विश्वास। शास्त्रों की धारणा कब होती है?

श्रीरामकृष्ण के कमरे में बहुत से भक्तों का समागम हुआ है। कोन्नगर के भक्तों में एक साधक अभी पहले-पहल आये हैं। उम्र पचास के ऊपर होगी। देखने से मालूम होता है कि भीतर पाण्डित्य का पूरा अभिमान है। बातचीत करते हुए वे कह रहे हैं, 'समुद्र-मन्थन के पहले क्या चन्द्र न था? परन्तु इसकी मीमांसा कौन करे?'

मास्टर–(सहास्य)–देवी के एक गाने में है—जब ब्रह्माण्ड

ही न था, तब मुण्डमाला तुझे कहाँ मिली होगी ?

साधक–(विरक्ति से)–यह दूसरी बात है ।

कमरे में खड़े होकर श्रीरामकृष्ण ने एकाएक कहा—'यह आया था—नारायण ।'

नरेन्द्र बरामदे में हाजरा आदि से बातें कर रहे हैं—उनकी चर्चा का शब्द श्रीरामकृष्ण के कमरे में सुन पड़ रहा है ।

श्रीरामकृष्ण–खूब बक सकता है । इस समय घर की चिन्ता में बहुत पड गया है ।

मास्टर–जी हाँ ।

श्रीरामकृष्ण–नरेन्द्र ने विपत्ति को सम्पत्ति समझने के लिए कहा था न ?

मास्टर–जी हाँ, मनोबल खूब है ।

बड़े काली–कम क्या है ?

श्रीरामकृष्ण अपने आसन पर बैठ गये । कोन्नगर के एक भक्त श्रीरामकृष्ण से कह रहे हैं—'महाराज, ये (साधक) आपको देखने आये हैं, इन्हें कुछ पूछना है ।

साधक देह और सिर ऊँचा किये बैठे हैं ।

साधक–महाराज, उपाय क्या है ?

श्रीरामकृष्ण–गुरु की बातों पर विश्वास करना । उनके आदेश के अनुसार चलने पर ईश्वर के दर्शन हो सकते हैं । जैसे डोर अगर ठिकाने से लगी हुई हो तो उसे पकड़कर चलने से पते पर पहुँचा जा सकता है ।

साधक– क्या उनके दर्शन होते हैं ?

श्रीरामकृष्ण–वे विषय-बुद्धि के रहते नहीं मिलते । कामिनी और कांचन का लेशमात्र रहते उनके दर्शन नहीं हो सकते । वे

शुद्ध मन और शुद्ध बुद्धि से गोचर होते हैं। वह मन चाहिए जिसमें आसक्ति का लेशमात्र न हो। शुद्ध-मन, शुद्ध-बुद्धि और शुद्ध आत्मा, ये एक ही वस्तु हैं।

साधक–परन्तु शास्त्र में है–'यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह'–वे मन और वाणी से परे हैं।

श्रीरामकृष्ण–रखो इसे। साधना किये बिना शास्त्रों का अर्थ समझ में नहीं आता। 'भंग-भंग' चिल्लाने से क्या होता है? पण्डित जितने हैं, सर्राटे के साथ श्लोकों की आवृत्ति करते हैं, परन्तु इससे होता क्या है? भंग चाहे जितनी देह में लगा ली जाय, पर इससे नशा नहीं होता, नशा लाने के लिए तो भंग पीनी ही चाहिए।

"दूध में मक्खन है, दूध में मक्खन है, इस तरह चिल्लाते रहने से क्या होता है? दूध जमाओ, दही बनाओ, मथो, तब होगा।"

साधक–मक्खन बनाना, ये सब तो शास्त्र की ही बातें हैं।

श्रीरामकृष्ण–शास्त्र की बात कहने या सुनने से क्या होता है?–उसकी धारणा होनी चाहिए। पंचांग में लिखा है, वर्षा पूरी होगी, परन्तु पंचांग दबाओ तो कहीं बूँद भर भी पानी नहीं निकलता।

साधक–मक्खन निकालना बतलाते हैं–आपने निकाला है मक्खन?

श्रीरामकृष्ण–मैंने क्या किया है और क्या नहीं किया यह बात रहने दो। और ये बातें समझाना बहुत मुश्किल है। कोई अगर पूछे कि घी का स्वाद कैसा है तो कहना पड़ता है, जैसा है –वैसा ही है।

"यह सब समझना हो तो साधुओं का संग करना चाहिए। कौनसी नाड़ी कफ की है, कौनसी पित्त की और कौन वायु की, इसके जानने की अगर जरूरत हो तो सदा वैद्य के साथ रहना चाहिए।"

साधक– दूसरे के साथ रहने में कोई कोई आपत्ति करते हैं।

श्रीरामकृष्ण–वह ज्ञान के बाद–ईश्वर-प्राप्ति के बाद की अवस्था है। पहले तो सत्संग चाहिए ही न ?

साधक चुप हैं।

साधक–(कुछ देर बाद, गुस्साकर)–आपने उन्हें जाना ? –कहिये–प्रत्यक्ष रूप से हो या अनुभव से। इच्छा हो और आप कह सकें तो कहिये, नहीं तो न सही।

श्रीरामकृष्ण–(मुस्कराते हुए)–क्या कहूँ, आभास मात्र कहा जा सकता है।

साधक–वही कहिये।

नरेन्द्र गायेंगे। नरेन्द्र कहते हैं, पखावज अभी तक नहीं लाया गया।

छोटे गोपाल–महिमाचरण बाबू के पास है।

श्रीरामकृष्ण–नहीं, उसकी चीज ले आने की कोई जरूरत नहीं।

कोन्नगर के एक भक्त कलावतों के ढंग के गाने गा रहे हैं। गाना हो रहा है और श्रीरामकृष्ण एक एक बार साधक की अवस्था देख रहे हैं। गवैया नरेन्द्र के साथ गाने और बजाने के विषय पर घोर तर्क कर रहे हैं।

साधक गवैये से कह रहे हैं, "तुम भी तो गार कम नहीं हो, इन सब वाद-विवादों से गरज ?" इस विवाद में एक और

महाशय बोल रहे थे; श्रीरामकृष्ण ने साधक से कहा, "आपने इन्हें कुछ न कहा ?"

श्रीरामकृष्ण कोन्नगर के भक्तों से कह रहे हैं, "देखता हूँ, आप लोगों के साथ भी इनकी नहीं बनती।" नरेन्द्र गा रहे हैं।

गाना सुनते हुए साधक ध्यानमग्न हो गये। श्रीरामकृष्ण के तख्त के उत्तर की ओर मुँह किये बैठे हैं। दिन के तीन या चार बजे का समय होगा—पश्चिम की ओर से धूप आकर उन पर पड़ रही थी। श्रीरामकृष्ण ने फौरन एक छाता लेकर अपने पश्चिम ओर रखा, जिससे धूप न लगे। नरेन्द्र गा रहे हैं—

"इस मलिन और पंकिल मन को लेकर तुम्हें कैसे पुकारूँ ? क्या जलती हुई आग में कभी तृण पैठने का भी साहस कर सकता है ? तुम पुण्य के आधार हो, जलती हुई आग के समान हो, मैं तृण जैसे पापी तुम्हारी पूजा कैसे करूँ ? परन्तु सुना है, तुम्हारे नाम के गुणों से महापापियों का भी परित्राण हो जाता है, पर तुम्हारे पवित्र नाम का उच्चारण करते हुए मेरा हृदय न जाने क्यों काँप रहा है। मेरा अभ्यास पाप की सेवा में बढ़ गया है, जीवन वृथा ही चला जाता है, मैं पवित्र मार्ग का आश्रय किस तरह लूँगा ? यदि इस पातकी और नराधम को तुम अपने दयालु नाम के गुण से तारो तो तार दो। कहो, मेरे केशों को पकड़कर कब अपने चरणों में आश्रय दोगे ?"

(३)

नरेन्द्रादि को शिक्षा; 'वेद-वेदान्त में केवल आभास है।'

नरेन्द्र गा रहे हैं—

"हे दीनों के शरण ! तुम्हारा नाम बड़ा ही मधुर है।

उसमें अमृत की धारा बह रही है। हे प्राणों में रमण करनेवाले! उससे मेरे श्रवणेन्द्रिय शीतल हो जाते हैं। जब कभी तुम्हारे नाम की सुधा श्रवणों का स्पर्श करती है तो समस्त विषाद-राशि का एक क्षण में नाश हो जाता है। हे हृदय के स्वामी—चिदानन्द-घन! तुम्हारे नामों को गाते हुए हृदय अमृतमय हो जाता है।"

ज्योंही नरेन्द्र ने गाया—'तुम्हारे नामों को गाते हुए हृदय अमृतमय हो जाता है,' श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये। समाधि के आरम्भ में हाथ की उँगलियाँ, खासकर अँगूठा काँप रहा था। कोन्नगर के भक्तों ने श्रीरामकृष्ण की समाधि कभी नहीं देखी थी। श्रीरामकृष्ण को मौन धारण करते हुए देखकर वे लोग उठे।

भवनाथ—आप लोग बैठिये, यह इनकी समाधि की अवस्था है।

कोन्नगर के भक्तों ने फिर आसन ग्रहण किया। नरेन्द्र गा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण भावावेश में नीचे उतरकर नरेन्द्र के पास जमीन पर बैठे। बड़ी देर बाद जब कुछ प्राकृत अवस्था हुई तब वहीं जमीन पर बिछी हुई चटाई पर जा बैठे। नरेन्द्र का गाना समाप्त हो गया। तानपूरा यथास्थान रख दिया गया। श्रीरामकृष्ण को भाव का आवेश अब भी है। उसी अवस्था में कह रहे हैं—"यह भला कैसी बात है माँ! मक्खन निकालकर मुँह के सामने रखो। न तालाब में चारा (मछलियों का) छोड़ेगा—न बंसी लेकर बैठा रहेगा—बस, मछली पकड़कर उसके हाथ में रख दो! कैसा उत्पात है! माँ! तर्क-विचार अब न सुनूँगा, कैसा उत्पात है! अब मैं फटकार दूँगा।

"वे वेदविधि के पार हैं।—क्या वेद, वेदान्त और शास्त्रों को पढ़कर कोई उन्हें प्राप्त कर सकता है? (नरेन्द्र से) समझा? वेदों में आभास मात्र है।"

नरेन्द्र ने फिर स्वयं तानपूरा ले आने के लिए कहा।

श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, मैं गाऊँगा। अब भी भावावेश है, श्रीरामकृष्ण गा रहे हैं।

उन्होंने कई गाने गाये। फिर वे गीत के एक चरण की आवृत्ति करते हुए कह रहे हैं—"माँ, मुझे पागल कर दे। उन्हें ज्ञान और विचार द्वारा या शास्त्रों का पाठ करके कोई नहीं प्राप्त कर सकता।" वे विनयपूर्वक गानेवाले से कह रहे हैं—"भाई, आनन्दमयी का एक गाना गाइये।'"

गवैये–महाराज, क्षमा कीजियेगा।

श्रीरामकृष्ण गवैये को हाथ जोड़कर प्रणाम करते हुए कह रहे हैं—"नहीं भाई, इसके लिए आग्रह कर सकता हूँ।" इतना कहकर गोविन्द अधिकारी की यात्रा (नाटक) के दल में गायी जानेवाली वृन्दा की उक्ति को गाते हुए कह रहे हैं—'राधिका अगर कृष्ण को कुछ कहना चाहे तो कह सकती है, क्योंकि कृष्ण के लिए तमाम रात जगकर उन्होंने भोर कर दिया।'

"बाबू, तुम ब्रह्ममयी के पुत्र हो, वे घट-घट में हैं, तुमपर मेरा जोर अवश्य है। किसान ने अपने गुरु से कहा था—'तुम्हें ठोंककर मन्त्र लूँगा।"

गवैये–(सहास्य)—जूतियों से ठोंककर?

श्रीरामकृष्ण–(गुरु के उद्देश्य में प्रणाम करके, हँसकर)–नहीं, इतनी दूर नहीं बढ़ सकता हूँ।

फिर भावावेश में कह रहे हैं—"प्रवर्तक, साधक, सिद्ध और सिद्धों के सिद्ध है—क्या तुम सिद्ध हो या सिद्ध के सिद्ध? अच्छा गाओ।"

गवैये आलाप करके गाने लगे।

श्रीरामकृष्ण–(आलाप सुनकर)—भाई, इससे भी आनन्द

होता है।

गाना समाप्त हो गया। कोन्नगर के भक्त श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके विदा हो गये। साधक हाथ जोड़कर प्रणाम करते हुए कह रहे हैं—'गुसाईंजी, तो मैं अब चलता हूँ।' श्रीरामकृष्ण अब भी भावावेश में हैं—माता के साथ बातचीत कर रहे हैं—

"माँ, मैं या तुम? क्या मैं करता हूँ?—नहीं नहीं, तुम करती हो।

"अब तक तुमने विचार सुना या मैंने? ना—मैंने नहीं सुना—तुम्हीं ने सुना है।"

श्रीरामकृष्ण को प्राकृत अवस्था हो रही है। अब वे नरेन्द्र, भवनाथ, मुखर्जी आदि भक्तों से बातचीत कर रहे हैं। साधक की बात उठाते हुए भवनाथ ने पूछा, कैसा आदमी है?

श्रीरामकृष्ण—तमोगुणी भक्त है।

भवनाथ—खूब श्लोक कह सकता है।

श्रीरामकृष्ण—मैंने एक आदमी से कहा था—'वह रजोगुणी साधु है—उसे क्यों सीधा-सीधा देते हो?' एक दूसरे साधु ने मुझे शिक्षा दी। उसने कहा—'ऐसी बात मत कहो, साधु तीन तरह के होते हैं—सतोगुणी, रजोगुणी और तमोगुणी।' उस दिन से मैं सब तरह के साधुओं को मानता हूँ।

नरेन्द्र—(सहास्य)—क्या? उसी तरह जैसे हाथी नारायण है? सभी नारायण हैं।

श्रीरामकृष्ण—(हँसते हुए)—विद्या और अविद्या के रूपों में वे ही लीला कर रहे हैं। मैं दोनों को प्रणाम करता हूँ। चण्डी में है—'वही लक्ष्मी है और अभागे के यहाँ की धूल भी वही है।' (भवनाथ आदि से) यह क्या विष्णु पुराण में है?

भवनाथ-(हँसते हुए)-जी, मुझे तो नहीं मालूम। कोन्नगर के भक्त आप की समाधि-अवस्था देखकर उठे चले जा रहे थे।

श्रीरामकृष्ण-कोई फिर कह रहा था कि तुम लोग बैठो।

भवनाथ-(हँसते हुए)-वह मैं हूँ।

श्रीरामकृष्ण-तुम जैसे लोगों को यहाँ लाते हो, वैसे ही भगा भी देते हो!

गवैये के साथ नरेन्द्र का वादविवाद हुआ था, उसी की बात चल रही है।

मुखर्जी-नरेन्द्र ने भी मोर्चा नहीं छोड़ा।

श्रीरामकृष्ण-हाँ, ऐसी दृढ़ता तो चाहिए ही। इसे सत्त्व का तम कहते हैं। लोग जो कुछ कहेंगे क्या उसी पर विश्वास करना होगा? वेश्या से क्या यह कहा जायगा कि तुम्हें जो रुचे वही करो? तो वेश्या की बात भी माननी होगी। मान करने पर एक सखी ने कहा था—'राधिका को अहंकार हुआ है।' वृन्दे ने कहा, "यह 'अहं' किसका है?—यह उन्हीं का अहंकार है—कृष्ण के ही गर्व से वे गर्व करती हैं।"

अब हरिनाम के माहात्म्य की बात हो रही है।

भवनाथ-नाम करने पर मेरी देह हलकी पड़ जाती है।

श्रीरामकृष्ण-वे पाप का हरण करते हैं, इसीलिए उन्हें हरि कहते हैं। वे त्रिताप के हरण करनेवाले हैं।

"और चैतन्य देव ने इस नाम का प्रचार किया था, अतएव अच्छा है। देखो, चैतन्य देव कितने बड़े पण्डित थे और वे अवतार थे। उन्होंने इस नाम का प्रचार किया था, अतएव यह बहुत ही अच्छा है। (हँसते हुए) कुछ किसान एक न्योते में गये थे। भोजन करते समय उनसे पूछा गया, तुम लोग आमड़े की

खटाई खाओगी ? उन्होंने कहा, बाबुओं ने अगर उसे खाया हो तो हमें भी देना। मतलब यह कि उन्होंने खाया होगा तो वह चीज अच्छी ही होगी।" (सब हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण की शिवनाथ शास्त्री से मिलने की इच्छा हुई है। वे मुखर्जियों से कह रहे हैं—'एक बार शिवनाथ शास्त्री को देखने के लिए जाऊँगा, तुम्हारी गाड़ी से जाऊँगा तो किराया न पड़ेगा।'

मुखर्जी—जो आज्ञा, एक दिन भेज दी जायगी।

श्रीरामकृष्ण—(भक्तों से)—अच्छा, क्या वह हम लोगों को पसन्द करेगा ? वे लोग साकारवादियों की कितनी निन्दा करते हैं।

श्रीयुत महेन्द्र मुखर्जी तीर्थ-यात्रा करनेवाले हैं ? श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं—

(सहास्य) "यह कैसी बात ! प्रेम के अंकुर के उगते ही जा रहे हो ? अंकुर होगा, फिर पेड़ होगा, तब फल होंगे। तुम्हारे साथ अच्छी बातें हो रही थीं।"

महेन्द्र—जी, जरा इच्छा हुई है, घूम लूँ। फिर जल्द ही आ जाऊँगा।

(४)

भक्तों के संग में

तीसरा पहर ढल गया है। दिन के पाँच बजे होंगे। श्रीरामकृष्ण उठे। भक्तगण बगीचे में टहल रहे हैं। उनमें से कितने ही शीघ्र घर जाने वाले हैं।

श्रीरामकृष्ण उत्तरवाले बरामदे में हाजरा से बातचीत कर

रहे हैं। नरेन्द्र आजकल गुहों के बड़े लड़के अन्नदा के पास प्रायः जाया करते हैं।

हाजरा–सुना है, गुहों का लड़का आजकल कठोर साधना कर रहा है। भोजन भी थोड़ा सा ही करता है। चार दिन बाद अन्न खाता है।

श्रीरामकृष्ण–कहते क्या हो! 'कौन कहे किस भेष से नारायण मिल जाय।'

हाजरा–नरेन्द्र ने स्वागत-गीत गाया था।

श्रीरामकृष्ण–(उत्सुकता से)–कैसा?

किशोर पास खड़ा था।

श्रीरामकृष्ण–तेरी तबियत अच्छी है न?

श्रीरामकृष्ण पश्चिमवाले गोल बरामदे में खड़े हैं। शरत् काल है। फलालैन का गेरुआ कुर्ता पहने हैं और नरेन्द्र से कह रहे हैं–"तूने स्वागत-गीत गाया था?" गोल बरामदे से उतरकर श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र के साथ गंगा के बाँध पर आये। साथ मास्टर हैं। नरेन्द्र गा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण खड़े हुए सुन रहे हैं। सुनते सुनते उन्हें भावावेश हो रहा है।

अब भी दिन कुछ शेष है। सूर्य भगवान पश्चिम की ओर अभी कुछ दीख पड़ रहे हैं। श्रीरामकृष्ण भाव में डूबे हुए हैं। एक ओर गंगा उत्तर की ओर बही जा रही है। अभी कुछ देर से ज्वार का आना शुरू हुआ है। पीछे फुलवाड़ी है। दाहिनी ओर नौबत और पंचवटी दिखायी दे रही है। पास में नरेन्द्र खड़े हुए गा रहे हैं। शाम हो गयी।

नरेन्द्र आदि भक्त प्रणाम करके बिदा हो गये। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में आये। जगन्माता का स्मरण-चिन्तन कर रहे हैं।

श्रीयुत यदु मल्लिक पानवाले बगीचे में आज आये हुए हैं। बगीचे में आने पर प्रायः आदमी भेजकर श्रीरामकृष्ण को बुलवा ले जाते हैं। आज भी आदमी भेजा है—श्रीरामकृष्ण जायेंगे। श्रीयुत अधर सेन कलकत्ते से आये और श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण श्रीयुत यदु मल्लिक के बगीचे में जायेंगे। लाटू से कह रहे हैं—'लालटेन जला—जरा चलेंगे।'

श्रीरामकृष्ण लाटू के साथ अकेले जा रहे हैं। मास्टर भी साथ हैं।

श्रीरामकृष्ण-(मास्टर से)-तुम नारायण को लेते क्यों नहीं आये?

मास्टर कह रहे हैं- "क्या मैं भी साथ चलूँ?"

श्रीरामकृष्ण-चलोगे? अधर आदि सब हैं—अच्छा, चलो। दोनों मुखर्जी भाई रास्ते में खड़े थे। श्रीरामकृष्ण मास्टर से पूछ रहे हैं—"क्या ये लोग भी कोई आयेंगे? (मुखर्जियों से) अच्छा है चलो। तो हम जल्दी चले आ सकेंगे।"

श्रीरामकृष्ण यदु मल्लिक के बैठकखाने में आये। कमरा सजा हुआ था। कमरे में और बरामदे में दीवारगीरें जल रही हैं। श्रीयुत यदुलाल छोटे-छोटे लड़कों को लिये हुए प्रसन्नतापूर्वक दो-एक मित्रों के साथ बैठे हैं। नौकरों में से कोई आज्ञा की प्रतीक्षा कर रहा है, कोई पंखा झल रहा है। यदु बाबू ने हँसकर बैठे हुए श्रीराम-कृष्ण से सम्भाषण किया, जैसे पुराने परिचितों का व्यवहार हो।

यदु बाबू गौरांग के भक्त हैं। उन्होंने स्टार थियेटर में चैतन्य-लीला देखी थी। श्रीरामकृष्ण से उसी की बातचीत कर रहे हैं। कहा, चैतन्य-लीला का नया अभिनय बड़ा अच्छा हो रहा है।

श्रीरामकृष्ण आनन्दपूर्वक चैतन्यलीला की बातचीत सुन रहे

हैं, रह-रहकर यदु बाबू के एक छोटे लड़के का हाथ लेकर खेल कर रहे हैं। मास्टर और दोनों मुखर्जी भाई उनके पास बैठे हुए हैं।

श्रीयुत अधर सेन ने कलकत्ता म्युनिसिपैल्टी के वाईस चेअरमन के पद के लिए बड़ी चेष्टा की थी। उस पद का वेतन हजार रुपया है। अधर डिप्टी मजिस्ट्रेट हैं। तीन सौ रुपया प्रति मास पाते हैं। उम्र तीस साल की होगी।

श्रीरामकृष्ण–(यदु बाबू से)–अधर का तो काम नहीं हुआ।

यदु और उनके मित्र—अधर की उम्र तो अभी ज्यादा नहीं हुई।

कुछ देर बाद यदु कह रहे हैं—'तुम जरा उनके लिए नाम-जप करो।' श्रीरामकृष्ण गौरांग का भाव गाकर बतला रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण ने कीर्तन के कई गाने गाये।

(५)

राखाल के लिए चिन्ता

गीत के समाप्त हो जाने पर दोनों मुखर्जी भाई उठे। उनके साथ श्रीरामकृष्ण भी उठे। परन्तु भावावेश अब भी है। घर के बरामदे में आकर खड़े होते समाधिमग्न हो गये। बरामदे में कई बत्तियाँ जल रही थीं। बगीचे का दरबान भक्त था। वह श्रीरामकृष्ण को आमन्त्रित करके कभी कभी भोजन करता था। दरबान श्रीरामकृष्ण को बड़े पंखे से हवा करने लगा।

बगीचे के कर्मचारी श्रीयुत रतन ने आकर श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण की प्राकृत अवस्था हो रही है।

उन लोगों से सम्भाषण करते हुए वे 'नारायण-नारायण'

उच्चारण कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ ठाकुर-मन्दिर के सदर फाटक तक आये। यहाँ मुखर्जी उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे।

अधर श्रीरामकृष्ण को खोज रहे थे।

श्रीरामकृष्ण-(सहास्य)-इनके (मास्टर के) साथ तुम लोग सदा मिलते रहना और बातचीत करना।

प्रिय मुखर्जी-(सहास्य)-हाँ, ये अब से हमारे मास्टर बने।

श्रीरामकृष्ण-गंजेडी का स्वभाव है कि दूसरे गंजेडी को देखकर उसे आनन्द होता है। अमीरों के आने पर तो वह बोलता भी नहीं। परन्तु अगर एक अभागा कहीं का गंजेडी आ जाय तो उसे गले लगाने लगता है। (सब हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण बगीचे के रास्ते से पश्चिम की ओर होकर अपने कमरे की ओर जा रहे हैं। रास्ते में कह रहे हैं—'यदु बड़ा हिन्दू है—भागवत की बहुत सी बातें कहता है।'

मणि कालीमन्दिर में चरणामृत ले रहे हैं। श्रीरामकृष्ण भी वहीं पहुँचे। माता के दर्शन करेंगे।

रात के नौ बजे मुखर्जियों ने प्रणाम करके विदा ली। अधर और मास्टर जमीन पर बैठे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण अधर से राखाल की बातें कर रहे हैं।

राखाल वृन्दावन में हैं, बलराम के साथ। पत्र द्वारा संवाद मिला था, वे बीमार हैं। दो-तीन दिन हुए श्रीरामकृष्ण राखाल की बीमारी का हाल पाकर इतने चिन्तित हो गये थे कि दोपहर की सेवा के समय हाजरा से, क्या होगा, कहकर बालक की तरह रोने लगे थे। अधर ने राखाल को रजिस्ट्री करके चिट्ठी लिखी है। परन्तु अब तक पत्र की स्वीकृति उन्हें नहीं मिली।

श्रीरामकृष्ण--नारायण को पत्र मिला और तुम्हें पत्र का जवाब भी नहीं मिला ?

अधर--जी नहीं, अभी तक तो नहीं मिला ।

श्रीरामकृष्ण--और मास्टर को भी लिखा है ।

श्रीरामकृष्ण चैतन्य-लीला देखने जायेंगे, इसी सम्बन्ध में बातचीत हो रही है ।

श्रीरामकृष्ण--(हँसते हुए)--यदु ने कहा था, एक रुपये वाली जगह से खूब दीख पड़ता है और सस्ता भी है !

"एक बार हम लोगों को पेनेटी ले जाने की बातचीत हुई थी, यदु ने हम लोगों के चढ़ने के लिए चलती नाव किराये पर लेने की बातचीत की थी ! (सब हँसते हैं ।)

"पहले ईश्वर की बातें कुछ-कुछ सुनता था । अब वह नहीं दीख पड़ता । कुछ खुशामदी लोग यदु के दाँये-बाँये हमेशा बने रहते हैं--उन लोगों ने और चकाचौंध लगा दिया है ।

"बड़ा हिसाबी है । जाने के साथ ही उसने पूछा, कितना किराया है ? मैंने कहा, 'तुम्हारा न सुनना ही अच्छा है । तुम ढाई रुपया देना ।' इससे चुप हो गया और वही ढाई रुपये देता है !" (सब हँसते हैं ।)

रात हो गयी है । अधर जायेंगे, प्रणाम कर रहे हैं ।

श्रीरामकृष्ण--(मास्टर से)--नारायण को लेते आना ।

परिच्छेद १९

अध्यात्मयोग

(१)

दक्षिणेश्वर में महेन्द्र, राखाल आदि भक्तों के साथ

श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में भक्तों के साथ बैठे हुए हैं। परन्तु शान्त है। गुरुवार, १९ सितम्बर, १८८४। दिन के दो बजे होंगे। आज भादों की अमावास्या है, महालया। श्रीयुत महेन्द्र मुखोपाध्याय और उनके भाई श्रीयुत प्रिय मुखोपाध्याय, मास्टर, बाबूराम, हरीश, किशोरी और लाटू जमीन पर बैठे हैं। कुछ लोग खड़े भी हैं—कोई कमरे में आ-जा रहे हैं। श्रीयुत हाजरा बरामदे में बैठे हैं। राखाल बलराम के साथ वृन्दावन में हैं।

श्रीरामकृष्ण—(महेन्द्रादि भक्तों से)—कलकत्ते में मैं कप्तान के घर गया था। लौटते हुए बड़ी रात हो गयी थी।

"कप्तान का कैसा स्वभाव है! कैसी भक्ति है! छोटी धोती पहनकर आरती करता है। पहले तीन बत्तीवाले प्रदीप से आरती करता है—इसके बाद एक बत्तीवाले प्रदीप से और फिर कपूर से।

"उस समय बोलता नहीं। मुझे इशारे से आसन पर बैठने के लिए कहा।

"पूजा करते समय आँखें लाल हो जाती हैं, मानो बर्रे ने काट लिया हो।

"गाना तो नहीं गा सकता। परन्तु स्तवपाठ बहुत ही सुन्दर

करता है।

"वह अपनी माँ के पास नीचे बैठता है। माँ ऊँचे आसन पर बैठती हैं।

"बाप अंग्रेज का हवलदार है। लड़ाई के मैदान में एक हाथ में बन्दूक रखता है और दूसरे हाथ से शिवजी की पूजा करता है। नौकर शिवमूर्ति बना दिया करता है। बिना पूजा किये जल ग्रहण भी नहीं करता। सालाना छः हजार रुपये पाता है।

"कभी कभी अपनी माँ को काशी भेजता है। वहाँ उसकी माँ की सेवा पर बारह-तेरह आदमी रहते हैं। बड़ा खर्च होता है। वेदान्त, गीता, भागवत, कप्तान को कण्ठाग्र है।

"वह कहता है, कलकत्ते के बाबुओं का आचार बहुत ही भ्रष्ट है।

"पहले उसने हठयोग किया था, इसलिए जब मुझे समाधि या भावावस्था होती है तब सिर पर हाथ फेरने लगता है।

"कप्तान की स्त्री के दूसरे इष्ट देवता हैं, गोपाल। अब की बार उसे उतनी कंजूसी करते नहीं देखा। वह भी गीता जानती है, कैसी भक्ति है उनकी!—मुझे जहाँ भोजन कराया, वहीं हाथ मुँह भी धुलाया। दाँत खोदने की सींक भी वहीं दी।

"मेरे खा चुकने पर कप्तान या उसकी पत्नी पंखा झलती है।

"उनमें बड़ी भक्ति है। साधुओं का बड़ा सम्मान करते हैं। पश्चिम के आदमियों में साधुओं के प्रति भक्ति ज्यादा है। जंग बहादुर के लड़के और उसके भतीजे कर्नल यहाँ आये थे। जब आये तब पतलून उतारकर मानो बहुत डरते हुए आये।

"कप्तान के साथ उसके देश की एक स्त्री भी आयी थी। बड़ी भक्त थी—विवाह अभी नहीं हुआ था। गीतगोविन्द के गाने कण्ठाग्र थे। द्वारका बाबू आदि उसका गाना सुनने के लिए

बैठे थे। जब उसने श्रीगोविन्द का गाना गाया तब द्वारका बाबू रूमाल से आँसू पोंछने लगे। विवाह क्यों नहीं किया, इस प्रश्न के पूछने पर उसने कहा—'ईश्वर की दासी हूँ, और किसकी दासी होऊँगी।' और सब लोग उसे देवी समझकर बहुत मानते हैं—जैसा पुस्तकों में लिखा हुआ मिलता है।

(महेन्द्रादि से) "आप लोग आते हैं, यह सुनता हूँ कि इससे कुछ उपकार होता है तब मन बहुत अच्छा रहता है। (मास्टर से) यहाँ आदमी क्यों आते हैं?—मैं तो पढ़ा-लिखा भी तो नहीं हूँ।"

मास्टर—जी, कृष्ण जब स्वयं सब चरवाहे और गौएँ बन गये (ब्रह्मा के हर लेने पर) तब चरवाहों की माताएँ नये बच्चों को पाकर फिर यशोदा के पास नहीं गयीं।

श्रीरामकृष्ण—इससे क्या हुआ?

मास्टर—ईश्वर स्वयं ही चरवाहे बने थे कि नहीं, इसीलिए उनमें इतना आकर्षण था। ईश्वर की सत्ता रहने से ही मन खिंच जाता है।

श्रीरामकृष्ण—यह योगमाया का आकर्षण था—यह जादू डाल देती है। जटिला के डर से बछड़े को उठाये हुए सुबल का रूप धरकर राधिका जा रही थीं; जब उन्होंने योगमाया की शरण ली तब जटिला ने भी उन्हें आशीर्वाद दिया।

"हरि की सब लीलाएँ योगमाया की सहायता से हुई थीं।

"गोपियों का प्यार क्या है, परकीया रति है। कृष्ण के लिए गोपियों को प्रेमोन्माद हुआ था। अपने स्वामी के लिए इतना नहीं होता। अगर कोई कहे, 'अरी तेरा स्वामी आया है,' तो कहती है, 'आया है तो आये—खुद भोजन कर लेगा।' परन्तु

आकर दूसरे पुरुष की बात सुनती है कि बड़ा रसिक है, बड़ा सुन्दर है और रसपण्डित है तो दौड़कर देखने के लिए जाती है—और ओट से झाँककर देखती है।

"अगर कहो कि उन्हें तो हमने देखा ही नहीं फिर गोपियों की तरह उन पर चित्त कैसे लग सकता है?—तो इसके लिए यह कहना है कि सुनने पर भी वह आकर्षण होता है।

"एक गाने में कहा है, बिना जाने ही, उनका नाममात्र सुनकर मन उनमें आकर लिप्त हो गया।"

एक भक्त—अच्छा जी, वस्त्रहरण का क्या अर्थ है?

श्रीरामकृष्ण—आठ पाश हैं। गोपियों के सब पाश छिन्न हो गये थे, केवल लज्जा बाकी थी। इसलिए उन्होंने उस पाश का भी मोचन कर दिया। ईश्वर-प्राप्ति होने पर सब पाश चले जाते हैं।

(महेन्द्र मुखर्जी आदि भक्तों से) "ईश्वर पर सब का मन नहीं लगता। आधारों की विशेषता होती है। संस्कार के रहने से होता है। नहीं तो बागबाजार में इतने आदमी थे, उनमें केवल तुम्हीं यहाँ कैसे आये?

"मलय-पर्वत की हवा के लगने पर सब पेड़ चन्दन के हो जाते हैं; सिर्फ पीपल, बट, सेमर, ऐसे ही कुछ पेड़ चन्दन नहीं बनते।

"तुम लोगों को रुपये-पैसे का कुछ अभाव थोड़े ही है। योगभ्रष्ट होने पर भाग्यवानों के यहाँ जन्म होता है, इसके पश्चात् फिर वह ईश्वर के लिए तपस्या करता है।"

महेन्द्र मुखर्जी—मनुष्य क्यों योगभ्रष्ट होता है?

श्रीरामकृष्ण—पूर्वजन्म में ईश्वर की चिन्ता करते हुए एकाएक भोग करने की लालसा हुई होगी। इस तरह होने पर योगभ्रष्ट हो जाता है। और दूसरे जन्म में फिर उसी के अनुसार

जन्म होता है ।

महेन्द्र—इसके बाद उपाय ?

श्रीरामकृष्ण—कामना के रहते, भोग की लालसा के रहते, मुक्ति नहीं होती । इसलिए खाना-पहनना, रमण करना, यह सब कर लेना । (सहास्य) तुम क्या कहते हो ? स्वकीया के साथ या परकीया के साथ ?

मास्टर, मुखर्जी, ये लोग हँस रहे हैं ।

(२)

श्रीमुख द्वारा कथित आत्मचरित

श्रीरामकृष्ण—भोग-लालसा का रहना अच्छा नहीं । इसीलिए मेरे मन में जो कुछ उठता था, मैं कर डालता था ।

"बड़ा बाजार के रंगे सन्देश खाने की इच्छा हुई । इन लोगों ने मँगा दिया । मैंने खूब खाया, फिर बीमार पड़ गया ।

"लड़कपन में गंगा नहाते समय, एक लड़के की कमर में सोने की करधनी देखी थी । इस अवस्था के बाद उस करधनी के पहनने की इच्छा हुई । परन्तु अधिक देर रख सकता ही न था, करधनी पहनी तो भीतर से सरसराकर हवा ऊपर की ओर चढ़ने लगी—देह में सोना छू गया न ? जरा देर रखकर उसे खोल डाला । नहीं तो उसे तोड़ डालना पड़ता ।

"धनियाखाली का खोईचूर (एक तरह की मिठाई), खानाकुल कृष्णनगर का सरभाजा (एक तरह की मिठाई) खाने की भी इच्छा हुई थी । (सब हँसते हैं ।)

"शम्भू के चण्डी-गीत सुनने की इच्छा हुई थी । उसके सुन लेने के बाद फिर राजनारायण के चण्डी-गीतों के सुनने की इच्छा

हुई। उसके गीतों को भी मैंने सुना।

"उस समय बहुत से साधु आते थे। इच्छा हुई कि उनकी सेवा के लिए एक अलग भण्डार किया जाय। सेजो बाबू ने वैसा ही किया। उसी भण्डार से साधुओं को सीधा, लकड़ी आदि सब दिया जाता था।

"एक बार जी में आया कि खूब अच्छा जरी का साज पहनूं और चाँदी की गुड़गुड़ी में तम्बाकू पीऊँ। सेजो बाबू ने नया साज, गुड़गुड़ी सब भेज दिया। साज पहना, गुड़गुड़ी कितनी ही तरह से पीने लगा। एक बार इस ओर से, एक बार उस ओर से—खड़ा हो कर और बैठकर। तब मैंने कहा, मन, देख ले, इसी का नाम है चाँदी की गुड़गुड़ी में तम्बाकू पीना। बस इतने से ही गुड़गुड़ी का त्याग हो गया। साज थोड़ी देर में खोल डाला।—पैरों से उसे रौंदने लगा—कहा, इसी का नाम है साज! इसी पोशाक के कारण रजोगुण बढ़ता है।"

बलराम के साथ राखाल वृन्दावन में हैं। पहले-पहल वे वृन्दावन की बड़ी तारीफ करके चिट्ठी लिखते थे। मास्टर को चिट्ठी लिखी थी—'यह बड़ी अच्छी जगह है—मोर नाचते रहते हैं—और नृत्य गीत, सदा ही आनन्द होता है!' इसके पश्चात् उन्हें बुखार आया, वृन्दावन का बुखार! श्रीरामकृष्ण को बड़ी चिन्ता रहती है। उनके लिए चण्डी के नाम पर उन्होंने मन्नत की है। श्रीरामकृष्ण राखाल की बातें कर रहे हैं—"यहाँ बैठकर पैर दबाते समय राखाल को पहले-पहल भाव हुआ था। एक भागवती पण्डित इस कमरे में बैठा हुआ भागवत की बातें कह रहा था। उन्हीं बातों को सुन-सुनकर राखाल सिहर-सिहर उठता था। इसके बाद वह बिलकुल स्थिर हो गया।

"दूसरी बार बलराम के घर में भाव हुआ था। भावावेश में लेट गया था।

"राखाल साकार की श्रेणी का है, निराकार की बात सुनकर उठ जायगा।

"उसके लिए मैंने चण्डी की मन्नत की। उसने घर-द्वार सब छोड़कर मेरा सहारा लिया था न? उसकी स्त्री के पास उसे मैं ही भेज दिया करता था, भोग कुछ बाकी रह गया था।

"वृन्दावन से इन्हें लिख रहा है, यह बड़ा अच्छा स्थान है—मोरों का नृत्य हुआ करता है। अब मोरों ने विपत्ति में डाल दिया।

"वहाँ बलराम के साथ है। अहा, बलराम का क्या स्वभाव है! मेरे लिए उस देश में नहीं जाता। उसके भाई ने उसे मासिक व्यय देना बन्द कर दिया था और लिखा था—'तुम यहाँ आकर रहो, वाहियात क्यों इतना रुपया खर्च करते हो!' परन्तु उसने उसकी बात नहीं सुनी, मुझे देखने के लिए।

"कैसा स्वभाव है! दिन-रात केवल देवताओं को लेकर रहता है। माली फूलों की माला बनाते ही रहते हैं। रुपये बचेंगे, इस विचार से वो महीने वृन्दावन में रहेगा। दो सौ का मुसहरा पाता है।

"लड़कों को क्यों प्यार करता हूँ?—उनके भीतर कामिनी और कांचन का प्रवेश अब तक नहीं हो पाया। मैं उन्हें नित्य-सिद्ध देखता हूँ!

"नरेन्द्र इच्छे...रहत आया, एक मैली चादर ओढ़े हुए था, परन्तु उसके मुँह और उसकी आँखें देखकर जान पड़ता था कि उसके भीतर कुछ है। तब ज्यादा गाने न जानता था। दो-

एक गाने।

"जब आता था तब घर भर आदमी रहते थे, परन्तु मैं उसी की ओर नजर करके बातचीत करता था। जब वह कहता था—'इससे भी बातचीत कीजिये'—तब दूसरे लोगों से बातचीत करता था।

"यदु मल्लिक के बगीचे में रोया करता था—उसे देखने के लिए मैं पागल हो गया था। वहाँ भोलानाथ का हाथ पकड़कर मैं रोने लगा! भोलानाथ ने कहा, एक कायस्थ के लड़के के लिए आपको इस तरह का रोना शोभा नहीं देता। मोटे ब्राह्मण ने एक दिन हाथ जोड़कर कहा—'वह बहुत कम पढ़ा-लिखा है, उसके लिए भी आप इतना रोते हैं?'

"भवनाथ नरेन्द्र की जोड़ी है—दोनों जैसे पति-पत्नी! इसीलिए भवनाथ से मैंने नरेन्द्र के पास ही मकान भाड़े पर लेने को कहा। वे दोनों ही अरूप के दर्जे के हैं।

संन्यासियों का कठिन नियम। लोकशिक्षार्थ त्याग

"मैं लड़कों को मना कर देता हूँ जिससे वे औरतों के पास आया-जाया न करें।

"हरिपद एक घोषाल-औरत के फेर में पड़ा है। वह वात्सल्य-भाव करती है। हरिपद बच्चा है, कुछ समझता तो है नहीं। मैंने सुना, हरिपद उसकी गोद में सोता है। और वह अपने हाथ से उसे भोजन कराती है। मैं उससे कह दूँगा, यह सब अच्छा नहीं। इसी वात्सल्यभाव से फिर हीन भाव पैदा हो जाते हैं।

"उन लोगों की वर्तमान साधना आदमी को लेकर की जाती है। आदमी को वे लोग श्रीकृष्ण समझती हैं। वे उसे

'रामकृष्ण' कहती है। गुरु पूछता है, 'रामकृष्ण' तुझे मिले? वे कहती है—हाँ, मिले।

"उसी दिन वह औरत आयी थी। उसकी चितवन का ढंग मैंने देखा, अच्छा नहीं है। उसी के भावों में उससे कहा, हरिपद के साथ जैसा चाहो करो, परन्तु बुरा भाव न लाना।

"लड़कों की यह साधना की अवस्था है। इस समय केवल त्याग करना चाहिए। सन्यासियों को स्त्रियों का चित्र भी न देखना चाहिए। मैं उनसे कहता हूँ, स्त्री अगर भक्त भी हो तो भी उसके पास बैठकर बातचीत न करनी चाहिए। खड़े होकर चाहे कुछ कह लिया जाय। सिद्ध होने पर भी इसी तरह चलना पड़ता है—अपनी सावधानी के लिए भी और लोकशिक्षा के लिए भी। औरतों के आने पर मैं थोड़ी ही देर में कहता हूँ, तुम लोग जाकर देवताओं के दर्शन करो। इससे भी अगर वे न उठीं तो मैं खुद उठ जाता हूँ। मुझे देखकर दूसरे शिक्षा ग्रहण करेंगे।

"अच्छा, ये जो सब लड़के आ रहे हैं, इसका क्या अर्थ है? और तुम लोग जो आ रहे हो, इसका भी क्या अर्थ है? इसके (अपने को दिखाकर) भीतर कुछ है जरूर, नहीं तो आकर्षण फिर कैसे होता?

"उस देश में जब मैं हृदय के घर में था, मुझे वे लोग श्याम-बाजार ले गये थे। मैं समझा, गौरांग के भक्त हैं वहाँ। गाँव में घुसने से पहले ही मुझे माँ ने दिखा दिया—साक्षात् गौरांग! फिर वहाँ इतना आकर्षण हुआ कि सात दिन और सात रात लोगों की भीड़ लगी रही। सदा ही कीर्तन और आनन्द मचा हुआ था। इतने आदमी आये कि चार-दीवार और पेड़ों पर भी आदमी चढ़कर बैठे थे।

"मैं नटवर गोस्वामी के यहाँ गया था। वहाँ रातदिन-भीड़ लगी रहती। मैं वहाँ से भागकर एक ताँती (जुलाहे) के यहाँ सुबह को बैठा करता था। फिर देखा, थोड़ी ही देर में सब लोग वहाँ भी पहुँच गये थे। सब खोल-करताल ले गये।—फिर 'तिर-किट्-तिरकिट्' कर रहे थे। भोजन आदि तीन बजे होता था।

"चारों ओर अफवाह फैल गयी थी कि एक ऐसा आदमी आया है जो सात बार मरकर सातों बार जी उठता है। मुझे सर्दी-गर्मी न हो जाय इस डर से हृदय मुझे बाहर मैदान में घसीट ले जाता था। वहाँ फिर चीटियों की पाँत की तरह आदमी उमड़ चलते थे—फिर वही खोल-करताल और 'तिरकिट्'। हृदय ने खूब फटकारा, कहा—'क्या हम लोगों ने कभी कीर्तन सुना नहीं?'

"वहाँ के गोस्वामी झगड़ा करने के लिए आये थे। उन्होंने सोचा था कि ये लोग हमारा चढ़ाव हड़पने के लिए आये हैं। उन्होंने देखा, मैंने एक जोड़ा धोती तो क्या एक तागा सूत भी नहीं लिया। किसी ने कहा ब्रह्मज्ञानी है। इस पर गोस्वामी सब थाह लेने के लिए आये। एक ने पूछा, इनके माला, तिलक क्यों नहीं हैं? उन्हीं में से किसी ने कहा, नारियल का पत्ता आप ही निकलकर गिर गया है। नारियल के पत्तेवाली बात मैंने वहीं सीखी थी। ज्ञान के होने पर उपाधियाँ आप छूट जाती हैं।

"दूर के गाँवों से लोग आकर इकट्ठे होते थे। वे लोग रात को वहीं रहते थे। जिस घर में हम लोग थे, उसके आँगन में रात को औरतें सोई हुई थीं। लघुशंका करने के लिए बाहर जा रहा था, उन लोगों ने कहा, पेशाब यहीं (आँगन में ही) करो।

"आकर्षण किसे कहते हैं, यह मैं वहीं समझा था। ईश्वर की लीला में योगमाया की सहायता से आकर्षण होता है, एक

तरह का जादू-सा चल जाता है।"

(३)

श्रीरामकृष्ण और श्री राधिका गोस्वामी

दोनों मुखर्जी भाइयों से वातचीत करते हुए दिन के तीन बज गये। श्रीयुत राधिका गोस्वामी ने आकर प्रणाम किया। उन्होंने श्रीरामकृष्ण को पहली ही बार देखा है। उम्र तीस के भीतर होगी। गोस्वामी ने आसन ग्रहण किया।

श्रीरामकृष्ण–क्या आप लोग अद्वैत-वंश के हैं?—खानदान का गुण तो होता ही है।

"अच्छे आम के पेड़ में अच्छे ही आम लगते हैं। (सब हँसे।) खराब आम नहीं होते। केवल मिट्टी के गुण से कुछ छोटे-बड़े हो जाते हैं। आपकी क्या राय है?"

गोस्वामी–(विनयपूर्वक)–जी, मैं क्या जानूं?

श्रीरामकृष्ण–तुम कुछ भी कहो, दूसरे आदमी क्यों छोड़ने लगे?

"ब्राह्मण में चाहे लाख दोष हों परन्तु उसे भरद्वाज गोत्र और शाण्डिल्य गोत्र का समझकर लोग उसकी पूजा करते हैं। (मास्टर से) शंखचीलवाली बात जरा सुना तो दो।"

मास्टर चुपचाप बैठे हुए हैं। यह देखकर श्रीरामकृष्ण स्वयं कह रहे हैं—

"वंश में अगर महापुरुष का जन्म हुआ हो तो वे खींच लेंगे, चाहे लाख दोष भी हों। जब गन्धर्वों ने कौरवों को बाँध लिया तब युधिष्ठिर ने उन्हें मुक्त कर दिया। जिस दुर्योधन ने इतनी शत्रुता की थी, जिसके लिए युधिष्ठिर को वनवास भी सहना

पड़ा, उसी को उन्होंने मुक्त कर दिया।

"इसके सिवा भेष का भी आदर किया जाता है। भेष देखकर सत्य वस्तु की उद्दीपना होती है। चैतन्य देव ने गधे को भेष पहनाकर साष्टांग प्रणाम किया था।

✓ "शंखचील (सफेद परवाली चील) को देखकर लोग प्रणाम क्यों करते हैं? कंस जब मारने के लिए चला था तब भगवती शंखचील का रूप धारण कर उड़ गयी थी। इसलिए अब भी जब लोग शंखचील देखते हैं, तो उसे प्रणाम करते हैं।

"चानक के पल्टन के भीतर अंग्रेज को आते हुए देखकर सिपाहियों ने सलाम किया। कुँवर सिंह ने मुझे समझाया कि अंग्रेजों का राज्य है, इसीलिए अंग्रेजों को सलामी दी जाती है।

"शाक्तों का तन्त्र मत है। वैष्णवों का पुराण मत। वैष्णव जो साधना करते हैं उसके कहने में दोष नहीं है। तान्त्रिक को सब कुछ गुप्त रखना पड़ता है। इसीलिए तान्त्रिक को अच्छी तरह कोई समझ नहीं सकता।

(गोस्वामी से) "आप लोग अच्छे हैं। कितना जप करते हैं? और हरिनाम की संख्या क्या है?"

गोस्वामी—(विनय भाव से)—जी, मैं क्या करता हूँ। मैं अत्यन्त अधम—नीच हूँ।

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—दीनता, यह अच्छा तो है। एक भाव और है—'मैं उनका नाम ले रहा हूँ, मुझे फिर पाप कैसा!' जो लोग, दिन रात 'मैं पापी हूँ, मैं अधम हूँ' ऐसा किया करते हैं, वे वैसे ही हो जाते हैं। कितना अविश्वास है! उनका इतना नाम ले करके भी पाप-पाप कहता है!

गोस्वामी यह बात आश्चर्यचकित हो सुन रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—मैंने भी वृन्दावन में भेष (वैष्णवों का) धारण किया था। पन्द्रह दिन तक रखा था। (भक्तों से) सब भावों की उपासना कुछ-कुछ दिनों तक करता था। तब शान्ति होती थी।

(सहास्य) "मैंने सब तरह किया है—सब शास्त्रों को मानता हूँ। शाक्तों को भी मानता हूँ और वैष्णवों को भी। उधर वेदान्तवादियों को भी मानता हूँ। यहाँ इसीलिए सब मतों के आदमी आया करते हैं। और सब यही सोचते हैं कि ये हमारे मत के आदमी हैं। आजकल के ब्राह्म-समाजवालों को भी मानता हूँ।

"एक आदमी के पास एक रंग का गमला था। उस गमले में एक बड़े आश्चर्य का गुण यह था कि जिस किसी रंग में वह कपड़े रँगना चाहता था, उसी रंग में कपड़े रँग जाते थे।

"परन्तु किसी होशियार आदमी ने कहा, तुमने इसमें जो रंग घोला है वही रंग मुझे दो। (श्रीरामकृष्ण और सब हँसते हैं।)

"एक ही ढर्रे का मैं क्यों हो जाऊँ ? 'अमुक मत के आदमी फिर न आयेंगे' मुझे इसका भय नहीं है। कोई आये चाहे न आये, मुझे इसकी जरा भी परवाह नहीं है। लोग मेरी मुट्ठी में रहेंगे, ऐसी कोई बात मेरे मन में है ही नहीं। अधर सेन ने बड़ी नौकरी के लिए माँ से कहने के लिए कहा था—उसको वह काम नहीं मिला। वह अगर इसके लिए कुछ सोचे तो मुझे इसकी जरा भी परवाह नहीं है।

"केशव सेन के घर जाने पर एक और भाव हुआ। वे लोग निराकार-निराकार किया करते हैं। इस पर, जब भावावेश हुआ तो मैंने कहा—माँ, यहाँ न आना, ये लोग तेरे रूप को नहीं मानते।"

साम्प्रदायिकता के विरोध की बात सुनकर गोस्वामीजी चुपचाप बैठे हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण-(सहास्य)-विजय इस समय बहुत अच्छा हो गया है।

"हरिनाम करते हुए जमीन पर गिर जाता है।

"प्रातः चार बजे तक कीर्तन और ध्यान, यह सब लेकर रहता है। इस समय गेरुआ पहने हुए है। देव-विग्रह देखता है तो एकदम साष्टांग प्रणाम करता है।

"जहाँ गदाधर* की पाठशाला थी वहाँ विजय को ले गया था और कहा, यहीं वे ध्यान करते थे। बस कहने के साथ ही उसने साष्टांग प्रणाम किया।

"चैतन्यदेव के चित्र के सामने फिर साष्टांग प्रणाम किया।"

गोस्वामी-राधाकृष्ण की मूर्ति के सामने ?

श्रीरामकृष्ण-साष्टांग प्रणाम ! और बड़ा आचारी है।

गोस्वामी-अब समाज में लिया जा सकता है।

श्रीरामकृष्ण-लोग क्या कहेंगे, इसकी उसे कोई चिन्ता नहीं है।

गोस्वामी-ऐसे आदमी को प्राप्त कर समाज भी कृतार्थ हो सकता है।

श्रीरामकृष्ण-मुझे बहुत मानता है।

"उसे पाना ही मुश्किल हो रहा है। आज ढाके से बुलावा आता है तो कल किसी दूसरी जगह से; इस तरह सदा ही काम में उलझा रहता है।

"उसके समाजवालों में बड़ी गड़बड़ी मची हुई है।"

गोस्वामी-क्यों ?

श्रीरामकृष्ण-उसे लोग कह रहे हैं, तुम साकारवादियों

* एक प्रसिद्ध वैष्णव साधु

के साथ मिल रहे हो, तुम पौत्तलिक हो।

"और बड़ा उदार और सरल है। सरल हुए बिना ईश्वर की कृपा नहीं होती।"

'गृहस्थ, आगे बढ़ो।' अभ्यासयोग

अब श्रीरामकृष्ण मुखर्जियों से बातचीत कर रहे हैं। महेन्द्र उनमें बड़े हैं, व्यवसाय करते हैं, किसी की नौकरी नहीं करते। छोटे प्रियनाथ इंजीनियर थे, अब उन्होंने कुछ धनोपार्जन कर लिया है, अब नौकरी नहीं करते। बड़े भाई की उम्र ३५-३६ के लगभग होगी। उनका मकान केंडेटी मौजे में है। कलकत्ते के बागबाजार में भी उनका अपना मकान है।

श्रीरामकृष्ण-(सहास्य)-कुछ उद्दीपना हो रही है, यह देखकर चुप्पी न साध जाना। बढ़ जाओ! चन्दन की लकड़ी के बाद और भी चीजें हैं---चाँदी की खान---सोने की खान!

प्रिय-(सहास्य)-जी, पैरों में जो बेड़ियाँ पड़ी हुई हैं, उनके कारण बढ़ा नहीं जाता।

श्रीरामकृष्ण-पैरों के बन्धन से क्या होता है? बात असल मन की है।

"मन के द्वारा ही आदमी बँधा हुआ है और उसी के द्वारा छूटता भी है। दो मित्र थे। एक वेश्या के घर गया। दूसरा भागवत सुन रहा था। पहला सोच रहा था, मुझे धिक्कार है, मेरा मित्र भागवत सुन रहा है और मैं वेश्या के यहाँ पड़ा हुआ हूँ। उधर दूसरा सोच रहा था, मैं बड़ा बेवकूफ हूँ, मेरा मित्र तो मजा लूट रहा है और मैं यहाँ आकर फँस गया। पर देखो, वेश्या के यहाँ जानेवाले को तो विष्णुदूत आकर वैकुण्ठ में ले गये और दूसरे को यमदूतों ने नरक में घसीटकर डाल दिया।

प्रिय–मन मेरे वस में भी तो नहीं है।

श्रीरामकृष्ण–यह क्या ! अभ्यासयोग—अभ्यास करो, फिर देखोगे मन को जिस ओर ले जाओगे, उसी ओर जायगा।

"मन धोबी के यहां का कपड़ा है। वहां से लाकर उसे लाल रंग से रँगो तो लाल हो जायगा और आसमानी से रँगो तो आसमानी। जिस रंग से रँगोगे वही रंग उस पर चढ़ जायगा।

(गोस्वामी से) "आपको कुछ पूछना तो नहीं है ?"

गोस्वामी–(बड़े ही विनय भाव से)–जी नहीं, दर्शन हो गये, और सब बातें तो सुनता ही था।

श्रीरामकृष्ण–देवताओं के दर्शन करो।

गोस्वामी–(विनयपूर्वक)–कुछ महाप्रभु के गुणकीर्तन सुनना चाहता हूँ।

श्रीरामकृष्ण कीर्तन गाने लगे। कीर्तन के समाप्त हो जाने पर श्रीरामकृष्ण गोस्वामीजी से कह रहे हैं—यह तो आप लोगों के ढंग का हुआ। लेकिन अगर कोई शाक्त या घोषपाड़ा के मत का आदमी आ जाय तो मैं दूसरे ढंग के गाने गाऊँगा।

"यहाँ सब तरह के आदमी आते हैं—वैष्णव, शाक्त, कर्ता-भजा, वेदान्तवादी और आजकल के ब्राह्म-समाजवाले आदि भी। इसलिए यहां सब तरह के भाव हैं।

"उन्हीं की इच्छा से अनेक धर्मों और मतों का चलन हुआ है।

"जिसे जो सह्य है उसे उन्होंने वही दिया है।

"जिसकी जैसी प्रकृति, जिसका जैसा भाव, वह उसे ही लेकर रहता है।

"किसी धार्मिक मेले में अनेक तरह की मूर्तियाँ पायी जाती हैं, और वहां अनेक मतों के आदमी जाते हैं। राधा-कृष्ण, हर-

पार्वती, सीता-राम, जगह जगह पर भिन्न भिन्न मूर्तियाँ रखी रहती हैं। और हरएक मूर्ति के पास लोगों की भीड़ होती है। जो लोग वैष्णव हैं उनकी अधिक संख्या राधा-कृष्ण के पास खड़ी हुई है, जो शाक्त हैं, उनकी भीड़ हर-पार्वती के पास लगी है। जो रामभक्त हैं, वे सीताराम की मूर्ति के पास खड़े हुए हैं।

"परन्तु जिनका मन किसी देवता की ओर नहीं है, उनकी और बात है। वेश्या अपने आशिक की झाड़ू से खबर ले रही है, ऐसी मूर्ति भी वहाँ बनायी जाती है। उस तरह के आदमी मुँह फैलाये हुए वहीं मूर्ति देखते और अपने मित्रों को चिल्लाते हुए उधर ही बुलाते भी हैं, कहते हैं—'अरे वह सब क्या खाक देखते हो? इधर आओ जरा, यहाँ तो देखो!'"

सब हँस रहे हैं। गोस्वामी प्रणाम करके विदा हुए।

(४)

संस्कार तथा तपस्या का प्रयोजन। साधु-सेवा

दिन के पाँच बजे हैं। श्रीरामकृष्ण पश्चिमवाले बरामदे में हैं। बाबूराम, लाटू, दोनों मुखर्जी भाई, मास्टर आदि भक्त उनके साथ हैं।

श्रीरामकृष्ण—(मास्टर आदि से)—मैं क्यों एक ढर्रे का होऊँ? वे लोग वैष्णव हैं, बड़े कट्टर हैं, सोचते हैं, हमारा ही धर्म ठीक है, और सब वाहियात है। मैंने जो बातें सुनायी हैं, उनसे उन्हें चोट पहुँची होगी। (हँसते हुए) हाथी के सिर पर अंकुश मारा जाता है। कहते हैं, वहीं उसके सिर पर कोष (कोमलस्थल) रहता है। (सब हँसे।)

श्रीरामकृष्ण लड़कों के साथ हँसी करने लगे।

दोनों मुखर्जी बरामदे से चले गये। बगीचे में कुछ देर टहलेंगे।

श्रीरामकृष्ण–(हँसते हुए)–कहीं मुखर्जियों ने हमारी हँसी को बुरा तो नहीं मान लिया ?

मास्टर–क्यों ? कप्तान ने तो कहा था, आपकी अवस्था बालक की है। ईश्वर-दर्शन करने पर बालक की अवस्था हो जाती है।

श्रीरामकृष्ण–और बाल्य, कैशोर और युवा। कैशोर अवस्था में दिल्लगी-मजाक सूझता है। कभी कुछ मुंह से निकल जाता है। पर युवावस्था में सिंह की तरह लोकशिक्षा देता है।

"तुम उन्हें मेरी मानसिक अवस्था समझा देना।"

मास्टर–जी, मुझे समझाना न होगा। क्या वे जानते नहीं ?

श्रीरामकृष्ण लड़कों के साथ आमोद-प्रमोद करते हुए एक भक्त से कह रहे हैं–"आज अमावास्या है,माँ के मन्दिर में जाना।"

सन्ध्या के बाद आरती का शब्द सुनायी दे रहा है। श्रीरामकृष्ण बाबूराम से कह रहे हैं–"चल रे, चल काली-मन्दिर में।" श्रीरामकृष्ण बाबूराम के साथ जा रहे हैं। साथ मास्टर भी हैं। हरीश बरामदे में बैठे हुए हैं, श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, जान पड़ता है, इसे भावावेश हो गया।

आँगन से जाते हुए श्रीरामकृष्ण ने जरा श्रीराधाकान्त की आरती देखी। फिर काली-मन्दिर की ओर जाने लगे। जाते ही जाते हाथ उठाकर जगन्माता को पुकारने लगे–"माँ–ओ–माँ –ब्रह्ममयी !" मन्दिर के चबूतरे पर मूर्ति के सामने पहुँचकर भूमिष्ठ हो माता को प्रणाम करने लगे। माता की आरती हो रही है। श्रीरामकृष्ण मन्दिर में प्रवेश कर चामर लेकर व्यजन करने लगे।

आरती समाप्त हो गयी। जो लोग आरती देख रहे हैं, सब ने एक ही साथ भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण ने मन्दिर के बाहर आकर प्रणाम किया। महेन्द्र मुखर्जी आदि भक्तों ने भी प्रणाम किया।

आज अमावास्या है। श्रीरामकृष्ण को पूर्ण मात्रा में भावावेश हो गया। बाबूराम का हाथ पकड़कर मतवाले की तरह झूमते हुए अपने कमरे में आ रहे हैं।

कमरे के पश्चिमवाले गोल बरामदे में एक बत्ती जला दी गयी है।

श्रीरामकृष्ण उसी बरामदे में आकर जरा बैठे। 'हरि ॐ' 'हरि ॐ' 'हरि ॐ' कहते हुए अनेक प्रकार के तन्त्रोक्त बीज-मन्त्रों का भी उच्चारण कर रहे हैं।

कुछ देर पश्चात् कमरे में अपने आसन पर पूर्वास्य होकर बैठे। भाव अभी भी पूर्ण मात्रा में है।

दोनों मुखर्जी भाई, बाबूराम आदि भक्त जमीन पर आकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण भावावेश में माता से बातचीत कर रहे हैं। कहते हैं—"माँ, मैं कहूँ तब तू करे, यह भी कोई बात है? बातचीत करना क्या है—इशारा ही तो है।—कोई कहता है 'मैं खाऊँगा'—कोई कहता है, 'जा, मैं न सुनूँगा।'

"अच्छा माँ, मान लो मैंने भले ही प्रकट रूप में यह न कहा हो कि मुझे भूख लगी है, तो क्या मुझे अन्दर में भूख नहीं लगी है? क्या यह सम्भव है कि तुम केवल उसी की प्रार्थना सुनो जो जोर जोर से पुकारता है और उसकी न सुनो जो भीतर ही भीतर व्याकुलतापूर्वक प्रार्थना करता रहता है?

"तुम जो हो सो हो, फिर मैं क्यों बोलता हूँ, क्यों प्रार्थना करता हूँ ?

"हाँ ! जैसा कराती हो, वैसा करता हूँ ।

"लो ! सब गोलमाल हो गया !—क्यों विचार कराती हो ?"

श्रीरामकृष्ण जगन्माता के साथ बातचीत कर रहे हैं।—भक्तगण आश्चर्यचकित हो सुन रहे हैं ।

अब भक्तों पर श्रीरामकृष्ण की दृष्टि पड़ी ।

श्रीरामकृष्ण–(भक्तों से)–उन्हें प्राप्त करने के लिए संस्कार चाहिए । कुछ किये रहना चाहिए । तपस्या—वह इस जन्म में ही हो या उस जन्म में ।

"द्रौपदी का जब वस्त्रहरण किया गया था तब उसका विकल होकर रोना श्रीठाकुरजी ने सुना था, तभी उन्होंने दर्शन दिये । और कहा, तुमने अगर किसी को कभी वस्त्र दिया हो तो याद करो, उससे लज्जा का निवारण होगा । द्रौपदी ने कहा एक ऋषि नहा रहे थे, उनका कौपीन बह गया था, मैंने अपने कपड़े से आधा फाड़कर उन्हें दिया था । श्रीठाकुरजी ने कहा, तो अब तुम कोई चिन्ता न करो ।"

मास्टर श्रीरामकृष्ण के आसन के पूर्व की तरफ पाँवपोश पर बैठे हुए हैं ।

श्रीरामकृष्ण–(मास्टर से)–तुम यह समझे ?

मास्टर–जी, संस्कार की बात ।

श्रीरामकृष्ण–एक बार कह तो जाओ, मैंने क्या कहा ।

मास्टर–द्रौपदी नहाने गयी थी—आदि ।

(हाजरा आये ।)

(५)

क्या ईश्वर प्रार्थना सुनते हैं ? साधना

हाजरा महाशय यहाँ दो साल से हैं। उन्होंने श्रीरामकृष्ण की जन्म-भूमि कामारपुकुर के पास सिऊड़ ग्राम में पहले-पहल उनके दर्शन किये थे, सन् १८८० ई० में। इस मौजे में श्रीरामकृष्ण के भाजे श्रीयुत हृदय मुखोपाध्याय रहते हैं। उस समय श्रीरामकृष्ण हृदय के यहाँ रहते थे।

सिऊड़ के पास मरागोड़ मौजे में हाजरा महाशय रहते हैं। उनके कुछ जमीन-जायदाद भी है। स्त्री-परिवार और लड़के-बच्चे भी हैं। घरगृहस्थी का काम किसी तरह चल जाता है। कुछ ऋण भी है, लगभग हजार रुपया होगा।

यौवनकाल से ही उनमें वैराग्य का भाव है। साधु कहाँ हैं, भक्त कहाँ हैं, यही सब खोजते फिरते थे। जब पहले-पहल दक्षिणेश्वर काली-मन्दिर में आये और वहाँ रहना चाहा तब श्रीरामकृष्ण ने उनके भक्तिभाव को देखकर, और उन्हें अपने देश का परिचित मनुष्य जानकर, यत्नपूर्वक अपने पास रख लिया।

हाजरा का ज्ञानियों जैसा भाव है। श्रीरामकृष्ण का भक्ति-भाव और लड़कों के लिए उनकी व्याकुलता उन्हें पसन्द नहीं। कभी कभी वे श्रीरामकृष्ण को महापुरुष सोचते हैं और कभी कभी साधारण आदमी।

वे श्रीरामकृष्ण के दक्षिणपूर्ववाले बरामदे में आसन लगाकर बैठे हैं। वहीं माला लेकर बड़ी देर तक जप किया करते हैं। राखाल आदि भक्त अधिक जप नहीं करते, इसलिए लोगों से वे उनकी निन्दा किया करते हैं।

वे आचार का पक्ष बहुत लेते हैं। 'आचार-आचार' करके उन्हें एक तरह शुचिता का रोग हो गया है। उनकी उम्र ३८ साल की होगी।

हाजरा महाशय कमरे में आये। श्रीरामकृष्ण को फिर कुछ भावावेश हो गया है और उसी अवस्था में वे बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण-(हाजरा से)-तुम जो कुछ कर रहे हो, वह ठीक है। परन्तु पटरी ठीक नहीं बैठती।

"किसी की निन्दा न किया करो—एक कीड़े की भी नहीं। तुम खुद भी तो लोमस मुनि की बात कहते हो। जब भक्ति की प्रार्थना करोगे तब साथ ही यह भी कहा करो कि कभी मुझसे दूसरे की निन्दा न हो।"

हाजरा-(भक्ति की) प्रार्थना करने पर वे सुनेंगे?

श्रीरामकृष्ण-एक सौ बार!—अगर प्रार्थना ठीक हो—आन्तरिक हो। विषयी आदमी जिस तरह बच्चे या स्त्री के लिए रोता है, उसी तरह ईश्वर के लिए कहाँ रोता है?

"उस देश में एक आदमी की स्त्री बीमार हो गयी। वह अच्छी न होगी, यह सोचकर वह आदमी थर थर काँपने लगा—बेहोश होने को आ गया था।

"इस तरह ईश्वर के लिए किसकी अवस्था होती है?"

हाजरा श्रीरामकृष्ण की पद-रेणु ले रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण-(संकुचित होकर)-यह सब क्या है?

हाजरा-जिनके पास मैं हूँ उनके श्रीचरणों की धूलि न लूँ?

श्रीरामकृष्ण-ईश्वर को तुष्ट करो, सब तुष्ट हो जायेंगे। 'तस्मिन् तुष्टे जगत् तुष्टम्।' ठाकुरजी ने जब द्रौपदी का शाक खाकर कहा, मैं तृप्त हो गया हूँ, तब संसार भर के जीव तृप्त

गये थे—गले तक भर गये थे—डकार लेने लगे थे। मुनियों के खाने से क्या संसार तुष्ट हुआ था—डकारें ली थी ?

"ज्ञानलाभ के बाद भी लोक-शिक्षा के लिए पूजा आदि कर्मों को लोग किया करते हैं।

"मैं काली-मन्दिर जाता हूँ, और इस कमरे के सब चित्रों को भी प्रणाम किया करता हूँ—इस तरह दूसरे भी प्रणाम करते हैं। फिर तो अभ्यास हो जाने पर मनुष्य से वैसा किये बिना रहा ही नहीं जाता।

"वटतल्ले के सन्यासी को मैंने देखा; उसने जिस आसन पर गुरु की पादुका रखी थी उसी पर शालग्राम भी रखा था और पूजा कर रहा था! मैंने पूछा, 'अगर इतना ज्ञान हो गया है, तो इस तरह क्यों करते हो?' उसने कहा, 'सब कुछ किया जाता है, यह भी एक किया। कभी एक फूल इस पैर पर (गुरु के) चढ़ाया और कभी एक फूल उस पैर (शालग्राम) पर।'

"देह के रहते कोई कर्म छोड़ नहीं सकता—पंक रहते उससे बुलबुले उठेंगे ही।

(हाजरा से) "एक का ज्ञान है तो अनेक का भी ज्ञान है।

"केवल शास्त्र पढ़ने से क्या होगा? शास्त्रों में बालू और चीनी का-सा मेल है। उससे चीनी का अंश निकालना बड़ा मुश्किल है। इसीलिए शास्त्रों का मर्म गुरु के श्रीमुख से, साधु के श्रीमुख से सुन लेना चाहिए। तब फिर ग्रन्थों की क्या जरूरत है?

"चिट्ठी में खबर आई है, 'पाँच सेर सन्देश भेजियेगा—और एक धोतीदार धोती।' चिट्ठी खो गयी, तब तुरन्त चारों ओर ढूंढ़-तलाश होने लगी। बहुत कुछ खोजने के बाद कहीं चिट्ठी मिली। पढ़कर देखा, लिखा है—'पाँच सेर सन्देश भेजियेगा और

एक धारीदार धोती।' तब फिर उसने चिट्ठी फेंक दी। अब उसकी क्या जरूरत है? —अब तो सन्देश और धोती संग्रह करने से ही काम है।

(मुखर्जी, बाबूराम, आदि भक्तों से) "भलीभाँति खोज लेकर तब डूबो। तालाब में अमुक स्थान पर लोटा गिर गया है, जगह की ठीक जाँच करके डुबकी लगानी चाहिए।

"शास्त्रों का मर्म गुरु के श्रीमुख से सुनकर तब साधना की जाती है। यह साधना ठीक ठीक करने पर तब कहीं प्रत्यक्ष दर्शन होते हैं।

"डुबकी लगाओगे तब ठीक ठीक साधना होगी। बैठे बैठे शास्त्रों की बात पर केवल विचार करते रहने से क्या होगा? साधक को डुबकी लगानी चाहिए।

"अगर कहो कि डुबकी लगाने से भी तो मगर और घड़ियाल का डर है,—काम क्रोधादि का भय है, तो हल्दी लगाकर डुबकी लगाओ तो फिर वे पास न आ सकेंगे। विवेक और वैराग्य हल्दी हैं।"

(६)

पूर्व कथा। श्रीरामकृष्ण की पुराण, तन्त्र तथा वेद मत की साधना

श्रीरामकृष्ण—(भक्तों से)—उन्होंने मुझसे अनेक प्रकार की साधनाएँ करायी। पहली पुराण मत की थी, फिर तन्त्र मत की थी, इसके बादवाली वेद मत की थी। पहले मैं पंचवटी में साधना करता था। वहाँ तुलसी-वन लगाया गया, मैं उसके भीतर बैठकर ध्यान करता था। कभी विकल होकर 'माँ-माँ' कहकर पुकारता था, कभी 'राम-राम' कहता था।

"जब 'राम-राम' कहता था, तब हनुमान के भाव में आकर एक पूँछ लगाकर बैठा रहता था—उन्माद की अवस्था थी। उस समय पूजा करते हुए मैं पीताम्बर पहनता था तो बड़ा आनन्द आता था। यह पूजा का ही आनन्द था।

"तन्त्र मत की साधना बेल के नीचे की थी। तब तुलसी का पेड़ और सहजन की फली ये एक जैसे जान पड़ते थे।

"उस अवस्था में शिवानी की जूठन तमाम रात पड़ी रहती थी, साँप खाता था या कौन खाता था इसका कुछ ख्याल न था, वही जूठन मैं खाता था।

"कभी कभी मैं कुत्ते पर चढ़कर उसे पूड़ियाँ खिलाता और उसकी जूठी पूड़ियाँ खुद खाता था। सर्वं विष्णुमयं जगत्।

"अविद्या का नाश बिना किये न होगा। इसलिए मैं बाघ बन जाता था और अविद्या को खा जाता था।

"वेदमत से साधना करते समय सन्यास लिया। उस समय चाँदनी में पड़ा रहता था। हृदय से कहता था, मैंने संन्यास लिया है, मेरे लिए चाँदनी में खाने को दे जाया करो।

(भक्तों से) "धरना दिया था। पड़ा हुआ मैं माँ से कहता था—मैं मूर्ख हूँ, तुम मुझे बतला दो, वेदों, पुराणों, तन्त्रों और शास्त्रों में क्या है।

"माँ ने कहा, 'वेदान्त का सार है ब्रह्म, उसी को सत्य और संसार को मिथ्या माना है। जिस सच्चिदानन्द ब्रह्म की बात वेदों में है, उन्हें तन्त्रों में 'सच्चिदानन्दः शिवः' कहते हैं। और पुराणों में उन्हें ही 'सच्चिदानन्दः कृष्णः' कहते हैं।

"दस बार गीता का उच्चारण करने पर जो कुछ होता है, वही गीता का सार है। अर्थात् त्यागी—त्यागी।

उन्हें जब कोई प्राप्त कर लेता है, तब वेद, वेदान्त, पुराण, तन्त्र सब इतने नीचे पड़े रहते हैं कि कुछ कहना ही नहीं। (हाजरा से) ॐ का भी उच्चारण नहीं किया जा सकता; समाधि से जब मैं बहुत नीचे उतर आता हूँ, तब कहीं जरूर ॐ का उच्चारण कर सकता हूँ।

"प्रत्यक्ष दर्शन के पश्चात् जो-जो अवस्थाएँ शास्त्रों में लिखी हैं, वे सब मुझे हुई थी। बालवत्, उन्मत्तवत्, पिशाचवत्, जड़वत्।

"और शास्त्रों में जैसा लिखा है, वैसा दर्शन भी होता था।

"कभी देखता था, तमाम संसार जलता हुआ अंगार है।

"कभी देखता था, चारों ओर पारे जैसा सरोवर—झिलमिल झिलमिल कर रहा है। और कभी गली हुई चाँदी की तरह देखता था।

"कभी देखता था मानो मसालेवाली सलाई का चारों ओर उजाला हो रहा है।

"इनसे शास्त्रों की बातें मिल जाती हैं।

"फिर दिखलाया, वे ही जीव हैं, वे ही जगत् हैं और चौबीसों तत्त्व भी वे ही हुए हैं। छत पर चढ़कर फिर सीढ़ियों से उतरना। अनुलोम और विलोम!

"उः! किस अवस्था में उसने रखा है!—एक अवस्था जाती है तो दूसरी आती है! जैसे ढेकी के वार। एक ओर नीचा होता है तो दूसरी ओर ऊँचा हो जाता है।

"जब अन्तर्मुख होकर समाधिलीन हो जाता हूँ, तब भी देखता हूँ, वे ही हैं और जब बाहरी संसार में मन आता है, तब भी देखता हूँ, वे ही हैं।

"जब आईने के इस ओर देखता हूँ, तब भी वे ही हैं और जब

उस ओर देखता हूँ, तब भी वे ही हैं।"

दोनों मुखर्जी भाई और बाबूराम आदि आश्चर्यचकित हो श्रीरामकृष्ण की बातें सुन रहे हैं।

(७)

शम्भू मल्लिक की अनासक्ति। महापुरुष का आश्रय

श्रीरामकृष्ण–(मुखर्जी आदि से)—कप्तान की भी यथार्थ साधक जैसी अवस्था है।

"केवल ऐश्वर्य के रहने से ही मनुष्य की उसमें बिलकुल आसक्ति हो जाती है सो बात नहीं। शम्भू कहता था, 'हृदू! मैं बोरिया-बधना समेटकर चलने के लिए बैठा हुआ हूँ।' मैंने कहा, यह क्या अशुभ बातें बक रहे हो?

"तब शम्भू ने कहा, 'नहीं, कहो, यह सब फेंककर जैसे उनके पास पहुँच सकूँ।'

"उनके भक्त को किसी बात का भय नहीं है। भक्त उनका आत्मीय है। वे उसे खींच लेंगे। गन्धर्वों के हाथों दुर्योधन आदि के बँध जाने पर युधिष्ठिर ने ही उनका उद्धार किया था। कहा था, आत्मीयों की ऐसी अवस्था होने पर हमारे ही सर पर कलंक का टीका लगता है।"

रात के नौ बज चुके हैं। दोनों मुखर्जी भाई कलकत्ता लौटने के लिए तैयार हो रहे हैं। कमरे में और बरामदे में टहलते हुए श्रीरामकृष्ण ने सुना, विष्णु-मन्दिर में उच्च स्वर से संकीर्तन हो रहा है। उनके पूछने पर एक भक्त ने कहा, उनके साथ लाटू और हरीश भी गा रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण–अच्छा, इतना (शोर) इसीलिए हो रहा है!

श्रीरामकृष्ण विष्णु-मन्दिर गये। साथ साथ भक्तगण भी गये। श्रीरामकृष्ण ने राधाकान्त को भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण ने देखा, ठाकुर-मन्दिर के ब्राह्मण जो पाककर्म करते हैं, नैवेद्य सजाते हैं, अतिथियों को प्रसाद परोसते हैं, वे तथा अन्य सब सेवक-टहलुए एकत्र होकर नामसंकीर्तन कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण ने जरा देर खड़े रहकर उनका उत्साह बढ़ाया।

आँगन के बीच से लौटते समय उन्होंने भक्तों से कहा—"देखो, इनमें से कोई वेश्या के यहाँ जाता है और कोई बर्तन धोया करता है!"

कमरे में आकर श्रीरामकृष्ण अपने आसन पर बैठे। जो लोग संकीर्तन कर रहे थे, उन लोगों ने श्रीरामकृष्ण को आकर प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण उनसे कह रहे हैं—"रुपये के लिए जिस तरह देह का पसीना बहाते हो उसी तरह उनका नाम लेकर नाच-कूद कर बहाना चाहिए।

"मेरी इच्छा हुई तुम लोगों के साथ नाचूं। जाकर देखा मसाला पड़ चुका था—मेथी तक। (सब हँसते हैं।) तब मैं क्या डालकर उसे सुगन्धित करता?

"तुम लोग कभी कभी इसी तरह नाम-संकीर्तन करने के लिए आ जाया करो।"

मुखर्जी बन्धुओं ने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके बिदाई ली। श्रीरामकृष्ण के कमरे के ठीक उत्तरवाले बरामदे के किनारे मुखर्जियों की गाड़ी में बत्ती जला दी गयी है।

श्रीरामकृष्ण उसी बरामदे के ठीक उत्तर-पूर्ववाले कोने में उत्तर की ओर मुँह किये खड़े हैं। एक भक्त रास्ता दिखाते हुए एक लालटेन ले आये हैं, भक्तों को चढ़ाने के लिए।

आज अमावास्या है। रात अँधेरी है। श्रीरामकृष्ण को नमस्कार प्रणाम करके भक्तगण गाड़ी पर बैठ रहे हैं। श्रीरामकृष्ण एक भक्त से कह रहे हैं—"ईशान से जरा उसके काम के लिए कहना।"

गाड़ी में ज्यादा आदमी देखकर, घोड़े को कष्ट होगा, यह सोचकर श्रीरामकृष्ण ने कहा—"क्या गाड़ी में इतने आदमी समा जायेंगे?"

श्रीरामकृष्ण खड़े हैं। उनकी निर्मल मूर्ति देखते हुए भक्तगण कलकत्ते की ओर चल दिये।

———

परिच्छेद २०

चैतन्यलीला-दर्शन

(१)

भक्तों से वार्तालाप

आज रविवार है; श्रीरामकृष्ण के कमरे में बहुत से भक्त एकत्रित हुए हैं। राम, महेन्द्र मुखर्जी, चुनीलाल, मास्टर आदि बहुत से भक्त हैं। २१ सितम्बर, १८८४।

चुनीलाल अभी हाल ही वृन्दावन से आये हैं। वे और राखाल, बलराम के साथ वहाँ गये थे। राखाल और बलराम अब भी नहीं लौटे। श्रीरामकृष्ण चुनीलाल से वृन्दावन की बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण–राखाल कैसा है ?

चुनी–जी, अब वे अच्छे हैं।

श्रीरामकृष्ण–नृत्यगोपाल आयगा या नहीं ?

चुनी–अभी तो मैं देखकर आ रहा हूँ, वहीं हैं।

श्रीरामकृष्ण–तुम्हारे परिवार के लोग किसके साथ आ रहे हैं ?

चुनी–बलराम बाबू ने कहा है, मैं अच्छे आदमी के साथ भेज दूँगा। नाम उन्होंने नहीं बतलाया।

श्रीरामकृष्ण महेन्द्र मुखर्जी से नारायण की बातचीत कर रहे हैं। नारायण स्कूल में पढ़ता है। उम्र १६-१७ साल की है। श्रीरामकृष्ण के पास कभी-कभी आया-जाया करता है। श्रीरामकृष्ण उसे बड़ा प्यार करते हैं।

श्रीरामकृष्ण—बड़ा सरल है न ?

'सरल' शब्द कहते ही श्रीरामकृष्ण का मन आनन्द से भर गया।

महेन्द्र—जी हाँ, बड़ा सरल है।

श्रीरामकृष्ण—उसकी माँ उस दिन आयी थी। अभिमानिनी थी, देखकर भय हुआ। इसके पश्चात् जब उसने देखा, यहाँ तुम आते हो, कप्तान आता है, तब उसने जरूर ही सोचा होगा, केवल नारायण और मैं कुल यही दो यहाँ नहीं जाते। (सब हँसने लगे।) इस कमरे में मिश्री रखी हुई थी। उसने देखकर कहा, अच्छी मिश्री है। साथ ही समझा होगा, इसके खाने की विशेष असुविधा नहीं है।

"शायद उन लोगों के सामने मैंने बाबूराम से कहा था, नारायण के लिए और अपने लिए ये सन्देश रख दे। इसके बाद गणी की माँ और वे सब कहने लगीं—'नारायण अपनी माँ को नित्य प्रति यहाँ आने के लिए नाव का किराया माँगकर परेशान किया करता है।'

"मुझसे कहा आप नारायण से कहिये जिससे विवाह करे। इस बात पर मैंने कहा, ये सब भाग्य की बातें हैं। क्यों मैं ऐसी बात के लिए जोर दूँ? (सब हँसते हैं।)

"नारायण अच्छी तरह पढ़ने में जी नहीं लगाता। इस पर उसने कहा, आप कहिये, जरा अच्छी तरह पढ़े। मैंने कहा, पढ़ना रे! तब उसने कहा, जरा अच्छी तरह कहिये। (सब हँसते हैं।)

(चुनी से) "क्यों जी भला गोपाल क्यों नहीं आता?"

चुनी—उसे खून जा रहा है—आँव के साथ।

श्रीरामकृष्ण—दवा खा रहा है न ?

श्रीरामकृष्ण आज स्टार थियेटर में 'चैतन्यलीला' नाटक देखने जायेंगे। (पहले स्टार थियेटर का अभिनय जहाँ पर होता था, वहाँ आजकल कोहिनूर थियेटर है।) महेन्द्र मुखर्जी के साथ उन्हीं की गाड़ी पर चढ़कर अभिनय देखने जायेंगे। कहाँ बैठने पर अच्छी तरह दीख पड़ता है, यही बात हो रही है। किसी ने कहा, एक रुपये वाली जगह से खूब दीख पड़ता है। राम ने कहा, ये 'बाक्स' से देखेंगे।

श्रीरामकृष्ण हँस रहे हैं। किसी किसी ने कहा, वेश्याएँ अभिनय करती हैं। चैतन्यदेव, निताई, इनका पार्ट वे ही करती है।

श्रीरामकृष्ण-(भक्तों से)-मैं उन्हें माँ आनन्दमयी देखूँगा।

"वे चैतन्य सजकर निकली हैं तो इससे क्या हुआ? नकली फल देखिये तो यथार्थ फल की बात याद आ जाती है।

"किसी भक्त ने रास्ते पर जाते हुए देखा, कुछ बबूल के पेड़ थे। देखते ही भक्त को भावावेश हो गया। उसे यह याद आया कि इसकी लकड़ी से श्यामसुन्दर के बगीचे की कुदार के लिए अच्छा बेंट हो सकता है। उसे श्यामसुन्दर की बात याद आ गयी थी। जब किले के मैदान मे मुझे बेलून दिखाने के लिए ले गये थे, तब एक साहब का लड़का पेड़ के सहारे तिरछा होकर खड़ा था। उसे देखने के साथ ही कृष्ण की उद्दीपना हो गयी और मैं समाधिमग्न हो गया।

"चैतन्यदेव मेड़गांव से होकर जा रहे थे। सुना, गाँव की मिट्टी से खोल बनते हैं। सुनने के साथ ही उन्हें भावावेश हो गया था।

"श्रीमती (राधा) मेघ या मोरों की गरदन देख लेने पर फिर स्थिर नहीं रह सकती थीं। श्रीकृष्ण की ऐसी उद्दीपना होती थी कि उनका बाह्यज्ञान लुप्त हो जाता था।"

श्रीरामकृष्ण जरा देर चुपचाप बैठे हैं। कुछ देर बाद फिर बातचीत करते हैं—"श्रीमती को महाभाव होता था। गोपियों के प्रेम में कोई कामना नहीं है। जो सच्चा भक्त है, वह कोई कामना नहीं करता। केवल शुद्धा भक्ति की प्रार्थना करता है। कोई शक्ति या विभूति नहीं चाहता।"

(२)

तोतापुरीजी की शिक्षा—अष्ट सिद्धियाँ ईश्वर-लाभ में विघ्नरूप हैं

श्रीरामकृष्ण—विभूति का होना एक आफत है। नागे (तोतापुरी) ने मुझे सिखलाया—एक सिद्ध समुद्र के तट पर बैठा हुआ था। उसी समय एक तूफान आया। तूफान से कष्ट होने का भय हुआ। उसने कहा, 'तूफान रुक जा।' उसकी बात झूठ होने की नहीं थी, तूफान रुक गया। उधर एक जहाज जा रहा था। उसमें पाल लगा हुआ था। तूफान ज्योंही एकाएक रुक गया कि जहाज डूब गया। जहाज भर के आदमी उसीके साथ डूब गये। अब इतने आदमियों के मरने से जो पाप होने को था, सब उसी को हुआ। उसी पाप से उसकी विभूति भी चली गयी और उसे नरक भी हुआ।

"एक साधु के बहुत सी विभूतियाँ हुई थीं। और उनका उसे अहंकार भी था, परन्तु था वह कुछ अच्छा आदमी। उसमें तपस्या भी थी। भगवान छद्मवेश धारण कर एक दिन साधु के पास आये। आकर कहा महाराज, मैंने सुना है, आपके पास बहुत सिद्धियाँ हैं। साधु ने उनकी खातिर करके बैठाया। उसी समय एक हाथी उधर से जा रहा था। तब छद्मवेशधारी साधु ने कहा, अच्छा महाराज, आप चाहें तो क्या इस हाथी को मार

सकते हैं ? साधु ने कहा, हाँ, क्यों नहीं ? यह कहकर साधु ने धूल पढ़कर हाथी पर ज्योंही छोड़ी कि वह छटपटाकर मर गया। तब जो साधु आया था, उसने कहा, 'वाह ! आपमें तो बड़ी शक्ति है। हाथी को आपने मार डाला !' वह साधु हँसने लगा। तब नये साधु ने कहा, अच्छा इसे आप अब जिला सकते हैं ? उसने कहा, हाँ, ऐसा भी हो सकता है। यह कहकर ज्योंही धूल पढ़कर उसने हाथी पर छोड़ी कि हाथी तुरन्त उठकर खड़ा हो गया। तब इस साधु ने कहा—'आप में बड़ी शक्ति है; परन्तु एक बात मैं आपसे पूछता हूँ। आपने हाथी को मारा और फिर से जिला दिया, इससे आपका क्या हुआ ? आपकी अपनी उन्नति क्या हुई ? इससे क्या आप ईश्वर को पा गये ?' यह कहकर वह साधु अन्तर्धान हो गये।

"धर्म की सूक्ष्म गति है। जरासी कामना रहने पर भी कोई ईश्वर को पा नहीं सकता। सुई के भीतर सूत को जाना है, जरा सा रोआँ भी बाहर रह गया तो फिर नहीं जा सकता।

"कृष्ण ने अर्जुन से कहा था, भाई, मुझे अगर पाना चाहते हो, तो समझ लो कि आठ सिद्धियों में एक भी सिद्धि के रहते मैं नहीं मिलता।

"एक बाबू आया था, वह कंजा था। उसने कहा. 'आप परमहंस हैं तो अच्छा है, परन्तु जरा आपको मेरे लिए स्वस्त्ययन करना होगा।' कितनी नीच बुद्धि है ! परमहंस कहता है और फिर स्वस्त्ययन भी कराना चाहता है ! स्वस्त्ययन करके अमंगल-बाधा दूर कर देना विभूति का प्रयोग दिखलाना है। अहंकार से ईश्वर की प्राप्ति नहीं होती। अहंकार कैसा है जानते हो ? जैसे ऊँची जमीन, वहाँ बरसात का पानी नहीं ठहरता, बह जाता है।

नीची जमीन में पानी जमता है और अंकुर उगते हैं। फिर पेड़ होते हैं और फल लगते हैं।

"इसीलिए हाजरा से कहता हूँ कि मैं ही समझता हूँ, और सब मूर्ख हैं, ऐसी बुद्धि न लाया करो। सबको प्यार करना चाहिए। कोई दूसरे नहीं हैं। सर्व भूतों में परमात्मा का ही वास है। उन्हें छोड़ किसी भी वस्तु का अस्तित्व नहीं है। (प्रह्लाद से श्रीठाकुरजी ने कहा, तुम वरदान लो। प्रह्लाद ने कहा, आपके दर्शन हो गये, मुझे और कुछ न चाहिए। श्रीठाकुरजी ने न छोड़ा। तब प्रह्लाद ने कहा, 'अगर वर दोगे, तो यही वर दो—मुझे जिन लोगों ने कष्ट दिया है, उनका अपराध न हो।')

"इसका अर्थ यह है कि ईश्वर ने एक रूप से कष्ट दिया है। उन आदमियों को यदि कष्ट हो तो वह ईश्वर को ही कष्ट मिलता है।"

(३)

श्रीरामकृष्ण का ज्ञानोन्माद तथा जाति-विचार

श्रीरामकृष्ण—श्रीमती (राधिका) को प्रेमोन्माद था। और भक्ति का उन्माद भी है जैसे हनुमान को हुआ था। सीताजी को अग्नि में प्रवेश करते हुए देखकर वे रामचन्द्र को मारने चले थे। एक और ज्ञानोन्माद है। एक ज्ञानी को मैंने पागल की तरह देखा था। कालीमन्दिर की प्रतिष्ठा के कुछ ही समय बाद की बात है। लोगों ने कहा, वह राममोहन राय की ब्राह्मसभा का एक आदमी था। एक पैर में फटा जूता था, हाथ में बाँस की पतली छड़ी, और एक हण्डी और आम का पौधा। गंगाजी में उसने डुबकी लगायी, फिर कालीमन्दिर में गया। हलधारी उस समय काली

मन्दिर में बैठा था। वह मस्त होकर स्तवपाठ करने लगा—'क्ष्रीं क्ष्रीं खट्वांगधारिणी' आदि।

"कुत्ते के पास पहुँचकर उसने उसके कान पकड़ उसका जूठा खाया। कुत्ते ने कुछ भी न किया। मेरी भी उस समय यही अवस्था हो चली थी। मैं हृदय के गले से लिपटकर कहने लगा —क्यों रे हृदय, क्या मेरी भी यही दशा होगी ?

"मेरी उन्माद-अवस्था थी। नारायण शास्त्री ने आकर देखा, कन्धे पर एक बाँस रखकर टहल रहा था। तब उसने आदमियों से कहा—अः! इसे तो उन्माद हो गया है। उस अवस्था में जाति का कोई विचार नहीं रहता था। एक आदमी नीच जाति का था, उसकी स्त्री शाक बनाकर भेजती थी और मैं खाता था।

"कालीमन्दिर में कंगले खा जाते थे, मैं उनकी जूठी पत्तलें सिर पर और मुँह में छुआता था। हलधारी ने तब मुझसे कहा, 'तू कर क्या रहा है? कंगलों का जूठा तूने खा लिया? अरे, तेरे बच्चों का अब विवाह कैसे होगा?' तब मुझे बड़ा गुस्सा आया। हलधारी मेरा दादा लगता था; परन्तु इससे क्या? मैंने कहा— 'क्यों रे! तू यही गीता और वेदान्त पढ़ता है? यही तू लोगों को सिखलाता है, ब्रह्म सत्य है और संसार मिथ्या? तूने खूब सोच रखा है, मेरे लड़के-बच्चे भी होंगे? आग लगे ऐसे तेरे गीता पढ़ने में।'

(मास्टर से) "देखो, सिर्फ पढ़ने और लिखने से कुछ नहीं होता। बाजे के बोल आदमी कह खूब सकता है, परन्तु हाथ से निकालना बड़ा मुश्किल है।"

श्रीरामकृष्ण फिर अपनी ज्ञानोन्माद-अवस्था का वर्णन कर रहे हैं—

"सेजो (मथुर) बाबू के साथ कुछ दिन नाव पर खूब सैर की। उसी यात्रा में नवद्वीप भी गया था। बजरे में देखा, केवट खाना पका रहे थे। उसके पास में खड़ा हुआ था। सेजो बाबू ने कहा, बाबा, वहाँ क्या कर रहे हो? मैंने हँसकर कहा, ये केवट बड़ा अच्छा खाना पका रहे हैं। सेजो बाबू समझ गये कि ये अब माँगकर भी खा सकते हैं। इसलिए कहा, बाबा, वहाँ से चले आओ।

"परन्तु अब वैसा नहीं होता। वह अवस्था अब नहीं है। अब तो ब्राह्मण हो, आचारी हो, श्रीठाकुरजी का प्रसाद हो, तभी खा सकता हूँ।

"कैसी कैसी अवस्थाएँ सब पार हो गयी हैं! कामारपुकुर के चीनें शँखारी और दूसरे दूसरे जोड़वालों से मैंने कहा—देखो, तुम्हारे पैर पड़ता हूँ, बस एक बार उनका नाम लो। सबके पैर भी पड़ने चला था। तब चीने ने कहा—'अरे तेरा यह पहला अनुराग है इसीलिए यह समभाव आया है।' पहले-पहल आँधी के आने पर जब धूल उड़ती है, तब आम और इमली सब एक जान पड़ते हैं। कौनसा आम है, और कौनसी इमली, यह समझ में नहीं आता।"

एक भक्त—यह भक्त का उन्माद, प्रेम का उन्माद या ज्ञान का उन्माद अगर संसारी आदमी को हो तो भला कैसे चल सकता है?

श्रीरामकृष्ण—(संसारी भक्तों को देखकर)—योगी दो तरह के होते हैं। एक व्यक्त योगी और दूसरे गुप्त योगी। संसार में गुप्त योगी होते हैं। उन्हें कोई समझते नहीं। संसारी के लिए मन से त्याग है, बाहर से नहीं।

राम—आपकी बच्चों को फुसलाकर समझानेवाली बात

है। संसारी ज्ञानी हो सकता है, पर विज्ञानी नहीं हो सकता।

श्रीरामकृष्ण-वह अन्त में चाहे तो विज्ञानी हो सकता है। पर जबरन संसार छोड़ना अच्छा नहीं।

राम-केशव सेन कहते थे, उनके पास आदमी इतना क्यों जाते हैं? एक दिन चुपचाप चुभो देंगे तब भागना होगा।

श्रीरामकृष्ण-चुभों क्यों दूँगा? मैं तो आदमियों से कहता हूँ, यह भी करो और वह भी करो। संसार भी करो और ईश्वर को भी पुकारो। सब कुछ छोड़ने के लिए तो मैं कहता नहीं। (हँसकर) केशव सेन ने एक दिन लेक्चर दिया। कहा 'हे ईश्वर ऐसा करो कि हम लोग भक्ति-नदी में गोते लगा सकें और गोते लगाकर सच्चिदानन्द-सागर में पहुँच जायें।' स्त्रियाँ सब 'चिक' की ओट में बैठी थीं। मैंने केशव से कहा, 'एक ही साथ सब आदमियों के गोते लगाने से कैसे होगा? तो इन लोगों (स्त्रियों) की दशा क्या होगी? कभी कभी किनारे पर लग जाया करना। फिर गोते लगाना, फिर ऊपर आना।' केशव और दूसरे लोग हँसने लगे। हाजरा कहता है, 'तुम रजोगुणी आदमियों को बड़ा प्यार करते हो, जिनके रुपया-पैसा, मान-मर्यादा खूब है।' अगर ऐसी बात है तो हरीश, लाटू, इन्हें क्यों प्यार करता हूँ? नरेन्द्र को क्यों प्यार करता हूँ? उसके तो भुना भाँटा खाने को नमक भी नहीं है।

श्रीरामकृष्ण कमरे से बाहर आये, मास्टर से बातचीत करते हुए झाऊतल्ले की ओर जा रहे हैं। एक भक्त गड़आ और अँगोछा लेकर साथ साथ आ रहे हैं। श्रीरामकृष्ण कलकत्ते में आज 'चैतन्यलीला' नाटक देखने जायँगे, उसी की बातें हो रही हैं।

श्रीरामकृष्ण-(मास्टर से)-राम सब रजोगुण की बातें कह

रहा है। इतने अधिक दाम खर्च करके बैठने की क्या जरूरत है? बाक्स का टिकट न लिया जाय, श्रीरामकृष्ण का यह उद्देश्य है।

(४)

हाथीबागान में भक्त के घर। श्री महेन्द्र मुखर्जी की सेवा

श्रीरामकृष्ण श्रीयुत महेन्द्र मुखर्जी की गाड़ी पर चढ़कर दक्षिणेश्वर से कलकत्ता आ रहे हैं। आज रविवार है, २१ सितम्बर, १८८४। दिन के पांच का समय है। गाड़ी में महेन्द्र मुखर्जी, मास्टर और दो-एक व्यक्ति और हैं। गाड़ी के कुछ बढ़ते ही ईश्वरचिन्तन करते हुए श्रीरामकृष्ण भाव-समाधि में मग्न हो गये।

बड़ी देर के बाद समाधि छूटी। श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, हाजरा भी मुझे शिक्षा देता है! कुछ देर बाद फिर कह रहे हैं—*मैं पानी पीऊँगा।* बाह्य संसार में मन को उतारने के लिए समाधि के भंग होने पर प्रायः श्रीरामकृष्ण यह बात कहते थे।

महेन्द्र मुखर्जी—(मास्टर से)—तो कुछ जलपान के लिए मँगा लिया जाय।

मास्टर—नहीं, इस समय ये न खायेंगे।

श्रीरामकृष्ण—(भावस्थ)—मैं खाऊँगा और शौच भी जाऊँगा।

हाथीबागान में महेन्द्र मुखर्जी की आटे की चक्की है। उसी कारखाने में श्रीरामकृष्ण को लिए जा रहे हैं। वहाँ जरा देर विश्राम करके स्टार थियेटर में चैतन्यलीला नाटक देखने जायेंगे। महेन्द्र का मकान बाग-बाजार में है, श्रीमदनमोहनजी के कुछ उत्तर तरफ। श्रीरामकृष्ण को उनके पिता नहीं जानते; इसीलिए महेन्द्र उन्हें घर नहीं ले गये। उनके भाई प्रियनाथ भी श्रीरामकृष्ण के भक्त हैं।

महेन्द्र के कारखाने में तख्त पर दरी बिछी हुई है। उसी पर श्रीरामकृष्ण बैठे हुए ईश्वर-प्रसंग कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण–(मास्टर और महेन्द्र से)–चैतन्यचरितामृत सुनते हुए हाजरा कहता है, 'यह सब शक्ति की लीला है—इसके भीतर विभु नहीं है।' विभु को छोड़कर शक्ति कभी रह सकती है? यहाँ के मत को उलट देने की चेष्टा!

"मैं जानता हूँ, ब्रह्म और शक्ति अभेद हैं। जैसे जल और उसकी हिमशक्ति, अग्नि और उनकी दाहिका शक्ति। वे विभु के रूप से सर्व भूतों में विराजमान हैं, परन्तु कहीं उनकी शक्ति का अधिक और कहीं कम प्रकाश है। हाजरा यह भी कहता है, 'ईश्वर को पा जाने पर उन्हीं की तरह मनुष्य षडैश्वर्यशाली हो जाता है। षडैश्वर्य रहेंगे जरूर, फिर वह उन्हें अपने काम में लाये या न लाये।'"

मास्टर–षडैश्वर्य मुट्ठी में रहने चाहिए। (सब हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण–(सहास्य)—हाँ, मुट्ठी में रहने चाहिए। कैसी हीन बुद्धि है! जिसने ऐश्वर्य का कभी भोग नहीं किया, वह 'ऐश्वर्य ऐश्वर्य' चिल्लाकार अधीर होता है। जो शुद्ध भक्त है, वह कभी ऐश्वर्य के लिए प्रार्थना नहीं करता।

श्रीरामकृष्ण शौच को जायँगे। महेन्द्र ने गड्डए में पानी मँगवाया और गड्डए को खुद हाथ में ले लिया। श्रीरामकृष्ण को साथ लेकर मैदान की ओर जायेंगे।

श्रीरामकृष्ण ने सामने मणि को देखकर महेन्द्र से कहा, तुम्हें न लेना होगा, इन्हें दे दो।

मणि गड्डा लेकर श्रीरामकृष्ण के साथ कारखाने के भीतर-वाले मैदान की ओर गये।

हाथ-मुँह धो चुकने के बाद श्रीरामकृष्ण मास्टर से कह रहे हैं, "क्या सन्ध्या हो गयी ? सन्ध्या होने पर सब काम छोड़कर ईश्वरचिन्तन करना चाहिए ।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण हाथ के रोएँ देख रहे हैं—गिने जा सकते हैं या नहीं । रोएँ अगर न गिने जा सकें तो समझना चाहिए कि सन्ध्या हो गयी ।

(५)

थियेटर में चैतन्यलीला । समाधि में श्रीरामकृष्ण

श्रीरामकृष्ण बीडन स्ट्रीट में स्टार थियेटर के सामने आ गये । रात के साढ़े आठ बजे का समय होगा । साथ में मास्टर, बाबूराम, महेन्द्र मुखर्जी तथा दो-एक भक्त और हैं । टिकट खरीदने का बन्दोबस्त हो रहा है । नाट्यागार के मैनेजर श्रीयुत गिरीश घोष कुछ कर्मचारियों के साथ श्रीरामकृष्ण की गाड़ी के पास आये । स्वागत करके आदरपूर्वक उन्हें ऊपर ले गये । गिरीश बाबू ने श्रीरामकृष्ण देव का नाम सुना था । वे चैतन्यलीला-अभिनय देखने के लिए आये हैं, यह सुनकर उन्हें बड़ा आनन्द हुआ है । श्रीरामकृष्ण को लोगों ने दक्षिण-पश्चिमवाले बाक्स में बैठाया । पीछे बाबूराम तथा और भी दो-एक भक्त बैठे ।

रंगमंच में बत्ती जल गयी । नीचे बहुत से आदमी बैठे हुए थे । श्रीरामकृष्ण की बाईं ओर ड्रापसीन दीख पड़ रहा है । कितने ही बाक्सों में भी आदमी आ गये हैं । बाक्स के पीछे से हवा करने के लिए एक एक पंखा झलनेवाला नौकर है । श्रीराम-कृष्ण को भी हवा करने के लिए गिरीश आदमी ठीक कर गये ।

रंगमंच देखकर श्रीरामकृष्ण को बालकों की तरह प्रसन्नता

हुई है।

श्रीरामकृष्ण- (मास्टर से हँसते हुए)—वाह ! यहाँ तो बड़ा अच्छा है। आकर बड़ा अच्छा हुआ। बहुत से आदमियों के एक साथ होने से उद्दीपना होती है। तब मैं यथार्थ ही देखता हूँ कि वे ही सब हुए हैं।

मास्टर—जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण—यहाँ कितना लेगा ?

मास्टर—जी, कुछ न लेंगे। आप आये हैं, इसलिए उन्हें बड़ा हर्ष है।

श्रीरामकृष्ण—सब माँ का माहात्म्य है।

ड्रापसीन उठ गया। एक साथ ही दर्शकों की दृष्टि रंगमंच पर पड़ी। पहले पाप और छः रिपुओं की सभा थी। फिर अरण्य-मार्ग में विवेक, वैराग्य और भक्ति की बातचीत थी।

भक्ति कह रही है—नदिया में गौरांग ने जन्म ग्रहण किया है, इसलिए विद्याधरियाँ और ऋषि-मुनि छद्मवेश धारण कर उनके दर्शन करने जा रहे हैं।

विद्याधरियाँ और ऋषि-मुनि गौरांग को अवतार मानकर उनकी स्तुति कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण उन्हें देखकर भाव में विभोर हो रहे हैं। मास्टर से कह रहे हैं, अहा ! देखो, कैसा है!

विद्याधरियाँ और ऋषि-मुनि गाकर श्रीगौरांग की स्तुति कर रहे हैं—

पुरुषगण—केशव कुरु करुणा दीने कुंज-कानन-चारी।
स्त्रियाँ—माधव मनमोहन मोहन-मुरलीधारी ॥
सब मिलकर—हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल, मन आमार।
पुरुष—व्रजकिशोर, कालीय-हर, कातर-भय-भंजन।

स्त्रियाँ—नयन बाँका, बाँका शिखिपाखा, राधिका-हृदि-रंजन।

पुरुष—गोवर्धन धारण, वनकुसुम-भूषण, दामोदर कंस-दर्पहारी।

स्त्रियाँ—श्याम रासरसविहारी॥

सब—हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल, मन आमार।

विद्याधरियों ने जब गाया—'नयन बाँका, बाँका शिखिपाखा राधिका-हृदिरंजन,' तब श्रीरामकृष्ण गम्भीर समाधि में मग्न हो गये। कन्सर्ट (concert) में कई वाद्य एक साथ बज रहे हैं। श्रीरामकृष्ण को कोई होश नहीं।

(६)

चैतन्यलीला-दर्शन। गौर-प्रेम में उन्मत्त श्रीरामकृष्ण

जगन्नाथ मिश्र (श्रीगौराङ्ग के पिता) के घर एक अतिथि आये हैं। बालक निमाई अपने साथियों के साथ आनन्दपूर्वक गा रहे हैं।

अतिथि आँखें मूँदकर भगवान को भोग लगा रहे हैं। निमाई दौड़कर अतिथि के पास पहुँचे और अतिथि के नैवेद्य को खाने लगे। अतिथि समझ गये कि ये ईश्वर के अवतार हैं। वे दस अवतारों की स्तुति को बालक के सामने पढ़कर उसे प्रणाम करने लगे। मिश्र और शची के पास से विदा होते समय उन्होंने फिर गाकर स्तुतिपाठ किया—

"जय नित्यानन्द गौरचंद्र जय जय भवतारण!

अनाथनाथ जीवप्राण भीतभयवारण!

युगे युगे रंग, नव लीला नव रंग,

नव तरंग, नव प्रसंग, धरामार-धारण !
तापहारी प्रेमवारि वितर रासरस-विहारी,
दीनआश, कलुषनाश, दुष्टत्रासकारण !"

स्तुति सुनते ही सुनते श्रीरामकृष्ण को फिर भावावेश हो रहा है।

अब नवद्वीप के गंगातट का दृश्य आया। गंगा नहाकर ब्राह्मणों की स्त्रियाँ और पुरुष घाट पर बैठे हुए पूजा कर रहे हैं। निमाई नैवेद्य छीन-छीनकर खा रहे हैं। एक ब्राह्मण बहुत गुस्सा हो गये। उन्होंने कहा, क्यों रे दुष्ट, विष्णुपूजा का नैवेद्य छीनता है?—तेरा सर्वनाश होगा। निमाई ने फिर भी नैवेद्य छीनकर खाया और फिर वहाँ से चल दिया। बहुत सी औरतें थीं, जो उसे बड़ा प्यार करती थीं। निमाई को जाते देखकर उन्हें जो हार्दिक कष्ट हुआ, उसे वे सह न सकीं। वे उच्च स्वर से पुकारने लगीं, 'निमाई, लौट आ, निमाई लौट आ,' पर निमाई ने उनकी एक न सुनी। स्त्रियों में एक निमाई को लौटाने का महामन्त्र जानती थी। उसने 'हरि बोल, हरि बोल' कहना आरम्भ कर दिया। बस निमाई 'हरि बोल, हरि बोल' कहते हुए लौट पड़े।

मणि श्रीरामकृष्ण के पास बैठे हुए हैं। कहा—अहा !

श्रीरामकृष्ण स्थिर न रह सके। 'अहा' कहते हुए मणि की ओर देखकर प्रेमाश्रु वर्षण कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—(बाबूराम और मास्टर से)—देखो, अगर मुझे भावसमाधि हो, तो तुम लोग शोरगुल न मचाना; संसारी आदमी समझेंगे—ढकोसला है।

निमाई का उपनयन हो रहा है। निमाई संन्यासी के वेश में हैं। शची और पड़ोसिनें चारों ओर खड़ी हैं। निमाई गाकर

भिक्षा माँग रहे हैं।

गुरु चले गये। निमाई अकेले है। देव और देवियाँ ब्राह्मण और ब्राह्मणियों के वेश में उनकी स्तुति कर रहे हैं—

पुरुषगण—चन्द्रकिरण अंगे, नमो वामनरूपधारी।
स्त्रियाँ—गोपीगणमनमोहन, मंजुकुंजचारी।
निमाई—जय राधे, श्रीराधे!
पुरुष—व्रज-बालक-संग, मदन-मान-भंग।
स्त्रियाँ—उन्मादिनी व्रजकामिनी उन्माद-तरंग॥
पुरुष—दैत्य-छलन नारायण सुरगण-भय-हारी॥
स्त्रियाँ—व्रज-विहारी, गोपनारी-मान-भिखारी॥
निमाई—जय राधे, श्रीराधे!

श्रीरामकृष्ण यह गाना सुनते सुनते समाधिमग्न हो गये।

अब दूसरा अंक शुरू हुआ। अद्वैत के घर के सामने श्रीवास आदि बातें कर रहे हैं। मुकुन्द मधुर कण्ठ से गा रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण उनके गीत की मणि से तारीफ कर रहे हैं।

निमाई घर में हैं। श्रीवास उनसे भेंट करने के लिए आये हैं। पहले शची से भेंट हुई। शची रोने लगी, 'मेरा पुत्र गृहस्थ-धर्म में मन नहीं देता। जब से विश्वरूप चला गया है, तब से सदा ही मेरे प्राण काँपते रहते हैं कि कहीं निमाई भी सन्यासी न हो जाय।'

इसी समय निमाई आते हुए दीख पड़े। शची श्रीवास से कह रही हैं, 'देखो—जान पड़ता है पागल है—आँसुओं से हृदय प्लावित हुआ जा रहा है, कहो, कहो—किस तरह इसका यह भाव दूर हो?'

निमाई श्रीवास को देखकर रो रहे हैं—'कहाँ, प्रभु! कहाँ मुझे कृष्णभक्ति हुई? अधम जन्म तो व्यर्थ ही कटा जा रहा है!'

श्रीरामकृष्ण मास्टर की ओर देखकर कुछ बोलना चाहते हैं पर बात नहीं निकलती। गला भर गया है। कपोलों पर आँसुओं की धारा बहती जा रही है। अनिमेष लोचनों से देख रहे हैं— निमाई श्रीवास के पैरों पर पड़े हुए कह रहे हैं–'कहाँ, प्रभु! कृष्ण की भक्ति तो मुझे नहीं हुई!'

इधर निमाई पाठशाला के छात्रों को अब पढ़ा भी नहीं सकते। निमाई ने गंगादास से पढ़ा था। वे निमाई को समझाने आये हैं। उन्होंने श्रीवास से कहा–'श्रीवासजी, हम लोग भी तो ब्राह्मण हैं, विष्णुपूजा भी किया करते हैं, परन्तु अब देखा जाता है, आप लोग उसके संसार को नष्ट-भ्रष्ट कर डालेंगे।'

श्रीरामकृष्ण–(मास्टर से)–यह संसारी की शिक्षा है, यह भी करो और वह भी करो। संसारी मनुष्य जब शिक्षा देता है, तब दोनों ओर सम्हालने के लिए कहता है।

मास्टर–जी हाँ।

गंगादास निमाई को फिर समझा रहे हैं–"क्यों जी, निमाई! तुम्हें तो अब शास्त्रज्ञान भी हो गया है। तुम हमारे साथ तर्क करो। संसार-धर्म से बड़ा और कौन धर्म है? हमें समझाओ–तुम गृही हो, गृही की तरह आचरण न करके विपरीत आचरण क्यों करते हो?"

श्रीरामकृष्ण–(मास्टर से)–देखा? दोनों ओर सम्हालने के लिए कह रहा है।

मास्टर–जी हाँ।

निमाई ने कहा, "मैं अपनी इच्छा से संसार-धर्म की उपेक्षा नहीं कर रहा हूँ। मेरी तो यही इच्छा है कि लोक परलोक दोनों बनें। परन्तु प्रभु, न जाने क्यों प्राण उधर को खींचते हैं। समझाने

पर भी नहीं समझते। अगाध समुद्र में कुदाना चाहते हैं।"

श्रीरामकृष्ण—अहा!

(७)

थियेटर में नित्यानन्द के वंशज; तथा श्रीरामकृष्ण का उद्दीपन

नवद्वीप में नित्यानन्द आये हुए हैं। वे निमाई को खोज रहे हैं, उसी समय निमाई से भेंट हो गयी। निमाई भी उनको खोज रहे थे। मुलाकात होने पर निमाई कह रहे हैं—"मेरा जीवन सार्थक है। मेरा स्वप्न सत्य हुआ। तुम मुझे स्वप्न में दर्शन देकर छिप गये थे।"

श्रीरामकृष्ण—(मास्टर से गद्गद स्वरों में)—निमाई कहते हैं कि स्वप्न में मैंने देखा है।

श्रीवास ने षड्भुजा मूर्ति देखी है और स्तव कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण भावावेश में षड्भुजा-मूर्ति के दर्शन कर रहे हैं।

गौरांग को ईश्वरावेश हुआ है। वे अद्वैत, श्रीवास, हरिदास आदि के साथ भावावेश में बातचीत कर रहे हैं।

गौरांग का भाव समझकर नित्यानन्द गा रहे हैं—"कहाँ हो सखी, व्रज में श्रीकृष्ण कब आये?"

श्रीरामकृष्ण गाना सुनते ही समाधिमग्न हो गये। बड़ी देर तक उसी अवस्था में रहे। बाद्य बज रहे हैं। श्रीरामकृष्ण की समाधि छूटी। अब खड़दह के एक बाबू आये, वे नित्यानन्द के वंशज हैं। वे श्रीरामकृष्ण की कुर्सी के पीछे खड़े हुए। उम्र तीस-पैंतीस की होगी। श्रीरामकृष्ण को उन्हें देखकर अपार आनन्द हुआ। उनका हाथ पकड़कर उनसे कितनी ही बातें कह रहे हैं। कभी कभी उनसे कहते हैं—"यहाँ बैठो, बैठो न, तुम्हारे यहाँ रहने

पर बड़ी उद्दीपना होगी।' स्नेहपूर्वक उनका हाथ पकड़ मानो खेल कर रहे हैं। उनके मुँह पर हाथ फेरकर कितना ही स्नेह कर रहे हैं।

गोस्वामी के चले जाने पर मास्टर से कह रहे हैं—"वह बड़ा पण्डित है। उसका बाप बड़ा भक्त है। जब मैं खड़दह के श्यामसुन्दर का दर्शन करने गया था, तब सौ रुपये देने पर भी जो भोग नहीं मिलता, वही भोग लाकर मुझे उसने खिलाया था।

"इसके लक्षण बड़े अच्छे हैं। जरा हिला-डुला देने से चैतन्य हो जायगी। उसे देखते ही उद्दीपना होती है और खूब होती है। और जरा देर रहता तो मैं खड़ा हो जाता।"

पर्दा उठ गया। राजपथ पर नित्यानन्द सिर पर हाथ लगाये हुए खून का बहना रोक रहे हैं। मधाई ने कलसी का टुकड़ा फेंककर मारा है। परन्तु नित्यानन्द का ध्यान मधाई की ओर नहीं है। गौराग के प्रेम से वे पूरे मतवाले हो रहे हैं। श्रीरामकृष्ण को भावावेश हुआ है। देख रहे हैं, मारकर पश्चात्ताप करनेवाले मधाई को और उसके साथी जगाई को नित्यानन्द गले से लगा रहे हैं।

अब निमाई शची देवी से सन्यास की बात कह रहे हैं।

सुनकर शची देवी मूच्छित हो गयी। उनको मूच्छित देखकर कितने ही दर्शक हाहाकार कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण तिल भर भी विचलित न होकर एकदृष्टि से देख रहे हैं। केवल आँखों के कोरों में एक एक बूंद आँसू झलक रहा है।

(८)

श्रीरामकृष्ण का भक्त-प्रेम

अभिनय समाप्त हो गया। श्रीरामकृष्ण गाड़ी पर चढ़ रहे

महेन्द्र—जी, कृपा रखियेगा, जिससे भक्ति हो।

श्रीरामकृष्ण—तुम बड़े उदार और सरल हो। उदार हुए बिना कोई ईश्वर को पा नहीं सकता। वे कपट से बहुत दूर हैं।

महेन्द्र श्यामबाजार के पास बिदा हुए। गाड़ी जा रही है।

श्रीरामकृष्ण—(मास्टर से)—यदु मल्लिक ने क्या किया?

मास्टर—(मन ही मन)—श्रीरामकृष्ण सब की कल्याण-कामना कर रहे हैं।

परिच्छेद २१

प्रार्थना-रहस्य

(१)

साधारण ब्राह्म-समाज मन्दिर में श्रीरामकृष्ण। 'समन्वय'

आज श्रीरामकृष्ण कलकत्ता आये हुए हैं। आज नवरात्रि की सप्तमी-पूजा है। बुधवार, २६ सितम्बर, १८८४। श्रीरामकृष्ण को बहुत से काम हैं। शारदीय महोत्सव है—हिन्दुओं के यहाँ आज प्राय: घर-घर में यह महोत्सव मनाया जा रहा है, फिर राजधानी कलकत्ते की बात ही क्या है। श्रीरामकृष्ण अधर के यहाँ जाकर प्रतिमा-पूजन देखेंगे और आनन्दमयी के आनन्दोत्सव में भाग लेंगे। उनकी एक इच्छा और है। वे श्रीयुत शिवनाथ शास्त्री के दर्शन करेंगे।

दिन के दोपहर से साधारण ब्राह्मसमाज के फुटपाथ पर हाथ में छाता लिये प्रतीक्षा में मास्टर टहल रहे हैं। एक बजा, दो बजे, श्रीरामकृष्ण न आये। श्रीयुत महलानवीस के दवाखाने की सीढ़ी पर बैठकर कभी पूजा के उत्सव में आबाल-वृद्ध नरनारियों को आनन्द करते हुए देखते हैं।

तीन बज गये। कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण की गाड़ी आकर पहुँच गयी। साथ में हाजरा तथा दो-एक भक्त और हैं। मास्टर को श्रीरामकृष्ण के दर्शनों से अपार आनन्द हुआ है। उन्होंने श्रीरामकृष्ण की चरणवन्दना की। श्रीरामकृष्ण ने कहा, मैं शिवनाथ के घर जाऊँगा। श्रीरामकृष्ण के आने की बात सुनकर

कई ब्राह्मभक्त वहाँ आ पहुँचे। श्रीरामकृष्ण को अपने साथ वे ब्राह्ममुहल्ले के भीतर शिवनाथ के यहाँ ले आये। शिवनाथ घर में न थे। अब क्या किया जाय? देखते ही देखते श्रीयुत विजय, श्रीयुत महलनबीस आदि ब्राह्मसमाज के संचालक आ गये। वे श्रीरामकृष्ण का स्वागत करके उन्हें समाज-मन्दिर के अन्दर ले गये। श्रीरामकृष्ण जरा देर के लिए बैठ गये, यह आशा थी कि तब तक शिवनाथ भी आयेंगे।

श्रीरामकृष्ण सदा ही आनन्दमय बने रहते हैं। हँसकर उन्होंने आसन ग्रहण किया। वेदी के नीचे जिस जगह संकीर्तन होता है, वहीं बैठने का आसन कर दिया गया। विजय आदि कहुतेरे ब्राह्मभक्त सामने बैठे।

श्रीरामकृष्ण—(विजय से, हँसते हुए)—मैंने सुना है कि यहाँ कोई साइनबोर्ड है। दूसरे मतों के आदमी यहाँ नहीं आने पाते। नरेन्द्र ने कहा, समाज में जाने की जरूरत नहीं, आप शिवनाथ के यहाँ जाइयेगा।

"मैं कहता हूँ, उनको सभी पुकार रहे हैं। द्वेष की क्या जरूरत है? कोई साकार कहता है और कोई निराकार। मैं कहता हूँ, जिसका विश्वास साकार पर है, वह साकार की ही चिन्ता करे और जिसका विश्वास निराकार पर है, वह निराकार की चिन्ता करे। तात्पर्य यह कि इस कट्टरता की कोई आवश्यकता नहीं कि मेरा ही धर्म ठीक है, तथा अन्य सब वाहियात हैं। 'मेरा धर्म ठीक है, पर दूसरों के धर्म में सचाई है या वह गलत है, यह मेरी समझ में नहीं आता,' ऐसा भाव अच्छा है, क्योंकि बिना ईश्वर का साक्षात्कार किये उनका स्वरूप समझ में नहीं आता। कबीर कहते थे, साकार मेरी माँ है और निराकार मेरा बाप।

'काको निन्दौं काको वन्दौं दोनों पल्ला भारी।'

"हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, शाक्त, वैष्णव, शैव, ऋषियों के समय के ब्रह्मज्ञानी और आजकल के ब्राह्मसमाजवाले तुम लोग, सब एक ही वस्तु की चाह रखते हो। अन्तर इतना ही है कि जिससे जिसका हाजमा नहीं बिगड़ता, उसी की व्यवस्था उसके लिए माँ ने की है।

"बात यह है कि देश, काल और पात्र के भेद से ईश्वर ने अनेक धर्मों की सृष्टि की है। परन्तु सब मत ही उनके रास्ते हैं, पर मत कभी ईश्वर नहीं है। बात यह है कि आन्तरिक भक्ति के द्वारा एक मत का आश्रय लेने पर उनके पास तक पहुँचा जाता है। अगर किसी मत का आश्रय लेने पर कोई भूल उसमें रहती है, तो आन्तरिकता के होने पर वे भूल सुधार देते हैं। अगर कोई आन्तरिक भक्ति के साथ जगन्नाथजी के दर्शनों के लिए निकलता है और भूलकर दक्षिण की ओर न जाकर उत्तर की ओर चला जाता है, तो रास्ते में उसे कोई अवश्य ही कह देता है, 'क्यों भाई, इस तरफ कहाँ जाते हो, दक्षिण की ओर जाओ।' वह आदमी कभी न कभी जगन्नाथजी के दर्शन अवश्य ही करेगा।

"परन्तु इस बात की आलोचना हमारे लिए निष्प्रयोजन है कि दूसरों का मत गलत है। जिनका यह संसार है, वे सोच रहे हैं। हमारा तो यह कर्तव्य है कि किसी तरह जगन्नाथजी के दर्शन करें। और तुम्हारा मत अच्छा तो है। उन्हें निराकार कह रहे हो, यह अच्छा तो है। मिश्री की रोटी सीधी तरह से खाओ या टेढ़ी करके खाओ, मीठी जरूर लगेगी।

"केवल कट्टरता अच्छी नहीं होती। तुम लोगों ने बहुरूपिये की कहानी सुनी होगी। आदमी ने जंगल में जाकर पेड़ पर

एक गिरगिट देखा। मित्रों के पास लौटकर उसने कहा, मैंने एक लाल गिरगिट देखा। उसको विश्वास था कि वह बिलकुल लाल है। एक आदमी और उस पेड़ के नीचे से लौटकर आया और उसने आकर कहा, मैं एक हरा गिरगिट देख आया हूँ। उसका विश्वास था कि वह बिलकुल हरा है। परन्तु जो मनुष्य उस पेड़ के ही नीचे रहता था, उसने आकर कहा, तुम लोग जो कुछ कहते हो, सब ठीक है, क्योंकि वह कभी लाल होता है, कभी पीला और कभी उसके कोई रंग नहीं रह जाता।

"वेदों में ईश्वर को निर्गुण, सगुण दोनों कहा है। तुम लोग केवल निराकार कह रहे हो, यह एक खास ढर्रे का है, परन्तु इससे कोई हर्ज नहीं। एक का यथार्थ ज्ञान हो जाय तो दूसरे का भी हो जाता है। वे ही समझा देते हैं। तुम्हारे यहाँ जो आता है, वह इन्हें भी पहचानता है और उन्हें भी।" (यह कहकर उन्होंने दो-एक ब्राह्मभक्तों की ओर उँगली उठाकर बताया।)

(२)

विजय गोस्वामी के प्रति उपदेश

विजय तब भी साधारण ब्राह्मसमाज में थे। उसी ब्राह्मसमाज में वे तनख्वाह लेकर आचार्य का काम करते थे। आजकल वे ब्राह्मसमाज के सब नियमों को मानकर चलने में असमर्थ हो रहे हैं। वे साकारवादियों के साथ भी मिल रहे हैं। इन सब बातों को लेकर साधारण ब्राह्मसमाज के संचालकों के साथ उनका मतान्तर हो रहा है। समाज के ब्राह्मभक्तों में कितने ही उनसे असन्तुष्ट हो रहे हैं। श्रीरामकृष्ण एकाएक विजय को लक्ष्य करके कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—(विजय से, हँसकर)—तुम साकारवादियों से मिलते हो, इसलिए मैंने सुना, तुम्हारी बड़ी निन्दा हो रही है। जो ईश्वर का भक्त है, उसकी बुद्धि कूटस्थ होती है, जैसे लोहार के यहाँ की निहाई। हथौड़े की अनगिनती चोटें लगातार पड़ रही हैं, फिर भी निर्विकार है। बुरे आदमी तुम्हें बहुत कुछ कहेंगे, तुम्हारी निन्दा करेंगे। अगर तुम हृदय से परमात्मा को चाहते हो, तो तुम्हें सब सहना होगा। दुष्टों के बीच में रहकर क्या ईश्वर की चिन्ता नहीं हो सकती? देखो न, ऋषि लोग वन में ईश्वर की चिन्ता करते थे। चारों ओर बाघ, रीछ, अनेक प्रकार के हिंसक पशु रहते थे। बुरे आदमियों का स्वभाव बाघों और रीछों जैसा ही है। वे धावा कर अनर्थ करते हैं।

"इन कई जीवों के पास सावधान रहना पड़ता है। प्रथम हैं बड़े आदमी। धन और जन, दोनों ही उनके पास यथेष्ट हैं, वे चाहें तो तुम्हारा अनर्थ कर सकते हैं। बहुत सँभलकर उनसे बातचीत करनी चाहिए। वे जो कहें, उसमें हाँ मिलाते जाना पड़ता है। इसके बाद है कुत्ता। जब कुत्ता खदेड़ लेता है या भौंकता है, तब खड़े होकर मुँह से पुचकारकर उसे ठण्डा करना पड़ता है। फिर है साँड़। मारने आये तो उसे भी पुचकारकर ठण्डा करना पड़ता है। इसके पश्चात् है शराबी। अगर चिढ़ा दो तो कहेगा, तेरी चौदह पीढ़ी की ऐसी-तैसी, तुझे फिर क्या कहूँ—इस तरह कितनी ही गालियाँ देता है। उससे कहना पड़ता है, क्यों चचा कैसे हो? तो वह खूब प्रसन्न हो जायगा, कहो तो तुम्हारे पास ही बैठकर तम्बाकू पीने लगे।

"बुरे आदमी को देखते ही मैं सावधान हो जाता हूँ। अगर कोई आकर पूछता है, क्या हुक्का-सुक्का है? तो मैं कहता हूँ, हाँ है।

" किसी का स्वभाव साँप के समान होता है। तुम्हारे बिना जाने ही कहो वह तुम्हें काट खाय। उसकी चोट से बचने के लिए बहुत विचार करना पड़ता है। नहीं तो तुम्हें ही ऐसा क्रोध आ जायगा कि उल्टे उसी के नाश करने की चिन्ता में पड़ जाओगे। इतने पर भी कभी कभी सत्संग की बड़ी आवश्यकता है। सत्संग करने पर ही सत् असत् का विचार आता है।"

विजय-अवकाश नहीं है, वहाँ काम में फँसा रहता हूँ।

श्रीरामकृष्ण-तुम लोग आचार्य हो, दूसरों को छुट्टी भी मिलती है, परन्तु आचार्य को छुट्टी नहीं मिलती, नायब जब एक हल्के का अच्छा इन्तजाम कर लेता है, तब जमींदार उसे दूसरे महाल के इन्तिजाम के लिए भेजता है। इसीलिए तुम्हें छुट्टी नहीं मिलती। (सब हँसते हैं।)

विजय-(हाथ जोड़कर)- आप जरा आशीर्वाद दीजिये।

श्रीरामकृष्ण-ये सब अज्ञान की बातें है। आशीर्वाद ईश्वर देंगे।

गृही ब्राह्मभक्त को उपदेश

विजय-जी, आप कुछ उपदेश दीजिये।

श्रीरामकृष्ण- (समाज-गृह के चारों ओर नजर डालकर सहास्य)-यह (ब्राह्मसमाज) एक तरह से अच्छा है। इसमें राव भी है और जीरा भी। (सब हँसते है।) नक्स खेल जानते हो? सत्रह से अधिक होने पर बाजी बरबाद हो जाती है। यह एक प्रकार का ताशों का खेल है। जो लोग सत्रह तुक्ताओं से कम में रह जाते हैं—जो लोग पाँच में रहते हैं, सात या दस में, वे होशियार हैं। मैं अधिक बढ़कर जल गया हूँ।

उसके बाद सोचा, क्या इस तरह करने पर (आँखें मूँदने पर) ईश्वर रहते हैं और इस तरह करने पर (आँखें खोलने पर) ईश्वर नहीं रहते? आँखें खोलकर भी मैंने देखा, सब भूतों में ईश्वर विराजमान है। मनुष्य, जीव-जन्तु, पेड़-पौधे, सूर्य-चन्द्र, जल-स्थल और अन्य सब भूतों में वे हैं।

"मैं क्यों शिवनाथ को चाहता हूँ? जो बहुत दिनों तक ईश्वर की चिन्ता करता है, उसके भीतर सार पदार्थ रहता है। उसके भीतर ईश्वर की शक्ति रहती है। जो अच्छा गाता और बजाता है, कोई एक विद्या बहुत अच्छी तरह जानता है, उसके भीतर भी सार पदार्थ है, ईश्वर की शक्ति है। यह गीता का मत है। चण्डी में है, जो बहुत सुन्दर है, उसके भीतर ही सार पदार्थ है, ईश्वर की शक्ति है। (विजय से) अहा! केदार का कैसा स्वभाव हो गया है; आते ही रोने लगता है। दोनों आँखें सदा ही फूली हुई-सी दीख पड़ती हैं।"

विजय—वहाँ केवल आप ही की बातें होती हैं और वे आपके पास आने के लिए व्याकुल हो रहे हैं।

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण उठे। ब्राह्मभक्तों ने नमस्कार किया। उन्होंने भी नमस्कार किया। श्रीरामकृष्ण गाड़ी पर बैठे। अधर के यहाँ श्रीदुर्गा के दर्शन करने के लिए जा रहे हैं।

(३)

महाष्टमी के दिन राम के घर पर श्रीरामकृष्ण

आज रविवार, महाष्टमी है, २८ सितम्बर, १८८४। श्रीरामकृष्ण देवी-प्रतिमा के दर्शन के लिए कलकत्ता आये हुए हैं। अधर के यहाँ शारदीय दुर्गोत्सव हो रहा है। श्रीरामकृष्ण

का तीनों दिन न्योता है। अधर के यहाँ प्रतिमादर्शन करने के पहले आप राम के घर जा रहे हैं। विजय, केदार, राम, सुरेन्द्र, चुनीलाल, नरेन्द्र, निरंजन, नारायण, हरीश, बाबूराम, मास्टर आदि बहुत भक्त साथ में हैं; बलराम और राखाल अभी वृन्दावन में हैं।

श्रीरामकृष्ण– (विजय और केदार को देखकर, सहास्य)– आज अच्छा मेल है। दोनों एक ही भाव के भावुक हैं। (विजय से) क्यों जी शिवनाथ की क्या खबर है? क्या तुमने—

विजय–जी हाँ, उन्होंने सुना है। मेरे साथ तो मुलाकात नहीं हुई परन्तु मैंने खबर भेजी थी और उन्होंने सुना भी है।

श्रीरामकृष्ण शिवनाथ के यहाँ गये थे, उनसे मुलाकात करने के लिए, परन्तु मुलाकात नहीं हुई। बाद में विजय ने खबर भेजी थी; परन्तु शिवनाथ को काम से फुरसत नहीं मिली, इसलिए आज भी नहीं मिल सके।

श्रीरामकृष्ण– (विजय आदि से)–मन में चार वासनाएँ उठी हैं।

"बैंगन की रसदार तरकारी खाऊँगा। शिवनाथ से मिलूँगा। हरिनाम की माला लाकर भक्तगण जप करें, मैं देखूँगा और आठ आने का कारण (शराब) अष्टमी के दिन तान्त्रिक साधक पीयेंगे, मैं देखकर प्रणाम करूँगा।"

नरेन्द्र सामने बैठे हुए थे। उनकी उम्र २२-२३ की होगी। ये बातें कहते कहते श्रीरामकृष्ण की नरेन्द्र पर दृष्टि पड़ी। श्रीरामकृष्ण खड़े होकर समाधिमग्न हो गये। नरेन्द्र के घुटने पर एक पैर बढ़ाकर उसी भाव से खड़े हैं। बाहर का कुछ भी ज्ञान नहीं है, आँखों की पलक नहीं गिर रही है।

बड़ी देर बाद समाधि भंग हुई। अब भी आनन्द का नशा नहीं उतरा है। श्रीरामकृष्ण आप ही आप बातचीत कर रहे हैं। भावस्थ होकर नाम जप रहे है। कहते हैं---

"सच्चिदानन्द! सच्चिदानन्द! कहूँ? नही, आज तू कारणानन्ददायिनी है---कारणानन्दमयी। सा रे ग म प ध नि। नि में रहना अच्छा नही। बडी देर तक रहा नही जाता। एक स्वर नीचे रहूँगा।

"स्थूल, सूक्ष्म, कारण और महाकारण। महाकारण में जाने पर चुप है। वहाँ बातचीत नही हो सकती।

"ईश्वरकोटि महाकारण मे पहुँचकर लौट सकते हैं। वे ऊपर चढते है, फिर नीचे भी आ सकते हैं। अवतार आदि ईश्वरकोटि हैं। वे ऊपर भी चढते हैं और नीचे भी आ सकते हैं। छत के ऊपर चढकर, फिर सीढी से उतरकर नीचे चल-फिर सकते हैं। अनुलोम और विलोम। सात मजला मकान है, किसी की पहुँच बाहर के फाटक तक ही होती है, और जो राजा का लड़का है, उसका तो वह अपना ही मकान है, वह सातों मंजिल पर घूम-फिर सकता है। एक एक तरह के अनार है। एक खास प्रकार है, जिसमें थोड़ी देर तो एक तरह की फुलझड़ियाँ होती हैं, फिर कुछ देर बन्द रहकर दूसरे तरह के फूल निकलने लगते है, फिर और किसी तरह के फूल, मानो फुलझड़ियों का छूटना बन्द ही नही होता।

"एक तरह के अनार और हैं। आग लगाने से थोड़ी ही देर के बाद वह भुस्स से फूट जाते हैं। इसी तरह बहुत प्रयत्न करके साधारण आदमी अगर ऊपर चला भी जाता है तो फिर वह लौटकर खबर नही देता। जीवकोटि के जो हैं, बहुत प्रयत्न

करने पर उन्हें समाधि हो सकती है, परन्तु समाधि के बाद न वे नीचे उतर सकते हैं और न उतरकर खबर ही दे सकते है।

"एक हैं नित्यसिद्ध की तरह। वे जन्म से ही ईश्वर की चाह रखते हैं, संसार की कोई चीज उन्हें अच्छी नहीं लगती। वेदों में होमापक्षी की कथा है। यह चिड़िया आकाश में बहुत ऊँचे पर रहती है। वहीं वह अण्डे भी देती है। इतनी ऊँचाई पर रहती है कि अण्डा बहुत दिनों तक लगातार गिरता रहता है। गिरते गिरते अण्डा फूट जाता है। तब बच्चा गिरता रहता है। बहुत दिनों तक लगातार गिरता रहता है। गिरते ही गिरते उसकी आँखें भी खुल जाती हैं। जब मिट्टी के समीप पहुँच जाता है, तब उसे ज्ञान होता है। तब वह समझ लेता है कि देह में मिट्टी के छू जाने से ही जान जायगी। तब वह चीख मारकर अपनी माँ की ओर उड़ने लगता है। मिट्टी से मृत्यु होगी, इसीलिए मिट्टी देखकर भय हुआ है। अब अपनी माँ को चाहता है। माँ उस ऊँचे आकाश में है। उसी ओर बेतहाशा उड़ने लगता है, फिर दूसरी ओर दृष्टि नहीं जाती।

"अवतारों के साथ जो आते हैं, वे नित्यसिद्ध होते हैं, कोई अन्तिम जन्मवाले होते हैं।

(विजय से) "तुम लोगों को दोनों ही है, योग भी है और भोग भी। जनक राजा को योग भी था और भोग भी था। इसीलिए उन्हें लोग राजर्षि कहते हैं। राजा और ऋषि दोनों ही। नारद देवर्षि हैं, और शुकदेव ब्रह्मर्षि।

"शुकदेव ब्रह्मर्षि हैं, शुकदेव ज्ञानी नहीं, पुन्जीभूत ज्ञान की मूर्ति हैं। ज्ञानी किसे कहते हैं? जिसे प्रयत्न करके ज्ञान हुआ है। शुकदेव ज्ञान की मूर्ति हैं, अर्थात् ज्ञान की जमायी हुई राशि

हूँ। यह ऐसे ही हुआ है, साधना करके नहीं।"

बातें कहते हुए श्रीरामकृष्ण की साधारण दशा हो गयी है। अब भक्तों से बातचीत कर सकेंगे।

केदार से उन्होंने संगीत गाने के लिए कहा। केदार गा रहे हैं। उन्होंने कई गाने गाये। एक का भाव नीचे दिया जाता है—

"देह में गौरांग के प्रेम की तरंगें लग रही हैं। उनकी हिलोरों में दुष्टों की दुष्टता बह जाती है। यह ब्रह्माण्ड तलातल को पहुँच जाता है। जी में आता है, डूबकर नीचे बैठा रहूँ परन्तु वहाँ भी गौरांग-प्रेम-रूपी घड़ियाल से जी नहीं बचता, वह निगल जाता है। ऐसा सहानुभूतिपूर्ण और कौन है, जो हाथ पकड़कर खींच ले जाय?"

गाना हो जाने पर श्रीरामकृष्ण फिर भक्तों से बातचीत कर रहे हैं। श्रीयुत केशव सेन के भतीजे नन्दलाल वहाँ मौजूद थे। वे अपने दो-एक ब्राह्मभक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण के पास ही बैठे हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण—(विजय आदि भक्तों से)—कारण (शराब) की बोतल एक आदमी ले आया था, मैं छूने गया, पर मुझसे छुई न गयी।

विजय—अहा!

श्रीरामकृष्ण—सहजानन्द के होने पर यों ही नशा हो जाता है। शराब पीनी नहीं पड़ती। माँ का चरणामृत देखकर मुझे नशा हो जाता है, ठीक उतना जितना पाँच बोतल शराब पीने से होता है।

ज्ञानी तथा भक्त की अवस्था

"इस अवस्था में सब समय सब तरह का भोजन नहीं खाया

जाता।"

नरेन्द्र–खाने-पीने के लिए जो कुछ मिला, वही बिना विचार के खाना अच्छा है।

श्रीरामकृष्ण–यह बात एक विशेष अवस्था के लिए है। ज्ञानी के लिए किसी में दोष नहीं। गीता के मत से ज्ञानी खुद नहीं खाता, वह कुण्डलिनी को आहुति देता है।

"यह बात भक्त के लिए नहीं है। मेरी इस समय की अवस्था यह है कि ब्राह्मण का रसोया भोग न हो तो मैं नहीं खा सकता। पहले ऐसी अवस्था थी कि दक्षिणेश्वर के उस पार से मुर्दों के जलने की जो बू आती थी, उसे मैं नाक से खींच लेता था—वह बड़ी मीठी लगती थी। पर अब सब के हाथ का नहीं खा सकता।

"और सचमुच नहीं खा सकता, यद्यपि कभी कभी खा भी लेता हूँ। केशव सेन के यहाँ मुझे नवबृन्दावन नाटक दिखाने ले गये थे। पूड़ियाँ और पकौड़ियाँ ले आये। न मालूम धोबी ले आया था या नाई। (सब हँसते हैं।) मैंने खूब खाया। राखाल ने कहा, जरा और खाओ।

(नरेन्द्र से) "तुम्हारे लिए इस समय यह चल सकता है। तुम इधर भी और उधर भी हो। इस समय तुम सब खा सकते हो।

(भक्तों से) "शूकर-मांस खाकर भी अगर किसी का ईश्वर की ओर झुकाव हो, तो वह धन्य है और निरामिष-भोजन करने पर भी अगर किसी का मन कामिनी और काञ्चन पर लगा रहे, तो उसे धिक्कार है।

"मेरी इच्छा थी कि लोहारों के यहाँ की दाल खाऊँ बचपन की बात है। लोहार कहते थे, ब्राह्मण क्या खाना पकाना जाने? खैर, मैंने खाया, परन्तु उसमें लोहारों बू मिल रही थी।

(सब हँसते हैं।)

"गोविन्द राय के पास मैंने अल्ला मन्त्र लिया। कोठी में प्याज डालकर भात पकाया गया। मणि मल्लिक के बगीचे में मैंने तरकारी खायी, परन्तु उससे एक तरह की घृणा हो गयी।

"मैं देश (कामारपुकुर) गया, तब रामलाल का बाप * डरा। उसने सोचा कि यह तो इधर-उधर किसी के यहाँ भी खा लेता है। कहीं ऐसा न हो कि जाति से च्युत कर दिया जाऊँ; इसी लिए मैं अधिक दिन वहाँ न रह सका, वहाँ से चला आया।

"वेदों और पुराणों में शुद्धाचार की बात लिखी है। वेदों और पुराणों में जिसके लिए कहा है कि यह न करो, इससे अनाचार होता है, तन्त्रों में उसी को अच्छा कहा है।

"मेरी कैसी कैसी अवस्थाएँ बीत गयी हैं। मुख आकाश और पाताल तक फैलाता था और तब मैं माँ कहता था, मानो माँ को पकड़े लिये आ रहा हूँ जैसे जाल डालकर जबरदस्ती मछली पकड़कर, खींचना। एक गाने में है—

"अबकी बार, ऐ काली, तुम्हें ही मैं खा जाऊँगा। तारा, गण्डयोग में मेरा जन्म हुआ है। इस योग में पैदा होने पर बच्चा अपनी माँ को खा जाता है। अबकी बार, माँ, या तो तुम्हीं मुझे खा जाओगी या मैं ही तुम्हें खाऊँगा, दो में एक तो होगा ही। मैं हाथों में, पैरों में, सर्वांग में कालिख§ पोत लूँगा। जब यमराज आकर मुझे बाँधने लगेंगे तब वही कालिख उसके मुँह में लगाऊँगा। मैं यह तो कहता हूँ कि तुझे खा जाऊँगा परन्तु माँ, यह समझ ले

* श्रीरामकृष्ण के बड़े भाई रामेश्वर।

§ बंगला शब्द 'काली' से दो अर्थ निकलते हैं—स्याही और कालिका देवी। यहाँ उसी श्लेष से मतलब है।

जाता।"

नरेन्द्र–खाने-पीने के लिए जो कुछ मिला, वही बिना विचार के खाना अच्छा है।

श्रीरामकृष्ण–यह बात एक विशेष अवस्था के लिए है। ज्ञानी के लिए किसी में दोष नहीं। गीता के मत से ज्ञानी खुद नहीं खाता, वह कुण्डलिनी को आहुति देता है।

"यह बात भक्त के लिए नहीं है। मेरी इस समय की अवस्था यह है कि ब्राह्मण का लगाया भोग न हो तो मैं नहीं खा सकता। पहले ऐसी अवस्था थी कि दक्षिणेश्वर के उस पार से मुर्दों के जलने की जो बू आती थी, उसे मैं नाक से खींच लेता था—वह बड़ी मीठी लगती थी। पर अब सब के हाथ का नहीं खा सकता।

"और सचमुच नहीं खा सकता, यद्यपि कभी कभी खा भी लेता हूँ। केशव सेन के यहाँ मुझे नववृन्दावन नाटक दिखाने ले गये थे। पूड़ियाँ और पकौड़ियाँ ले आये। न मालूम धोबी ले आया था या नाई। (सब हँसते हैं।) मैंने खूब खाया। राखाल ने कहा, जरा और खाओ।

(नरेन्द्र से) "तुम्हारे लिए इस समय यह चल सकता है। तुम इधर भी और उधर भी हो। इस समय तुम सब खा सकते हो।

(भक्तों से) "शूकर-मांस खाकर भी अगर किसी का ईश्वर की ओर झुकाव हो, तो वह धन्य है और निरामिष-भोजन करने पर भी अगर किसी का मन कामिनी और कांचन पर लगा रहे, तो उसे धिक्कार है।

"मेरी इच्छा थी कि लोहारों के यहाँ की दाल खाऊँ बचपन की बात है। लोहार कहते थे, ब्राह्मण क्या खाना पकाना जानें? खैर, मैंने खाया, परन्तु उसमें लोहारी बू मिल रही थी।

भक्तों ने आसन ग्रहण किया। सब की दृष्टि श्रीरामकृष्ण पर लगी हुई है। सन्ध्या होने में अभी कुछ देर है। श्रीरामकृष्ण भक्तों से बातचीत कर रहे हैं। उनसे कुशल-प्रश्न पूछ रहे हैं। केदार बड़े ही विनीत भाव से हाथ जोड़कर बहुत ही मृदु तथा मधुर शब्दों में श्रीरामकृष्ण से निवेदन कर रहे हैं। पास हैं नरेन्द्र, चुन्नी, सुरेन्द्र, राम, मास्टर और हरीश।

केदार–(श्रीरामकृष्ण से, विनयपूर्वक)–सिर का चक्कर जाना किस तरह अच्छा होगा?

श्रीरामकृष्ण–(सस्नेह)–ऐसा होता है; मुझे भी हुआ था। थोड़ा थोड़ा बादाम का तेल सिर में लगाकर मालिश कर लिया कीजिये। सुना है, इस तरह यह बीमारी अच्छी हो जाती है।

केदार–जो आज्ञा।

श्रीरामकृष्ण–(चुन्नी से)–क्यों जी, तुम सब कैसे हो?

चुन्नी–जी, इस समय तो सब कुशल है। वृन्दावन में बलराम बाबू और राखाल अच्छी तरह हैं।

श्रीरामकृष्ण–तुमने इतनी मिठाई क्यों भेज दी?

चुन्नी–जी, वृन्दावन से आ रहा हूँ।

चुन्नीलाल बलराम के साथ वृन्दावन गये हुए थे और कई महीने तक वहीं ठहरे थे। छुट्टी पूरी हो रही है, इसलिए अब कलकत्ता लौट आये हैं।

श्रीरामकृष्ण–(हरीश से)–तू दो-एक दिन बाद जाना। अभी बीमारी की हालत है, जाने पर वहाँ फिर बीमार पड़ जायगा।

(नारायण से, सस्नेह) "बैठ, आ मेरे पास आकर बैठ। कल जाना और वहीं खाना भी। (मास्टर की ओर इशारा करके) इनके साथ जाना। (मास्टर से) क्यों जी?"

मास्टर की इच्छा थी, वे उसी दिन श्रीरामकृष्ण के साथ दक्षिणेश्वर जायें, अतएव वे सोचने लगे। सुरेन्द्र बड़ी देर तक थे। बीच में एक बार घर गये थे। घर से लौटकर श्रीरामकृष्ण के पास खड़े हुए।

सुरेन्द्र कारण (शराब) पीते हैं। पहले मात्रा बहुत बढ़ा-चढ़ा था। सुरेन्द्र की हालत देखकर श्रीरामकृष्ण को चिन्ता हो गयी थी। बिलकुल ही पीना छोड़ देने के लिए नहीं कहा, उन्होंने कहा, "सुरेन्द्र, देखो, जो पीना, श्रीदेवी को निवेदित करके पीना और उतना ही जिससे न पैर लड़खड़ायें और न सिर घूमे। उनकी चिन्ता करते करते फिर तुम्हें पीना बिलकुल ही अच्छा न लगेगा। वे स्वयं कारणानन्ददायिनी हैं। उन्हें पा लेने पर सहजानन्द होता है।"

सुरेन्द्र पास खड़े हैं। श्रीरामकृष्ण ने उनकी ओर दृष्टि करके कहा, तुमने कारण पान किया है। यह कहकर ही भाव में तन्मय हो गये।

शाम हो गयी। कुछ बहिर्मुख होकर श्रीरामकृष्ण माता का नाम लेकर आनन्दपूर्वक गाने लगे। बीच बीच में तालियाँ बजा रहे हैं। स्वर करके कह रहे हैं—"हरि बोल, हरि बोल, हरिमय हरि बोल, हरि हरि हरि बोल।"

फिर कहने लगे—"राम, राम, राम, राम, राम, राम, राम, राम, राम।"

श्रीरामकृष्ण अब प्रार्थना कर रहे हैं—"हे राम! हे राम! मैं भजनहीन हूँ, साधनहीन हूँ, ज्ञानहीन हूँ, भक्तिहीन हूँ, क्रियाहीन हूँ, राम! शरणागत हूँ। मैं देह-सुख नहीं चाहता। अष्ट-सिद्धि की क्या, शत सिद्धियाँ भी नहीं चाहता। मैं शरणागत हूँ, शरणा-

गत। बस वही करो, जिससे तुम्हारे पादपद्मों में शुद्धा भक्ति हो, और तुम्हारी भुवनमोहिनी माया से मैं मुग्ध न होऊँ। राम! मैं शरणागत हूँ।"

श्रीरामकृष्ण प्रार्थना कर रहे हैं और सब लोग टकटकी लगाये देख रहे हैं। उनका करुणामय स्वर सुनकर भक्त आँसू रोक नहीं सकते। श्रीयुत राम पास आकर खड़े हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण-(राम के प्रति)-राम, तुम कहाँ थे ?

राम-जी, ऊपर था।

श्रीरामकृष्ण तथा भक्तों की सेवा के लिए राम ऊपर प्रबन्ध करने के लिए गये थे।

श्रीरामकृष्ण-(राम से, सहास्य)—ऊपर रहने की अपेक्षा क्या नीचे रहना अच्छा नहीं ? नीची जमीन में ही पानी ठहरता है। ऊँची जमीन से पानी बह जाता है।

राम-(हँसते हुए)-जी हाँ।

छत पर पत्तलें पड़ चुकी हैं। श्रीरामकृष्ण और भक्तों को लेकर राम ऊपर गये और उन्हें आनन्द से भोजन कराया। उत्सव हो जाने पर, श्रीरामकृष्ण निरंजन, मास्टर आदि भक्तों को साथ लेकर अधर के यहाँ गये। वहाँ माँ आयी हुई हैं। आज महाष्टमी है। अधर की विशेष प्रार्थना है, श्रीरामकृष्ण उपस्थित रहें, जिससे उनकी पूजा सार्थक हो जाय।

परिच्छेद २२

मातृभाव से साधना

(१)

ईश्वर-कोटि का विश्वास स्वयंसिद्ध

आज नवमी पूजा है, २९ सितम्बर, १८८४। अभी सबेरा हुआ ही है। काली की मंगलारती हो गयी है। नौबतखाने से रोशनचौकी में प्रभाती मधुर रागिनी बज रही है। ब्राह्मण देव हाथ में फूलदानी लेकर पूजार्थ फूल तोड़ने आ रहे हैं। उधर माली भी देवमन्दिरों में फूल चढ़ाने के उद्देश्य से पुष्पचयन करने निकले हैं। माता की पूजा होगी। श्रीरामकृष्ण उषा की ललाई छा जाने से पहले ही उठे हैं। भवनाथ, निरञ्जन और मास्टर गत रात्रि से ही यहीं पर हैं। ये श्रीरामकृष्ण के कमरेवाले बरामदे में रात भर सोये थे। आँख खोलकर देखा, श्रीरामकृष्ण मतवाले होकर नृत्य कर रहे हैं और 'जय दुर्गा, जय दुर्गा' कह रहे हैं।

जैसे एक बालक, जिसके कमर में धोती भी नहीं रहती, माता का नाम लेते हुए कमरे भर में नाच रहे हैं।

कुछ देर बाद फिर कह रहे हैं—'सहजानन्द—सहजानन्द।' इसके अनन्तर बार बार गोविन्द का नाम लेने लगे। कह रहे हैं—'प्राण हे गोविन्द! मेरे जीवन हो।'

भक्तगण उठकर बैठ गये। एकदृष्टि से श्रीरामकृष्ण का भाव देख रहे हैं। हाजरा भी कालीमन्दिर में हैं। श्रीरामकृष्ण

के कमरे के दक्षिण पूर्ववाले बरामदे में उनका आसन है। लाटू भी हैं और श्रीरामकृष्ण की सेवा किया करते हैं। राखाल इस समय वृन्दावन में हैं। नरेन्द्र कभी कभी दर्शन करने के लिए आते हैं। आज आयेंगे।

श्रीरामकृष्ण के कमरे के उत्तर-पूर्ववाले छोटे बरामदे में भक्तगण सोये हुए हैं। जाड़े का समय है, इसलिए टट्टी बँधी है। सब के हाथमुँह धो चुकने के बाद, इस उत्तरवाले बरामदे में श्रीरामकृष्ण एक चटाई पर आकर बैठे। दूसरे भक्त भी यहाँ कभी कभी आकर बैठते हैं।

श्रीरामकृष्ण-(भवनाथ से)-बात यह है कि जो जीव-कोटि के हैं उन्हें सहज ही विश्वास नहीं होता। ईश्वर-कोटि के जो हैं उनका विश्वास स्वतःसिद्ध है। प्रह्लाद 'क' लिखते हुए ही फूट-फूटकर रोने लगे थे। उन्हें कृष्ण की याद आ गयी थी। जीव का स्वभाव है कि उसकी बुद्धि संशयात्मक होती है। वे कहते हैं 'हाँ यह सच तो है, परन्तु—'

"हाजरा किसी तरह भी विश्वास नहीं करना चाहता कि ब्रह्म और शक्ति, शक्ति और शक्तिमान दोनों अभेद हैं। जब वे निष्क्रिय हैं, तब उन्हें हम ब्रह्म कहते हैं और जब सृष्टि, स्थिति और प्रलय करते हैं, तब उन्हीं को शक्ति कहते हैं। हैं वे एक ही वस्तु—अभेद। अग्नि कहने के साथ ही दाहिका शक्ति का बोध हो जाता है और दाहिका शक्ति के कहने पर आग की याद आती है। एक को छोड़कर दूसरे को सोचने की गुंजाइश नहीं है।

"तब मैंने प्रार्थना की, 'माँ, हाजरा यहाँ का मत उलट देना चाहता है। या तो तू उसे समझा दे या उसे यहाँ से हटा दे।' उसके दूसरे दिन उसने आकर कहा, हाँ मानता हूँ। तब उसने

कहा, विभु सब जगह है।"

भवनाथ—(हँसकर)—हाजरा की इसी बात पर आपको इतना दुःख हुआ था?

श्रीरामकृष्ण—मेरी अवस्था बदल गयी है। अब आदमियों के साथ वादविवाद नहीं कर सकता। इस समय मेरी ऐसी अवस्था नहीं है कि हाजरा के साथ तर्क और झगड़ा कर सकूँ। यदु मल्लिक के बगीचे में हृदय ने कहा, 'मामा, क्या मुझे रखने की तुम्हारी इच्छा नहीं है?' मैंने कहा, 'नहीं, अब मेरी वैसी अवस्था नहीं है कि तेरे साथ गला फाड़ता रहूँ।'

"ज्ञान और अज्ञान किसे कहते हैं? जब तक यह बोध है कि ईश्वर दूर है तब तक अज्ञान है और जब यह बोध है कि ईश्वर यहीं तथा सर्वत्र है, तभी ज्ञान है।

"जब यथार्थ ज्ञान होता है, तब सब चीजें चेतन जान पड़ती हैं। मैं शिबू के साथ खूब मिलता-जुलता था। तब शिबू निरा बच्चा था। चार-पाँच साल का रहा होगा। उस समय मैं देश में था, बादल घिरे हुए थे और मेघों की गर्जना हो रही थी। शिबू मुझसे कहता था, चाचा, देखो, चकमक पत्थर घिस रहा है। (सब हँसते हैं।) एक दिन देखा, वह अकेला पतिंगे पकड़ने जा रहा था। इधर-उधर के पौधे हिल रहे थे। तब वह पत्तियों से कह रहा था, 'चुप-चुप, मैं पतिंगे पकड़ूँगा।' बालक सब चेतन देख रहा है! सरल विश्वास, बालक की तरह का विश्वास जब तक नहीं होता, तब तक ईश्वर नहीं मिलते। उफ्! मेरी कैसी अवस्था थी! एक दिन घास के वन में किसी कीड़े ने काट लिया। मुझे इससे बड़ा भय हुआ। सोचा कहीं साँप ने न काटा हो। तब क्या करता? मैंने सुना था, अगर वह फिर काटे तो विष

उठा लेता है। बस वहीं बैठा हुआ मैं बिल खोजने लगा कि वह फिर काटे। इसी तरह बैठा था कि एक ने पूछा, यह आप क्या कर रहे हैं? मैंने कहा, बिल खोज रहा हूँ। उसने सब कुछ सुनकर कहा, ठीक वहीं पर उसे दुबारा काटना चाहिए, तब कहीं विष उतरता है। तब मैं उठकर चला आया। शायद गोजर या किसी कीड़े ने काटा था।

"एक दूसरे दिन मैंने रामलाल से सुना, शरद् काल की ओस देह में लगाना अच्छा होता है। क्या एक श्लोक है, रामलाल ने कहा था। कलकत्ते से आते समय गाड़ी की खिड़की से मैं गला बढ़ाये हुए गया, ताकि खूब ओस लगे। बस दूसरे ही दिन बीमार पड़ गया।" (सब हँसते हैं।)

अब श्रीरामकृष्ण कमरे के भीतर जाकर बैठे। उनके पैर कुछ फूले हुए थे। उन्होंने भक्तों को हाथ लगाकर देखने के लिए कहा कि दोनों उँगली से दबाने पर गड्ढा पड़ता है या नहीं। थोड़ा-थोड़ा गड्ढा पड़ने लगा। परन्तु लोगों ने कहा, यह कुछ नहीं है।

श्रीरामकृष्ण-(भवनाथ से)-सींती के महेन्द्र को बुला देना। उसके कहने से मेरा मन अच्छा हो जायगा।

भवनाथ-(सहास्य)-आप दवा पर बड़ा विश्वास करते हैं, हम लोग उतना नहीं करते।

श्रीरामकृष्ण-दवाएँ भी उन्हीं की हैं। एक रूप से वे ही चिकित्सक हैं। गंगाप्रसाद ने बतलाया, आप रात को पानी न पिया कीजिये। मैं उसकी बात को वेदवाक्य की तरह पकड़े हुए हूँ। मैं मानता हूँ, वह साक्षात् धन्वन्तरि है।

(२)

समाधि में श्रीरामकृष्ण

हाजरा आकर बैठे। दो-एक बातें इधर-उधर की करके श्रीरामकृष्ण ने कहा,—"देखो, कल राम के यहाँ उतने आदमी बैठे हुए थे, विजय, केदार, आदि, फिर भी नरेन्द्र को देखकर मुझे इतना उद्दीपन क्यों हुआ? केदार, मैंने देखा, कारणानन्द का घर है।"

श्रीरामकृष्ण महाष्टमी के दिन कलकत्ता गये हुए थे— देवी-प्रतिमा के दर्शनों के लिए। अधर के यहाँ प्रतिमा-दर्शन करने के लिए जाने से पहले राम के यहाँ गये थे। वहाँ बहुत से भक्त आये थे। नरेन्द्र को देखकर श्रीरामकृष्ण समाधिस्थ हो गये थे। नरेन्द्र के घुटने पर उन्होंने अपना पैर रख दिया था और खड़े हुए समाधि-मग्न हो गये थे।

देखते ही देखते नरेन्द्र भी आ गये। उन्हें देखकर श्रीरामकृष्ण के आनन्द की सीमा नहीं रही। श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करने के पश्चात् भवनाथ आदि के साथ उसी कमरे में नरेन्द्र बातचीत करने लगे। पास मास्टर हैं। कमरे में लम्बी चटाई बिछी हुई है। नरेन्द्र बातचीत करते हुए पेट के बल चटाई पर लेट गये। उन्हें देखते ही देखते श्रीरामकृष्ण समाधिस्थ हो गये। वे नरेन्द्र की पीठ पर जा बैठे, वहीं समाधि में डूब गए।

भवनाथ गा रहे हैं—(भाव)—

"माँ, आनन्दमयी होकर मुझे निरानन्द न करना। तेरे चरणकमलों को छोड़ मेरा मन और कुछ नहीं चाहता। यह मुझे दोषयुक्त बतलाता है, परन्तु मेरी समझ में नहीं आता कि मेरा

दोष क्या है। तू मुझे बतला दे। माँ, मेरी तो यह इच्छा थी कि भवानी का नाम लेकर मैं भव-सागर से पार हो जाऊँ। मैं स्वप्न में भी नहीं जानता था कि अथोर समुद्र में मुझे इस तरह डूबना होगा। दिन-रात मैं दुर्गानाम की रट लगाये रहता हूँ, फिर भी मेरी दुःख-राशि दूर नहीं होती है। हर-सुन्दरी, अबकी बार अगर मैं मरा, तो तेरा दुर्गा नाम और कोई न लेगा।"

श्रीरामकृष्ण की समाधि छूटी। उन्होंने दो गाने गाये। एक का भाव यह है—

"श्रीदुर्गा नाम का जप करो, ऐ मेरे मन! . .माँ! दुखी दास पर दया करो, तो तुम्हारा गुण भी मेरी समझ में आये। माँ, तुम सन्ध्या हो, तुम दीपक हो, तुम्हीं यामिनी हो। कभी तो तुम पुरुष होती हो और कभी रमो। माँ, रामरूप में तो तुम धनुर्धारण करती हो और कृष्णरूप में तुम बशी हाथ में लेती हो। माँ, मुक्त-कुन्तला होकर तुमने शिव को मुग्ध कर लिया था। तुम्हीं दस महाविद्याएँ हो और तुम्ही दस अवतार। अबकी बार किसी तरह, माँ, मुझे पार करो। माँ, जवापुष्पों और बिल्वदलों से यशोदा ने तुम्हारी पूजा की थी। तुमने कृष्ण को उनकी गोद में डालकर उनकी मनोकामना पूरी की। माँ, जहाँ-तहाँ पड़ा रहा करता हूँ; कभी तो जंगल में ही पड़ा रहता हूँ, परन्तु मेरा मन तेरे श्रीचरणों में ही लगा रहता है। माँ, मैं जहाँ-तहाँ दुर्भाग्य के फेर में पड़ा अपने भाग्य पर रोया करता हूँ। खैर, मुझे इसका भी दुःख नहीं, प्रार्थना है कि अन्त समय में जिह्वा तेरे नाम का उच्चारण करे। अगर तू मुझे किसी दूसरी जगह चले जाने के लिए कहे, तो माँ, इतना तो बतला, मैं किसके पास जाऊँ ? माँ, दूसरी जगह यह सुधा-मधुर तेरा नाम मुझे कहाँ मिल सकता है?

तू चाहे कितना ही 'छोड़ छोड़' क्यों न करे, परन्तु मैं तुझे न छोड़ूँगा। मैं नूपुर बनकर तेरे श्रीचरणों में बजता रहूँगा। माँ, जब तू शिव के निकट बैठेगी तब तेरे चरणों में मैं 'जय शिव जय शिव' कहकर बजता रहूँगा।"

(३)

समाधि और नृत्य

हाजरा उत्तर-पूर्ववाले बरामदे में हरिनाम की माला हाथ में लिए हुए जप कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण सामने आकर बैठे और हाजरा की माला लेकर जप करने लगे। साथ में मास्टर और भवनाथ हैं। दिन के दस बजे का समय होगा।

श्रीरामकृष्ण—(हाजरा से)—देखो, मुझसे जप नहीं होता —नहीं, नहीं, होता है! बायें हाथ से होता है, परन्तु उधर (नाम-जप) फिर नहीं होता।

इतना कहकर श्रीरामकृष्ण नाम-जप की चेष्टा करने लगे, परन्तु जप का आरम्भ करते ही समाधि लग गयी।

श्रीरामकृष्ण इसी समाधि-अवस्था में बड़ी देर से बैठे हुए हैं। हाथ में माला अब भी लिए हुए हैं। भक्तगण निर्वाक् होकर देख रहे हैं। हाजरा अपने आसन पर बैठे हुए हैं। वे भी चुपचाप श्रीरामकृष्ण की समाधि-अवस्था देख रहे हैं। बड़ी देर बाद श्रीरामकृष्ण को होश हुआ। वे कह उठे, मुझे भूख लगी है। साधारण अवस्था को लाने के लिए श्रीरामकृष्ण प्रायः इस तरह कहा करते हैं।

मास्टर खाना लाने के लिए जा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण बोल उठे, "नहीं भाई, पहले काली-मन्दिर जाऊँगा।"

पक्के आँगन से होकर श्रीरामकृष्ण काली-मन्दिर जा रहे हैं। जाते हुए द्वादश शिवालयों के शिवजी को प्रणाम कर रहे हैं। बाईं ओर राधाकान्तजी का मन्दिर है। राधाकान्तजी को देखकर श्रीरामकृष्ण ने प्रणाम किया। कालीमन्दिर में पहुँचकर माता को प्रणाम किया और आसन पर बैठकर माता के पादपद्मों में उन्होंने फूल चढ़ाये। फिर अपने सिर पर फूल रखा। लौटते हुए भवनाथ से बोले, यह सब ले चल—माता का प्रसाद, नारियल और चरणामृत। श्रीरामकृष्ण कमरे में लौट आये। साथ में भवनाथ हैं और मास्टर।

हाजरा के सामने पहुँचते ही उन्होंने प्रणाम किया। 'यह आप क्या कर रहे हैं—यह क्या कर रहे हैं' कहकर हाजरा चिल्ला उठे।

श्रीरामकृष्ण—तुम कह सकते हो कि यह अन्याय है ?

हाजरा तर्क करके प्राय यह बात कहते थे कि ईश्वर सब के भीतर हैं, साधना करके सब लोग ब्रह्मज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।

दिन बहुत चढ़ गया है। भोग की आरती का घण्टा बज चुका है। ब्राह्मण, वैष्णव और कंगाल सब अतिथिशाला की ओर जा रहे हैं। सब लोग माता का प्रसाद पायेंगे। अतिथिशाला में काली-मन्दिर के कर्मचारी जहाँ बैठकर प्रसाद पाते हैं, वहीं भक्तों के लिए भी प्रसाद पाने का बन्दोबस्त हो रहा है। श्रीरामकृष्ण ने कहा—"सब लोग वहीं जाकर प्रसाद पाओ— क्यों ? (नरेन्द्र से) नहीं, तू यहीं भोजन कर।

"अच्छा, नरेन्द्र तथा मेरे लिए यहीं प्रसाद की व्यवस्था हो।"

प्रसाद पाने के बाद श्रीरामकृष्ण ने थोड़ी देर विश्राम किया। भक्त-मण्डली बरामदे में बातचीत करने लगी। श्रीरामकृष्ण भी वहीं आकर बैठे। दो बजे का समय होगा। एकाएक भवनाथ

दक्षिण-पूर्ववाले बरामदे में ब्रह्मचारी के वेश में आकर उपस्थित हुए। भगवा धारण किये, हाथ में कमण्डलु लिए हुए हँस रहे हैं। श्रीरामकृष्ण और भक्त सब हँस रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—उसके मन का भाव भी यही है, इसीलिए तो यह वेष धारण किया।

नरेन्द्र—वह ब्रह्मचारी बना तो मैं अब वामाचारी बनूँ।
(सब हँसते हैं।)

हाजरा—उसमें पञ्च मकार, धन, यह सब करना पड़ता है।

श्रीरामकृष्ण वामाचार की बात से चुप हो रहे हैं। इस बात पर उन्होंने कोई मत प्रकट नहीं किया। बस हँसकर बात उड़ा दी। एकाएक भावाविष्ट होकर नृत्य करने लगे। गा रहे हैं—"माँ, अब मैं किसी दूसरे लालच में नहीं पड़ सकता, तुम्हारे अरुण चरणों पर मैंने देख लिया।"

श्रीरामकृष्ण ने कहा—"अहा! राजनारायण चण्डी-गीत बहुत ही सुन्दर गाता है। वे नाच नाचते हुए गाते हैं, और उस देश* के नकुड़ आचार्य का गाना! अहा! कितना सुन्दर होता है और नृत्य भी वैसा ही मधुर!"

पञ्चवटी में एक साधु आये हुए हैं। बड़े क्रोधी स्वभाव के हैं। जिस किसको गालियाँ दिया करते हैं—शाप देते हैं। खड़ाऊ पहने हुए वे आकर हाजिर हो गये।

साधु ने पूछा, 'क्या यहाँ आग मिल जायगी?' श्रीरामकृष्ण हाथ जोड़कर साधु को नमस्कार कर रहे हैं। जब तक वे साधु वहाँ पर रहे, तब तक हाथ जोड़े हुए खड़े रहे।

साधु के चले जाने पर भवनाथ हँसते हुए कहने लगे, साधु

*उनके जन्मस्थान से मतलब है कामारपुकुर के आसपास।

पर आपकी कितनी भक्ति है !

श्रीरामकृष्ण-(सहास्य)—अरे, तमःप्रधान नारायण हैं। जिनका यही स्वभाव है, उन्हें ऐसे ही प्रसन्न करना चाहिए। ये साधु जो है !

गोलोकधाम (एक तरह का खेल) खेला जा रहा है। भक्त भी खेलते हैं और हाजरा भी खेलते हैं, श्रीरामकृष्ण आकर खड़े हो गये। मास्टर और किशोरी की गोटियाँ पक गयी। श्रीरामकृष्ण ने दोनों को नमस्कार किया। कहा—"तुम दोनों भाई धन्य हो ! (मास्टर से एकान्त में) अब न खेलना।"

श्रीरामकृष्ण खेल रहे हैं। हाजरा की गोटी एक बार नरक में पड़ी थी। श्रीरामकृष्ण ने कहा—'हाजरा को क्या हो गया ! फिर !" अर्थात् हाजरा की गोटी दुबारा नरक में पड़ी। इस पर सब लोग जोर से हँसने लगे।

ससारवाले कोठे में लाटू की गोटी थी। एक बार ही सातों कौड़ियाँ चित्त पड़ी, इससे एक ही चाल में गोटी लाल हो गयी। लाटू मारे आनन्द के नाचने लगे। श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं—"लाटू को कितना आनन्द है, जरा देखो। उसकी गोटी अगर लाल न होती तो उसको दु.ख होता। (भक्तों से अलग) इसका एक अर्थ है। हाजरा को बड़ा अहकार है कि इसमें भी मेरी जीत होगी। ईश्वर की इच्छा ऐसी भी होती है कि सच्चे आदमी की हार कहीं नहीं होती। कहीं भी उसका अपमान नहीं होने देते।"

(४)

मातृभाव से साधना

कमरे में छोटे तख्त पर श्रीरामकृष्ण बैठे हुए हैं। नरेन्द्र,

भवनाथ, बाबूराम, मास्टर जमीन पर बैठे हुए हैं। घोषपाड़ा और पंचनामी मतों की बात नरेन्द्र ने चलायी। श्रीरामकृष्ण उनका वर्णन कर रहे हैं :—

"ये लोग ठीक ठीक साधना नहीं कर सकते। धर्म का नाम लेकर इन्द्रियों को चरितार्थ किया करते हैं।

(नरेन्द्र से) "तुझे अब इन मतों के सम्बन्ध में कुछ सुनने की आवश्यकता नहीं है।

"ये जो भैरव-भैरवियाँ हैं, ये सब ऐसे ही हैं। जब मैं काशी गया था, तब एक एक दिन मुझे भैरवी-चक्र में ले गये थे। उनमें एक एक भैरव था और एक एक भैरवी। मुझे कारण-पान करने के लिए कहा। मैंने कहा, माँ, मैं तो कारण छू भी नहीं सकता। तब वे लोग खूब पीने लगे। मैंने सोचा अब शायद ये लोग जप-ध्यान करेंगे, परन्तु वह तो रहा अलग, ये लोग नाचने लगे। मुझे भय होने लगा कि कहीं गंगाजी में न गिर जायँ। चक्र गंगा के तट पर ही था।

"पति और पत्नी अगर भैरव-भैरवी हो जायँ तो उनका बड़ा सम्मान होता है।

(नरेन्द्र आदि भक्तों से) "मेरा मातृभाव है, सन्तान-भाव। मातृभाव बड़ा शुद्ध भाव है। इसमें कोई विपत्ति नहीं है। भगिनी भाव भी बुरा नहीं। स्त्रीभाव या वीरभाव बड़ा कठिन है। तारक का बाप इसी भाव की साधना करता था। बड़ा कठिन है, भाव ठीक नहीं रहता।

"ईश्वर के पास पहुँचने के अनेक मार्ग हैं। सभी मत एक एक मार्ग हैं जैसे काली-मन्दिर जाने की बहुतसी राहें हैं। इनमें भेद इतना ही है कि कोई राह शुद्ध है और कोई राह अशुद्ध।

शुद्ध रास्ते से होकर जाना ही अच्छा है ।

"मैंने बहुत से मत देखे, बहुत से पथ देखे । यह सब अब और अच्छा नहीं लगता । सब एक दूसरे से विवाद किया करते हैं । यहाँ और कोई नहीं है, तुम सब अपने आदमी हो, तुम लोगों से कह रहा हूँ, अब मैंने यही समझा कि वे पूर्ण हैं और मैं उनका अंश हूँ, वे प्रभु हैं और मैं उनका दास हूँ । कभी यह भी सोचता हूँ कि 'वही' 'मैं' है और 'मैं' ही 'वह' हूँ ।"

(भक्तमण्डली स्तब्ध हो सुन रही है ।)

भवनाथ-(विनयपूर्वक)-लोगों से मतान्तर होने पर मन न जाने कैसा करने लगता है । इससे यह याद आता है कि सब को मैं प्यार न कर सका ।

श्रीरामकृष्ण-पहले एक बार बातचीत करने की, उनसे प्रीतिपूर्वक बर्ताव करने की चेष्टा करना । चेष्टा करने पर भी अगर न हो, तो फिर इसकी चिन्ता न करनी चाहिए । उनकी शरण में जाओ--उनकी चिन्ता करो । उन्हें छोड़कर दूसरे आदमियों के लिए मन में दुःख लाने की क्या जरूरत है ?

भवनाथ-ईसा मसीह और चैतन्य, इन लोगों का कहना है कि सब को प्यार करना चाहिए ।

श्रीरामकृष्ण-प्यार तो करना ही चाहिए, क्योंकि सब में परमात्मा का ही वास है, परन्तु जहाँ दुष्टात्मा हों वहाँ दूर से नमस्कार करना ही ठीक है । और चैतन्यदेव ? उनके लिए भी एक गाने में है--'विजातीय लोगों को देखकर प्रभु भाव संवरण करते हैं ।' श्रीवास के यहाँ से उनकी सास को बाल पकड़कर निकाल दिया था ।

भवनाथ-परन्तु किसी दूसरे ने निकाला था ।

श्रीरामकृष्ण–बिना उनकी सम्मति के क्या वह कभी ऐसा कर सकता था ?

"किया क्या जाय ! अगर दूसरे का मन न मिला, तो क्या रातदिन बैठे हुए इसीकी चिन्ता की जाय ? जो मन उन्हें देना चाहिए, उसे इधर-उधर लगाये रखकर उसका व्यर्थ खर्च किया करूँ ? मैं कहता हूँ, 'माँ, मैं नरेन्द्र, भवनाथ, राखाल, किसी को नहीं चाहता, मैं तुम्हें चाहता हूँ। आदमी को लेकर मैं क्या करूँ ?'

"उन्हें पा लेने पर सब कुछ पा जाऊँगा। रुपया मिट्टी है और मिट्टी ही रुपया, सोना मिट्टी है और मिट्टी ही सोना, यह कहकर मैंने त्याग किया था—गंगाजी में फेंक दिया था। पीछे मैं डरा कि लक्ष्मीजी को कहीं क्रोध न आ जाय। लक्ष्मी के ऐश्वर्य की मैंने अवज्ञा की, यदि वे मेरी खुराक बन्द कर दें तो ? तब कहा, माँ, बस तुम्हें चाहता हूँ और कुछ नहीं। उन्हें पाया तो सब कुछ पा गया।"

भवनाथ–(हँसते हुए)–यह तो चालबाजी है।

श्रीरामकृष्ण–हाँ, उतनी चालबाजी है।

"श्रीठाकुरजी ने किसी को दर्शन देकर कहा, तुम्हारी तपस्या देखकर मैं बहुत प्रसन्न हुआ हूँ। तुम अब कोई वरदान माँगो। साधक ने कहा, 'भगवन्, अगर वरदान दीजियेगा तो यह वर दीजिये—मैं सोने की थाली में अपने पोते के साथ भोजन करूँ।' इस तरह एक वर में बहुत से वर मिल गये। धन हुआ, लड़का हुआ और पोता हुआ।" (सब हँसे।)

(५)

श्रीरामकृष्ण की मातृभक्ति। संकीर्तनानन्द

भक्तगण कमरे में बैठे हैं। हाजरा बरामदे में ही बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण–जानते हो, हाजरा क्या चाहता है? कुछ रुपया चाहता है, घर में ऋण है, इसीलिए जप और ध्यान करता है, कहता है, ईश्वर रुपये देंगे।

एक भक्त–क्या वे मनोरथ की पूर्ति नहीं कर सकते?

श्रीरामकृष्ण–यह उनकी इच्छा है। परन्तु प्रेमोन्माद के बिना हुए वे सम्पूर्ण भार नहीं लेते। छोटे बच्चे को, देखो न, हाथ पकड़कर भोजन करने के लिए बैठा देते हैं। बूढ़ों को कौन देता है? उनकी चिन्ता करके जब आदमी खुद अपना भार नहीं ले सकता, तब ईश्वर उसका भार लेते हैं। हाजरा खुद घर की खबर नहीं लेता। हाजरा के लड़के ने रामलाल से कहा है, 'बाबा से आने के लिए कहना। हम लोग उनसे कुछ माँगेंगे नहीं।' उसकी बातें सुनकर मेरी आँखों में आँसू भर आये।

"हाजरा की माँ ने रामलाल से कहा है, 'प्रताप (हाजरा) से एक बार आने के लिए कहना। और अपने चाचा (श्रीरामकृष्ण) से मेरा नाम लेकर कहना जिससे वे उसे आने के लिए कहें।' मैंने हाजरा से कहा; उसने कुछ ध्यान ही नहीं दिया।

"माँ का स्थान कितना ऊँचा है! चैतन्यदेव ने कितना समझाया था, तब माँ के पास से आ सके थे। शची ने कहा था, 'मैं केशव भारती को काट डालूँगी।' चैतन्यदेव ने बहुत तरह से समझाया। कहा, 'माँ, तुम्हारी आज्ञा जब तक न होगी, तब तक मैं न जाऊँगा; परन्तु अगर मुझे संसार में रखोगी, तो मेरा शरीर न रह जायगा। और माँ जब तुम मेरी याद करोगी, तभी मैं तुमसे मिलूँगा। मैं पास ही रहा करूँगा। कभी कभी तुमसे मिल जाया करूँगा।' तब शची ने आज्ञा दी।

माँ जब तक थीं, तब तक नारद तपस्या के लिए नहीं निकल

सकें। माता की सेवा करते थे न ? माता की देह छूट जाने पर वे साधना के लिए निकले थे।

"वृन्दावन जाकर फिर वहाँ से मेरी लौटने की इच्छा ही नहीं हुई। गंगा माँ के पास रहने का विचार हुआ। सब ठीक हो गया कि इस ओर मेरा बिस्तरा लगाया जायगा, उस ओर गंगा माँ का। अब कलकत्ता न जाऊँगा। सेजबाबू का अन्न और कितने दिन खाऊँ? तब हृदय ने कहा, नहीं, तुम कलकत्ता चलो। एक ओर वह खींचता था, एक ओर गंगा माँ। मेरी तो रहने की इच्छा अधिक थी, इसी समय माँ की याद आ गयी। बस सब ठाट बदल गया। माँ बुड्ढी हो गयी थी। सोचा, माँ की चिन्ता करने लगूँगा तो ईश्वर-फीश्वर का भाव सब उड़ जायगा। अतएव माँ के पास ही चलकर रहना चाहिए। वहीं जाकर ईश्वरचिन्ता करूँगा, निश्चिन्त होकर।

(नरेन्द्र से) "तुम जरा उससे कहो न। मुझसे उस दिन कहा था कि देश जायेगा, जाकर तीन दिन रहेगा। परन्तु फिर ज्यों का त्यों हो गया।

(भक्तों से) "आज घोषपाड़ा-कोलपाड़ा की कैसी सब वाहियात बातें हुईं। गोविन्द! गोविन्द! गोविन्द! अब जरा ईश्वर का नाम लो। उड़द की दाल के बाद पायस-लड्डू हो जाय।"

नरेन्द्र गा रहे हैं।

"निरंजन पुरातन पुरुष एक हैं, अरे तू उन पर अपने चित्त को लगा दे। वे आदि-सत्य हैं, वे कारण (माया) के भी कारण हैं। प्राणरूप से वे चराचर में व्याप्त हैं। वे स्वतः प्रकाशित और ज्योतिर्मय हैं। सब के आश्रय हैं। जिसका उन पर विश्वास होता है, वह उनके दर्शन करता है। वे अतीन्द्रिय भूमि

में रहते हैं, नित्य और चैतन्यस्वरूप हैं।" इत्यादि।

नरेन्द्र एक गाना और गा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण उठकर नाचने लगे। उन्हें घेरकर भक्तगण भी नाच रहे हैं। सब लोग एक साथ कीर्तन गाते हुए नाच रहे हैं। श्रीरामकृष्ण ने भी एक गाना गाया।

मास्टर ने भी गाया था। श्रीरामकृष्ण को इसकी बड़ी खुशी है। गाना हो जाने पर श्रीरामकृष्ण हँसते हुए मास्टर से कह रहे हैं, "अच्छा खोल बजानेवाला होता तो गाना और जमता। ताक्‌ताक् ता धिना, दाक् दाक् दा धिना, ये सब बोल बजते!" कीर्तन होते होते शाम हो गयी।

परिच्छेद २३

भक्तों के साथ कीर्तनानन्द

(१)

अधर के मकान पर

आज आश्विन शुक्ला एकादशी है। बुधवार, १ अक्टूबर, १८८४। श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर से अधर के यहाँ आ रहे हैं। साथ में नारायण और गंगाधर हैं। रास्ते में एकाएक श्रीरामकृष्ण को भावावेश हो गया। श्रीरामकृष्ण भावावेश में कह रहे हैं— "मैं माला जपूँगा? छि.! ये शिव पाताल फोड़कर निकले हुए शिव हैं, स्वयम्भू लिंग।"

वे अधर के यहाँ पहुँचे। वहाँ बहुत से भक्त एकत्रित हुए हैं। केदार, विजय, बाबूराम आदि सब आये हैं। कीर्तनिया वैष्णवचरण आये हुए हैं। श्रीरामकृष्ण की आज्ञानुसार, शीघ्र आफिस से आते ही, अधर वैष्णवचरण का कीर्तन सुनते हैं। वैष्णवचरण बड़ा मधुर कीर्तन करते हैं।

आज भी संकीर्तन होगा। श्रीरामकृष्ण अधर के बैठकखाने में गये। भक्तमण्डली उन्हें देखकर खड़ी हो गयी और चरण-वन्दना करने लगी। श्रीरामकृष्ण ने प्रसन्न-चित्त से आसन ग्रहण किया। उसके बाद उन लोगों ने भी आसन ग्रहण किया। केदार और विजय ने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण ने बाबूराम और नारायण से उन्हें प्रणाम करने के लिए कहा, फिर कहा, आप लोग आशीर्वाद दें, जिससे इन्हें भक्ति हो। नारायण को दिखाकर

बोले, यह बड़ा सरल है। भक्तगण नारायण और बाबूराम को देख रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण–(केदार आदि भक्तों से)–तुम्हारे साथ रास्ते में मुलाकात हुई, नहीं तो तुम लोग काली-मन्दिर जाते। ईश्वर की इच्छा से मुलाकात हो गयी।

केदार–(विनयपूर्वक)–जो ईश्वर की इच्छा है, वही आपकी इच्छा है। (श्रीरामकृष्ण हँस रहे हैं।)

(२)

भक्तों के साथ कीर्तनानन्द

अब कीर्तन शुरू हुआ। अभिसार से आरम्भ करके रास-लीला कहकर वैष्णवचरण ने कीर्तन समाप्त किया। फिर श्रीराधा-कृष्ण का मिलन गाया जाने लगा। श्रीरामकृष्ण मारे आनन्द के नृत्य करने लगे। साथ साथ भक्तगण भी उन्हें घेरकर नाचने और गाने लगे। कीर्तन हो जाने पर सब ने आसन ग्रहण किया।

श्रीरामकृष्ण–(विजय से)–ये बहुत अच्छा गाते हैं।

यह कहकर उन्होंने वैष्णवचरण को इशारे से बतला दिया। फिर 'गौरांग-सुन्दर' गाने के लिए उनसे कहा। वैष्णवचरण गाने लगे।

गाना समाप्त हो जाने पर श्रीरामकृष्ण विजय से पूछते हैं "कैसा रहा?"—

विजय–सुनकर तो मुझे आश्चर्य हो रहा है।

इसके बाद बड़ी देर तक कीर्तनानन्द होता रहा।

(३)

साकार-निराकार की कथा। चीनी का पहाड़

केदार और कई भक्त घर जाने के लिए उठे। केदार ने

श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया, और कहा, आज्ञा हो तो अब चलें।

श्रीरामकृष्ण—तुम अधर से बिना कहे ही चले जाओगे, अभद्रता न होगी ?

केदार—तस्मिन् तुष्टे जगत् तुष्टम्। अब आप रहे तो सब का रहना हुआ। अभी मेरी तबीयत भी कुछ खराब है और फिर विवाह आदि के लिए जरा कुछ डर भी लगता है। समाज ही तो है—एक बार गड़बड़ हो भी चुका है।*

विजय—क्या इन्हें (श्रीरामकृष्ण को) छोड़कर जायेंगे ?

इसी समय श्रीरामकृष्ण को ले जाने के लिए अधर आये। भीतर पत्तलें पड़ चुकी थीं। श्रीरामकृष्ण उठे। विजय और केदार से कहा—"आओ जी मेरे साथ।" विजय, केदार और दूसरे भक्तों ने श्रीरामकृष्ण के साथ बैठकर प्रसाद पाया।

भोजन के बाद श्रीरामकृष्ण एक बार फिर बैठकखाने में आकर बैठे। केदार, विजय और दूसरे भक्त चारों ओर बैठे।

केदार ने हाथ जोड़कर बड़े ही विनयपूर्ण शब्दों में श्रीराम-कृष्ण से कहा—'मैं टाल-मटोल कर रहा था, मुझे क्षमा कीजिये।'

केदार ढाका में काम करते हैं। वहाँ बहुत से भक्त उनके पास आते हैं और उन्हें खिलाने के लिए सन्देश आदि बहुत तरह की चीजें ले आया करते हैं। केदार वही सब बातें श्रीरामकृष्ण से कह रहे हैं।

केदार—(विनयपूर्वक)—बहुत से आदमी खिलाने के लिए आते हैं। क्या करूँ ? कोई आज्ञा दीजिये।

श्रीरामकृष्ण—भक्ति होने पर चाण्डाल का भी अन्न खाया

---

*अधर केदार की अपेक्षा कुछ नीची जाति के थे। केदार ब्राह्मण थे इसलिए वे न तो अधर के घर पर खा सकते थे और न उनके साथ ही।

जा सकता है। सात वर्ष की उन्माद-अवस्था के बाद मैं उस देश में (कामारपुकुर) गया। तब कैसी कैसी अवस्थाएँ थी! वेश्याओं तक ने खिलाया, परन्तु अब वह सब नहीं होता।

केदार जाने को उठे।

केदार–(धीमी आवाज में)–महाराज, आप मुझ में कुछ शक्ति-संचार कर दीजिये, बहुत से लोग मेरे पास आते हैं, मुझे क्या ज्ञान है?

श्रीरामकृष्ण–अजी, सब हो जायगा, आन्तरिक भक्ति के रहने पर सब हो जाता है।

केदार के बिदा होने के पहले बंगवासी के सम्पादक श्रीयुत योगेन्द्र ने आकर प्रवेश किया। श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके उन्होंने आसन ग्रहण किया। साकार निराकार की बात होने लगी।

श्रीरामकृष्ण–वे साकार हैं, निराकार हैं और भी क्या क्या हैं, यह सब हम लोग क्या जानें? केवल निराकार कहने से कैसे काम चलेगा?

योगेन्द्र–ब्राह्म-समाज की एक बात बड़े आश्चर्य की है। बारह वर्ष का लड़का है, उसे भी निराकार ही सूझता है! आदि-समाजवाले साकार पर विशेष आपत्ति नहीं करते। दुर्गा पूजा के समय वे लोग भलेमानसों के घर भी जा सकते हैं।

श्रीरामकृष्ण–(हँसकर)–उन्होंने ठीक कहा, उसे भी निराकार ही सूझता है!

अधर–शिवनाथ बाबू साकार नहीं मानते।

विजय–वह उनके समझने की भूल है। ये जैसा कहते हैं, गिरगिट कितने ही रंग बदलता रहता है; जो पेड़ के नीचे रहता है, वही जान सकता है। मैंने ध्यान करते हुए मूर्तियाँ

देखीं। कितने ही देवता थे! उन्होंने बहुत कुछ कहा! मैंने मन में कहा, 'मैं उनके (श्रीरामकृष्ण के) पास जाऊँगा, ये बातें सभी मेरी समझ में आयेंगी।'

श्रीरामकृष्ण--तुमने ठीक देखा है।

केदार--भक्तों के लिए वे साकार हैं। भक्त प्रेम से उन्हें साकार देखता है। ध्रुव ने जब उनके दर्शन किये, तब पूछा, आपके कुण्डल क्यों नहीं हिल रहे हैं? श्रीठाकुरजी ने कहा, हिलाओ तो हिलें।

श्रीरामकृष्ण--सब मानना चाहिए जी--निराकार और साकार सब मानना चाहिए। काली-मन्दिर में ध्यान करते हुए मैंने देखी, एक वेश्या। मैंने कहा, माँ, तू इस रूप में भी है। इसीलिए कहता हूँ, सब मानना चाहिए। वे कब किस रूप से दर्शन देते हैं, सामने आते हैं, यह कहा नहीं जा सकता।

यह कहकर श्रीरामकृष्ण गाने लगे। गाना हो जाने पर विजय ने कहा, 'वे अनन्तशक्ति हैं--क्या किसी दूसरे रूप से दर्शन नहीं दे सकते? कितने आश्चर्य की बात है! लोग रेणु की रेणु जो हैं, फिर भी वे समझ बैठते हैं कि ईश्वर के सम्बन्ध में सब कुछ जान लिया।'

श्रीरामकृष्ण--कुछ गीता, भागवत और वेदान्त पढ़कर लोग सोचते हैं, हमने सब समझ लिया। चीनी के पहाड़ पर एक चींटी गयी थी। एक दाना खाने से ही उसका पेट भर गया। एक दाना और मुँह में दबाकर वह घर लौट पड़ी। जाते हुए सोच रही थी, अबकी बार आकर सारा पहाड़ उठा ले जाऊँगी! (सब हँसते हैं।)

(४)

कर्मयोग तथा मनोयोग

आज वृहस्पतिवार, २ अक्टूबर, १८८४—आश्विन शुक्ला द्वादशी-त्रयोदशी। कल श्रीरामकृष्ण कलकत्ते में अधर के यहाँ आये हुए थे। श्रीरामकृष्ण वहाँ कीर्तनानन्द में नाचे थे।

श्रीरामकृष्ण के पास आजकल लाटू, हरीश और रामलाल रहते हैं। बाबूराम भी कभी कभी आकर रहते हैं। श्रीयुत रामलाल श्रीभवतारिणी की सेवा करते हैं। हाजरा महाशय भी हैं।

आज श्रीयुत मणिलाल मल्लिक, प्रिय मुखर्जी, उनके आत्मीय हरि, शिवपुर के एक ब्राह्मभक्त, बड़ाबजार १२ नम्बर मल्लिक स्ट्रीट के मारवाड़ी भक्त श्रीरामकृष्ण के पास बैठे हुए हैं। क्रमशः दक्षिणेश्वर के कई लड़के और सींती के महेन्द्र वैद्य आये। मणिलाल पुराने भक्त हैं।

श्रीरामकृष्ण—(मणिलाल आदि से)—नमस्कार मन ही मन का अच्छा होता है। पैरों पर हाथ रखकर नमस्कार की क्या जरूरत है? और मन ही मन जिसे नमस्कार किया जाता है, उसे सङ्कोच भी नहीं होता।

"मेरा ही धर्म ठीक है और सब मिथ्या है; यह सब अच्छा नहीं।

"मैं देखता हूँ, वे ही सब कुछ हुए हैं—मनुष्य, प्रतिमा, शालग्राम; सब के भीतर एक ही सत्ता देखता हूँ! मैं एक को छोड़ दूसरा कुछ नहीं देखता।

"बहुत से लोग सोचते हैं, मेरा ही मत ठीक है और सब

गलत है—हम जीते और सब हार गये। इससे, जो, बढ़ गया है, वह थोड़े के लिए अटक जाता है। तब जो पीछे पड़ा था, वह बढ़ जाता है। गोलकधाम के खेल में, बहुत कुछ बढ़ गया, परन्तु फिर भी न पड़ा।

"हार और जीत उनके हाथ में है। उनका काम कुछ समझ में नहीं आता। देखो, नारियल इतने ऊँचे रहता है, धूप लगती है, फिर भी उसके जल की तासीर ठण्डी है। इधर पानी-फल (सिंघाड़े) पानी में रहते हैं, परन्तु उनकी तासीर गर्म होती है।

'आदमी का शरीर देखो। सिर जो मूल है, ऊपर चला गया।"

मणिलाल—हमारा इस समय कर्तव्य क्या है?

श्रीरामकृष्ण—किसी तरह उनके साथ युक्त होकर रहना। दो रास्ते हैं, कर्मयोग और मनोयोग।

"जो लोग गृहस्थाश्रमी हैं, उनका योग कर्म के द्वारा होता है। चार आश्रम हैं—ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास। संन्यासी को काम्य कर्मों का त्याग करना चाहिए, परन्तु नित्य-कर्म उसे कामना-हीन होकर करना चाहिए। दण्डधारण, भिक्षा, तीर्थ-यात्रा, पूजा, जप, इन सब कर्मों के द्वारा उनके साथ योग होता है।

"और चाहे जो काम करो, फल की आकांक्षा का त्याग करके, फल की आकांक्षा को छोड़कर कर सको तो उनके साथ योग होगा।

"एक मार्ग और है, मनोयोग, इस तरह के योगी में बाहर से कोई चिह्न नहीं दीख पड़ते। उसका योग अन्तर से होता है। जैसे जड़भरत तथा शुकदेव। और भी बहुत से हैं, पर ये दो प्रसिद्ध हैं। इनकी दाढ़ी और बाल वैसे ही रहते हैं, वे उन्हें

नहीं निकालते।

"परमहंस अवस्था में कर्म उठ जाते हैं। तब स्मरण-मनन ही रहता है। सदा ही मन का योग रहता है। अगर वह कर्म भी करता है तो लोक-शिक्षा के लिए।

"चाहे कर्म के द्वारा योग हो या मन के द्वारा, भक्ति के होने पर सब समझ में आ जाता है।

"भक्ति से कुम्भक आप ही हो जाता है। मन में एकाग्रता होने पर ही वायु स्थिर हो जाती है, और वायु के स्थिर होने पर ही मन एकाग्र होता है, बुद्धि स्थिर हो जाती है। जिसे होता है, वह खुद नहीं समझ सकता।

"भक्तियोग में योग के साधन होते हैं। मैंने माँ से रो-रोकर कहा था—'माँ, योगियों ने योग करके, ज्ञानियों ने विचार करके जो कुछ समझा है, वह सब तू मुझे समझा दे—मुझे दिखला दे।' माँ ने मुझे सब कुछ दिखा दिया है। व्याकुल होकर, उनके निकट रोने पर सब कुछ बतला देती हैं। वेद, वेदान्त, पुराण, इन सब शास्त्रों में क्या है, सब उन्होंने मुझे समझा दिया है।"

मणि—हठयोग ?

श्रीरामकृष्ण—हठयोगी देहाभिमानी साधु हैं। वे बस नेति-धौति करते हैं—केवल देह की चिन्ता! उनका उद्देश्य आयु की वृद्धि करना है। देह की ही दिनरात सेवा किया करते हैं। यह अच्छा नहीं।

"तुम्हारा कर्तव्य क्या है?—तुम लोग मन ही मन कामिनी और कांचन का त्याग करो। तुम लोग संसार को काकविष्ठा नहीं कह सकते।

"गोस्वामी गृहस्थ हैं; इसीलिए मैं उनसे कहता हूँ, तुम्हारे

यहाँ श्रीठाकुरजी की सेवा है, तुम लोग क्या संसार का त्याग करोगे—तुम लोग संसार को माया कहकर उसका अस्तित्व लोप नहीं कर सकते।

"संसारियों का जो कर्तव्य है, उस पर श्रीचैतन्यदेव ने कहा है—'जीवों पर दया रखो, वैष्णवों की सेवा करो, उनका नाम लो।'

"केशव सेन ने कहा था—'वे इस समय, दोनों ही करो, कह रहे हैं। एक दिन कहीं चुपचाप काट खायेंगे।' परन्तु बात ऐसी नहीं—भला मैं क्यों काटूंगा?"

मणि मल्लिक—किन्तु आप तो काटते हैं।

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—क्यों? तुम जैसे के वैसे ही तो बने हो—तुम्हें त्याग करने की क्या जरूरत है?

(५)

आचार्य का कामिनी-कांचन त्याग, फिर लोकशिक्षा का अधिकार

श्रीरामकृष्ण—जिनके द्वारा वे लोक-शिक्षा देना चाहते हैं, उन्हें संसार का त्याग करना चाहिए। जो आचार्य हैं, उन्हें कामिनी और कांचन का त्याग करना चाहिए। नहीं तो उनके उपदेश लोग मानते नहीं। केवल भीतर ही त्याग के होने से काम नहीं होता। बाहर भी त्याग होना चाहिए। लोक-शिक्षा तभी हो सकती है। नहीं तो लोग सोचते हैं, ये कामिनी और कांचन का त्याग करने के लिए कह तो रहे हैं, परन्तु भीतर में खुद उसका भोग कर रहे हैं।

"एक वैद्य ने रोगी को दवा देकर कहा, 'तुम किसी दूसरे दिन आना, भोजन-आदि की बात बता दूंगा।' उस दिन वैद्य के यहाँ राब की बहुतसी कलसियाँ भरी थीं। रोगी का घर बहुत

दूर था। उसने दूसरे दिन आकर उनसे भेंट की। वैद्य ने कहा, 'खाने पीने में ज़रा सावधानी रखना, गुड़ खाना अच्छा नहीं।' रोगी के चले जाने पर एक आदमी ने वैद्य से पूछा, 'उसे इतनी तकलीफ आपने क्यों दी? उसी दिन कह देते कि गुड़ न खाना।' हँसकर वैद्य ने कहा, 'इसका एक खास अर्थ है। उस दिन मेरे यहाँ राब और गुड़ के बहुत से घड़े रखे हुए थे। उस दिन अगर मैं कहता तो उसको विश्वास न होता। वह सोचता, जब इन्हीं के यहाँ इतना गुड़ रखा हुआ है, तो ये जरूर कुछ न कुछ गुड़ खाया करते होंगे। अतएव गुड़ कुछ ऐसी बुरी चीज नहीं हो सकती। आज मैंने गुड़ के घड़ों को छिपा रखा है। अब उसे मेरी बात का विश्वास होगा।'

"मैंने आदि-समाज के आचार्य को देखा; सुना, दूसरी या तीसरी बार उसने विवाह किया है!—लड़के सब बड़े-बड़े हो गये हैं!

"ये ही लोग आचार्य हैं! ये लोग अगर कहें, ईश्वर सत्य है और सब मिथ्या, तो इनकी बात का विश्वास भला किसे हो सकता है?

"जैसा गुरु है, उसको शिष्य भी वैसे ही मिलते हैं। संन्यासी भी अगर मन से त्याग करके बाहर कामिनी और कांचन लेकर रहे, तो उसके द्वारा लोक-शिक्षा नहीं हो सकती। लोग कहेंगे, यह छिपकर गुड़ खाता है।

"सींती का महेन्द्र वैद्य रामलाल को पाँच रुपये दे गया था। मुझे यह बात मालूम नहीं थी।

"रामलाल के कहने पर मैंने पूछा, किसे दिया है? उसने कहा, यहाँ के लिए। मैंने पहले सोचा कि दूधवाले को रुपया

देना है, न हो, इन्हीं में से दे दिया जायगा! हरे-हरे! जब कुछ रात हुई, तब मैं खाट पर उठकर बैठ गया—बड़ी बेचैनी थी। जान पड़ता था, छाती में कोई तरोंच रहा है! तब राम-लाल के पास जाकर मैंने फिर पूछा—'उसने तेरी चाची को तो नहीं दिया है?' उसने कहा—'नहीं।' तब मैंने कहा, 'तू अभी रुपये लौटा दे।' रामलाल उसके दूसरे दिन रुपये लौटा आया।

"संन्यासी के लिए रुपये लेना या लोभ में फँस जाना कैसा है, जानते हो? जैसे ब्राह्मण की विधवा बहुत दिनों तक आचार और ब्रह्मचर्य से रहकर एक दिन एक नीच शूद्र के साथ निकल गयी थी।

"उस देश में अभी तेलिन के बहुत से चेले हो गये थे। शूद्र को सब लोग प्रणाम करते हैं, यह देखकर वहाँ के जमींदार ने उसके पीछे किसी बदमाश को भिड़ा दिया। उसने उसका धर्म नष्ट कर दिया। साधन-भजन सब मिट्टी में मिल गया। पतित संन्यासी भी वैसा ही है।

"तुम लोग संसारी हो, तुम्हारे लिए सत्संग की आवश्यकता है।

"पहले है साधुसंग, फिर है श्रद्धा। साधु सन्त अगर उनका नाम न लें—उनका गुण न गायें, तो ईश्वर पर लोगों का विश्वास और श्रद्धा-भक्ति कैसे हो सकती है? सब लोग तुम्हें तीन पुश्त का अमीर समझेंगे, तभी मानेंगे न?

(मास्टर से) "ज्ञान के होने पर भी सदा अनुशीलन चाहिए। नागा (तोतापुरी) कहता था, लोटे को एक दिन मलने से क्या होगा? डाल रखोगे तो फिर मैला हो जायगा।

"तुम्हारे घर एक बार जाना है। तुम्हारा अड्डा अगर मालूम रहा तो सम्भव है, वहाँ बहुत से भक्त आ मिलें। तुम

ईशान के पास एक बार आना।

(मणिलाल से) "केशव सेन की माँ आयी थीं। उनके घर के बालकों ने हरिनाम गाया। वे तालियाँ बजा-बजाकर उनकी प्रदक्षिणा करने लगीं। मैंने देखा, शोक से उन्हें बहुत दुःख न था। यहाँ आकर वे एकादशी की माला लेकर जप करती थीं। मैंने देखा, उनमें बड़ी भक्ति है।"

मणिलाल—केशव बाबू के पितामह रामकमल सेन भक्त थे। तुलसी-कानन में बैठकर नाम-जप करते थे। केशव के पिता प्यारीमोहन भी वैष्णव भक्त थे।

श्रीरामकृष्ण—बाप अगर वैसा न होता तो लड़का कभी इतना भक्त नहीं हो सकता। विजय की अवस्था देखो न।

"विजय का बाप भागवत पढ़ता था तब भावावेश में बेहोश हो जाता था। विजय भी कभी 'हो हो' कहता हुआ, उठकर खड़ा हो जाता था।

"आजकल विजय जो कुछ दर्शन कर रहा है, सब ठीक है।

"साकार और निराकार की बात विजय ने कही, जैसे गिरगिट का रंग लाल पीला हर तरह का होता है और फिर कोई भी रंग नहीं रहता, उसी तरह साकार और निराकार हैं।

सरलता तथा ईश्वर-प्राप्ति

"विजय बड़ा सरल है। खूब उदार और सरल हुए बिना ईश्वर के दर्शन नहीं होते।

"कल विजय अधर सेन के यहाँ गया हुआ था। व्यवहार ऐसा था, जैसे अपना मकान हो—सब अपने आदमी हों।

"विषय-बुद्धि के गये बिना कोई उदार और सरल नहीं

होता।

"मिट्टी बनायी हुई न हो, तो उसके बरतन नहीं बन सकते। भीतर बालू या कंकड़ के रहने पर बरतन चिटक जाते हैं; इसीलिए कुम्हार पहले मिट्टी बनाता है।

"आईने में गर्द पड़ गयी हो तो उसमें मुँह नहीं दिखायी पड़ता। चित्त-शुद्धि के हुए बिना अपने स्वरूप के दर्शन नहीं होते।

"देखो न, जहाँ अवतार है वहीं सरलता है। नन्द, दशरथ, ये सब सरल थे।

"वेदान्त कहता है, बुद्धि की शुद्धि हुए बिना ईश्वर के जानने की इच्छा नहीं होती। अन्तिम जन्म या अधिक तपस्या के बिना उदारता या सरलता नहीं आती।"

(६)

श्रीरामकृष्ण की बालक जैसी अवस्था। वेदान्त-विचार

श्रीरामकृष्ण के पैर फूले हुए हैं। इसके लिए वे एक बालक समान चिन्ता कर रहे हैं।

सींती के महेन्द्र कविराज आये और उन्होंने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण—(प्रिय मुखर्जी आदि भक्तों से)—कल नारायण से मैंने कहा, 'तू अपने पैर में उँगली गड़ाकर ज़रा देख तो नहीं, उँगली का निशान बनता है या नहीं।' उसने गड़ाकर देखा तो निशान बन गया। तब मेरे जी में जी आया कि मेरे पैरों का फूलना भी कुछ नहीं है। (मुखर्जी से) तुम भी ज़रा अपने पैर में उसी तरह उँगली गड़ाओ। गड्ढा हुआ?

मुखर्जी—जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण—अब मेरा जी ठिकाने हुआ।

मणि मल्लिक—आप बहते हुए पानी में नहाया कीजिये। दवा की क्या जरूरत है?

श्रीरामकृष्ण—नहीं जी, तुम्हारा अभी खून ताजा है, तुम्हारी बात ही कुछ और है?

"मुझे बच्चे की अवस्था में रखा है।

"एक दिन घास के जंगल में मुझे किसी कीड़े ने काट लिया। मैंने सुना था, साँप अगर दो बार काटे तो विष निकाल लेता है। इसी ख्याल से बिलों में हाथ डालता फिरता था। एक ने आकर कहा, 'यह आप क्या कर रहे हैं?—साँप जब उसी जगह फिर काटता है, तब विष निकाल लेता है। दूसरी जगह काटने से नहीं होता।'

"मैंने सुना था, शरद् काल की ओस लगाना अच्छा है। उस दिन कलकत्ते से आते हुए गाड़ी में से सिर निकालकर मैंने खूब ओस लगायी। (सब हँसते हैं।)

(सीती के महेन्द्र से) "तुम्हारे सीती के वे पण्डितजी अच्छे हैं। वेदान्तवागीश हैं, मुझे मानते हैं। जब मैंने कहा, तुमने तो खूब अध्ययन किया है—परन्तु 'मैं अमुक पण्डित हूँ,' ऐसे अभिमान का त्याग करना, तब उसे बड़ा आनन्द हुआ।

"उसके साथ वेदान्त की बातें हुई।

(मास्टर से) "जो शुद्ध आत्मा है, वे निर्लिप्त हैं। उनमें माया या अविद्या है। इस माया के भीतर तीन गुण हैं—सत्व, रज और तम। जो शुद्ध आत्मा हैं, उन्हीं में ये तीनों गुण हैं; किन्तु फिर भी वे निर्लिप्त हैं। आग में अगर आसमानी रंग की बड़ी डाल दो तो उसकी शिखा उसी रंग की दीख पड़ती है।

लाल बड़ी छोड़ो तो सिरा भी लाल हो जाती है। परन्तु आग का अपना कोई रंग नहीं है।

"पानी में आसमानी रंग डालो तो आसमानी रंग हो जायेगा और फिटकरी छोड़ो तो वही पानी का रंग रहता है।

"चाण्डाल मांस का भार लिये जा रहा था। उसने आचार्य शंकर को छू लिया। शंकर ने ज्योंही कहा—'तूने मुझे छू लिया?' चाण्डाल बोला—'महाराज, न तुम्हे मैंने छुआ और न मुझे तुमने। तुम तो शुद्ध आत्मा हो—निर्लिप्त हो।'

"जड़भरत ने भी ऐसी ही बातें राजा रहूगण से कही थीं।

"शुद्ध आत्मा निर्लिप्त है और शुद्ध आत्मा को कोई देख नहीं सकता। पानी में नमक घोला हुआ हो तो आँखें नमक को देख नहीं सकतीं।

"जो शुद्ध आत्मा है, वही महाकारण—कारण का कारण है। स्थूल, सूक्ष्म, कारण और महाकारण, ये इतने हैं। पाँच भूत स्थूल हैं। मन, बुद्धि और अहंकार सूक्ष्म हैं। प्रकृति अथवा आद्याशक्ति सब की कारणरूपिणी है। ब्रह्म या शुद्ध आत्मा कारण का कारण है।

"यही शुद्ध आत्मा हमारा स्वरूप है।

"ज्ञान किसे कहते हैं? इसी स्वरूप का ज्ञान प्राप्त करना और मन को उसी में लगाये रहना—इस शुद्ध आत्मा को जानना—यही ज्ञान है।

कर्म कब तक? प्रथम माया के संसार का त्याग, फिर महात्याग

"कर्म कब तक है?—जब तक देहाभिमान रहता है अर्थात् देह ही मैं हूँ, यह बुद्धि रहती है। यह बात गीता में लिखी है।

"देह पर आत्मा-बुद्धि का आरोप करना ही अज्ञान है।

(शिवपुर के ब्राह्मभक्त से) "आप क्या ब्राह्म हैं ?"

ब्राह्म–जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण–(सहास्य)–मैं निराकार साधक का मुँह और उसकी आँखें देखकर उसे समझ लेता हूँ। आप जरा डूबिये; ऊपर उतराते रहियेगा तो रत्न आपको नहीं मिल सकता। मैं साकार और निराकार सब मानता हूँ।

बड़ाबाजार के मारवाड़ी भक्तों ने आकर प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण उन लोगों की प्रशंसा कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण–(भक्तों से)–अहा! ये सब कैसे भक्त हैं! सब के सब श्रीठाकुरजी के दर्शन करते हैं, स्तुतियाँ पढ़ते हैं और प्रसाद पाते हैं। इस बार इन लोगों ने जिसे पुरोहित रखा है, वह भागवत का पण्डित है।

मारवाड़ी भक्त–'मैं तुम्हारा दास हूँ', यह जो कहता है वह 'मैं' कौन है ?

श्रीरामकृष्ण–लिंग-शरीर या जीवात्मा है। मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार, इन चारों के मेल से लिंग-शरीर होता है।

मारवाड़ी–जीवात्मा कौन है ?

श्रीरामकृष्ण–अष्ट-पाशों से बँधा हुआ आत्मा; और चित्त उसे कहते हैं जो (किसी चीज की याद आने पर) 'अहा' कर उठता है।

मारवाड़ी भक्त–महाराज, मरने पर क्या होता है ?

श्रीरामकृष्ण–गीता के मत से मरते समय जीव जो कुछ सोचता है, वही हो जाता है। भरत ने हरिण सोचा था, इसलिए वह वही हो भी गया था। यही कारण है कि ईश्वर को प्राप्त

करने के लिए साधना की आवश्यकता है। दिन-रात उनकी चिन्ता करते रहने पर मरते समय भी उन्हीं की चिन्ता होगी।

मारवाड़ी भक्त–अच्छा, महाराज, विषय से वैराग्य क्यों नहीं होता?

श्रीरामकृष्ण–इसे ही माया कहते हैं। माया से सत् असत् और असत् सत् जान पड़ता है।

"सत् अर्थात् जो नित्य है—परब्रह्म है। असत् संसार है—अनित्य है।

"पढ़ने से क्या होता है? साधना और तपस्या चाहिए। उन्हें पुकारो।

"'भंग-भंग' चिल्लाने से क्या होगा? कुछ पीना चाहिए।

"यह संसार काँटे के पेड़ की तरह है। हाथ लगाओ तो खून निकल आता है। अगर काँटे के पेड़ के सम्बन्ध में बैठे ही बैठे यह कल्पना करते रहें कि पेड़ जल गया, तो क्या इससे वह कभी जल जाता है? ज्ञानाग्नि लाओ, वही आग लगाओ, तब पेड़ जल सकता है।

"साधना की अवस्था में कुछ परिश्रम करना पड़ता है। फिर तो सीधा मार्ग है। मोड़ पार करके अनुकूल वायु में पाल लगाकर नाव छोड़ दो।

"जब तक माया के घेरे के भीतर हो, जब तक माया के मेघ हैं, तब तक ज्ञान-सूर्य की किरणें नहीं फैल सकतीं। माया का घेरा पार कर जब बाहर आकर खड़े हो जाओगे तब ज्ञान-सूर्य अविद्या का नाश कर देगा। घर के भीतर ले जाने पर आतशी शीशे से कोई काम नहीं हो सकता। घर के घेरे से बाहर खड़े होने पर जब धूप उस पर गिरती है तब उसकी ज्वाला से कागज जल

जाता है।

"और बदलों के रहने पर भी आतशी शीशे से कागज नहीं जलता। बादलों के हट जाने पर ही वह काम कर सकेगा।

"कामिनी और कांचन के घेरे से जरा हटकर खड़े होने पर अलग रहकर कुछ साधना करने पर मन का अन्धकार दूर होता है—अविद्या और अहंकार के बादल हट जाते हैं—ज्ञान-लाभ होता है।

"कामिनी और कांचन ही बादल है।"

(७)

श्रीरामकृष्ण का कांचन-त्याग

श्रीरामकृष्ण—(मारवाड़ी से)—त्यागियों के नियम बड़े कठिन है। कामिनी और कांचन का संसर्ग लेशमात्र भी न रहना चाहिए। रुपया अपने हाथ से तो छूना ही न चाहिए; परन्तु दूसरे के पास रखने की भी कोई व्यवस्था न रहनी चाहिए।

"लक्ष्मीनारायण मारवाड़ी था, वेदान्तवादी भी था, प्रायः यहाँ आया करता था। मेरा बिस्तरा मैला देखकर उसने कहा, मैं आपके नाम दस हजार रुपया लिख दूंगा, उसके व्याज से आपकी सेवा होती रहेगी।

"उसने यह बात कही नहीं कि मैं जैसे लाठी की चोट खाकर बेहोश हो गया।

"होश आने पर उससे कहा, तुम्हें अगर ऐसी बातें करनी हो, तो यहां फिर कभी न आना। मुझमें रुपया छूने की शक्ति ही नहीं है, और न मैं रुपया पास ही रख सकता हूँ।

"उसकी बुद्धि बड़ी सूक्ष्म थी। उसने कहा, 'तो अब भी

आपके लिए त्याज्य और ग्राह्य है! तो आपको अभी ज्ञान नहीं हुआ।

"मैंने कहा, नहीं भाई, इतना ज्ञान मुझे नहीं हुआ।

(सब हँसते हैं।)

"लक्ष्मीनारायण ने तब वह धन हृदय के हाथ में देना चाहा। मैंने कहा—'तो मुझे कहना होगा, इसे दे, उसे दे', अगर उसने न दिया तो क्रोध का आना अनिवार्य होगा। रुपयों का पास रहना ही बुरा है। ये सब बातें न होंगी।

"आईने के पास अगर कोई वस्तु रखी हुई हो, तो क्या उसका प्रतिबिम्ब न पड़ेगा?"

मारवाड़ी भक्त—महाराज, क्या गंगा में शरीर-त्याग होने पर मुक्ति होती है?

श्रीरामकृष्ण—ज्ञान होने ही से मुक्ति होती है। चाहे जहाँ रहो—चाहे महा कलुषित स्थान में प्राण निकले, और चाहे गंगातट ही हो, ज्ञानी की मुक्ति अवश्य होगी।

"परन्तु हाँ, अज्ञानी के लिए गंगातट ठीक है।"

मारवाड़ी भक्त—महाराज, काशी में मुक्ति कैसे होती है?

श्रीरामकृष्ण—काशी में मृत्यु होने पर शिव के दर्शन होते हैं। शिव प्रकट होकर कहते हैं—'मेरा यह साकार रूप मायिक है, मैं भक्तों के लिए यह रूप धारण करता हूँ—यह देखो, मैं अखण्ड सच्चिदानन्द में लीन होता हूँ।' यह कहकर वह रूप अन्तर्धान हो जाता है।

"पुराण के मत से चाण्डाल को भी अगर भक्ति हो, तो उसकी भी मुक्ति होगी। इस मत के अनुसार नाम लेने से ही काम होता है। योग, तन्त्र, मन्त्र, इनकी कोई आवश्यकता नहीं है।

"वेद का मत अलग है। ब्राह्मण हुए बिना मुक्ति नहीं होती। और मन्त्रों का यथार्थ उच्चारण अगर नहीं होता तो पूजा का ग्रहण ही नहीं होता। याग, यज्ञ, मन्त्र, तन्त्र, इन सब का अनुष्ठान यथाविधि करना चाहिए।

"कलिकाल में वेदोक्त कर्मों के करने का समय कहाँ है? इसीलिए कलि में नारदीय भक्ति चाहिए।

"कर्मयोग बड़ा कठिन है। निष्काम कर्म अगर न कर सके तो वह बन्धन का ही कारण होता है। इस पर आजकल प्राण अन्नगत हो रहे हैं। अतएव विधिवत् सब कर्मों के करने का समय नहीं रहा। दशमूल-पाचन अगर रोगी को खिलाया जाता है तो इधर उसके प्राण ही नहीं रहते, अतएव चाहिए फीवर-मिक्श्चर।

"नारदीय भक्ति है—उनके नाम और गुणों का कीर्तन करना।

"कालिकाल के लिए कर्मयोग ठीक नहीं, भक्तियोग ही ठीक है।

"संसार में कर्मों का भोग जितने दिनों के लिए है, उतने दिन तक भोग करो, परन्तु भक्ति और अनुराग चाहिए। उनके नाम और गुणों का कीर्तन करने पर कर्मों का क्षय हो जाता है।

"सदा ही कर्म नहीं करते रहना पड़ता। उन पर जितनी ही शुद्धा भक्ति और प्रीति होगी, कर्म उतने ही घटते जायेंगे। उन्हें प्राप्त करने पर कर्मों का त्याग हो जाता है। गृहस्थ की बहू को जब गर्भ होता है तो उसकी सास उसका काम घटा देती है। लड़का होने पर उसे काम नहीं करना पड़ता।"

शुभ संस्कार तथा ईश्वर के लिए व्याकुलता

दक्षिणेश्वर मौजे से कुछ लड़के आये। उन्होंने श्रीरामकृष्ण

को प्रणाम किया। वे लोग आसन ग्रहण करके श्रीरामकृष्ण से प्रश्न कर रहे हैं। दिन के चार बजे होंगे।

एक लड़का—महाराज, ज्ञान किसे कहते हैं?

श्रीरामकृष्ण—ईश्वर सत् है और सब असत्, इसके जानने का नाम ज्ञान है।

"जो सत् है उनका एक और नाम ब्रह्म है, एक दूसरा नाम है काल। इसीलिए लोग कहा करते हैं—अरे भाई, काल में कितने आये और कितने चले गये।

"काली वे हैं जो काल के साथ रमण करती हैं। आद्याशक्ति वे ही हैं। काल और काली, ब्रह्म और शक्ति अभेद हैं।

"संसार अनित्य है, वे नित्य हैं। संसार इन्द्रजाल है, बाजीगर ही सत्य है, उसका खेल अनित्य है।"

लड़का—संसार अगर माया है, इन्द्रजाल है, तो यह दूर क्यों नहीं होता?

श्रीरामकृष्ण—संस्कार-दोषों के कारण यह माया नहीं जाती। कितने ही जन्मों तक इस माया के संसार में रहने के कारण यह सत्य जान पड़ती है।

"संस्कार में कितनी शक्ति है, सुनो। एक राजा का लड़का पिछले जन्म में धोबी के घर पैदा हुआ था। राजा का लड़का होकर जब वह खेल रहा था, तब अपने साथियों से उसने कहा, ये सब खेल रहने दो, मैं पेट के बल लेटता हूँ, तुम लोग मेरी पीठ पर कपड़े पटको!

"यहाँ बहुत से लड़के आते हैं, परन्तु कोई कोई ईश्वर के लिए व्याकुल हैं। वे अवश्य ही संस्कार लेकर आये हैं।

"वे सब लड़के विवाह की बात पर रो देते हैं। स्वर्ग

विवाह की बात तो सोचते ही नहीं। निरंजन बचपन से ही कहता है मैं विवाह न करूँगा।

"बहुत दिन हो गये (बीस वर्ष से अधिक) यहाँ वराहनगर से दो लड़के आते थे, एक का नाम था गोविन्द पाल, दूसरे का गोपाल सेन। उनका मन बचपन से ही ईश्वर पर था। विवाह की बात होने पर डर से सिकुड़ जाते थे। गोपाल को भाव-समाधि होती थी। विषयी-मनुष्यों को देखकर वह दब जाता था जैसे बिल्ली को देखकर चूहे। जब ठाकुरों (Tagore) के लड़के उस बगीचे में घूमने के लिए गये हुए थे, तब उसने अपने घर का दरवाजा बन्द कर लिया था, इसलिए कि कहीं उनसे बात-चीत न करनी पड़े।

"पञ्चवटी के नीचे गोपाल को भावावेश हो गया था। उसी अवस्था में मेरे पैरों पर हाथ रखकर उसने कहा, 'अब मुझे जाने दीजिये। अब इस संसार में मुझ से रहा नहीं जाता—आपको अभी बहुत देर है—मुझे जाने दीजिये।' मैंने भी भावावस्था में कहा—'तुम्हें फिर आना होगा।' उसने कहा—'अच्छा, फिर आऊँगा।'

"कुछ दिन बाद गोविन्द आकर मिला। मैंने पूछा, 'गोपाल' कहाँ है? उसने कहा, गोपाल चला गया (उसका निधन हो गया)।

"दूसरे लड़के देखो, किस चिन्ता में घूम रहे हैं!—किस तरह धन हो—बाड़ी हो—मकान हो—वस्त्राभूषण हों—फिर विवाह हो—इसी के लिए घूम रहे हैं। विवाह करना है, तो लड़की कैसी है, इसकी पहले खोज करते हैं और सुन्दर है या नहीं, इसकी जाँच करने के लिए स्वयं जाते हैं।

"एक आदमी मेरी बड़ी निन्दा करता है। बस यही कहता है कि ये लड़कों को प्यार करते हैं। जिनके अच्छे संस्कार हैं, जो

शुद्धात्मा हैं, ईश्वर के लिए व्याकुल होते हैं, रुपया, शरीर-सुख इन सब वस्तुओं की ओर जिनका मन नहीं है, मैं उन्हीं को प्यार करता हूँ।

"जिन्होंने विवाह कर लिया है, उनको अगर ईश्वर पर भक्ति हो, तो वे संसार में लिप्त न हो जायेंगे। हीरानन्द ने विवाह किया है तो इससे क्या हुआ? वह संसार में अधिक लिप्त न होगा।"

हीरानन्द सिन्ध का रहनेवाला, बी. ए. पास एक ब्राह्मसमाजी है।

मणिलाल, शिवपुर के ब्राह्मभक्त, मारवाड़ी भक्त, श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके विदा हुए।

(८)

कर्मत्याग कब?

शाम हो गयी। दक्षिण के बरामदे में और पश्चिमवाले गोल बरामदे में दीपक जलाये जा चुके हैं। श्रीरामकृष्ण के कमरे का प्रदीप जला दिया गया, कमरे में धूप दी गयी।

श्रीरामकृष्ण अपने आसन पर बैठे हुए माता का नाम ले रहे हैं। कमरे में मास्टर, श्रीयुत प्रिय मुकर्जी और उनके आत्मीय हरि बैठे हैं। कुछ देर तक ध्यान और चिन्तन करने पर श्रीरामकृष्ण भक्तों से वार्तालाप करने लगे। अब श्रीठाकुर-मन्दिर में आरती होने की देर है।

श्रीरामकृष्ण-(मास्टर से)-जो दिन-रात उनकी चिन्ता कर रहा है उसके लिए सन्ध्या की क्या जरूरत है?

"सन्ध्या गायत्री में लीन हो जाती है और गायत्री ओंकार

में।

"एक बार ॐ कहने के साथ ही जब समाधि हो जाय तब समझना चाहिए कि अब साधु साधन-भजन में पक्का हो गया।

"हृषीकेश में एक साधु सुबह उठकर, जहाँ एक बहुत बड़ा झरना है, वहाँ जाकर खड़ा होता है। दिन भर वही झरना देखता है और ईश्वर से कहता है, 'वाह, खूब बनाया है तुमने! कितने आश्चर्य की बात है!' उसके लिए जप-तप कुछ नहीं है। रात होने पर वह अपनी कुटी पर लौट जाता है।

"निराकार या साकार इन सब बातों के सोचने की ऐसी क्या आवश्यकता है! निर्जन में व्याकुल हो रो-रोकर उनसे कहने से ही काम बन जायगा। कहो—हे ईश्वर, तुम कैसे हो, यह मुझे समझा दो, मुझे दर्शन दो।'

"वे अन्दर भी हैं, और बाहर भी।

"अन्दर भी वे ही हैं। इसीलिए वेद कहते हैं—तत्त्वमसि। और बाहर भी वे ही हैं। माया से अनेक रूप दिखायी पड़ते हैं। परन्तु वस्तुतः हैं वे ही।

"इसीलिए सब नामों और रूपों का वर्णन करने के पहले कहा जाता है—ॐ तत् सत्।

"दर्शन करने पर एक तरह का ज्ञान होता है और शास्त्रों से एक दूसरी तरह का। शास्त्रों में उसका आभास मात्र मिलता है, इसलिए कई शास्त्रों के पढ़ने की कोई जरूरत नहीं। इससे निर्जन में उन्हें पुकारना अच्छा है।

"गीता सब न पढ़ने से भी काम चलता है। दस बार गीता गीता कहने से जो कुछ होता है, वही गीता का सार है। अर्थात् त्यागी। हे जीव, सब त्याग करके ईश्वर की आराधना

करो। यही गीता का सार है।"

श्रीरामकृष्ण को भक्तों के साथ काली की आरती देखते देखते भावावेश हो रहा है। अब देवी-प्रतिमा के सामने भूमिष्ठ होकर प्रणाम नहीं कर सकते। भावावेश अब भी है। भावावस्था में वार्तालाप कर रहे हैं।

मुखर्जी के आत्मीय हरि की उम्र अठारह-बीस साल की होगी। उनका विवाह हो गया है। इस समय मुखर्जी के ही घर पर रहते हैं। कोई काम करनेवाले हैं। श्रीरामकृष्ण पर बड़ी भक्ति है।

श्रीरामकृष्ण—(भावावेश में हरि से)—तुम अपनी माँ से पूछकर मन्त्र लेना। (श्रीयुत प्रिय से) मैं इनसे (हरि से) यह भी न सका, मन्त्र तो मैं देता ही नहीं हूँ।

"तुम जैसा ध्यान-जप करते हो, वैसा ही करते रहो।"

प्रिय—जो आज्ञा।

श्रीरामकृष्ण—और मैं इस अवस्था में कह रहा हूँ; बात पर विश्वास करना। देखो, यहाँ ढोंग इत्यादि नहीं है।

"मैंने भावावेश में कहा—माँ, जो लोग यहाँ अन्तर की प्रेरणा से आते हैं, वे सिद्ध हों।"

सींती के महेन्द्र वैद्य बरामदे में आकर बैठे। वे श्रीयुत रामलाल, हाजरा आदि के साथ बातचीत कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण अपने आसन से उन्हें पुकार रहे हैं—'महेन्द्र, महेन्द्र !'

मास्टर जल्दी से वैद्यराज को बुला लाये।

श्रीरामकृष्ण—(कविराज से)—बैठो—जरा सुनो तो सही।

वैद्यराज कुछ लज्जित से हो गये। बैठकर श्रीरामकृष्ण के

उपदेश सुनने लगे।

श्रीरामकृष्ण--(भक्तों से)--कितने ही प्रकार से उनकी सेवा की जा सकती है।

"प्रेमी भक्त उन्हें लेकर कितनी ही तरह से सम्भोग करता है।

"कभी तो वह सोचता है, ईश्वर पद्म हैं और वह भौंरा, और कभी ईश्वर सच्चिदानन्द सागर हैं और वह मीन।

"प्रेमी भक्त कभी सोचता है कि वह ईश्वर की नर्तकी है। यह सोचकर वह उनके सामने नृत्य करता है--गाने सुनाता है। कभी सखीभाव या दासीभाव में रहता है। कभी उन पर उसका वात्सल्यभाव होता है--जैसा यशोदा का था। कभी पतिभाव--मधुरभाव होता है--जैसा गोपियों का था।

"बलराम का भी तो सखीभाव रहता था और कभी वे सोचते थे, मैं कृष्ण का छाता या लाठी बना हुआ हूँ। सब तरह से वे कृष्ण की सेवा करते थे।

"चैतन्यदेव की तीन अवस्थाएँ थीं। जब अन्तर्दशा होती थी, तब वे समाधिलीन हो जाते थे। उस समय बाहर का ज्ञान बिलकुल न रह जाता था। जब अर्धबाह्य दशा होती थी, तब नृत्य तो कर सकते थे, पर बोल नहीं सकते थे। बाह्यदशा में संकीर्तन करते थे।

(भक्तों से) "तुम लोग ये सब बातें सुन रहे हो, धारणा करने की चेष्टा करो। विषयी जब साधु के पास आते हैं, तब विषय की चर्चा और विषय की चिन्ता को बिलकुल छिपा कर आते हैं। जब चले जाते हैं, तब उन्हें निकालते हैं। कबूतर मटर खाता है, तो जान पड़ता है, निगल कर हजम कर गया, परन्तु नहीं, गले के भीतर रखता जाता है। गले में मटर भरे रहते हैं।

"सब काम छोड़कर तुम्हें चाहिए कि सन्ध्या समय उनका नाम लो।

"अँधेरे में ईश्वर की याद आती है। यह भाव आता है कि अभी तो सब दीख पड़ रहा था, किसने ऐसा किया। मुसलमानों को देखो, सब काम छोड़कर ठीक समय पर जरूर नमाज पढ़ेंगे।"

मुखर्जी–अच्छा महाराज, जप करना अच्छा है?

श्रीरामकृष्ण–हाँ, जप से ईश्वर मिलते हैं। एकान्त में उनका नाम जपते रहने से उनकी कृपा होती है, इसके पश्चात् है दर्शन।

"जैसे पानी में काठ डुबाया हुआ है—लोहे की जंजीर से बाँधा हुआ है, उसी जंजीर को पकड़कर जाओ तो वह लकड़ी अवश्य छू सकोगे।

"पूजा की अपेक्षा जप बड़ा है, जप की अपेक्षा ध्यान बड़ा है, ध्यान से बढ़कर है भाव और भाव से बढ़कर महाभाव या प्रेम। प्रेम चैतन्यदेव को हुआ था। प्रेम यदि हुआ तो ईश्वर को बाँधने की मानो रस्सी मिल गयी। (हाजरा आकर बैठे।)

(हाजरा से) "उन पर जब प्यार होता है, तब उसे राग-भक्ति कहते हैं। वैधी-भक्ति जितनी शीघ्र आती है, जाती भी उतनी ही शीघ्र है; राग-भक्ति स्वयम्भू लिंग-सी है। उसकी जड़ नहीं मिलती। स्वयम्भू लिंग की जड़ काशी तक है। राग-भक्ति अवतार और उनके सांगोपांग अंगों को होती है।"

हाजरा–अहा!

श्रीरामकृष्ण–तुम जब एक दिन जप कर रहे थे, तब मैं जंगल से होकर आ रहा था। मैंने कहा—माँ, इसकी बुद्धि तो

बड़ी हीन है, यह यहाँ आकर भी माला जप रहा है। जो कोई यहाँ आयेगा, उसे तत्काल ही चैतन्य होगा। उसे माला जपना, यह सब इतना न करना होगा। तुम कलकत्ता जाओ, देखोगे, वहाँ हजारों आदमी माला जपते हैं—वेश्याएँ तक।

श्रीरामकृष्ण मास्टर से कह रहे हैं–

"तुम नारायण को किराये की गाड़ी पर ले आना।

"इनसे (मुखर्जी से) भी नारायण की बात कह रखता हूँ। उसके आने पर उसे कुछ खिलाऊँगा! उसको खिलाने के बहुत से अर्थ हैं।"

(९)

कीर्तनानन्द में श्रीरामकृष्ण

आज शनिवार है। श्रीयुत केशव सेन के बड़े भाई नवीन सेन के कोलूटोलावाले मकान में श्रीरामकृष्ण गये हुए हैं। ४ अक्टूबर, १८८४।

गत बृहस्पतिवार के दिन केशव की माँ श्रीरामकृष्ण को न्योता देकर, आने के लिए हर तरह से कह गयी थी।

बाहर के ऊपरवाले कमरे में जाकर श्रीरामकृष्ण बैठे। नन्दलाल आदि केशव के भतीजे, केशव की माँ और उनके बन्धु-बान्धव श्रीरामकृष्ण की बड़ी आवभगत कर रहे हैं। ऊपरवाले कमरे में ही संकीर्तन होने लगा। कोलूटोले में सेन परिवार की बहुत सी स्त्रियाँ भी आयी हुई हैं।

श्रीरामकृष्ण के साथ बाबूराम, किशोरी तथा और भी दो-एक भक्त आये हैं। मास्टर भी आये हैं। वे नीचे बैठे हुए श्रीरामकृष्ण का संकीर्तन सुन रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण ब्राह्मभक्तों से कह रहे हैं—"संसार अनित्य है। मृत्यु पर सदा ही ध्यान रखना चाहिए।" श्रीरामकृष्ण गा रहे हैं—

'मन! सोच कर देख, कोई किसी का नहीं है। इस संसार में वृथा ही तू चक्कर मारता फिरता है। माया-जाल में फँसकर दक्षिणाकाली को कभी भूल न जाना। इस संसार में दो ही दिन के लिए लोग 'मालिक-मालिक' करते हैं। जब कभी कालरूप मालिक आ जाते हैं, तब पहले के उस मालिक को लोग श्मशान में डाल देते हैं। जिसके लिए तुम सोचकर मर रहे हो, क्या वह तुम्हारे संग भी जाता है? तुम्हारी वही प्रेयसी तुम्हारे मर जाने पर अमंगल की आशंका करके गोबर से घर को लीपती-पोतती है!"

श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं—"डूबो, ऊपर उतराते रहने से क्या होगा? कुछ दिन एकान्त में, सब कुछ छोड़कर, उन पर सोलहों आने मन लगाकर, उन्हें पुकारो।" श्रीरामकृष्ण गा रहे हैं—"ऐ मन, रूप के समुद्र में तू डूब जा। तलातल और पाताल में खोज करने पर तुझे प्रेमरूपी रत्न मिलेगा।"

श्रीरामकृष्ण ब्राह्मभक्तों से "तुम मेरे सर्वस्व हो" यह गाना गाने के लिए कह रहे हैं।

ब्राह्मभक्तों का गाना हो जाने पर श्रीरामकृष्ण ने श्रीकृष्ण पर एक गाना गाया। यह गाना सुनकर केशव ने इसी के जोड़ का एक दूसरा गीत रचा था।

अब श्रीरामकृष्ण गौराङ्ग-कीर्तन करने लगे। भक्तों के साथ बड़ी देर तक नृत्य-गीत होता रहा।

परिच्छेद २४

अहेतुकी भक्ति

(१)

हाजरा महाशय। मुक्ति तथा षडैश्वर्य

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर-मन्दिर में भक्तों के साथ दोपहर का भोजन समाप्त करके अपने कमरे में बैठे हुए हैं। पास में जमीन पर मास्टर, हाजरा, बड़े काली, बाबूराम, रामलाल, मुखर्जियों के हरि आदि उपस्थित हैं, कुछ बैठे हैं और कुछ खड़े हैं। श्रीयुत केशव की माता के निमन्त्रण में कल उनके कोलूटोलावाले मकान में जाकर श्रीरामकृष्ण को खूब कीर्तनानन्द मिला था।

श्रीरामकृष्ण-(हाजरा से)—कल मैंने केशव सेन के यहाँ (नवीन सेन के घर पर) खूब आनन्द से प्रसाद पाया। बड़ी भक्ति से उन लोगों ने परोसा था।

हाजरा महाशय बहुत दिन से श्रीरामकृष्ण के पास रहते हैं। 'मैं ज्ञानी हूँ' यह कहकर वे कुछ अभिमान भी करते हैं। लोगों से श्रीरामकृष्ण की कुछ निन्दा भी करते हैं। इधर बरामदे में तल्लीन होकर माला भी जपते हैं। चैतन्यदेव को 'आधुनिक अवतार है' कहकर साधारण समझते हैं। कहते हैं 'ईश्वर केवल भक्ति देते हैं, यही नहीं, उनके ऐश्वर्य का भी ओर-छोर नहीं है; वे ऐश्वर्य भी देते हैं। उन्हें पाने पर अष्टसिद्धियों से शक्ति भी प्राप्त होती है।' घर के लिए कुछ ऋण उन्हें देना है—हजार रुपये के लगभग होगा। इसके लिए उन्हें चिन्ता रहती है।

बड़े बाली ऑफिस में काम करते हैं। तनख्वाह बहुत कम पाते हैं। पर में स्त्री और लड़के-बच्चे भी हैं। श्रीरामकृष्ण पर इनकी बड़ी भक्ति है। कभी-कभी ऑफिस जाना बन्द करके भी श्रीरामकृष्ण के दर्शन के लिए आते हैं।

बड़े बाली—(हाजरा से)—तुम स्वयं अपने को तो पारस पत्थर समझते हो और दूसरों में कौनसा सोना खरा है और कौनसा बुरा, इसकी परीक्षा लेते फिरते हो—भला इस तरह दूसरों की इतनी निन्दा क्यों करते हो ?

हाजरा—जो कुछ कहना होता है, मैं इन्हीं के पास कहता हूँ।

श्रीरामकृष्ण—और क्या !

हाजरा तत्त्वज्ञान की व्याख्या कर रहे हैं।

हाजरा—तत्त्वज्ञान का अर्थ है चौबीस तत्त्वों का ज्ञान प्राप्त करना; चौबीस तत्त्व कौन कौन से हैं। यह प्रश्न होता है।

"पंचभूत, छः रिपु, पाँच ज्ञानेन्द्रिय और पाँच कर्मेन्द्रिय—यही सब।"

मास्टर—(श्रीरामकृष्ण से हँसकर)—ये बतलाते हैं, छः रिपु चौबीस तत्त्वों के भीतर हैं!

श्रीरामकृष्ण—(हँसकर)—अब इसी से समझो। और देखो, तत्त्वज्ञान का कैसा अर्थ बतलाता है। तत्त्वज्ञान का अर्थ है आत्मज्ञान। तत् अर्थात् परमात्मा, त्वं अर्थात् जीवात्मा और परमात्मा के एक हो जाने पर तत्त्वज्ञान होता है।

हाजरा कुछ देर में घर से निकलकर दरामदे में जा बैठे।

श्रीरामकृष्ण—(मास्टर आदि से)—वह बस तर्क करता है। अभी देखते ही देखते खूब समझ गया, परन्तु थोड़ी देर बाद फिर जैसे का तैसा !

"बड़ी मछली को जोर से खींचते हुए देखकर मैं डोर ढीली कर देता हूँ। नहीं तो डोर तोड़ डालेगी और डोर पकड़नेवाला भी पानी में गिर जायगा। इसलिए मैं कुछ कहता नहीं।

(मास्टर से) "हाजरा कहता है, ब्राह्मण का शरीर धारण किये बिना मुक्ति नहीं होती। मैंने कहा, यह कैसी बात! भक्ति से ही मुक्ति होती है। शबरी व्याध की लड़की थी, रैदास—जिसके भोजन के समय घण्टा बजता था—ये सब शूद्र थे। इनकी मुक्ति भक्ति से ही हुई है। हाजरा इसमें 'परन्तु' जोड़ता है।

"ध्रुव को लेता है। प्रह्लाद को जितना लेता है, उतना ध्रुव को नहीं। लाटू ने कहा बचपन से ही परमात्मा पर ध्रुव का अनुराग था, तब वह चुप हुआ।

"मैं कहता हूँ, कामनाशून्य अहेतुकी भक्ति होनी चाहिए। इससे अधिक और कुछ भी नहीं है, हाजरा को यह बात मान्य नहीं हुई। याचक के आने पर धनी व्यक्ति बहुत नाराज होता है। विरक्ति से कहता है—ओफ, आ रहा है। आने पर एक खास तरह की आवाज में कहता है—'बैठिये'। मानो अत्यधिक नाराज हो। ऐसे लोगों को वह अपने साथ गाड़ी पर नहीं बैठाता।

"हाजरा कहता है, वे दूसरे धनिकों की तरह नहीं है, उन्हें ऐश्वर्य की क्या कमी है जो देने में उन्हें कष्ट होगा।

"हाजरा और भी कहता है—'आकाश का पानी जब गिरता है, तब गंगा और दूसरी बड़ी बड़ी नदियाँ, बड़े बड़े तालाब सब भर जाते हैं और गड़हियाँ भी भर जाती हैं। उनकी कृपा होती है तो वे ज्ञान-भक्ति भी देते हैं और रुपया-पैसा भी देते हैं।'

"परन्तु इसे मलिन-भक्ति कहते हैं। शुद्धा-भक्ति वह है, जिसमें कोई कामना नहीं रहती। तुम यहाँ कुछ चाहते नहीं,

परन्तु मुझे और मेरी बातों को चाहते और प्यार करते हो। तुम्हारी ओर मेरा भी मन लगा रहता है। कैसे हो, क्यों नहीं आते, यह सब सोचता रहता हूँ।

"कुछ चाहते नहीं परन्तु प्यार करते हो, इसका नाम अहेतुकी भक्ति है—शुद्धा भक्ति है। यह प्रह्लाद में थी। न वह राज्य चाहता था, न ऐश्वर्य, केवल परमात्मा को चाहता था।"

मास्टर—हाजरा महाशय बस यों ही कुछ ऊटपटांग बका करते हैं। देखता हूँ, बिना चुप रहे कुछ होगा नहीं।

श्रीरामकृष्ण—कभी कभी पास आकर खूब मुलायम हो जाता है, परन्तु दुराग्रही भी ऐसा है कि फिर तर्क करने लगता है। अहंकार का मिटना बड़ा मुश्किल है। बेर का पेड़ अभी काट डालो, दूसरे दिन फिर पनपेगा और जब तक उसकी जड़ है, तब तक नयी डालियों का निकलना बन्द न होगा।

"मैं हाजरा से कहता हूँ, किसी की निन्दा न किया करो। नारायण ही सब रूप धारण किये हुए हैं। दुष्ट मनुष्यों की भी पूजा की जा सकती है।

"देखो न कुमारी-पूजन। ऐसी लड़कियों की पूजा की जाती है जो देह में मल-मूत्र लगाये रहती हैं; ऐसा क्यों करते हैं? इसलिए कि वे भगवती की एक मूर्ति हैं।

"भक्त के भीतर वे विशेष रूप से रहते हैं। भक्त ईश्वर का बैठकखाना है।

"कद्दू खूब बड़ा हो तो उसका तानपूरा बहुत अच्छा होता है—खूब बजता है।

(हँसते हुए रामलाल से) "क्योंरे रामलाल, हाजरा ने कैसे कहा था—अन्तर् बहिर् यदि हरिः (सस्वर लगाकर)?

कैसा किसी ने कहा था—'भातारं भातारं खातारं'—अर्थात् माँ भात खा रही है।" (सब हँसते हैं।)

रामलाल—(हँसते हुए)—अन्तर्बहिर्यदिहरिस्तपसा ततः किम्?

श्रीरामकृष्ण—(मास्टर से)—इसका अभ्यास कर लेना। कभी कभी मुझे सुनाना।

श्रीरामकृष्ण की छोटी थाली खो गयी है। रामलाल और वृन्दा नौकरानी थाली की बात पूछते लगे, 'क्या आप यह थाली जानते हैं?'

श्रीरामकृष्ण—आजकल तो मैंने उसे नहीं देखा। पहले थी जरूर—मैंने देखो थी।

(२)

निष्काम कर्म। संसारी तथा 'सोऽहं'

आज पचवटी में दो साधु आये हुए हैं। वे गीता और वेदान्त यह सब पढ़ते हैं। दोपहर के भोजन के बाद श्रीरामकृष्ण के कमरे में आकर दर्शन कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण अपनी छोटी खाट पर बैठे हुए हैं। साधुओं ने प्रणाम किया, फिर जमीन पर चटाई पर बैठ गये। मास्टर आदि भी बैठे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण हिन्दी में बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—क्या आप लोगों की सेवा हो चुकी है?

साधु—जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण—क्या खाया?

साधु—रोटी-दाल, आप खाइयेगा?

श्रीरामकृष्ण—नहीं, मैं तो थोड़ा-सा भात खाता हूँ। क्यों

जी, आप लोग जो जप और ध्यान करते हैं, यह सब निष्काम ही करते हैं न ?

साधु--जी महाराज ।

श्रीरामकृष्ण--यही अच्छा है । और फल ईश्वर को समर्पित कर देना चाहिए न ? गीता में लिखा है ।

साधु--(दूसरे साधु से)--

यत् करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत् ।
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत् कुरुष्व मदर्पणम् ।।

श्रीरामकृष्ण--उन्हें एक गुना जो कुछ दोगे, उसका हजार गुना प्राप्त होगा । इसीलिए सब काम करके जलाञ्जलि दी जाती है--कृष्ण के लिए फल का अर्पण किया जाता है ।

"युधिष्ठिर जब सब पाप कृष्ण को अर्पित करने के लिए तैयार हुए, तब एक आदमी ने (भीम ने) उन्हें रोका । कहा, 'ऐसा कर्म न करो--कृष्ण को जो कुछ दोगे, उसका हजार गुना तुम्हें प्राप्त होगा ।' अच्छा क्यों जी, निष्काम होना चाहिए--सब कामनाओं का त्याग करना चाहिए न ?"

साधु--जी महाराज !

श्रीरामकृष्ण--परन्तु मेरी तो भक्ति-कामना है । वह बुरी नहीं, अच्छी ही है । मीठी चीजें बुरी हैं, अम्ल पित्त निर्माण करती हैं, किन्तु मिश्री उलटे उपकार करती है । क्यों जी ?

साधु--जी महाराज ।

श्रीरामकृष्ण--अच्छा जी, वेदान्त कैसा है ?

साधु--वेदान्त में षड्दर्शन हैं ।

श्रीरामकृष्ण--परन्तु 'ब्रह्म सत्य है और संसार मिथ्या' यही वेदान्त का सार है, मैं कोई अलग वस्तु नहीं हूँ, मैं ब्रह्म हूँ--

मह्‌ । क्यों जी ?

साधु–जी हाँ ।

श्रीरामकृष्ण–परन्तु जो लोग संसार में हैं, और जिनमें देह-बुद्धि है, 'सोऽहम्' भाव उनके लिए अच्छा नहीं । संसारियों के लिए योगवाशिष्ठ, वेदान्त अच्छा नहीं; बहुत बुरा है । संसारी सेव्य और सेवक के भाव में रहेंगे । 'हे ईश्वर, तुम सेव्य हो—प्रभु हो, मैं सेवक हूँ—तुम्हारा दास हूँ ।'

"जिनमें देह-बुद्धि है, उन्हें 'सोऽहम्' की अच्छी धारणा नहीं होती ।"

सब लोग चुपचाप बैठे हुए हैं । श्रीरामकृष्ण आप ही आप धीरे-धीरे हँस रहे हैं । आत्माराम अपने ही आनन्द में मग्न रहते हैं ।

एक साधु दूसरे के कान में कह रहा है, 'अरे देखो, इसी परमहंस अवस्था कहते हैं ।'

श्रीरामकृष्ण–(मास्टर से)–हँसी आ रही है ।

श्रीरामकृष्ण बालक की तरह आप ही आप हँस रहे हैं ।

(३)

कामिनी-त्याग

साधु दर्शन करके चले गये । श्रीरामकृष्ण, बाबूराम, मास्टर, मुखर्जियों के हरि आदि भक्त-समुदाय कमरे में और बरामदे में टहल रहे हैं ।

श्रीरामकृष्ण–(मास्टर से)–क्या तुम नवीन सेन के यहाँ गये थे ?

मास्टर–जी हाँ, गया था । नीचे बैठा हुआ सब गाने सुन रहा था ।

श्रीरामकृष्ण–यह तुमने अच्छा किया। वे लोग गये थे, केशव सेन क्या उनका चचेरा भाई है?

मास्टर–कुछ अन्तर है।

नवीन सेन आदि, एक भक्त के ससुरालवालों के कोई सम्बन्धी हैं।

मणि के साथ टहलते हुए एकान्त में श्रीरामकृष्ण उनसे बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण–लोग ससुराल जाते हैं। मैंने कितना सोचा विवाह करूँगा, ससुराल जाऊँगा, आनन्द की साधें पूरी कर लूँगा; परन्तु क्या हो गया?

मणि–जी, आप कहा करते हैं—'लड़का अगर बाप का हाथ पकड़े तो वह गिर सकता है, परन्तु बाप अगर लड़के का हाथ पकड़े तो वह नहीं गिरता।' आपकी बिलकुल यही अवस्था है। माता ने तो आपको सदा ही पकड़ रखा है।

श्रीरामकृष्ण–उलो के वामनदास के साथ विश्वास परिवार के यहाँ मुलाकात हुई थी। मैंने कहा, मैं तुम्हें देखने के लिए आया हूँ। जब चला आया, तब सुना, वह कह रहा था—'बाप रे, बाघ जैसे आदमी को पकड़ता है, वैसे ही ईश्वर इन्हें पकड़े हुए है?' तब मैं नौजवान था—खूब मोटा था—सदा ही भावावेश रहता था।

"मैं औरतों से बहुत डरता हूँ। देखता हूँ, जैसे बाघिन खा जाने के लिए आ रही हो। और उनके अंग, प्रत्यंग और सब छेद बहुत बड़े बड़े दीख पड़ते हैं। उसके सब आकार राक्षसी-से दीख पड़ते हैं।

"पहले बड़ा भय था। मैं किसी को पास न आने देता था।

इस समय तो बहुत ही मन को समझाकर उन्हें माँ आनन्दमयी की एक मूर्ति देखता हूँ।

"भगवती का अंश तो है; परन्तु पुरुषों के लिए, विशेष कर साधुओं के लिए और भक्तों के लिए वह त्याज्य है।

"चाहे ऊँचे दर्जे की भक्तिन हो, परन्तु स्त्री को मैं बड़ी देर तक अपने पास नहीं बैठने देता। थोड़ी ही देर में कहता हूँ, जाओ, ठाकुरजी का दर्शन करो, इस पर भी अगर वह न चली गयी, तो तम्बाकू पीने के बहाने से स्वयं ही उठकर चला जाता हूँ।

"देखता हूँ, किसी किसी का मन स्त्रियों की ओर बिल्कुल ही नहीं जाता। निरंजन कहता है, मेरा तो मन स्त्रियों की ओर नहीं जाता।

"हरि से मैंने पूछा, और उसने भी कहा था—ना, स्त्रियों की ओर मन नहीं जाता।

"जो मन परमात्मा को दिया जाता है, उसका बारह आना स्त्री ले लेती है। फिर लड़कों के होने पर प्रायः सब मन खर्च हो जाता है। इस तरह फिर परमात्मा के लिए क्या दिया जाय?

"स्त्री की देखभाल करते करते किसी किसी के प्राणों पर आ बनती है। पाँडेय जमादार बुड्ढा है, पश्चिम का रहनेवाला है। उसकी स्त्री की उम्र चौदह साल की है। बूढ़े के साथ उसे रहना पड़ता है। रहने को एक फूस की कुटिया है। फूस फाड़-फाड़कर लोग उसकी स्त्री को झाँककर देखा करते हैं। अब वह स्त्री निकल गयी है।

"एक आदमी अपनी स्त्री को कहाँ लेकर रखे, कुछ ठीक नहीं कर सकता था। घर में बड़ा शोर-गुल मचा था। वह बड़ी चिन्ता में है। परन्तु इस बात की चर्चा अनावश्यक है।

"और औरतों के साथ रहने से ही उनके वश हो जाना पड़ता है। औरत की बात पर संसारी आदमी उठते-बैठते हैं। सब के सब अपनी अपनी बीवी की तारीफ करते हैं।

"मैं एक जगह जाना चाहता था। रामलाल की चाची* ने पूछने पर उसने मना किया। फिर मेरा जाना न हुआ। थोड़ी देर बाद सोचा—'यह क्या! मैंने संसार-धर्म नहीं किया—कामिनी-कांचन त्यागी हूँ, इतने पर भी ऐसा! जो संसारी हैं, परमात्मा जाने, स्त्रियों के वश में वह कितना है।'"

मणि—कामिनी और कांचन में रहने से कुछ न कुछ आँच तो देह में जरूर ही लग जायेगी। आपने कहा था—'जयनारायण बहुत बड़ा पण्डित था, बुड्ढा हो गया था परन्तु जब मैं गया तब देखा, धूप में तकिए डाल रहा था।'

श्रीरामकृष्ण—परन्तु पण्डिताई का अहंकार उसे न था। और जैसा उसने कहा था, उसी के अनुसार अन्त में काशी में जाकर रहा।

"बच्चों को मैंने देखा, पैरों में बूट डाटे हुए थे, अंगरेजी पढ़े-लिखे हैं।"

श्रीरामकृष्ण प्रश्नोत्तरों के द्वारा मणि को अपनी अवस्था समझा रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—पहले बहुत अधिक उन्माद था—अब घट क्यों गया?—परन्तु कभी कभी अब भी होता है।

मणि—आपकी अवस्था कुछ एक तरह की तो है ही नहीं। जैसा आपने कहा था, कभी बालवत्—कभी उन्मादवत्—कभी जड़वत्—कभी पिशाचवत्, ये ही सब अवस्थाएँ कभी कभी हुआ

* श्रीरामकृष्णदेव की लीलासहधर्मिणी श्रीसारदा देवी।

करती हैं। और कभी कभी सहज अवस्था भी होती है।

श्रीरामकृष्ण–हाँ बालवत्। और उसी के साथ बाल्य, किशोर और युवा, ये अवस्थाएँ भी होती हैं। जब ज्ञानोपदेश दिया जाता है, तब युवा अवस्था होती है।

"और किशोर अवस्था में तेरह साल के बच्चे की तरह मजाक सूझता है, इसीलिए लड़कों के बीच में मजाक किया जाता है।

"अच्छा, नारायण कैसा है?"

मणि–जी, उसके सभी लक्षण अच्छे हैं।

श्रीरामकृष्ण–कद्दू की गढ़न अच्छी है—तानपूरा खूब बजेगा।

"वह मुझे कहता है, आप सब कुछ हैं। जिसकी जैसी धारणा है, वह वैसा ही कहता है। कोई कहता है, ये ऐसे ही साधु और भक्त हैं।

"जिसके लिए मैंने मना कर दिया है, उसकी उसने खूब धारणा कर ली है। उस दिन परदा समेटने के लिए मैंने कहा था, उसने न समेटा।

"गिरह लगाना, सीना, परदा लपेटना, दरवाजे में और सन्दूक में ताला लगाना, इस तरह के कामों के लिए मैंने मना कर दिया था—उसने ठीक धारणा कर रखी है। जिसे त्याग करना है, उसे इन बातों का साधन कर लेना चाहिए। यह सब संन्यासी के लिए है।

"साधना की अवस्था में कामिनी दावाग्नि-सी है—काल-नागिनी-सी। सिद्ध अवस्था के पश्चात्, ईश्वर-प्राप्ति हो जाने पर, वह माँ आनन्दमयी की मूर्ति हो जाती है; तभी मनुष्य स्त्रियों

को माता की एक एक मूर्ति देख सकता है।"

कई दिन हो गये, श्रीरामकृष्ण ने नारायण को कामिनी के सम्बन्ध में बहुत सावधान कर दिया था। कहा था—"स्त्रियों की हवा भी देह में न लगने पाये, मोटा कपड़ा देह में डाले रहना, कहीं ऐसा न हो कि उनके देह की हवा तेरे शरीर में लग जाय —और माता को छोड़कर दूसरी स्त्रियों से आठ हाथ, दो हाथ, नहीं तो कम से कम एक हाथ दूर जरूर रहना।"

श्रीरामकृष्ण—(मणि से)—उसकी माँ ने नारायण से कहा है— 'उन्हें देखकर हम लोग मुग्ध हो जाती हैं, तू तो भला अभी लड़का है।' और बिना सरल हुए कोई ईश्वर को पा नहीं सकता, निरंजन कैसा सरल है ?

मणि—जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण—उस दिन गाड़ी से जाते समय कलकत्ते में तुमने देखा था या नहीं ? हर समय उसका एक ही भाव रहता है—सरल है। आदमी अपने घर में तो एक तरह के होते हैं, परन्तु जब बाहर जाते हैं, तब दूसरी तरह के हो जाते हैं। नरेन्द्र अब संसार की चिन्ता में पड़ गया है। उसमें कुछ हिसाबवाली बुद्धि है। सब लड़के क्या इसकी तरह कभी हो सकते हैं ?

"आज मैं नीलकण्ठ का नाटक देखने गया था—दक्षिणेश्वर में नवीन नियोगी के यहाँ। वहाँ के लड़के बड़े दुष्ट हैं। ये सब इसकी-उसकी निन्दा किया करते हैं। इस तरह की जगहों में भाव रुक जाता है।

"उस बार नाटक देखते समय मधु डाक्टर की आँखों में आँसू देखकर मैंने उनकी ओर देखा था। किसी दूसरे की ओर मैं नहीं देख सका।"

(४)

समन्वय के बारे में उपदेश। दान और ध्यान

श्रीरामकृष्ण-(मणि से)-अच्छा, इतने आदमी जो यहाँ खिंचकर चले आते हैं, इसका क्या अर्थ ?

मणि-मुझे तो व्रज की लीला याद आती है। कृष्ण जब चरवाहे और गौएँ बन गये, तब चरवाहों पर गोपियों का और बछड़ों पर गौओं का प्यार बढ़ गया—अधिक आकर्षण हो गया।

श्रीरामकृष्ण-वह ईश्वर का आकर्षण था। बात यह है कि माँ ऐसा ही जादू डाल देती हैं जिससे आकर्षण होता है।

"अच्छा, केशव सेन के यहाँ जितने आदमी जाते थे, यहाँ तो उतने आदमी नहीं आते। और केशव सेन को कितने आदमी जानते-मानते हैं, विलायत तक उसका नाम है, विक्टोरिया ने उससे बातचीत की थी। गीता में तो है कि जिसे बहुत से आदमी जानते-मानते हैं, वहाँ ईश्वर की ही शक्ति रहती है। यहाँ तो उतना नहीं होता।"

मणि-केशव सेन के पास संसारी आदमी गये थे।

श्रीरामकृष्ण-हाँ, यह ठीक है, वे ऐहिक कामनाएँ रखने वाले थे।

मणि-केशव सेन जो कुछ कर गये हैं, क्या वह टिक सकेगा ?

श्रीरामकृष्ण-क्यों, वे एक संहिता लिख गये हैं, उसमें उनके ब्राह्मसमाजी अनुयायियों के लिए नियमादि तो लिखे हैं।

मणि-अवतारी पुरुष जब स्वयं कार्य करते हैं, तब एक और ही बात होती है, जैसे चैतन्यदेव का कार्य।

श्रीरामकृष्ण-हाँ हाँ, यह ठीक है।

मणि—आप तो कहते हैं—चैतन्यदेव ने कहा था—'मैं जो बीज डाले जा रहा हूँ, कभी न कभी इसका कार्य अवश्य होगा।' छत पर बीज था, जब घर ढह गया, तब उस बीज से पेड़ पैदा हुआ।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, शिवनाथ आदि ने जो समाज बनाया है, उसमें भी बहुत से आदमी जाते हैं।

मणि—जी, वैसे ही आदमी जाते हैं।

श्रीरामकृष्ण—हाँ हाँ, सब संसारी आदमी जाते हैं। जो ईश्वर के लिए व्याकुल हैं—कामिनी-कांचन के त्याग करने की चेष्टा कर रहे हैं, ऐसे आदमी बहुत कम जाते हैं, यह ठीक है।

मणि—अगर यहाँ से एक प्रवाह बहे, तो बड़ा अच्छा हो—उस प्रवाह के वेग में सब बह जायँ। यहाँ से जो कुछ होगा, वह अवश्य ही एक विशेष ढंग का न होगा।

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—जिस मनुष्य का जो भाव है, मैं उसके उस भाव की रक्षा करता हूँ। वैष्णवों से वैष्णव-भाव ही रखने के लिए कहता हूँ, शाक्तों से शाक्त-भाव; परन्तु इतना उनसे और कह देता हूँ कि यह मत कहो कि हमारा ही मार्ग सत्य है और बाकी सब मिथ्या—भ्रम है।

"हिन्दू, मुसलमान, ईसाई ये सब अनेक मार्गों से होकर एक ही जगह जा रहे हैं। अपने भाव की रक्षा करते हुए, उन्हें हृदय से पुकारने पर उनके दर्शन होते हैं।

"विजय की सास कहती है, 'तुम बलराम आदि से यह दो, साकार-पूजन की क्या जरूरत है? निराकार-सच्चिदानन्द को पुकारने से ही काम सिद्ध हो जायगा।'

"मैंने कहा, ऐसी बात मैं ही क्यों कहूँ और वे ही क्यों

सुनने लगे ? रुचिभेद के अनुसार—अधिकारियों में भेद देखकर एक ही चीज के कितने ही रूप कर दिये जाते हैं।"

मणि—जी हाँ, देश, काल और पात्र के भेद से सब अलग अलग रास्ते हैं। परन्तु चाहे जिस रास्ते से आदमी जाय, मन को शुद्ध करके और हृदय से व्याकुल हो जब उन्हें पुकारता है, तो उन्हें पाता अवश्य है। यही बात आप कहते हैं।

कमरे में श्रीरामकृष्ण अपने आसन पर बैठे हुए हैं। जमीन पर मुखर्जियों के सम्बन्धी हरि तथा मास्टर आदि बैठे हैं। एक अनजान आदमी श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके बैठा। श्रीरामकृष्ण ने बाद में कहा था, उसकी आँखों के लक्षण अच्छे नहीं थे—बिल्ली जैसी कंजी आँखें थीं।

श्रीरामकृष्ण—(हरि से)—देखूं तो जरा तेरा हाथ। सब कुछ तो है—बड़े अच्छे लक्षण हैं।

"मुट्ठी खोल जरा। (अपने हाथ में हरि का हाथ लेकर जैसे तौल रहे हों) लड़कपन अब भी है। दोष अभी तक तो कुछ नहीं किया। (भक्तों से) हाथ देखकर मैं कह सकता हूँ कि अमुक खल है या सरल। (हरि से) क्या हुआ तू ससुराल जाया कर—अपनी स्त्री से बातचीत किया कर—और इच्छा हो तो जरा आमोद-प्रमोद भी कर लिया कर।

(मास्टर से) "क्यों जी ?" (मास्टर आदि हँसते हैं।)

मास्टर—जी, नयी सुराही अगर खराब हो जाय, तो उसमें दूध फिर नहीं रखा जा सकता।

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—अभी खराब नहीं हुई, यह तुमने कैसे जाना ?

मुखर्जी दो भाई हैं, महेन्द्र और प्रियनाथ। ये नौकरी नहीं

करते। उनकी आटे की चक्की है। प्रियनाथ पहले इंजीनियर का काम करते थे। श्रीरामकृष्ण हरि से मुखर्जी भाइयों की बात कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण–(हरि से)–बड़ा भाई अच्छा है न?–बड़ा सरल है।

हरि–जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण–(भक्तों से)–सुनता हूँ, छोटा बड़ा कंजूस है, पर यहाँ आकर कुछ अच्छा हुआ है। उसने मुझसे कहा, 'मैं पहले कुछ नहीं जानता था।' (हरि से) क्या ये लोग कुछ दान आदि करते हैं?

हरि–ऐसा कुछ दीख तो नहीं पड़ता, इनके जो बड़े भाई थे, उनका देहान्त हो गया है। वे बड़े अच्छे थे, दान, ध्यान खूब करते थे।

श्रीरामकृष्ण–(मास्टर आदि से)–किसी के शरीर के लक्षणों को देखकर कहा जा सकता है कि उसकी बन जायेगी या नहीं। खल होने पर हाथ वजनदार होता है।

"नाक बैठी हुई होना अच्छा नहीं। शम्भु की नाक बैठी थी। इसीलिए इतने ज्ञान के होने पर भी वह सरल न था।

"कबूतर जैसा वक्ष स्थल, टेढ़ी-मेढ़ी हड्डियाँ, मोटी कुहनी तथा बिल्ली के समान कंजी आँखें खराब लक्षण हैं।

"ओंठ अगर डोमों के जैसे होते हैं, तो उसकी बुद्धि नीच होती है। विष्णुमन्दिर का पुजारी कुछ महीने के लिए बदले में काम करने आया था। उसके हाथ का मैं खाता नहीं था। एकाएक मेरे मुँह से निकल गया, वह डोम है। इसके बाद उसने एक दिन कहा–हाँ, मेरा घर डोम-टोले में है, मैं डोमों की तरह सूप इत्यादि

बना लेता हूँ।

"और भी बुरे लक्षण हैं—एक आँख का काना होना, तिस पर वह भी कंजी आँख। काना फिर भी अच्छा है, परन्तु कंजा बड़ा खतरनाक होता है।

"महेश्वर का एक छात्र आया था। वह कहता था, मैं नास्तिक हूँ। उसने हृदय से कहा, 'मैं नास्तिक हूँ, तुम आस्तिक होकर मेरे साथ चर्चा करो।' तब मैंने उसे अच्छी तरह देखा। देखा—उसकी आँख बिल्ली जैसी थी।

"चाल देखकर भी अच्छे और बुरे लक्षण समझे जाते हैं।"

श्रीरामकृष्ण कमरे से बरामदे में आकर टहलने लगे। साथ मास्टर और बाबूराम हैं।

श्रीरामकृष्ण—(हाजरा से)—एक आदमी आया था। मैंने देखा—उसकी आँखें बिल्ली जैसी थीं। उसने मुझसे पूछा—'क्या आप ज्योतिष भी जानते हैं?—मुझे कुछ कष्ट मिल रहा है।' मैंने कहा—नहीं, तुम बराहनगर जाओ, वहाँ इसके पण्डित हैं।

बाबूराम और मास्टर नीलकण्ठ के नाटक की बात कह रहे हैं। बाबूराम नवीन सेन के घर से दक्षिणेश्वर लौटकर कल रात को यहीं थे। सुबह श्रीरामकृष्ण के साथ दक्षिणेश्वर में नवीन नियोगी के यहाँ नीलकण्ठ का नाटक उन्होंने देखा था।

श्रीरामकृष्ण—(मास्टर और बाबूराम से)—तुम लोगों की क्या बातचीत हो रही है?

मास्टर और बाबूराम—जी, नीलकण्ठ के नाटक की बातचीत हो रही है—और उसी गाने की बात—'श्यामापदे आस, नदीतीरे वास।'

श्रीरामकृष्ण बरामदे में हैं। टहलते हुए एकाएक मणि को

एकान्त में से आकर कहने लगे—'ईश्वर की चिन्ता में जितना दूसरे आदमियों को भाव मालूम न हो उतना ही अच्छा है।' एकाएक यह कहकर श्रीरामकृष्ण चले गये।

श्रीरामकृष्ण हाजरा से बातचीत कर रहे हैं।

हाजरा—नीलकण्ठ ने तो आप से कहा है कि वह आयेगा।

श्रीरामकृष्ण—नहीं, रात में जागता रहा है—ईश्वर की इच्छा से आप आये, तो दूसरी बात है।

श्रीरामकृष्ण बाबूराम से नारायण के यहाँ जाकर मिलने के लिए कह रहे हैं। आप नारायण को साक्षात् नारायण देखते हैं। इसीलिए उसे देखने को व्याकुल हो रहे हैं। बाबूराम से कह रहे हैं—'तू बल्कि एक अंग्रेजी पुस्तक लेकर उसके पास जाना।'

(५)

भक्तों के साथ कीर्तनानन्द में

श्रीरामकृष्ण कमरे में अपने आसन पर बैठे हुए हैं। दिन के तीन बजे का समय होगा। नीलकण्ठ पाँच-सात साथियों के साथ श्रीरामकृष्ण के कमरे में आये। श्रीरामकृष्ण उनकी अभ्यर्थना के लिए उठकर कुछ बढ़े। नीलकण्ठ कमरे के पूर्व द्वार से आये और श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण समाधिलीन हो गये हैं, उनके पीछे बाबूराम हैं, सामने नीलकण्ठ, मास्टर और आश्चर्य में डूबे हुए नीलकण्ठ के साथी। खाट के उत्तर की ओर दीनानाथ खजांची आकर दर्शन कर रहे हैं। देखते ही देखते कमरा श्रीठाकुर-मन्दिर के आदमियों से भर गया। कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण के भाव में कुछ उतार हुआ। श्रीरामकृष्ण जमीन पर चटाई पर बैठे हुए हैं। सामने

नीलकण्ठ हैं और चारों ओर भक्त-मण्डली ।

श्रीरामकृष्ण-(आवेश में)-मैं अच्छा हूँ ।

नीलकण्ठ-(हाथ जोड़कर)-मुझे भी अच्छा कर लीजिये ?

श्रीरामकृष्ण-(सहास्य)-तुम अच्छे तो हो । 'क' में आकार लगाने से 'का' होता है, उस पर फिर आकार लगाने से क्या फल होगा ? 'का' पर एक और आकार लगाने से 'का' का 'का' ही रहता है ! (सब हँसते हैं।)

नीलकण्ठ-इस संसार में पड़ा हुआ हूँ ।

श्रीरामकृष्ण-(सहास्य)-तुम्हें संसार में उन्होंने और पाँच आदमियों के लिए रखा है ।

"अष्ट पाश है । ये सब नहीं जाते । दो-एक पाश वे रख देते हैं—लोकशिक्षा के लिए । तुमने यह नाटक किया है, तुम्हारी भक्ति देखकर कितने ही आदमियों का उपकार होता है । और तुम अगर सब छोड़ दोगे, तो ये लोग (साथ के नाटकवाले) फिर कहाँ जायेंगे ?

"वे तुम्हारे द्वारा काम कराये लेते हैं, काम पूरा हो जाने पर फिर तुम्हें लौटना न होगा । गृहिणी जब घर का कुल काम कर लेती है, सब को खिला-पिला लेती है—दास-दासियों को भी—तब खुद नहाने के लिए जाती है, उस समय बुलाने पर भी वह नहीं लौटती ।"

नीलकण्ठ-मुझे आशीर्वाद दीजिये ।

श्रीरामकृष्ण-कृष्ण के वियोग से यशोदा की उन्मादावस्था थी । वे राधिका के पास गयी थीं । उस समय राधिका ध्यान कर रही थीं । उन्होंने भावावेश में यशोदा से कहा—'मैं वही मूल प्रकृति हूँ—आद्याशक्ति हूँ, तुम मुझसे वर की प्रार्थना करो ।'

यशोदा ने कहा, 'और क्या वर दोगी, यही कहो, जिससे मन, वाणी और कर्मों से भगवान की सेवा कर सकूं, कानों से उनका नाम, उनके गुण सुनूं, हाथों से उनकी और उनके भक्तों की सेवा कर सकूं; आँखों से उनके रूप और उनके भक्तों के दर्शन कर सकूं।'

"उनका नाम लेते हुए जब तुम्हारी आँखों में आँसुओं की धारा बह चलती है, तो तुम्हें चिन्ता किस बात की है?—उन पर तुम्हारा प्यार हो गया है।

"अनेक के जानने का नाम है अज्ञान और एक के जानने का नाम है ज्ञान—अर्थात् एक ही ईश्वर सत्य है और सर्व भूतों में विराजमान है। उनके साथ बातचीत करने का नाम है विज्ञान—उन्हें प्राप्त कर अनेक प्रकार से प्यार करने का नाम है विज्ञान।

"और यह भी है कि वे एक-दो के पार हैं, मन और वाणी से अतीत हैं। लीला से नित्य में जाना और नित्य से लीला में आना—इसका नाम है पक्की भक्ति।

"तुम्हारा वह गाना बड़ा सुन्दर है—'श्यामापदे आश, नदी तीरे वास।'

"इसी से बन जायेगी—सब उनकी कृपा पर निर्भर है।

"परन्तु उन्हें पुकारना चाहिए। चुपचाप बैठे रहने से न होगा। वकील न्यायाधीश से सब कुछ कहकर अन्त में कहता है—'मुझे जो कुछ कहना था, मैंने कह दिया, अब आपकी इच्छा।'"

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण ने कहा—

"तुमने सुबह इतना गाया, फिर तकलीफ करके यहाँ आये—परन्तु यहाँ सब 'ऑनरेरी' (Honorary) है।"

नीलकण्ठ—क्यों?

श्रीरामकृष्ण–(सहास्य)-मैं समझा, तुम जो कुछ कहोगे।

नीलकण्ठ–अनमोल रत्न ले जाऊँगा।

श्रीरामकृष्ण–वह अनमोल रत्न तुम्हारे ही पास है। 'का' में फिर से आकार लगाने से क्या लाभ ? तुम्हारे पास रत्न न होता तो तुम्हारा गाना इतना अच्छा कैसे लगता ? रामप्रसाद सिद्ध है, इसीलिए उसका गाना अच्छा लगता है।

"तुम्हारे गाने की बात सुनकर मैं स्वयं जा रहा था, परन्तु नियोगी फिर आया था कहने के लिए।"

श्रीरामकृष्ण छोटे तख्त पर अपने आसन पर जा बैठे। नीलकण्ठ से कहते हैं, जरा माता का नाम सुनने की इच्छा है।

नीलकण्ठ अपने साथियों के साथ गाने लगे। कई गाने गाये। एक गाने में एक जगह था—'जिसकी जटा में गंगाजी शोभा पा रही है, उसने हृदय में राजराजेश्वरी को धारण कर रखा है।'

श्रीरामकृष्ण की प्रेमोन्मत्त अवस्था हो गयी। वे नृत्य करने लगे। नीलकण्ठ और भक्तगण उन्हें घेरकर गा रहे हैं और नृत्य कर रहे हैं।

गाना समाप्त हो गया। श्रीरामकृष्ण नीलकण्ठ से कह रहे हैं—मैं तुम्हारा वह गाना सुनूँगा, कलकत्ते में जो सुना था।

मास्टर–वह है—'श्रीगौराङ्ग सुन्दर नव नटवर तपत-कांचन काय।' उसी के एक पद का अंशाश गाते हुए श्रीरामकृष्ण फिर नाचने लगे। वह अपूर्व नृत्य जिन लोगों ने देखा है, वे कभी भूल न सकेंगे। कमरे में आदमी ठसाठस भर गये। सब लोग उन्मत्त हो रहे हैं। कमरा मानो श्रीवास का आँगन हो रहा है।

श्रीयुत मनोमोहन को भावावेश हो गया। उनके घर की

कुछ स्त्रियाँ भी आयी हैं। वे उत्तर के बरामदे से यह अपूर्व नृत्य और संकीर्तन देख रही हैं। उनमें भी एक स्त्री को भावावेश हो गया था। मनोमोहन श्रीरामकृष्ण के भक्त हैं और राखाल के सम्बन्धी।

श्रीरामकृष्ण फिर गाने लगे। उच्च नामकीर्तन सुनकर चारों ओर के आदमी आकर जम गये। दक्षिण और उत्तर-पश्चिमवाले बरामदे में ठसाठस आदमी भर गये। जो लोग नाव पर जा रहे थे, उन्हें भी इस मधुर नामकीर्तन के स्वर से आकर्षित होकर आना ही पड़ा।

कीर्तन समाप्त हो गया। श्रीरामकृष्ण जगन्माता को प्रणाम कर रहे हैं। कह रहे हैं—"भागवत, भक्त, भगवान्—ज्ञानियों को नमस्कार, योगियों को नमस्कार, भक्तों को नमस्कार।"

अब श्रीरामकृष्ण नीलकण्ठ आदि भक्तों के साथ पश्चिमवाले गोल बरामदे में जाकर बैठे। शाम हो गयी है। आज रास-पूर्णिमा का दूसरा दिन है। चारों ओर चाँदनी फैली हुई है। श्रीरामकृष्ण नीलकण्ठ से आनन्दपूर्वक वार्तालाप कर रहे हैं।

नीलकण्ठ—आप साक्षात् गौरांग हैं।

श्रीरामकृष्ण—यह सब क्या है!—मैं सब के दासों का दास हूँ।

"गंगा की ही तरंगें हैं, तरंगों की भी कभी गंगा होती है?"

नीलकण्ठ—आप कुछ भी कहें, हम लोग तो आपको ऐसा ही समझते हैं।

श्रीरामकृष्ण—(कुछ भावावेश में करुणापूर्ण स्वर से)—भाई, अपने 'मैं' को तलाश करता हूँ परन्तु कहीं खोजने पर भी नहीं मिलता।

"हनुमान ने कहा था—हे राम, कभी तो सोचता हूँ, तुम

पूर्ण हो, मैं अंश हूँ—तुम प्रभु हो, मैं दास हूँ, और जब तत्त्वज्ञान होता है, तब देखता हूँ, तुम्हीं 'मैं' हो और मैं ही 'तुम' हूँ।"

नीलकण्ठ–और क्या कहूँ, हम लोगों पर कृपा रखियेगा।

श्रीरामकृष्ण–(सहास्य)–तुम कितने ही आदमियों को पार कर रहे हो—तुम्हारा गाना सुनकर कितने ही आदमियों में उद्दीपना होती है।

नीलकण्ठ–मैं पार कर रहा हूँ, आप कहते हैं; देखिये, खुद न डूबूँ।

श्रीरामकृष्ण–(सहास्य)–अगर डूबोगे तो उसी सुधा-ह्रद में।

नीलकण्ठ से मिलकर श्रीरामकृष्ण को आनन्द हुआ है। उनसे फिर कह रहे हैं—"तुम्हारा यहाँ आना!—जो बड़ी साध्य-साधना के बाद कहीं मिलता है।" यह कहकर श्रीरामकृष्ण एक गाना गाने लगे। अन्तिम पद में एक जगह है—"चण्डी को ले आऊँगा।"

श्रीरामकृष्ण–चण्डी जब आ गयी हैं, तब कितने ही जटा-धारी और योगी आयेंगे।

श्रीरामकृष्ण हँस रहे हैं। कुछ देर के बाद बाबूराम और मास्टर आदि से कह रहे हैं–"मुझे बड़ी हँसी आ रही है। सोचता हूँ—इन्हें (नाटकवालों को) भी मैं गाना सुना रहा हूँ।"

नीलकण्ठ–हम लोग जो चारों ओर गाते फिरते हैं, उसका पुरस्कार आज मिला।

श्रीरामकृष्ण–(सहास्य)–कोई चीज बेचने पर दूकानदार एक मुट्ठी और ऊपर से डाल देता है। वैसे ही तुम लोगों ने वहाँ गाया और एक मुट्ठी यहाँ भी डाल दी।

के यहाँ गये थे, इससे अधर को बड़ा आनन्द हुआ था। तब वह 'हें-हें' करने लगा था, पूछा—क्या सचमुच उन्हें आनन्द हुआ है?

"यदु के यहाँ एक दूसरा मल्लिक आया था, वह बड़ा चतुर और शठ है। उसकी आँखें देखकर में समझ गया। आँख की ओर देखकर मैंने कहा, 'चतुर होना अच्छा नहीं, कौआ बड़ा चतुर होता है, परन्तु विष्ठा खाता है।' उसे मैंने देखा, बड़ा अभागा है। यदु की माँ ने आश्चर्यचकित होकर कहा, 'बाबा, तुम्हें कैसे मालूम हुआ कि उसके कुछ नहीं है?' में चेहरे से समझ गया था।"

नारायण आये हुए हैं। वे भी जमीन पर बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण—(प्रियनाथ से)—क्यों जी, तुम्हारा हरि तो बड़ा अच्छा है।

प्रियनाथ—ऐसा अच्छा क्या है—परन्तु हाँ, लड़का है।

नारायण—अपनी स्त्री को उसने माँ कहा है।

श्रीरामकृष्ण—यह क्या! मैं ही नहीं कह सकता और उसने माँ कहा! (प्रियनाथ से) बात यह है कि लड़का बड़ा शान्त है, ईश्वर की ओर मन है।

श्रीरामकृष्ण दूसरी बात करने लगे।

श्रीरामकृष्ण—सुना तुमने, हेम क्या कहता था? बाबूराम से उसने कहा, ईश्वर ही एक सत्य है और सब मिथ्या। (सब हँसते हैं।) नहीं जी, उसने आन्तरिक भाव से कहा था। और मुझे घर ले जाकर कीर्तन सुनाने के लिए कहा था, परन्तु फिर हो नहीं सका। सुना उसके बाद कहता था—'मैं अगर ढोल-करताल लूँगा तो आदमी क्या कहेंगे?' डर गया कि कहीं आदमी पागल न कहें।